A-PDF Merger DEMO : Purchase from www.A-PDF.com to remove the watermark

विश्व हिंदी सचिवालय

WORLD HINDI SECRETARIAT

स्विफ़्ट लेन, फ़ॉरेस्ट साइड 74427, मॉरीशस

Swift Lane, Forest Side 74427, Mauritius

फ़ोन/Ph: 00-230-6761196 • फ़ैक्स/Fax: 00-230-6761224

इ-मेल/e-mail: info@vishwahindi.com

वेबसाइट/website: www.vishwahindi.com

मुद्रक : विद्या विहार, नई दिल्ली-110002 (भारत) • vidyaviharnd@gmail.com

विश्व हिंदी पत्रिका 2015

विश्व हिंदी पत्रिका

2015

विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस

विश्व हिंदी पत्रिका

2015

प्रधान संपादक

श्री गंगाधरसिंह सुखलाल

विश्व हिंदी सचिवालय
स्विफ़्ट लेन 74427, फ़ॉरेस्ट साइड
मॉरीशस

World Hindi Secretariat
Swift Lane 74427, Forest Side
Mauritus

info@vishwahindi.com
Website: www.vishwahindi.com
Phone: 00-230-6761196, Fax: 00-230-6761224

ISSN No.: 1694-2477

सहायक संपादक
सुश्री श्रद्धांजलि हजगैबी

विश्व हिंदी पत्रिका संपादकीय टीम
श्रीमती उषा देवी आकाजिया-राम, सुश्री त्रिशिला सोमर, सुश्री दीया लक्ष्मी बंधन, सुश्री चित्रलेखा रामदोयाल, श्रीमती विजया सरजु

संपादन सहयोग
श्री वशिष्ठ कुमार झमन, श्री अरविंद नेकितसिंह, सुश्री अनुक्षा रतिया

मुख पृष्ठ और पार्श्व आवरण संकल्पना
विश्व हिंदी सचिवालय

मुख पृष्ठ और पार्श्व आवरण डिज़ाइन
विद्या विहार

आवरण से आवरण तक की कहानी

प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी की उपस्थिति सुदृढ़ होने की श्रमसाध्य और लंबी प्रक्रिया में तथा नए युगानुरूप संसाधनों के माध्यम से हिंदी के वैश्विक प्रचार-प्रसार में विश्व हिंदी समाज के अनेक कर्मठ व्यक्तियों तथा संस्थाओं द्वारा चलाई जानेवाली योजनाओं की ऐतिहासिक भूमिका को समझते हुए सचिवालय ने इस अंक में हिंदी की इ-प्रचारक योजनाओं पर आधारित विशेष आलेखों का संकलन किया है। उद्देश्य यही है कि इन योजनाओं को साकार करने में जिन व्यक्तियों और संस्थाओं का विशेष योगदान रहा है उनकी मेहनत को विश्व हिंदी समाज का आदर प्राप्त हो और यथा संभव प्रक्रियाओं और अनुभवों के इन विवरणों से इस दिशा में भी अनुसंधान क्षेत्रों व दिशाओं का अन्वेषण हो। पत्रिका का मुख पृष्ठ कुछ चयनित व विशेष उल्लेखनीय परियोजनाओं के योगदान को उभारता है।

इ-संसाधनों द्वारा भाषा के प्रचार का यह प्रकरण स्वाभाविक रूप से पत्रकारिता और पारंपरिक दृश्य-श्रव्य मीडिया द्वारा भाषा-प्रचार कार्य में डाली गई नींव पर ही आधारित है। इन माध्यमों के विषय में कुछ विशेष आलेख भी पत्रिका में संकलित हैं। अंक का पार्श्व आवरण इन्हीं माध्यमों के योगदान को नमन करता है।

***

-निवेदन-

विश्व हिंदी पत्रिका में प्रकाशित लेखों के विचार लेखकों के अपने हैं।
विश्व हिंदी सचिवालय और संपादक मंडल का उनके विचारों से सहमत होना
आवश्यक नहीं है।

अनुक्रम

10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन

1.	सम्मेलन के उद्घाटन समारोह में प्रस्तुत भारत के प्रधान मंत्री का संदेश	माननीय श्री नरेंद्र मोदी	3
2.	सम्मेलन के उद्घाटन समारोह में प्रस्तुत भारत की विदेश मंत्री का संदेश	माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज	7
3.	प्रवासी देशों में हिंदी तथा उसका भविष्य	माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन	9
4.	10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन, भोपाल, भारत	सचिवालय की रिपोर्ट	15
5.	विश्व हिंदी सम्मान : सम्मानित भारतीय तथा भारतेतर विद्वान		20
6.	भोपाल ने हमें भाषा का उत्सव मनाना सिखा दिया	श्री बालेंदु शर्मा दाधीच	26

विश्व हिंदी के पथ प्रदर्शक

7.	स्वर्गीय बालशौरि रेड्डी : जीवन संबंधी घटनाओं का ऐतिहासिक उल्लेख	श्रीमती देवी नागरानी	35
8.	हिंदी सेवी श्री गोविंद मधुसूदन दाभोलकर जी को श्रद्धांजलि	श्रीमती वर्षा डिसूज़ा	39
9.	हिंदी के स्थापनकर्ता : महामना पं. मदनमोहन मालवीय	डॉ. राकेश कुमार दूबे	42

विश्व हिंदी : विविध संदर्भ

10.	हिंदी : विश्व में भाषा भाषियों की दृष्टि से प्रथम एवं सबसे लोकप्रिय भाषा—शोध रिपोर्ट 2015	डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल	53
11.	ऑस्ट्रेलिया में हिंदी	डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर	61
12.	अमेरिका में हिंदी	श्रीमती निर्मला शुक्ल	65
13.	दक्षिण भारतीय राज्यों में हिंदी का विकास	डॉ. लालसा यादव	68
14.	नेपाल में हिंदी के बढ़ते चरण	श्री डिल्लीराम शर्मा	72
15.	तेलंगाना में हिंदी	डॉ. अनीता गांगुली	77
16.	शब्दों की यात्रा : तुर्की की झलक	डॉ. तेज कृष्ण भाटिया	81
17.	तुर्की में हिंदी भाषा एवं साहित्य का अध्ययन-अध्यापन	डॉ. साईनाथ विट्ठल चपले	83
18.	आई.बी. पाठ्यक्रम में हिंदी और चुनौतियाँ	श्रीमती एमा कुमुदिनी मेंडा	87
19.	जापान में प्रेमचंद साहित्य : इतिहास के परिप्रेक्ष्य में	प्रो. ताकेशी फ़ुजिई	94
20.	अमेरिका में हिंदी भाषा के विकास की नई परिधि	सुश्री गब्रिएला निक इलिएवा	99
21.	आज के बच्चे कल के भाषा एवं सांस्कृतिक दूत कैसे बनेंगे : न्यू ज़ीलैंड में हिंदी प्रचार-प्रसार की चुनौतियाँ	श्रीमती सुनीता नारायण	103
22.	विश्व इतिहास में प्रवासी समाज की व्यथा बयान करती हिंदी	सुश्री देविना अक्षयवर	107
23.	हिंदी का परिवर्तित होता स्वरूप	डॉ. श्याम नारायण शुक्ल	113

हिंदी का इ-संसार

24.	हिंदी का इ-संसार और 'अरविंद लैक्सिकन'	श्री अरविंद कुमार	119
25.	हिंदी के इ-संसार का संचार और 'भारतकोश'	श्री आदित्य चौधरी	125
26.	'वेबदुनिया' : हिंदी ऑनलाइन पत्रकारिता का वटवृक्ष	श्री जितेंद्र जैसवाल	130
27.	'अभिव्यक्ति और अनुभूति' : एक यात्रा कथा	श्रीमती पूर्णिमा वर्मन	135
28.	'कविता कोश' व 'गद्य कोश'	श्री ललित कुमार	139
29.	भौगोलिक दूरियों को लांघती 'इ-कविता'	श्री अनूप भार्गव	144
30.	न्यू ज़ीलैंड, हिंदी और 'भारत दर्शन'	श्री रोहित कुमार 'हैप्पी'	148
31.	प्रवासी भारतीय और हिंदी पत्रकारिता	डॉ. जवाहर कर्नावट	156
32.	लंदन से हिंदी प्रसारण का महात्म्य	श्री कैलाश बुधवार	161
33.	आकाशवाणी में हिंदी की लोकप्रियता	प्रो. सूर्यकांत विश्वनात आमलपूरे	163
34.	बी.बी.सी. लंदन और हिंदी	डॉ. विनय कुमार शर्मा	165
35.	रेडियो रंगीला के कार्यक्रम और उनके द्वारा हिंदी भाषा का प्रचार	सुश्री शुभ्रा ठाकुर	169
36.	हिंदी-कंप्यूटिंग अनुवाद-तकनीक व संसाधन	डॉ. कविता वाचक्नवी	173
37.	इंटरनेट की दुनिया में बढ़ती हिंदी	श्री उमेश चतुर्वेदी	183

हिंदी के विविध आयाम : कुछ टिप्पणियाँ व विचार-बिंदु

38.	हिंदी शिक्षण का विचार - रूस के विशेष संदर्भ में	डॉ. इंदिरा गाज़िएवा	187
39.	भाषा बनाम साहित्य : हिंदी के संदर्भ में उलझा एक प्रश्न	प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी	190
40.	सीमाओं के बावजूद अत्यंत सक्षम है देवनागरी लिपि व हिंदी भाषा	श्री सीताराम गुप्ता	193
41.	क्या रोमन लिपि अपनाने से ही हिंदी बचेगी ?	डॉ. परमानंद पांचाल	198
42.	रोमन बनाम देवनागरी लिपि (चेतन भगत के विचार और हिंदी जगत की प्रतिक्रियाएँ)		202

2015 में हिंदी जगत की चयनित खबरें

42.	'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2015 की चयनित खबरें	संपादक मंडल	211

REPUBLIC OF MAURITIUS

MINISTRY OF EDUCATION AND HUMAN RESOURCES, TERTIARY EDUCATION AND SCIENTIFIC RESEARCH

(Office of the Minister)

संदेश

विश्व हिंदी पत्रिका के माध्यम से आप सभी पाठकों को एक बार फिर से कुछ शब्द कहने का मौका पाकर मुझे बहुत खुशी हो रही है।

मॉरीशस सरकार व भारत सरकार ने मिलकर जब विश्व हिंदी सचिवालय के रूप की कल्पना की थी, तभी यह सोच लिया गया था कि प्रकाशन का काम इस संस्था के लिए एक महत्वपूर्ण गतिविधि रहेगी। आज यह देखते हुए गर्व का अनुभव होता है कि बहुत कम समय में सचिवालय की शोध पत्रिका और उसका सूचना पत्र विश्व में हिंदी के क्षेत्र की दिन-प्रतिदिन की खबरों और गहरे शोध के ऐसे दस्तावेज़ बन चुके हैं जो पूरे विश्व हिंदी अकाडीमिया के लिए अनेक संभावनाएँ खोलती हैं। मुझे पूरी आशा है कि विश्व हिंदी पत्रिका का यह अंक भी आप सभी पाठकों के लिए उतना ही उपयोगी और लाभदायक होगा। विश्व हिंदी सचिवालय के कार्यवाहक महासचिव, श्री सुखलाल और उनकी संपादन टीम, साथ ही सभी लेखकों-विद्वानों को इस सार्थक प्रकाशन की बधाई।

सचिवालय ने इस अंक को 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन और हिंदी के इ-संसार से जोड़कर यह साबित किया है कि वह अपने समय और युग दोनों में हो रहे बदलाव को बहुत अच्छी तहर पहचान रहा है। विश्व हिंदी सम्मेलन साल 2015 में हिंदी जगत की सबसे महत्वपूर्ण घटना रही। इसने हिंदी के भविष्य की दिशाएँ और उसकी मंज़िल की ओर जाने वाला रास्ता दिखाया। भविष्य की वो दिशाएँ और वो मंज़िलें टेक्नोलॉजी के मार्ग से ही पाई जा सकेंगी। इसलिए वर्तमान समय में हिंदी के इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल संसार को समझना ज़रूरी हो गया है। साथ ही इस क्षेत्र में विकास की गति को तेज़ करने वाली कुछ विशेष योजनाओं को दुनिया के सामने लाना भी ज़रूरी है। इस योगदान के लिए पत्रिका के इस अंक का और भी उत्साह के साथ स्वागत करना चाहिए।

विश्व हिंदी सम्मेलन के ही एक और महत्वपूर्ण निर्णय के बारे में इस पत्रिका के माध्यम से ही भारत सरकार के साथ-साथ पूरे विश्व हिंदी समाज के प्रति आभार प्रकट करना चाहूँगी। आप सभी ने 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन को मॉरीशस में आयोजित करने का जो मंतव्य पारित किया, उससे एक बार फिर मॉरीशस के हिंदी प्रेम का सम्मान बढ़ा है। मॉरीशस इस सम्मान को पूरी विनम्रता के साथ स्वीकार करता है। साथ ही विश्व हिंदी समाज को यह विश्वास दिलाता है कि हमारी ओर से इस दिशा में पूरे उत्साह और लगन के साथ काम किया जाएगा। आप सभी के समान हमारा भी यही सपना है कि 11वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन एक और मील का पत्थर बने। इसके साथ ही, आशा है कि अगले विश्व हिंदी सम्मेलन तक हमारे सचिवालय का नया भवन तैयार हो जाएगा।

विश्व हिंदी समाज और सचिवालय के लिए एक और बहुत ही सक्रिय व सफल वर्ष की शुभकामनाओं के साथ विश्व हिंदी पत्रिका के पाठकों को नव वर्ष 2016, विश्व हिंदी दिवस और मकर संक्रांति की हार्दिक शुभकामनाएँ।

(श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन)

10 दिसंबर, 2015

MITD House, Phoenix
Tel. No.: (230) 6862402/03 • Fax: (230) 6983601/ (230) 6861478
E-mail: moeministeroffice@govmu.org

भारतीय उच्चायोग
पोर्ट लुई, मॉरीशस

HIGH COMMISSION OF INDIA
PORT LOUIS, MAURITIUS

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि विश्व हिंदी सचिवालय अपनी पत्रिका का सातवां अंक प्रकाशित करने जा रहा है। भारत और मॉरीशस के वर्षों पुराने ऐतिहासिक संबंधों को मज़बूती प्रदान करने की दिशा में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना अपने आप में ऐतिहासिक एवं अनूठी है। हिंदी भाषा को विश्व स्तर पर व्यापक प्रतिष्ठा एवं पहचान दिलाने में भी सचिवालय की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह अत्यंत सुखद सूचना है कि 2018 में 11वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस में आयोजित किया जा रहा है। इसी उपलक्ष्य में विश्व हिंदी सचिवालय के नवीन भवन का उद्घाटन किए जाने का भी प्रस्ताव है। मुझे पूर्ण विश्वास है मॉरीशस में आयोजित होनेवाले आगामी विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी की उन्नति एवं विकास के नए आयाम विकसित होंगे।

वैश्वीकरण के इस युग में हिंदी की लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ रही है। आज हिंदी विश्व के अनेक देशों में बोली जा रही है तथा वहाँ की शिक्षण संस्थाओं में औपचारिक रूप से पढ़ाई जा रही है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की बढ़ती संभावनाओं में हिंदी अन्य समृद्ध भाषाओं के साथ न केवल कदम मिला रही है बल्कि तीव्र गति से आगे भी बढ़ रही है।

विश्व हिंदी पत्रिका का यह नवीनतम अंक विश्व परिप्रेक्ष्य में हिंदी को तकनीकी क्षेत्र में संपन्न बनाने की दिशा में किए जा रहे प्रयासों का लेखा-जोखा प्रस्तुत कर रहा है। मैं पत्रिका के संपादक मंडल को उनके इस स्तुत्य प्रयास के लिए बधाई देता हूँ तथा आशा करता हूँ कि नए वर्ष में विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा हिंदी की समुन्नति के लिए किए जा रहे प्रयासों को नवीन दिशा और दशा मिलेगी।

अनूप मुद्गल

(अनूप मुद्गल)

6th Floor, L.I.C. Building, John Kennedy Street, Port Louis, Mauritius
Tel.: (230)208 3775/6 Fax: (230) 208 8891
Email: coined@intnet.mu hciadm@intnet.mu
Website: www.indiahighcom-mauritius.org

विश्व हिंदी सम्मेलन : हिंदी की ऊर्जा गतिमान रहे...

भोपाल, भारत में दसवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन हिंदी की ऊर्जा के अभूतपूर्व प्रदर्शन का सम्मेलन रहा। सम्मेलन के तुरंत बाद अनेक वरिष्ठ हिंदी कार्यकर्ताओं की ओर से सम्मेलन के आयोजन के इस पक्ष को उभारा गया और कहा गया कि इस सम्मेलन ने सिखाया कि हिंदी को कैसे सेलिब्रेट किया जाना चाहिए। सीधी सपाट भाषा में कहूँ तो यह कि हिंदी के बहुत से सम्मेलन मातमपुरसी के माहौल में बीतते आए हैं। हिंदी की दशा और दिशा, हिंदी को किस भाषा और कैसी मानसिकता से कैसा संकट है, साहित्य के प्रति पाठकों की उदासीनता आदि पूर्वाग्रही विषयों के चलते सम्मेलनों की शुरुआत ही नकारात्मक नहीं तो कम-से-कम बैक फुट पर होती रही। कुछ लोगों को यह सुहाता भी रहा, क्योंकि बिना प्रलय की आशंका जगाए अवतार बनने का श्रेय पाना कठिन होता है।

इस मातमपुरसी से एकदम विपरीत कुछ लोगों ने हिंदी का अपना जश्न मनाना शुरू कर दिया है। डेस्टिनेशन वेडिंग के समान हिंदी के डेस्टिनेशन अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन होने लगे हैं, जहाँ दो मिनट की प्रस्तुतियों में हिंदी की दुर्दशा का दुख रोना, रोने के बदले प्रमाण-पत्र और सम्मान पाना और उस ग़म को ग़लक करने के लिए डेस्टिनेशन के पर्यटन स्थलों का दौरा।

लेकिन अब ऐसा लगता है कि हिंदी समाज प्रलय की आशंका में जीते-जीते ऊब गया है। ऐसे में दो ही रास्ते बचे थे। मौन धारण करके उस समाज को धीरे-धीरे भाषा के प्रति उदासीन होते देखें या उस समाज में अपनी भाषा की ऊर्जा का आंतरिक विश्वास जगाएँ। 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन ने दूसरा मार्ग अपनाया।

ऐसा नहीं कि इससे पूर्व सम्मेलनों में हिंदी की इस ऊर्जा का प्रमाण नहीं मिला हो। विगत हर सम्मेलन की अपनी विशेषता रही और हर एक ने अपने-अपने तरीके से इस ऊर्जा को समेटने और प्रदर्शित करने का प्रयास किया है। लेकिन इतना तो निश्चित है कि 10वें सम्मेलन ने इस प्रयास को एक अलग ही ऊँचाई प्रदान की।

इसमें वर्तमान नेताओं की भाषा के प्रति निष्ठा और अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत और भारतीय डायस्पोरा का ओजपूर्ण अभ्युदय महत्वपूर्ण संबल रहे। विश्व हिंदी सम्मेलन का तीन दशक बाद भारत भूमि पर पहुँचना जो कि हिंदी की ऊर्जा का क्रोड़ है, और उसपर हिंदी के प्रति सकर्मक रूप से समर्पित मध्यप्रदेश में यह आयोजन होना इस अभूतपूर्व सफलता में विशेष सहयोगी है।

हिंदी की जीवंतता का यह जश्न मनाने में सबसे बड़ा योगदान निस्संदेह हिंदी की विशाल स्थितिज ऊर्जा (potential energy) का रहा। स्थितिज ऊर्जा की परिभाषा देते हुए भारतकोश में लिखा गया है : किसी वस्तु में उसकी अवस्था या स्थिति के कारण कार्य करने की क्षमता को स्थितिज ऊर्जा कहते हैं। जैसे बाँध बना कर इकट्ठा किए गए पानी की ऊर्जा।

हिंदी की विशाल स्थितिज ऊर्जा

जलाशय के इसी उदाहरण को आधार बनाकर हिंदी की इस ऊर्जा को समझने का प्रयास करें। निस्संदेह इस भाषा के साथ जुड़ा विशाल जनसमूह इसका पुंज (Mass) है। इस समूह की संख्या हम किसी भी शोध-स्रोत से स्वीकारें, इसकी विशालता हर प्रतिमान से स्वयं सिद्ध है। और इस विशालता का ज़िक्र जहाँ आज तक आलेखों, किताबों, प्रपत्रों में किया गया वहीं इस सम्मेलन ने उसे विश्व के समक्ष प्रस्तुत करने का पुरजोर प्रयास किया। विदेश में अल्पसंख्यक हिंदी समुदायों में बसे भाषा प्रेमी के मन पर इसके प्रभाव और उस प्रभाव के महत्व का अनुमान लगाना किसी भी सकारात्मक सोच वाले के लिए कठिन नहीं है।

हिंदी का लंबा इतिहास इस बाँध की गहराई है। इसी में उसका समृद्ध साहित्य भी आता है जिसका प्रदर्शन भोपाल की गलियों-

चौराहों से लेकर सम्मेलन-स्थल के हर कोने में पूरे गौरव के साथ किया गया।

हिंदी की वैश्विक उपस्थिति इस बाँध का विस्तार-फैलाव है जिसका प्रमाण लगभग 40 देशों से आए विद्वान थे ही, साथ में जिसको सम्मेलन कक्षों, प्रदर्शनी केंद्रों के नामकरण ने भी दर्शाया।

इसके साथ ही विगत कई दशकों में हिंदी से जुड़े प्रौद्योगिकी, विज्ञान, वाणिज्ञ का ज्ञान इस विशाल जल-समूह से आ मिली नई धाराएँ हैं जो उसमें संख्यात्मक व गुणात्मक दोनों प्रकार से अभिवृद्धि कर रही हैं।

यह सब मिलाकर बनती है हिंदी की स्थितिज ऊर्जा। एक बड़े जलाशय में अनेक स्रोतों से लंबे समय से लगातार जमा हो रहे पानी के समान जिसका अस्तित्व मात्र ही—अपनी संख्यात्मक, गुणात्मक क्षमता से—ऊर्जा का संचार कर देता है।

ऊर्जा की पहचान, स्वीकृति और विस्तार की संभावनाएँ

विश्व हिंदी सम्मेलन ने जिस सुनियोजित रूप से, भव्यता से और विशेषकर सकारात्मकता से हिंदी की इस तमाम ऊर्जा का प्रदर्शन किया वह निश्चय ही पूर्व के किसी आयोजन में नहीं हो पाया था। आयोजन में यह दर्शाने का भी पूरा प्रयास किया गया कि हिंदी की स्थितिज ऊर्जा का प्रयोग किस प्रकार से और किनके द्वारा किया जा रहा है। माइक्रोसॉफ़्ट, एपल, वेबदुनिया के उत्पाद, विश्वविद्यालयों के शिक्षण कार्यक्रम और प्रकाशन, मंत्रालयों की भाषा-योजनाएँ ये सभी इसके उदाहरण हैं।

हिंदी की स्थितिज ऊर्जा में हुई वृद्धि—उससे लगातार जुड़ रही युवा पीढ़ी की स्वीकृति और प्रदर्शन भी अनिवार्य थे। इस सम्मेलन ने युवा प्रतिभागिता की वास्तविक परिभाषा दी और विश्व हिंदी सम्मान की सूची में अनेक देशों के युवा हिंदी सेवियों को स्थान देकर उस प्रतिभागिता के भविष्य को प्रोत्साहित भी किया।

इससे भी अधिक आयोजक इस बात के लिए बधाई के पात्र हैं कि इस सम्मेलन ने आयोजन के स्तर और गुणवत्ता की दृष्टि से हिंदी सम्मेलनों के पारंपरिक प्रतिमानों से बहुत ऊँचा उठकर देखा। यहाँ तक कि आयोजन में भाषा से अलग माने जाने वाले पर्यावरण आदि मुद्दों पर विचार की क्षमता भी दिखाई। प्लास्टिक के कप की जगह पर ताम्बे का लोटा प्रयोग करना एक अत्यंत ही प्रतीकात्मक कदम रहा।

कौड़ी आपको दूर की लगे तब भी, कल्पना तो यही है कि एक दिन विश्व हिंदी सम्मेलन ऐसे जुटाव का रूप धारण करे जहाँ फ्रांकोफ़ोन शिखर सम्मेलन के समान केवल भाषा पर ही नहीं बल्कि भाषा में विश्व से जुड़े हर मुद्दे पर उच्च स्तरीय चर्चा हो सके। भाषा की वैश्विकता की असली कसौटी वही होगी।

साहित्यकार मित्रों को नाराज़ करने का संकट उठाते हुए यह कहूँगा कि इस सम्मेलन में हिंदी की इस विशाल संपदा के गुरुत्वाकर्षण का केंद्र साहित्य से हटाकर उसका अन्य विषयों में विभाजन करना विश्व हिंदी का नया चेहरा उभारने की दिशा में क्रांतिकारी रहा। किसी भी भाषा का साहित्य उसकी क्षमताओं का शिखर है। लेकिन शिखर को अडिग बनाए रखने के लिए विस्तृत और सुदृढ़ आधार अनिवार्य है। अन्यथा भाषा में केवल शिखर बचे रहने से किसी का कोई लाभ नहीं।

इन सभी दृष्टियों से एक अभूतपूर्व सम्मेलन के लिए आयोजक विश्व हिंदी समुदाय का आभार स्वीकार करें।

वृत्ताकार यात्रा का संकट

यहाँ से आगे...

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी की स्थितिज ऊर्जा का सफल प्रदर्शन अपने आप आयोजकों पर यह भार डालता है कि अगला सम्मेलन प्रदर्शन से आगे का चरण हो। यह अगला चरण सम्मेलन के मंतव्यों और अनुशंसाओं पर केवल प्रशासनिक नहीं बल्कि प्रणालीबद्ध और वैज्ञानिक तरीके से कार्य करने पर ही प्राप्त किया जा सकेगा।

विगत विश्व हिंदी सम्मेलनों ने इस तथ्य का प्रमाण दिया है कि यदि ये आयोजन केवल हिंदी की स्थितिज ऊर्जा पुंज के प्रदर्शन का अवसर बनकर रह जाते हैं तो अगले सम्मेलन में सभी प्रतिभागी पुन:

उसी पुंज का आकलन मात्र करने बैठ जाते हैं। फिर वही मातमपुरसी, वही प्रशंसाएँ, वही बातें। ऐसा नहीं कि उन सम्मेलनों ने इस ऊर्जा को गतिमान और रूपांतरित करने के तरीके नहीं सुझाए... नए मार्गों का अन्वेषण नहीं किया और उन मार्गों पर कदम ही नहीं रखे गए। सब हुआ, लेकिन कहीं न कहीं कुछ रुकावटें अवश्य आईं या संभवत: कार्यप्रणाली में कुछ चूक अवश्य हुई जिससे कि वह गतिमानता बाधित हुई। इसका परिणाम यह होता है कि एक सम्मेलन से दूसरे तक की यात्रा वृत्ताकार बनकर रह जाती है और हम पुन: प्रारंभिक बिंदु पर आकर खड़े हो जाते हैं।

इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है:

दक्षिण अफ्रीका में आयोजित होने के कारण 9वें विश्व हिंदी सम्मेलन में आप्रवासी देशों में हिंदी शिक्षण की समस्याओं पर गहन चिंतन हुआ। सत्र हुए, प्रपत्र हुए। कई सुझाव आए। वैश्विक स्तर पर एक मानक पाठयक्रम की चर्चा हुई। एक पाठयक्रम निर्माण संबंधी मंतव्य पारित हुआ। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय द्वारा इस दिशा में कार्य भी किया गया। पाठयक्रम तैयार हुआ। यहाँ तक की गतिशीलता को प्रत्यक्ष देखने के बाद जब भोपाल में लगभग इसी विषय पर सत्र लगा तो अपेक्षा थी कि अब पुन: समस्याओं का आकलन क्यों किया जाए, पुन: उसी डेटा को फिर से प्रस्तुत करके मानसिक जुगाली करने के स्थान पर उसके आधार पर हुए कार्य की मीमांसा क्यों की जाए। परंतु सत्रों के बाद यही आभास हुआ कि 2012 से लेकर 2015 तक की वह मेहनत धुंधली हुई और सारी विचार-प्रक्रिया पुन: शून्य से आरंभ हुई।

ऐसा नहीं कि ऊर्जा का संचार नहीं हुआ लेकिन परिणाम यही निकला कि जिन समस्याओं का सामना वे देश वर्षों से कर रहे हैं, इस सम्मेलन में उसी बात पर नए सिरे से हुई चर्चा के बाद लिये गए नए निर्णयों के कार्यान्वयन की प्रतीक्षा में वे समस्याएँ अभी भी बनी हुई हैं। जब तक वे समस्याएँ बनी रहेंगी तब तक सम्मेलन-से-सम्मेलन तक की यात्रा का वृत्ताकार होने का संकट बना रहेगा। यह वृत्ताकार यात्रा कभी-कभार अटपटे परिणाम भी दिखाती है।

अपने अनुभव से एक उदाहरण देता हूँ। 9वें सम्मेलन के पहले मंतव्यों ने विश्व हिंदी सचिवालय को विश्व भर के हिंदी विद्वानों का डेटाबेस बनाने का कार्य सौंपा। सचिवालय ने सभी प्रक्रियाएँ पूरी करते हुए कार्यारम्भ किया। स्वाभाविक मेहनत के बाद डेटाबेस तैयार किया गया और 10वें सम्मेलन के मंच से उसके लोकार्पण का प्रस्ताव भेजा गया। इस बात को भूल जाते हैं कि सम्मेलन समाप्त हुए तीन महीना हो गया पर अभी तक उत्तर की प्रतीक्षा है। अटपटा यह लगा कि जिस विचार प्रक्रिया (सम्मेलन) ने अपने पूर्व निर्णय पर हुए कार्य की पावती तक नहीं भेजी वह नए सम्मेलन में यह मंतव्य कैसे पारित कर सकता है कि सचिवालय को और सक्रिय बनाना चाहिए!

बात केवल सचिवालय की नहीं है। अपने पूर्व निर्णय के परिणाम का मूल्यांकन कर पाने की क्षमता के अभाव में कोई भी प्रणाली अपने साझीदारों में पहले तो उदासीनता और उसके बाद निश्चित निष्क्रियता ही उत्पन्न करेगी।

हिंदी सम्मेलनों में भावात्मकता-विचारशीलता और वैज्ञानिकता-परिणामोन्मुखता के अनुपात में संतुलन का मेरा प्रतिमान तो यही है कि यदि किसी अंतरराष्ट्रीय चिकित्सा सम्मेलन में एक बीमारी के सभी पक्षों का आकलन हो गया हो तो चिकित्सक समाज यह कभी नहीं स्वीकारेगा कि अगले सम्मेलन में उस बीमारी की दवा तैयार न हुई हो। सवाल लोगों के जीवन का होता है। प्रवासी देशों में हिंदी की समस्याओं की दवा का सवाल भी एक भाषा और उससे जुड़ी संस्कृति के जीवन का ही होता है!

स्थितिज से गतिज तक का संघर्ष...

अगला चरण इससे भी आगे का है क्योंकि वास्तविक चुनौती है हिंदी की स्थितिज ऊर्जा को गतिज (kinetic) ऊर्जा में परिवर्तित करने की।

ऊपर दिए गए उदाहरणों का उद्देश्य कोई उलाहना देना नहीं था। उद्देश्य था और है इस तथ्य के प्रति जागरूकता पैदा करना कि भले ही हम जानते हैं कि हम जिस भाषा की बात कर रहे हैं उसमें असीम

ऊर्जा है, वह ऊर्जा स्थितिज स्थिति में है, उसके गतिज होने की पूरी संभावना है, और हमें उसको गतिज बनाने के लिए सक्रिय रूप से प्रयास करना चाहिए; हम अभी तक उसके स्थितिज रूप को समझने, उसका संवर्धन करने, उसमें संख्यात्मक और गुणात्मक वृद्धि लाने के विवेकपूर्ण परंतु आधारभूत निर्णयों को ही किन्हीं कारणवश अमल में ला पाने में असफल होते जा रहे हैं। (हाँ, यदि यह जागरूकता भी पैदा नहीं हो पाई तो उलाहना वाजिब बन जाएगा।)

ऐसे में हम उस विशाल स्थितिज ऊर्जा को गतिज में परिवर्तित करने में लगातार देरी करते रहेंगे। वह देरी लगातार मातमपुरसी का मौका देती रहेगी। उससे हमारी हर चर्चा बीमारी को समझने से ही शुरु होगी। सम्मेलन-से-सम्मेलन तक की यात्रा वृत्ताकार ही रहेगी।

इस वृत्ताकार यात्रा से बाहर निकलने पर ज्ञात होगा कि स्थितिज को गतिज में परिवर्तित करने में कितनी और कठिनाइयाँ आएँगी।

यह सच है कि ऊर्जा का नाश नहीं किया जा सकता। हिंदी की स्थितिज ऊर्जा अपने आप में जितनी विशाल है उसके नष्ट होने की कल्पना भी नहीं करनी चाहिए। लेकिन ऊर्जा के इस विशाल स्रोत के अस्तित्व को स्वीकारते हुए भी उसके संबंध में कुछ प्रश्न ऐसे हैं जो हमारी अभी तक की नीतियों और कार्यप्रणाली की सार्थकता सिद्ध करने में सहायक होंगे।

पहला प्रश्न। सुप्तावस्था में ऊर्जा और विनष्ट ऊर्जा में क्या कोई विशेष अंतर है ? विशाल बाँध में अपार पानी इकट्ठा होने मात्र से क्या वह उपयोगी हो जाता है ? या फिर उसके बाद उस पानी को गतिमान करना और गतिमान रखना दोनों की ही अनिवार्यता होती है क्योंकि गति ठप तो ऊर्जा ठप।

इसलिए हिंदी की इस स्थितिज ऊर्जा के बल को मुक्त, और गतिमान करते हुए किस प्रकार उसे गतिज ऊर्जा में रूपांतरित किया जा सकता है यह हिंदी का सबसे ज्वलंत समकालीन प्रश्न है। और इसपर विचाररत होना हिंदी के लिए कार्यरत प्रत्येक व्यक्ति का प्रथम कर्तव्य बनता है।

'हिंदी की नौकरी' बनाम 'हिंदी से नौकरी'

यदि आपको हिंदी को एक ऊर्जा स्थिति से दूसरी तक ले जाने की संकल्पना अस्पष्ट लग रही हो तो उसको इस रूप में भी समझा जा सकता है कि अभी तक हिंदी से पैदा होनेवाला अधिकतर रोज़गार असल में हिंदी की नौकरियाँ हैं। अध्यापन, अनुवाद, कुछ हद तक पत्रकारिता आदि। इनमें हम स्थितिज ऊर्जा की उपज बटोर रहे होते हैं। हिंदी से अर्थात हिंदी के विशाल जनसमूह के लिए हिंदी को ही उत्पाद के रूप में विकसित करनेवाली अधिकतर नौकरियाँ मनोरंजन क्षेत्र (टीवी और सिनेमा) और विज्ञापन मात्र की हैं। आईटी क्षेत्र में भी हिंदी संबंधित अधिकतर नौकरियाँ अभी अनुवाद के दायरे में ही सीमित हैं।

गतिज ऊर्जा के सृजन का प्रमाण तभी मिलेगा जब अधिकतर नौकरियाँ हिंदी की नहीं बल्कि हिंदी से पैदा होंगी।

अनुरोध है कि इस बात की अपनी समझ भारतीय सीमाओं में न बांधें। यदि एक भाषा केवल एक ही देश में अपनी ऊर्जा से नौकरियाँ उत्पन्न कर सके और बाकी दुनिया में हिंदी की नौकरियों को भी खतरा हो तो उसे वैश्वीकरण के युग में विश्व भाषा मानना कठिन हो जाएगा। इसलिए अधिकतर नौकरियाँ हिंदी की नहीं बल्कि हिंदी से पैदा होने वाली स्थिति भारत, प्रवासी देशों और संपूर्ण विश्व में उचित अनुपात में विकसित करने की चुनौती स्वीकारनी होगी। इसके लिए और अधिक क्षेत्र विकसित करने होंगे जहाँ हिंदी की इस ऊर्जा से नई ऊर्जा उत्पन्न हो।

इस दिशा में कौन सी संभावनाएँ हैं ? आपका प्रश्न जायज है। मेरी समझ में जो उत्तर है उसके लिए आपको पत्रिका के पिछले अंक के संपादकीय की ओर जाने के लिए कहूँगा जहाँ हिंदी में उपस्थित ज्ञान के भंडार को विकसित करने की बात कही गई थी। इसी बात को इस अंक में सुश्री अक्षयवर का आलेख भी परोक्ष रूप से कहता है।

विश्व भाषा कही जानेवाली किसी भी अन्य भाषा के साथ हिंदी की तुलना करें। उस भाषा में और हिंदी में (हिंदी पर नहीं) अनेक क्षेत्रों के विषय में ज्ञान संबंधित प्रकाशन की तुलना करें।

स्पष्ट होगा कि हिंदी पर शोध की तुलना में हिंदी में शोध का बाज़ार बहुत कमज़ोर है और हिंदी पर शोध का बाज़ार भी हिंदी में शोध के बाज़ार के अभाव में धीरे-धीरे क्षीण ही होता जाएगा।

सम्मेलन-से-सम्मेलन तक की यात्रा वृत्ताकार नहीं रेखाकार बने

इस बात से सहमती निर्विवाद है कि वर्तमान वैश्विक परिस्थितियाँ और अधिक विलंब की अनुमति नहीं देतीं। विश्व हिंदी की सुरक्षा, विस्तार, और उसका उन्नयन (अर्थात स्थितिज ऊर्जा की सुरक्षा, संवर्धन के साथ-साथ नई ऊर्जा के सृजन) की अनिवार्य प्रक्रिया में और विलंब भाषा के वैश्विक रूप के लिए हानिकारक होगी। इसके लिए आयोजन की दृष्टि से अतुल्य 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में लिए गए उन सार्थक निर्णयों को कार्यान्वित करने की प्रक्रिया का तीव्र के साथ-साथ निरविरुद्ध होना सम्मेलन की वास्तविक सफलता की अंतिम कसौटी मानी जानी चाहिए।

माननीया सुषमा स्वराज जी ने उद्घाटन समारोह में अपनी प्रस्तावना के अंतर्गत सम्मेलन के परिणामोन्मुख होने की बात कहकर इस ओर संकेत किया है। संकेत इस बात के भी हैं कि कार्यान्वयन की गतिशीलता के लिए मार्ग प्रशस्त किए गए हैं। चुनौती अब यह है कि सम्मेलन-से सम्मेलन के बीच की पूरी यात्रा तक उस मार्ग को उसको साफ़-सुथरा और निर्बाध भी रखा जाए। बाधाएँ—उपस्थित या संभावित, पहचानी जाएँ।

इस सम्मेलन और आनेवाले सभी सम्मेलनों द्वारा हिंदी की स्थितिज ऊर्जा को गतिमान करने की दिशा में जो भी कदम उठे उनका मार्ग उसी प्रकार निर्बाध हो जिस प्रकार जलाशय के स्थिर पानी से बिजली उत्पादन करने के लिए तेज़ रफ़्तार नलियों में पानी टरबाइन की ओर निर्बाध बहता रहना चाहिए।

इसका उत्तरदायित्व केवल आयोजकों, मंत्रालय, भारत सरकार अथवा मॉरीशस सरकार का नहीं हो सकता। इसलिए अनिवार्य है कि कार्य, कार्य का निरीक्षण, चूक होने पर ध्यान आकर्षित कराते हुए चेतावनी देने का साहस आदि अनेक उत्तरदायित्व, हिंदी के पक्षधर हर व्यक्ति और हर संस्था के बीच समान रूप से बँटा हो। जो भी अपने हिस्से में आनेवाले उत्तरदायित्व के लिए तैयार न हो उसको अगले सम्मेलन में मातमपुरसी का अधिकार भी न हो! अगला सम्मेलन पुरानी यात्रा का पुनरारंभ नहीं, भोपाल में आरंभ हुई हिंदी की ऊर्जा की गतिमानता की यात्रा में अगला चरण हो!

2018 में मॉरीशस में भेंट की प्रतीक्षा में, विश्व-हिंदी की ऊर्जा गतिमान रहे...

गंगाधरसिंह गुलशन सुखलाल
प्रधान संपादक

आभार

पत्रिका का संपादक होने के साथ-साथ संस्था का प्रमुख सेवक होने का कार्यभार निभाते हुए विश्व हिंदी पत्रिका के इस पृष्ठ के माध्यम से विश्व हिंदी सचिवालय की ओर से आभार के कुछ शब्द आप तक प्रेषित करने की अनुमति चाहता हूँ।

2015 सचिवालय के लिए उसकी स्थापना के बाद के सबसे महत्वपूर्ण चरण का वर्ष रहा। यह चरण पार हुआ मार्च में जब सचिवालय के माध्यम से हिंदी के वैश्विक उन्नयन के लिए प्रतिबद्ध दोनों देशों के प्रधान मंत्री सचिवालय के नए भवन के निर्माण कार्य के आरंभ के लिए एक मंच पर उपस्थित हुए। वर्षों से धीमी गति से चल रही मुख्यालय निर्माण-योजना को नई ऊर्जा प्राप्त हुई और 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन में उसके उद्घाटन का विश्वास मिला। प्रथम आभार स्वाभाविक रूप से भारत और मॉरीशस के शीर्ष नेताओं के साथ-साथ उनके मार्गदर्शन में कार्यरत सरकार, उनके प्रतिनिधि मंत्रालयों और उच्चायोग तथा इन संस्थाओं में कार्यरत सभी शुभचिंतकों का।

यह वर्ष सचिवालय के लिए अपनी गतिविधियों की संख्या, गुणवत्ता, सफलता और विशेष रूप से सार्थकता में पिछले वर्षों से अधिक अनुपात में वृद्धि का सुखद अनुभव लेकर आया। दोहराने में कोई आपत्ति नहीं कि विश्व हिंदी सचिवालय कि सफलता और सार्थकता में किसी भी वृद्धि का अनुपात उतना ही होगा जितना उसका विश्व हिंदी समाज उससे संबद्ध और संपृक्त रहेगा। इस दिशा में भी 2015 प्रगति के सुखद प्रमाण दे गया। धन्यवाद। आभार उन सबका जिन्होंने वर्ष 2015 में सचिवालय के प्रत्येक कार्य, योजना, उपलब्धि में प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से सहयोग दिया।

पत्रिका के एक अंक को हिंदी की इ-प्रचारक योजनाओं और देश विदेश के दृश्य-श्रव्य माध्यमों पर केंद्रित करने का विचार कई वर्षों से था। जिन उद्यमी लोगों ने अपनी मेहनत से ऐसी योजनाओं को साकार किया है उनसे कई बार संपर्क करने पर अनुभव हुआ कि वे हिंदी प्रेमी कुछ अलग ही नस्ल के हैं। अकादमिक और साहित्यिक लेखन में निष्णात लेखकों से अलग। ऐसा अनुभव हुआ कि इनमें पारंपरिक हिंदी लेखकों की रंग रंगीली भाषा और उद्दात शैली के अभाव का अनावश्यक भय इनको उन योजनाओं के विषय में लिखने से रोकता है जो योजनाएँ बहुधा हिंदी के प्रचार में किसी भी महान साहित्यिक कृति से अधिक योगदान दे रही होती है। ढिठाई की सीमाओं को स्पर्श करने वाले हमारे बारंबार अनुरोध के समक्ष वह भय झुका और आखिरकार अंक इस रूप में प्रस्तुत हो पाया। हिंदी के इ-संसार के संवर्धन में संलग्न आप सभी, विश्व हिंदी के भविष्य की नींव हैं... अदृश्य रहते हुए अडिग रहना आपकी विनम्रता का संकेत है। आशा है विश्व हिंदी समाज इस विनम्र अभिव्यक्ति में भी आपके योगदान के ऐतिहासिक महत्व को आँक सके। इस समाज के समक्ष उसकी भाषा के उभरते वैश्विक चेहरे को प्रस्तुत करने की हमारी मंशा तभी पूर्ण होगी। इस विशेष भाग के अतिरिक्त पत्रिका को उसकी संपूर्णता प्रदान करने वाले प्रत्येक आलेख के लिए कलम चलाने वाले लेखकों को नमन।

मुद्रण का भार उठाने वाले विद्या विहार प्रकाशन के सहयोगी बंधु; संपादन कार्य से स्थायी रूप से जुड़ी अंजलि, उषा, त्रिशिला, दिया लक्ष्मी, चित्रा और विजया; प्रतिवर्ष के समान इस अंक में भी अमूल्य सहयोग देने वाले अरविंद, वशिष्ठ और अनुक्षा; संपादन के अतिरिक्त प्रकाशन संबंधी संपूर्ण प्रशासनिक कार्यभार संभालने वाली एशमा, रति और केशव; ये कुछ ऐसे नाम हैं जो हमारे आभार के साथ-साथ आप सभी पाठकों के आशीर्वाद के भी पात्र हैं।

मन में विश्वास है कि आप प्रतिवर्ष के समान इस अंक को भी अपना पूरा स्नेह देंगे। इसमें भी संदेह नहीं कि अवलोकन, पठन, समर्थन, चर्चा, समालोचना आदि पूरी निष्ठा से करने के अतिरिक्त विचारों और संभावनाओं को साकार करने में भी आप योगदान देंगे। आपकी ओर से सुझाव, प्रस्ताव, विचार हमारी मेहनत का पारितोषिक होगा। उसकी भी प्रतीक्षा रहेगी। अग्रिम धन्यवाद।

समाप्ति, संपूर्ण विश्व हिंदी समाज को नव वर्ष व विश्व हिंदी दिवस की शुभकामनाएँ देते हुए करते हैं।

—संपादक

10वां विश्व हिन्दी सम्मेलन

१०-१२ सितंबर, २०१५

भोपाल, भारत

10–12 सितंबर, 2015 तक विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा भोपाल, मध्य प्रदेश में 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया। अपने 10वें संस्करण में सम्मेलन की भारतीय भूमि पर वापसी, आयोजन की भव्यता और प्रतिभागियों की संख्या जहाँ इस सम्मेलन को आयोजन की दृष्टि से मील का पत्थर सिद्ध करते हैं वहीं सम्मेलन का अकादमिक ढांचा, विषयों का चयन, तथा विश्व हिंदी सम्मान प्राप्त करने वालों की सूची उस मार्ग का मील का पत्थर है जो हिंदी को भविष्य में अपनाना होगा।

संपादक मंडल के विचार से उद्घाटन समारोह में सम्मेलन की दिशाओं को निर्धारित करने वाले भारतीय प्रधान मंत्री और विदेश मंत्री के महत्वपूर्ण वक्तव्य, प्रवासी हिंदी समाज का प्रतिनिधि, मॉरीशस की शिक्षा मंत्री द्वारा प्रवासी देशों में हिंदी की स्थिति और भविष्य के विषय में तथ्यपूर्ण आलेख, सम्मेलन की तीन दिनों की कार्रवाई की विस्तृत रिपोर्ट, सम्मेलन के विषय में एक अत्यंत ही नवीन और सकारात्मक दृष्टि वाली संस्मरणात्मक टिप्पणी और विश्व हिंदी सम्मान प्राप्त करने वाले भारतीय और भारतेतर विद्वानों के बारे में संक्षिप्त जानकारी को लिपिबद्ध रूप में आपके दस्तावेज़ का अंश बनाना समीचीन होगा।

1 सम्मेलन के उद्घाटन समारोह में प्रस्तुत भारत के प्रधान मंत्री, माननीय श्री नरेंद्र मोदी का संदेश

मंच पर विराजमान मध्य प्रदेश के राज्यपाल श्रीमान रामनरेश यादव जी, मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री श्रीमान शिवराज सिंह जी, मंत्री परिषद में मेरे वरिष्ठ साथी- श्रीमती सुषमा स्वराज जी, श्री रविशंकर प्रसाद जी, डॉ हर्षवर्धन जी, गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला जी, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल केसरीनाथ जी, झारखंड के मुख्य मंत्री श्रीमान रघुबरदास जी, मॉरीशस की मंत्री श्रीमती लीला देवी, केंद्र में मंत्रिमंडल में मेरे साथी जनरल डॉ. वी.के. सिंह जी, श्रीमान किरेन रिजिजू जी, श्री अनिल वाधवा जी, दुनिया के कोने-कोने से आए हुए सभी हिंदी प्रेमी, करीब 40 देशों के प्रतिनिधि यहाँ मौजूद हैं। यह एक प्रकार का हिंदी महाकुंभ हो रहा है। हमें हिंदी के महाकुंभ द्वारा भोपाल की धरती के दर्शन करने का अवसर मिला है। इस बार के अधिवेशन में हिंदी भाषा पर बल देने का प्रयास किया गया है। जब भाषा होती है तब हमें अंदाज़ा नहीं होता है कि उसकी ताकत क्या होती है लेकिन जब भाषा लुप्त हो जाती है तो सबकी चिंता होती है कि आखिर इसमें है क्या? ये लिपि कौन सी है? भाषा कौन सी है? सामग्री कौन सी है? विषय क्या है? आज कहीं पत्थरों पर कुछ लिखा हुआ मिलता है तो सालों तक पुरातत्व विभाग उस खोज में रहता है कि क्या लिखा गया है और भाषा के लुप्त होने के बाद एक बड़ा संकट पैदा होता है जिसका हमें अंदाज़ा नहीं है। कभी-कभी हम यह चर्चा कर लेते हैं कि डायनोसॉर नहीं रहा तो बड़ी-बड़ी मूवी बनती है—डायनोसॉर कैसा था, डायनोसॉर क्या करता था। जीवशास्त्रवाले देखते हैं कि कैसा था, कुछ आर्टिफ़िशल डायनोसॉर बनाकर रखा जाता है ताकि नई पीढ़ी को पता चले कि डायनोसॉर कैसा हुआ करता था। इसको जानने-पहचानने के लिए आज हमें इस प्रकार के मार्गों का उपयोग करना पड़ता है।

हमारी संस्कृत भाषा में ज्ञान के भंडार भरे पड़े हैं लेकिन संस्कृत भाषा को जाननेवाले लोगों की कमी के कारण उन ज्ञान के भंडारों का लाभ हम नहीं ले पा रहे हैं। हमें पता तक नहीं चला कि

हम अपनी इस महान विरासत से धीरे-धीरे कैसे अलग होते गए। हम और चीज़ों में ऐसे लिप्त होते गए कि हमारा अपना लुप्त हो गया और इसलिए हर पीढ़ी का यह दायित्व बनता है कि उसके पास जो विरासत है उसे सुरक्षित रखा जाए, हो सके तो संजोया जाए और आनेवाली पीढ़ियों में उसको संक्रमित किया जाए। हमारे पूर्वजों ने वेद पाठ में एक परंपरा पैदा की थी कि वेदों के ज्ञान को पीढ़ी दर पीढ़ी ले जाने के लिए वेद पाठ करते थे और जब लिखने की सुविधा नहीं थी, कागज़ की खोज नहीं हुई थी तो उस ज्ञान को स्मृति द्वारा दूसरी पीढ़ी में संक्रमित किया जाता था। पीढ़ियों तक यह परंपरा चलती रही थी। अगर एक इलाके में पौधे हैं और बहुत ही कम स्पेसिमेन रह गए हैं तो उसे बचाने के लिए दुनिया अरबों खर्च कर देती है। इन बातों से पता चलता है कि इन चीज़ों का मूल्य क्या है। जैसे इन चीज़ों का मूल्य है वैसे ही भाषा का भी मूल्य है और इसलिए जब तक हम उसे इस रूप में नहीं देखेंगे तब तक हम उसके महात्म्य को नहीं समझेंगे। हर पीढ़ी का दायित्व रहता है भाषा को समृद्धि देना।

मेरी मातृ भाषा हिंदी नहीं बल्कि गुजराती है लेकिन मैं सोचता हूँ कि अगर मुझे हिंदी भाषा बोलना, समझना न आता तो मेरा क्या हुआ होता। मैं लोगों तक कैसे पहुँचता। मैं लोगों की बात कैसे समझता और मुझे तो व्यक्तिगत रूप में भी इस भाषा की ताकत का भली-भाँति अंदाज़ा है। हमारे देश में हिंदी भाषा का आंदोलन ज़्यादातर उन लोगों ने चलाया है जिनकी मातृ भाषा हिंदी नहीं थी। सुभाषचंद्र बोस, लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, काका साहब कालेलकर, राज गोपाल आचार्य, आदि की मातृ भाषा हिंदी नहीं थी। हिंदी भाषा के संरक्षण और संवर्धन के लिए जिस दीर्घ दृष्टि से उन्होंने काम किया था वह हमें प्रेरणा देती है। आचार्य विनोबा भावे, दादा धर्माधिकारी जी, गांधियन फिलॉसॉफ़ी से निकले हुए लोगों ने भाषा और लिपि की अलग-अलग ताकत को पहचाना। हमें धीरे-धीरे आदत डालनी चाहिए कि हिंदुस्तान की जितनी भाषाएँ हैं वे भाषाएँ अपनी लिपि को तो बरकरार रखें, समृद्ध बनाएँ लेकिन नागरी लिपि में भी अपनी भाषा लिखने की आदत डालें। अगर विनोबा जी, दादा धर्माधिकारी, गांधियन मूल्यों से जुड़े हुए लोगों के विचारों से लोग प्रभावित हुए होते तो लिपि भी भारत की विविध भाषाओं को समझने और भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए एक बहुत बड़ी ताकत के रूप में उभर आई होती।

भाषा जड़ नहीं हो सकती। जैसे जीवन में चेतना होती है वैसे ही भाषा में भी चेतना होती है। हो सकता है कि उस चेतना की अनुभूति स्टेथोस्कोप से नहीं जानी जाती होगी, चेतना की अनुभूति थर्मोमीटर से नहीं नापी जाती होगी लेकिन उसका विकास, उसकी समृद्धि उस चेतना की अनुभूति कराती है। वह पत्थर की तरह जड़ नहीं हो सकती है। भाषा मचलती हुई एक हवा का झोंका है, जिस प्रकार से बहती है, जहाँ से गुज़रती है वहाँ की सुगंध को अपने साथ लेकर चलती तथा जोड़ती जाती है। भाषा जिस पीढ़ी, इलाके और हालात से गुज़रे, वह अपने आपमें समाहित, पुरस्कृत तथा पुलकित करती रहती है। भाषा की यह ताकत होती है और इसलिए भाषा चैतन्य होती है। इस चेतना की अनुभूति आवश्यक होती है।

पिछले दिनों जब भारतीय प्रवासी सम्मेलन हुआ था तो हमारे विदेश मंत्रालय ने एक बड़ा अनूठा कार्यक्रम रखा था कि दुनिया के अन्य देशों में भारतीय लेखकों द्वारा लिखी किताबों का प्रदर्शन किया जाए। मैं हैरान और खुश भी था कि अकेले मॉरीशस से डेढ़ सौ लेखकों द्वारा हिंदी में लिखी गई किताबों का वहाँ पर प्रदर्शन हो रहा था यानी इतने देशों में भी हम हिंदी भाषा का प्यार अनुभव करते हैं। अगर कोई इस भूभाग में नहीं आ सकता है तो कम से कम हिंदी के दो-चार वाक्य बोलकर भी अपनी प्रतिबद्धता को व्यक्त कर देता है। हमारा यह निरंतर प्रयास रहना चाहिए कि हमारी भाषा को कैसे समृद्ध बनाएँ।

मेरे मन में एक विचार है—यदि हिंदी और तमिल भाषा का वर्कशॉप आयोजित करें और तमिल भाषाओं में जो अद्‌भुत शब्द हों, क्या हम उनको हिंदी भाषा का हिस्सा बना सकते है ? जम्मू-कश्मीर की डोगड़ी भाषा में दो-चार वाक्य मिल जाएँ जो हिंदी में उचित हैं, हमें प्रयत्नपूर्वक हिंदुस्तान की सभी बोलियों और भाषाओं की उत्तम चीज़ों को समय-समय पर हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए हिंदी में सम्मिलित करना चाहिए और यह अविरत प्रक्रिया चलती रहनी चाहिए। यदि कोई बंगाल के एक व्यक्ति से 'विल्यार भालो आची' पूछ ले, महाराष्ट्र के व्यक्ति से 'कशकाय काय चलतायत' पूछ ले, उसको प्रसन्नता होती है। यही भाषा की ताकत होती है। इसलिए हमारे देश के पास इतनी समृद्धि और विशेषता है। मातृ भाषा के रूप में हर राज्य के पास ऐसा अनमोल खज़ाना है और उसे जोड़ने में हिंदी भाषा एक सूत्रधार का काम कैसे करती है, उस पर यदि हम बल देंगे, हमारी भाषा और शक्तिशाली बनती जाएगी और उस दिशा में हम प्रयास कर सकते हैं।

मैं जब राजनीतिक जीवन में आया तो पहली बार गुजरात के बाहर काम करने का अवसर मिला। सब जानते हैं कि हमारे गुजराती लोग हिंदी कैसे बोलते हैं तो लोग मज़ाक भी उड़ाते हैं लेकिन मैं जब बोलता था तो लोग पूछते थे कि आपने हिंदी भाषा कहाँ से सीखी ? आप इतनी अच्छी हिंदी कैसे बोलते हैं ? हम तो वही पढ़े जो सामान्य रूप से पढ़ने के लिए मिलता है। स्कूल में जो पढ़ाया जाता है, उससे ज़्यादा नहीं लेकिन मुझे चाय बेचते-बेचते सीखने का अवसर मिल गया। मेरे गाँव में उत्तर प्रदेश के व्यापारी जो मुंबई में दूध का व्यापार करते थे उनके एजेंट ज़्यादातर उत्तर प्रदेश के लोग हुआ करते थे। वे हमारे गाँव के किसानों से भैंस लेने आते थे और दूध देनेवाली भैंसों को वे ट्रेन के डिब्बों में मुंबई ले जाते थे और मुंबई में दूध बेचते थे और जब भैंस दूध देना बंद करती थी तो फिर वे आकर गाँव में छोड़ जाते थे। ज़्यादातर रेलवे स्टेशन पर माल

गाड़ी में भैंसों को लाने-ले जाने का कारोबार हमेशा चलता रहता था। वह कारोबार करनेवाले ज़्यादातर उत्तर प्रदेश के लोग हुआ करते थे और मैं उनको चाय बेचने जाता था। उनको गुजराती नहीं आती थी और मुझे हिंदी सीखे बिना नहीं जाना था, तो चाय ने मुझे हिंदी सिखा दी थी।

भाषा सहजता से सीखी जा सकती है। भले ही कमियाँ रहती हैं, थोड़ा सा प्रयास करना आवश्यक है। जीवन के अंत तक कमियाँ रहती हैं, परंतु आत्मविश्वास नहीं खोना चाहिए। हमारे गुजरात का तो स्वभाव है कि दो लोगों का अगर झगड़ा हो जाए भले ही गाँव के भी लोग हों, वे गुजराती में झगड़ा कर ही नहीं सकते हैं। उनको लगता है कि गुजराती के झगड़े में प्रभाव पैदा नहीं होता तथा मज़ा नहीं आता है। जैसे ही झगड़े की शुरुआत होती है तो वे हिंदी में अपना शुरू कर देते हैं। दोनों गुजराती भाषा जानते हैं लेकिन अगर ऑटो रिक्शा से भी झगड़ा हो गया तो पैसों के लिए हिंदी में तू-तू, मैं-मैं शुरू हो जाती है। उसको लगता है कि हिंदी बोलने से वह दमवाला आदमी है।

इन दिनों विदेश में मेरी यात्रा के दौरान मैंने देखा कैसे विदेशी लोग हमारी बातों को समझ तथा स्वीकार कर रहे हैं। मैं मॉरीशस गया था और वहाँ पर विश्व हिंदी साहित्य का सेक्रेटेरियट शुरू हुआ है तथा मैंने उसके भवन का शिलान्यास किया है। वहाँ पर हम विश्व हिंदी साहित्य का सेंटर शुरू कर रहे हैं। उसी प्रकार मैं सेंट्रल एशिया में स्थित उज़्बेकिस्तान गया था। उज़्बेकिस्तान में मुझे एक डिक्शनेरी का लोकार्पण करने का अवसर मिला और वह डिक्शनेरी उज़्बेक से हिंदी, हिंदी से उज़्बेक थी। दुनिया के लोगों को उसके प्रति आकर्षण हो रहा है। मैं चीन की फ़ुदन यूनिवर्सिटी में गया और वहाँ पर हिंदी भाषा जाननेवाले लोगों से एक अलग मीटिंग हुई। चीनी लोग मुझसे बहुत अच्छे ढंग से हिंदी भाषा में वार्तालाप कर रहे थे यानी उनको भी लगता था कि इसका महात्म्य कितना है। मैं मंगोलिया गया और वहाँ पर भी हिंदी भाषा बोलनेवाले नज़र आए जो हिंदी भाषा के प्रति आकर्षित हैं। मेरा भाषण हिंदी में हुआ। उसका भाषांतर हो रहा था लेकिन मैं देख रहा था कि मैं हिंदी में बोल रहा था। जहाँ तालियाँ बजानी थी, तालियाँ बजाते थे और जहाँ हँसना था, वे हँसते थे यानी इतनी बड़ी मात्रा में दुनिया के अलग-अलग देशों में हमारी भाषा पहुँची हुई है और लोगों को इसपर गर्व होता है।

रूस में हिंदी भाषा पर बहुत काम हो रहा है तथा अनेक हिंदी बोलनेवाले मिलेंगे। वहाँ जाने पर सरकार की ओर से एक रूसी कर्मचारी को रखा जाता है जो हिंदी भाषा जानता है। हमारी फ़िल्म इंडस्ट्री करीब-करीब सभी देशों में हिंदी को पहुँचाने में बहुत बड़ा काम कर रही है। सेंट्रल एशिया में तो शायद आज भी बच्चे हिंदी फ़िल्मों के गीत गाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि भाषा के रूप में आनेवाले दिनों में हिंदी भाषा का महात्म्य बढ़नेवाला है। भाषा शास्त्री का एक मत है कि दुनिया में लगभग 6000 भाषाएँ हैं। जिस प्रकार दुनिया तेज़ी से बदल रही है उन लोगों का अनुमान है कि 21वीं सदी के अंत तक आते-आते इन 6000 भाषाओं में से 90 प्रतिशत भाषाओं की लुप्त होने की संभावनाएँ दिखाई दे रही हैं। भाषा शास्त्रियों ने चिंता व्यक्त की है कि छोटे-छोटे तबके के लोगों की जो भाषाएँ हैं और भाषाओं का प्रभाव और संवर्धन बदलती जाती है। प्रौद्योगिकी का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। अगर इस चेतावनी को न समझें और हमारी भाषा का संरक्षण-संवर्धन न करें तो फिर हमें भी रोते रहना पड़ेगा कि वेद के पाठ ऐसे हुआ करते थे, डायनोसॉर ऐसा था। हमारे लिए वह पुरातत्व (archeology) का विषय बन जाएगा। इसलिए हमारा दायित्व बनता है कि हमारी भाषा को कैसे समृद्ध बनाएँ और चीज़ों को जोड़ें।

भाषा के दरवाज़े बंद नहीं किए जा सकते और जब-जब उसको दीवारों में समेट दिया गया तब-तब न भाषा बची और भारत-भाषा समृद्ध भी नहीं बनी। भाषा में वह शक्ति होनी चाहिए कि हर चीज़ों को अपने आप में समेटती जाए और समेटने का उसका प्रयास होते रहना चाहिए। जैसे हमारे यहाँ नवरात्रि या दीपावली का पर्व होता है वैसे ही कुछ समय पहले इज़राइल में उनका हेनुका नामक महत्वपूर्ण पर्व था। इसी उपलक्ष्य पर मैंने इज़राइल के प्रधान मंत्री को सोशल मीडिया के द्वारा ट्विटर पर हीब्रू भाषा में हेनुका की बधाई दी। 3-4 घंटे के अंदर इज़राइल के प्रधान मंत्री ने इसे स्वीकार किया और उत्तर दिया। मेरे लिए खुशी की बात थी कि मैंने हीब्रू भाषा में लिखा था और उन्होंने हिंदी भाषा में धन्यवाद दिया।

इन दिनों दुनिया के जिन भी देशों से मेरा मिलना हुआ वे एक बात अवश्य बोलते हैं, 'सबका साथ सबका विकास'। भले ही उनकी भाषा तथा उच्चारण करने का तरीका कुछ भी हो लेकिन

सबका विकास आवश्यक है। ओबामा मिलेंगे, पुतिन मिलेंगे तो वे भी यही बोलेंगे। अगर हम अपनी बातों को लेकर जाते हैं तो दुनिया इसको स्वीकार करने के लिए तैयार होती है और इसलिए हमारी कोशिश होनी चाहिए कि हमारी भाषा को समृद्धि और ताकत मिले। भाषा के साथ ज्ञान और अनुभव का भंडार भी होता है। अगर हम हिंदी भाषा और रामचरितमानस को भूल जाते, तो हम जैसे बिना जड़ के एक-एक पैंट की तरह खड़े होते। हमारी हालत क्या हो गई होती अगर हम बिहार के फणीश्वरनाथ रेणु जो हिंदी साहित्य के महापुरुष हैं, उनको न पढ़ा होता तो पता नहीं चलता कि उन्होंने बिहार में गरीबी को देखा था और उस गरीबी के समय में उनकी क्या सोच थी। हम प्रेमचंद को न पढ़े होते तो पता तक नहीं चलता कि हमारे ग्रामीण जीवन की आकांक्षाएँ क्या थीं और मूल्यों के लिए अपनी आशा-आकांक्षाओं को बली चढ़ाने का सार्वजनिक जीवन कैसा था।

इस धरती की संतान चाहे वह जयशंकर प्रसाद हों या मैथिलीशरण गुप्त हों वे बहुत कुछ दे गए हैं। साहित्य सर्जकों ने जीवन में एक कोने में बैठकर के मिट्टी का दीया, तेल का दीया जला-जलाकर अपनी आँखों को भी खो दिया और हमारे लिए कुछ न कुछ छोड़ गए लेकिन अगर वह भाषा ही नहीं बची तो इतना बड़ा साहित्य और इतना बड़ा अनुभव का भंडार कहाँ बचेगा। इसलिए भाषा को समृद्ध बनाने के लिए भाषा के प्रति लगाव होना चाहिए। आनेवाले दिनों में डिजिटल वर्ल्ड हम सबके जीवन में सबसे बड़ी भूमिका अदा करेगा। आजकल बाप-बेटा, पति-पत्नी भी वाट्सऐप पर मैसेज करते हैं, ट्विटर पर लिखते हैं कि आज शाम को क्या खाना बनाना है। उसने अपना प्रवेश इस हद तक कर लिया है! जो टेक्नोलॉजी के जानकार हैं उनका कहना है कि आनेवाले दिनों में डिजिटल वर्ल्ड में तीन भाषाओं का दबदबा रहनेवाला है। अंग्रेज़ी, चीनी, हिंदी और जो भी टेक्नोलॉजी से जुड़े हुए हैं, उन सबका दायित्व बनता है कि भारतीय भाषाओं को भी और हिंदी भाषा को भी टेक्नोलॉजी के लिए किस प्रकार से परिवर्तित करें। जितनी तेज़ी से इस क्षेत्र में काम करनेवाले एक्स्पर्ट्स हमारी स्थानीय भाषाओं से लेकर हिंदी भाषा तक नए सॉफ़्टवेयर और नए ऐप्स तैयार करके जितनी बड़ी मात्रा में लाएँगे यह अपने आप में भाषा का एक बहुत बड़ा मार्केट बननेवाली है। किसी ने सोचा नहीं होगा कि भाषा एक बहुत बड़ा बाज़ार भी बन सकती है। आज बदली हुई टेक्नोलॉजी की दुनिया में भाषा अपने आपमें एक बहुत बड़ा बाज़ार बननेवाली है। हिंदी भाषा का उसमें एक महात्म्य रहनेवाला है। जब किताब लेकर हमें अशोक चक्रधर मिले तो उन्होंने मुझे खास आग्रह से कहा कि मैंने 'मोस्ट मॉडर्न टेक्नोलॉजी यूनिकोड' में इसको तैयार किया है। मुझे खुशी हुई कि हम जितना डिजिटल वर्ल्ड और इंटरनेट को हमारी इस भाषा से परिचित करवाएँगे हमारी भाषा का प्रसार उतनी ही तेज़ी से होगा तथा हमारी ताकत भी बहुत तेज़ी से बढ़ेगी। इसलिए भाषा का उस रूप में उपयोग होना चाहिए। भाषा अभिव्यक्ति का साधन होती है—हम क्या संदेश देना चाहते हैं, हम क्या बात पहुँचाना चाहते हैं। हमारी भावनाओं को जब शब्द देह मिलती है तो हमारी भावनाएँ चिरंजीव बन जाती हैं और इसलिए भाषा उस शब्द देह का आधार होती है। आज के इस हिंदी के महाकुंभ ने भोपाल की धरती पर विश्व के 39 देशों की हाज़री में, हिंदी भाषा को समृद्ध बनाने में बहुत बड़ा योगदान दिया है, और अन्य भाषाएँ जहाँ शुरू होती हैं, उसके किनारे पर हमें बिठाया हैं। उस प्रकार से भी इस स्थान का बड़ा महत्व है। हम किस प्रकार से सबको समेटने की दिशा में सोचें, हमारी भाषा की भक्ति ऐसी भी न हो जो एक्स्क्लूसिव हो। भाषा हर किसी को जोड़नेवाली होनी चाहिए तभी वह समृद्धि की ओर बढ़ेगी। हमारे लिए हर मातृ भाषा का अपरंमपार महामूल्य है क्योंकि हर एक के पास खज़ाना है। अगर हिंदी भाषा उनके निकट होने के कारण इन सबको अपने साथ जोड़े, अपने पास लाए, उनसे सीखें, उन्हें समझें और समृद्धि की दिशा में बंद करके उनको और ताकतवर बनाकर हम दुनिया के पास ले जाएँ तो बहुत बड़ी सेवा होगी। मैं फिर एक बार इस समारोह को हृदय से शुभकामनाएँ देता हूँ और जैसा सुषमा जी ने विश्वास दिलाया है, हम एक निश्चित आउटकम लेकर के निकलेंगे। यह विश्वास एक बहुत बड़ी ताकत देगा जब अगले विश्व हिंदी सम्मेलन के धरातल में कुछ परिवर्तन लाएँगे। इसी अपेक्षा के साथ मेरी समारोह को बहुत-बहुत शुभकामनाएँ।

❑

2 सम्मेलन के उद्घाटन समारोह में प्रस्तुत भारत की विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज का संदेश

भारत के माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी, मध्य प्रदेश के यशस्वी मुख्य मंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान जी, मध्य प्रदेश के राज्यपाल आदरणीय रामनरेश यादव जी, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल आदरणीय केसरीनाथ त्रिपाठी जी, गोवा की राज्यपाल आदरणीया मृदुला सिन्हा जी, झारखंड के मुख्य मंत्री रघुबरदास जी, केंद्रीय मंत्री मंडल में मेरे दो वरिष्ठ सहयोगी भाई रविशंकर प्रसाद जी, डॉ. हर्षवर्धन जी, मॉरीशस से विशेष रूप से पधारी वहाँ की शिक्षा मंत्री लीला देवी दुखन जी, हमारे गृह राज्य मंत्री श्री किरेन रिजिजू जी और मेरे अपने राज्य और मेरे विभाग के राज्य मंत्री जनरल वी.के. सिंह जी, हमारे सम्मेलन की प्रबंध समिति के उपाध्यक्ष, कुशल संगठक और अनुभवी आयोजक श्री अनिल माधव दवे जी और मेरे विभाग के सचिव श्री अनिल वाधवा जी, इस सभागार में उपस्थित विद्वत जन और हिंदी प्रेमी, मैं हृदय से प्रधान मंत्री जी का आभार व्यक्त करना चाहूँगी जिन्होंने यह सम्मेलन भोपाल में करने की सहमति दी और स्वयं पधारकर इसका शुभारंभ करने की स्वीकृति दी। प्रधान मंत्री जी भोपाल का चयन करने के पीछे मेरे तीन कारण थे:—

1. भोपाल हिंदी के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित एक ऐसा राज्य है जो देश का हृदय प्रदेश है।
2. भोपाल बहुत सफल और व्यापक आयोजन करने के लिए विख्यात है।
3. तीसरा कारण था मेरा स्वयं का मोह क्योंकि मैं मध्य प्रदेश का प्रतिनिधित्व लोक सभा में कर रही हूँ इसलिए मैं इस लोभ का संवरन नहीं कर पाई कि यह कार्यक्रम केवल और केवल भोपाल में होना चाहिए।

वैसे तो यह 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन है लेकिन यह तीसरा सम्मेलन है जो भारत में किया जा रहा है। पहला शुरुआती सम्मेलन 1975 में नागपुर, भारत में हुआ, उसके 8 वर्ष बाद 1983 में फिर से तीसरा सम्मेलन भारत में नई दिल्ली में हुआ। लेकिन आज 32 वर्षों बाद 2015 में यह 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन भोपाल में हो रहा है जो बाकी के 7 सम्मेलन थे उनमें से दो सम्मेलन मॉरीशस में हुए जहाँ से आज लीला जी आई हुई हैं, एक त्रिनिदाद और टोबैगो में हुआ, एक

सूरीनाम में हुआ, एक लंदन में हुआ, एक न्यू यॉर्क में हुआ और एक दक्षिण अफ्रीका के जोहान्सबर्ग में हुआ। जब 9वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन जोहान्सबर्ग में हुआ उसी समय यह तय कर दिया गया कि अगला यानी 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन भारत में होगा।

पिछले 9 सम्मेलनों की तुलना में सम्मेलन का स्वरूप काफ़ी बदला है। 9 के 9 सम्मेलन साहित्य केंद्रित रहे लेकिन हमने इस सम्मेलन को भाषा केंद्रित बनाया और मुझे लगता है कि जब विश्व हिंदी सम्मेलन की स्थापना की गई थी, उस समय कल्पना यही की गई होगी कि भाषा की उन्नति के लिए यह सम्मेलन स्थापित किया जा रहा है और यदि पहले सम्मेलन से भाषा की उन्नति के लिए यह सम्मेलन होता तो आज हम वहाँ खड़े नहीं होते जहाँ आज खड़े हैं। मुझे दुख से कहना पड़ता है कि आज हिंदी भाषा के संवर्धन तथा संरक्षण की भी चिंता करनी पड़ रही है। जिस तरह अंग्रेज़ी का उपहार हिंदी पर आ रहा है उससे भाषा अपनी अस्मिता खोती जा रही है। इसलिए मैं प्रस्तावना में यह बताना चाहूँगी कि हमने भाषा को केंद्र में रखकर विषय वे चुने जहाँ विस्तार की संभावनाएँ हैं और विस्तार होना चाहिए। हमने 12 विषय चुने हैं: विदेश नीति में हिंदी, प्रशासन में हिंदी, विज्ञान में हिंदी, सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी, न्यायालयों में हिंदी और भारतीय भाषाएँ, गिरमिटिया देशों में हिंदी, अन्य भाषा-भाषी राज्यों में हिंदी, विदेशों में हिंदी शिक्षण की

सुविधा, भारत में विदेशियों के लिए हिंदी अध्ययन की सुविधा, देश और विदेश में प्रकाशन की समस्याएँ और समाधान और एक बहुत प्रमुख विषय चुना है हिंदी पत्रकारिता और हिंदी संचार माध्यमों में भाषा की शुद्धता। एक बदलाव लाया गया है, आज से पहले केवल सत्रों में चर्चा होती थी, रपट नहीं आती थी। जब रपट सालों बाद आती थी तो चर्चा के प्रतिभागियों को यह पता भी नहीं चलता था कि जो कुछ उन्होंने कहा उसकी झलक रपट में आई या नहीं। इस बार हमने हर विषय को दो सत्र तो अवश्य दिए हैं। एक सत्र में चर्चा होगी, दूसरी में केवल रपट प्रस्तुत नहीं की जाएगी बल्कि रिपोर्ट का अनुमोदन होगा। जिन प्रतिभागियों ने चर्चा में भाग लिया है उन्हें कोई संशोधन करना है तो वे संशोधन करके, घटा-बढ़ाकर जो जोड़ना है जोड़कर उसका अनुमोदन करेंगे और उस अनुमोदन की भी अनुशंसाएँ, समापन समारोह में इसी सभागार में पढ़ी जाएँगी। और चार सत्रों की अध्यक्षता हमने केंद्रीय मंत्रियों और मुख्य मंत्री से करवाई ताकि उन्हें बाद में केवल रपट पढ़ने को न मिले वे स्वयं चर्चा को सुनें और उनको क्या करना है, वह पता हो। उन अनुशंसाओं के तुरंत बाद से अनुपालन की कार्यवाही प्रारंभ हो जाएगी। इसलिए आज मैं यह खड़े होकर कह सकती हूँ कि यह सम्मेलन बहुत ही परिणाममूलक निकलेगा और प्रधान मंत्री जी जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी को महत्व दे रहे हैं उसके लिए मैं आभारी हूँ। मैं तो साक्षी होती हूँ उस दृश्य की, जब चीन के राष्ट्रपति श्री चिंग पिंग चीनी में बोलते हैं, राष्ट्रपति पुतिन रूसी में बोलते हैं, जापान के प्रधान मंत्री आबे जापानी में बोलते हैं, उस समय भारत के प्रधान मंत्री हिंदी में धारा प्रवाह बोलकर हमें जिस तरह गौरवान्वित करते हैं, उससे पूरे भारत का माथा ऊँचा हो जाता है। मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि यह सम्मेलन आपके इन प्रयासों को और तेज़ गति देगा और अंतरराष्ट्रीय मंच पर हिंदी जो अधिकार आज तक प्राप्त नहीं कर सकी, इस सम्मेलन के बाद हिंदी वह अधिकार अवश्य ही प्राप्त कर सकेगी। इसी विश्वास के साथ मैं अपनी प्रस्तावना समाप्त करती हूँ।

❑

3 प्रवासी देशों में हिंदी तथा उसका भविष्य

• माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन

शिक्षा : बी.एस.सी. (ऑनर्स) जीव विज्ञान - दिल्ली विश्वविद्यालय - 1986; पी.जी.सी.ई. - मॉरीशस इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन - 1996
पर्यावरण शिक्षा - हॉविक, दक्षिण अफ्रीका - 2000, पी.जी. डिप्लोमा शिक्षा ब्रायटन विश्वविद्यालय - 2005; संस्थापक सदस्य, सोसायटी ऑव बायलॉजी; सचिव, सोसायटी ऑफ बाइलॉजी टीचर्स (1999)

राजनीतिक उत्तरदायित्वः
प्रधान, महिला शाखा , एम.एस.एम. (Militant Socialist Movement); उप-प्रधान, एम.एस.एम पार्टी

राजनीतिक कैरियरः
शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री (दिसंबर, 2014 से अब तक); सामाजिक सुरक्षा, राष्ट्रीय एकता व सुधार संस्थान मंत्री (2010-2011); कला एवं संस्कृति मंत्री (दिसंबर, 2004 - अप्रैल, 2005)
सदस्य, सादेक (Southern African Development Community) संसदीय महिला कॉकस (2000-2005)

यह प्रपत्र गिरमिटिया देशों, विशेषकर मॉरीशस में हिंदी भाषा के इतिहास एवं वर्तमान स्थिति पर आधारित है। इसका लक्ष्य गिरमिटिया देशों में हिंदी भाषा के भविष्य की चर्चा कर पूरी विनम्रता के साथ सम्मेलन के समक्ष ऐसा सुझाव व प्रस्ताव रखना है, जिनके आधार पर पूरे डायस्पोरा में हिंदी के उज्ज्वल भविष्य हेतु ठोस कदम उठाए जा सकते हैं।

मॉरीशस एक ऐसा देश है, जहाँ दो बार विश्व हिंदी सम्मेलन हो चुके हैं जहाँ हिंदी में डी.लिट तक पहुँच चुके हैं जहाँ अभिमन्यु अनत जैसे साहित्यकार हैं और विशेषकर जहाँ विश्व हिंदी सचिवालय है। अपने देश को केंद्र में रखकर जो भी विचार और प्रस्ताव इस प्रपत्र में दिए जा रहे हैं वे अन्य गिरमिटिया देशों के लिए भी प्रासंगिक हैं।

भौगोलिक दृष्टि से भारतीय मूल के लोग विश्व के लगभग 110 देशों में निवास करते हैं। प्रवासी देश तीन वर्गों में विभाजित किए जा सकते हैं—

1. पुराना डायस्पोरा
2. नया डायस्पोरा
3. गल्फ़ आदि डायस्पोरा

पुराने भारतीय प्रवासी देशों में मलेशिया, मॉरीशस, त्रिनिदाद और टोबैगो, फ़िजी, गयाना, सूरीनाम आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। नए प्रवासी देशों में अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, न्यू ज़ीलैंड आते हैं। इन तीन वर्गों के आप्रवासियों में समानता यह है कि वे श्रम प्रवासी हैं। भारत और इन प्रवासी देशों के बीच नाभिनाल संबंध हैं और हिंदी भाषा तथा उसमें निहित संस्कृति ही नाल का प्रतीक है।

आज दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। मॉरीशस गर्व के साथ कह सकता है कि यहाँ के निवासियों ने अपनी सांस्कृतिक विरासत के रूप में हिंदी भाषा को मान-सम्मान के साथ आगे बढ़ाया है। जो हमारे भूतपूर्व प्रधानमंत्री पर सर शिवसागर रामगुलाम की इच्छा थी, जो उनका सपना था, उसको आज से हमारे वर्तमान प्रधान मंत्री सर अनिरुद्ध जगन्नाथ साकार करने में लगे हुए हैं। आशा है कि बहुत जल्द भारत सरकार के सहयोग से विश्व हिंदी सचिवालय का नया भवन बनकर तैयार हो जाएगा जिस पर पूरे हिंदी जगत को गर्व होगा।

मॉरीशस में हिंदी की स्थिति पर विचार करते समय उन भारतीयों की याद अनायास ताज़ा हो जाती है, जिनकी बदौलत हिंदी सुरक्षित है। फ्रांसीसी एवं ब्रिटिश शासन के अधीन होने पर भी शर्तबंध मज़दूर हिंदी के विकास पथ पर उन्मुख हुए। उन्होंने हिंदी के प्रति निष्ठा-भाव एवं आत्मविश्वास जताया।

मॉरीशस में हिंदी भाषा के उद्भव और विकास का इतिहास डेढ़ सौ साल ही पुराना है। यद्यपि भारतीय आप्रवासियों की अधिकांश जनसंख्या बिहार और उत्तर प्रदेश ज़िलों की थी और उनकी मातृ भाषा भोजपुरी थी तथापि सुधार-कर्ताओं ने यह जल्द महसूस किया कि खड़ी बोली हिंदी अर्थात आधुनिक मानक हिंदी अंतरराष्ट्रीय मंच पर आगे बढ़ने की क्षमता रखती है।

जब सन् 1851 में अंग्रेज़ गवर्नर हिंगसंस की, भारतीयों के बच्चों को पढ़ाने की योजना सफल हुई और इसके फलस्वरूप सन् 1852 में सावान स्टेट में एक स्कूल खोला गया तथा 1876 की शिक्षा-कमिटी के समक्ष, सर आर्थर फ़ायर का भारतीय बच्चों को

उनकी भाषा में पढ़ाने का प्रस्ताव पारित हुआ तब भी भारतीय मूल के लोगों को यह शंका हुई कि उनके बच्चों का इन स्कूलों में विसंस्कृतिकरण न हो जाए। 'बैठका' व्यवस्था का व्यापक स्तर पर संगठन इसी का परिणाम रहा।

वास्तव में स्वतंत्रता से पूर्व ब्रिटिश पाठशालाओं में भारतीय मूल के बच्चों के साथ हीनतापूर्ण व्यवहार किया जाता था। अत: उन्हें उन बैठकाओं में भेजा जाने लगा, जहाँ हिंदू ग्रंथों से परिचित शिक्षक, शिक्षा-माध्यम के रूप में खड़ी बोली हिंदी का प्रयोग करते हुए छात्रों को महाभारत, हनुमान चालीसा और रामायण को समझने एवं गाने हेतु प्रशिक्षण देते थे। वस्तुत: हिंदी भाषा की नींव धार्मिक ग्रंथों ने ही डाली।

जगह-जगह पर पुजारियों द्वारा संपन्न धार्मिक अनुष्ठानों ने भी हिंदी भाषा को बढ़ावा दिया। मॉरीशस में 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रचार और प्रसार तथा 20वीं सदी की शुरुआत के प्रथम दशकों में कुछ ज्ञानी स्वामियों के आगमन ने पूरे द्वीप में धार्मिक प्रवचनों से मॉरीशस में खड़ी बोली हिंदी की उन्नति में विशेष योगदान दिया।

1901 में महात्मा गांधी की मॉरीशस यात्रा के पश्चात उनके सुझाव के फलस्वरूप 1907 में मणिलाल डॉक्टर के आगमन ने खड़ी बोली हिंदी में नई जान फूँक दी। 17 अप्रैल, 1910 को उन्होंने मॉरीशस में आर्य समाज की स्थापना की। उन्हीं के प्रयासों से हिंदी का पहला पत्र 'हिंदुस्तानी' नाम से छपा। आर्य समाज ने प्रत्येक हिंदू परिवार में सामान्य गतिविधियों के दौरान भी खड़ी बोली हिंदी के प्रयोग पर बल दिया। आर्य समाज, ब्रह्म समाज और आगे चलकर सन् 1926 में स्थापित वर्तमान हिंदी प्रचारिणी सभा एवं अन्य संस्थाओं ने हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा उनके विकास में अनुपम भूमिका निभाई।

द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन में धर्मयुग के संपादक डॉ. धर्मवीर भारती ने कहा था—

''मैं संसार में मॉरीशस का विशेष महत्व इस दृष्टि से भी मानता हूँ कि यह एक ऐसा देश है, जिसने अपनी आज़ादी की लड़ाई हिंदी भाषा के सहारे लड़ी और उन मूल्यों की, मानव-अस्मिता की उस स्थापना के लिए अपनी भाषा के माध्यम से प्रयास किया।''

मॉरीशस की स्वतंत्रता प्राप्ति में हिंदी की अहम भूमिका रही है। भारतीय मूल के अधिकांश आप्रवासी निरक्षर थे। उनमें जागृति लाने तथा वोट देनेवालों की संख्या बढ़ाने हेतु ज़रूरी था कि उन्हें साक्षर बनाया जाए और मज़दूर वर्ग को साक्षर बनाने का सबसे आसान और उचित तरीका था उन्हें हिंदी का ज्ञान देना, क्योंकि हिंदी भाषा उनके अस्तित्व और संस्कृति से जुड़ी हुई थी। कई हिंदी प्रेमियों एवं हिंदी संस्थाओं ने हिंदी के प्रचार-प्रसार से संबंधित प्रतिबद्धता दिखाई थी परंतु पंडित विष्णुदयाल द्वारा शुरू हुए जन-आंदोलन से हिंदी पठन-पाठन को नया आयाम मिला। जन-आंदोलन के स्वयं सेवकों ने हिंदी ज्ञान का आह्वान किया।

सन् 1941 में कुछ हिंदी प्रेमियों और हिंदी प्रचारिणी सभा के सहयोग से पंडित विष्णुदयाल ने पोर्ट-लुई के सिनेमा 'दे फ़ामी' में हिंदी साहित्य सम्मेलन का आयोजन किया था। मॉरीशस के इतिहास में यह प्रथम हिंदी सम्मेलन था जिसमें हिंदी पुस्तकों की भव्य प्रदर्शनी लगी थी और हिंदी एवं उर्दू के रचनाकारों ने अपनी मौलिक कविताएँ भी सुनाई थीं।

इसी प्रकार अन्य प्रवासी देशों में हिंदी भाषा ने आंदोलनों तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आज भी नए डायस्पोरा समुदाय अनेक देशों में इस प्रकार के संघर्ष को जारी रख रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में हिंदी : विधिवत हिंदी शिक्षण

प्राथमिक पाठशालाओं में हिंदी का विधिवत पठन-पाठन लगभग 1935 से प्रारंभ हुआ। सन् 1961 में प्रो. रामप्रकाश के आगमन से हिंदी शिक्षण, प्रशिक्षण ने तीव्र गति प्राप्त की। आज 254 विद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई होती है। 1973 में माध्यमिक विद्यालयों में हिंदी का प्रवेश हुआ और इस समय लगभग 125 विद्यालयों में हिंदी शिक्षण हो रहा है।

बैठका से आरंभ होकर हिंदी 1990 में विश्वविद्यालय के शिखर पर चरमोन्नत हुई। मॉरीशस विश्वविद्यालय एवं महात्मा गांधी संस्थान के सौजन्य से हिंदी भाषा में डिप्लोमा, स्नातक, स्नातकोत्तर तथा पीएचडी की डिग्री प्रदान की जाती है।

प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर पर कुल मिलाकर 800 हिंदी अध्यापक, प्राध्यापक कार्यरत हैं। प्रशंसनीय बात यह है कि 1977 से प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों के स्तर पर शिक्षा नि:शुल्क है।

महात्मा गांधी संस्थान अन्य भारतीय प्रवासी देशों जैसे

रीयूनियन और फ्रांस में फ्रेंच भाषा के माध्यम से हिंदी के प्रचार-प्रसार में अपना अमूल्य योगदान दे रहा है। रीयूनियन में कामकाजी हिंदी पर बल दिया जा रहा है, न कि पारंपरिक हिंदी के पठन-पाठन पर। अन्य अफ्रीकी देशों में भी इस प्रकार के हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार का कार्य आरंभ हो चुका है।

आज मॉरीशस के शिक्षा मंत्रालय की उदार नीतियों के कारण ही हमारी सांस्कृतिक भाषाएँ फल-फूल रही हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में आज मॉरीशस 'नाइन इयर्स स्कूलिंग' (nine years schooling) की ओर क़दम बढ़ाने की योजना में कटिबद्ध है। इसके लिए पाठ्यक्रम पर योजनाबद्ध कार्य हो रहा है। पूर्वी भाषाओं के लिए प्रावधान किया जा रहा है, जिसके अंतर्गत हिंदी का भी विशेष स्थान है।

मॉरीशस में सृजनात्मक लेखन के रूप में उपन्यास, कहानी, लघुकथा, नाटक, एकांकी, यात्रा-वर्णन, कविता आदि भरपूर मात्रा में मिलते हैं। कई रचनाएँ मॉरीशस तथा अन्य भारतीय विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भी लगी हुई हैं। अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, बीरसेन जागासिंह, स्व. मुनीश्वरलाल चिंतामणि, डॉ. हेमराज सुंदर, राज हीरामन, इंद्रदेव भोला, प्रह्लाद रामशरण, स्वर्गीय श्रीमती नागदान, धनराज शंभु, सूर्यदेव सीबोरत आदि वरिष्ठ साहित्यकारों से प्रेरित होकर आज की युवा पीढ़ी भी हिंदी साहित्य सृजन से जुड़ी है।

अंग्रेज़ी, फ्रेंच के साथ-साथ मंत्रालय अन्य सांस्कृतिक भाषाओं को भी आगे बढ़ने का मौका देता है। फ्रांस से मिलनेवाले सांकोरे (Sankoré) नामक इंटरैक्टिव बोर्ड (interactive board) का प्रयोग भारतीय भाषाओं के लिए भी हो रहा है। मंत्रालय ने इसके लिए कार्यशाला लगाई थी। हिंदी भाषा शिक्षण के अंतर्गत कंप्यूटर प्रयोग हेतु विश्व हिंदी सचिवालय ने हिंदी अध्यापकों के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया। सरकार की नीति रही है—

समस्त मॉरीशसीय भाषा प्रयोक्ताओं का समान संरक्षण। इन भाषाओं की वृद्धि के प्रचार हेतु ही सभी भाषाओं के लिए आज विभिन्न स्पीकिंग यूनियन भी बने हैं जिन्हें कला एवं संस्कृति मंत्रालय द्वारा बजट प्राप्त होता है।

मॉरीशस शिक्षण संस्थान (Mauritius Institute of Education), महात्मा गांधी संस्थान के साथ मिलकर अध्यापक प्रशिक्षण कोर्स चलाता है। हिंदी की वृद्धि के लिए Open University of Mauritius तथा University of Technology, महात्मा गांधी संस्थान के सौजन्य से अनेक योजनाओं में कार्यरत हैं। पिछले कुछ वर्षों से आर्य समाज का डी.ए.वी. डिग्री कॉलेज भी हिंदी के क्षेत्र में अध्ययन-अध्यापन का कार्य संभालता आ रहा है।

स्वैच्छिक संस्था और हिंदी

हिंदी प्रचारिणी सभा सन् 1926 में हिंदी प्रेमियों की प्रेरणास्रोत बनी। आज यह संस्था इलाहाबाद के हिंदी साहित्य सम्मेलन के सौजन्य से परिचय से उत्तमा तृतीय खंड की पढ़ाई संपन्न करती है।

आर्य सभा 200 प्राथमिक विद्यालय चलाती है। मॉरीशस में अन्य संस्थाएँ जैसे हिंदी प्रचारिणी सभा, आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा, सनातन धर्म टेंपल्स फ़ेडेरेशन, गहलोत राजपूत सभा आदि कई संस्थाएँ हिंदी की विधिवत् पढ़ाई में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

इन सब प्रयासों तथा भावी योजनाओं के चलते मॉरीशस में भाषाओं का भविष्य सुरक्षित है। आज विश्व में गिरमिटिया देशों के लिए मॉरीशस की भाषाई नीतियाँ आदर्श हैं। मॉरीशस एक इंद्रधनुषी देश है। यहाँ की संस्कृति भी इंद्रधनुषी है और सरकार की नीतियों में इस इंद्रधनुष को मिटाना नहीं वरन उसके रंगों को और भी गाढ़ा करना है। हमारे यहाँ त्रिभाषी फॉर्मूला को अपनाया गया है जिसमें अंग्रेज़ी और फ्रेंच अनिवार्य हैं। मूल भाषा यथा, हिंदी, उर्दू, तमिल तेलुगु, मराठी, चीनी, क्रियोल, अरबी, भोजपुरी वैकल्पिक हैं। यहाँ पर त्रिभाषाओं के बीच कोई संघर्ष की स्थिति नहीं है, बल्कि सामंजस्य की स्थिति है। फ्रेंच-जनसंचार माध्यम, अध्ययन-अध्यापन, बोलचाल के क्षेत्र में अन्य भाषाओं की तुलना में प्रभावी है।

उल्लेखनीय है कि मॉरीशस में ही नहीं, फ़िजी, दक्षिण अफ्रीका में शिक्षा क्षेत्र में हिंदी बैठकों से निकलकर विश्वविद्यालय तक पहुँची।

हिंदी एवं सृजनात्मक लेखन

मॉरीशस में सृजनात्मक लेखन के रूप में उपन्यास, कहानी,

लघुकथा, नाटक, एकांकी, यात्रा-वर्णन, कविता आदि भरपूर मात्रा में मिलते हैं। कई रचनाएँ मॉरीशस तथा अन्य भारतीय विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भी लगी हुई हैं। अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, बीरसेन जागासिंह, स्व. मुनीश्वरलाल चिंतामणि, डॉ. हेमराज सुंदर, राज हीरामन, इंद्रदेव भोला, प्रह्लाद रामशरण, स्वर्गीय श्रीमती नागदान, धनराज शंभु, सूर्यदेव सीबोरत आदि वरिष्ठ साहित्यकारों से प्रेरित होकर आज की युवा पीढ़ी भी हिंदी साहित्य सृजन से जुड़ी है। अभिमन्यु अनत के 75 से अधिक उपन्यास व नाटक प्रकाशित हैं, इसी कारण वैश्विक पटल पर वे प्रसिद्ध हैं।

हिंदी एवं मीडिया : रेडियो और हिंदी

मॉरीशस के संचार माध्यमों का हिंदी के विस्तार में विशेष योगदान है। तेरह लाख की आबादीवाले देश में आठ रेडियो चैनल हैं जिनसे हिंदी कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। एक भोजपुरी चैनल भी है, जहाँ दस कार्यक्रम चलते हैं जैसे 'आव चल गाँव घूमें', 'गीत माला' आदि पर हिंदी के लिए अधिक समय का प्रावधान है, क्योंकि हिंदी अधिक प्रचलित और जीवंत भाषा है। रेडियो पर हिंदी में समाचार, गीत, शैक्षणिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि प्रसारित होते हैं। इन कार्यक्रमों में जनता की भागीदारी, मेल द्वारा तथा फोन द्वारा सक्रिय रूप से होती है। मनपसंद गीतों का कार्यक्रम अति लोकप्रिय है। मॉरीशस रेडियो का अनोखापन उसके द्वारा प्रसारित दैनिक शोक समाचार है। मॉरीशस विश्व के उन कम देशों में से है, जहाँ नागरिकों की मृत्यु की सूचना, उनकी अर्थी का समय एवं पता संबंधी जानकारी हिंदी में दी जाती है व शोकग्रस्त परिवार के प्रति संवेदना व्यक्त की जाती है।

टी.वी. और हिंदी

मॉरीशस के राष्ट्रीय टी.वी. के विभिन्न चैनलों पर हिंदी में स्थानीय कार्यक्रमों का प्रचार तो होता ही है पर इसके अतिरिक्त एक ऐसा चैनल भी है जहाँ चौबीसों घंटे हिंदी फ़िल्मों का प्रसारण होता है। सबटाइटलिंग (Subtitling) की सुविधा के कारण हिंदी फ़िल्में भारतीय वंशजों के बीच प्रसिद्धि पा चुकी हैं। ध्यातव्य है कि बॉलिवुड फ़िल्मी गीत मॉरीशस में तथा अन्य भारतीय प्रवासी देशों में अत्यधिक प्रचलित हैं और अहिंदी भाषी भी इनकी धुन गुनगुनाते रहते हैं। मॉरीशस में कानाल सैटेलाइट, पाराबोल मोरिस जैसे डिश टी.वी. जिनके माध्यम से कलर्ज़ (colors), ज़ी टी.वी. (zee TV), स्टार प्लस (star plus), स्टार गोल्ड (star Gold), ज़ूम (Zoom) आदि भारतीय हिंदी कार्यक्रमों व धारावाहिकों का आनंद लेने की पूरी संभावना है।

पत्र-पत्रिकाएँ

विश्व में मॉरीशस एकमात्र देश है, जहाँ की हिंदी इतनी बुलंदी पर पहुँच पाई है। मॉरीशस ने आज तक लगभग 54 हिंदी पत्र प्रकाशित करने का कीर्तिस्तंभ स्थापित किया है। आज देश में हिंदी की 11 पत्र-पत्रिकाएँ एवं एक मासिक समाचार-पत्र छपते हैं। उसके बाद फ़िजी का स्थान है जहाँ से लगभग 35 पत्र निकल चुके हैं।

हिंदी के असंख्य लेखक भारत से बाहर रहते हैं। विश्व हिंदी सचिवालय के त्रैमासिक प्रकाशन 'विश्व हिंदी समाचार' के माध्यम से वैश्विक स्तर पर हिंदी की गतिविधियों से अवगत होने का अवसर मिलता है। इसमें सम्मिलित लेखों से हिंदी भाषा, साहित्य, प्रशिक्षण, हिंदी की दशा एवं दिशा और हिंदी के प्रचार-प्रसार में आनेवाली कठिनाइयों की भी जानकारियाँ मिलती हैं।

विश्व हिंदी सचिवालय

वैश्विक स्तर पर मॉरीशस स्थापित विश्व हिंदी सचिवालय हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु अल्प कर्मचारियों एवं संसाधनों के होते हुए भी आधुनिक विधि अपनाते हुए अति परिश्रम कर रहा है। पत्रिकाओं का प्रकाशन सचिवालय द्वारा होता ही है। इसके साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं एवं सम्मेलनों का आयोजन भी होता है। नवीन प्रविधि प्रयोगों को अपनाते हुए नई पीढ़ी को हिंदी से जोड़ना भी सचिवालय का प्रयास है।

हिंदी और भूमंडलीकरण

युनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व के लगभग 137 देशों में हिंदी भाषा विद्यमान है। हिंदी भाषियों की कुल संख्या अनुमानत: सौ करोड़ है। यह सच है कि भूमंडलीकरण के कारण देश-विदेश और हिंदी भाषा के स्वरूप, क्षेत्र और प्रकृति में परिवर्तन हो रहा है। अब हिंदी मात्र साहित्य, संस्कृति, धर्म आदि का माध्यम

ही नहीं, बल्कि विज्ञान, राजनीति, अर्थनीति, प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में भी हिंदी भाषा का विशेष स्थान है।

हिंदी का क्षेत्रफल दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, विशेष रूप से व्यापार की दिशा में भाषा संचार और अंतर्जाल की सुविधा के परिणामस्वरूप हिंदी की आवश्यकता को अधिक महसूस किया जा रहा है। भारत महाशक्ति (सुपर पावर) के रूप में उभर रहा है और बड़े-से-बड़े देश भी भारत के साथ मिलकर काम करना चाहते हैं। भारत के साथ जुड़ने का तात्पर्य है आर्थिक शक्ति को आत्मसात करना और इसके लिए हिंदी भाषा ही प्रमुख सेतु है। अत: अपने-अपने देश की नीतियों और सीमित साधनों के होते हुए भी हिंदी के कर्मठ सेवक हिंदी के प्रचार-प्रसार में तन-मन-धन से लगे हुए हैं।

गिरमिटिया देशों की हिंदी संस्थाएँ अपनी समस्याएँ और अन्य जानकारी सचिवालय को दें। सचिवालय सभी के बीच एक सेतु (bridge) का काम करे और संसाधन (resources) तथा जानकारी के एक्सचेंज में सहायता करे। विदेश मंत्रालय भारत से अनुरोद्ध है कि गिरमिटिया देशों में हिंदी की समस्याओं को लेकर उन देशों से या सचिवालय के माध्यम से जो भी माँग आती है उसपर फास्ट-ट्रैक आधार पर काम हो।

संभावनाएँ व सुझाव

हिंदी और आई.सी.टी. मिलकर भारत तथा विश्व के अन्य देशों को अंतरराष्ट्रीय मंच तक ले जा रही हैं। मॉरीशस भी इस भौगोलिक अभियान का महत्वपूर्ण हिस्सा बनता जा रहा है। इसी को आगे बढ़ाते हुए महात्मा गांधी संस्थान के भाषा संसाधन केंद्र द्वारा प्राथमिक स्तर के स्कूलों के लिए हिंदी की अनेक मल्टीमीडिया सामग्रियों का निर्माण किया है। हिंदी की पढ़ाई में सूचना प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देते हुए ऐसे अनेक संसाधन तैयार हो रहे हैं, जिन्हें शिक्षक अपनी सुविधा तथा समय के अनुसार प्रयोग कर सकते हैं। भारत के केंद्रीय हिंदी निदेशालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, केंद्रीय हिंदी संस्थान, भारत सरकार के हिंदी भाषा आयोग तथा सीडैक (CDAC) जैसी संस्थाओं व विभागों के सम्मिलित सहयोग से इस दिशा में उत्तम कार्य किया जा सकता है।

आदान-प्रदान कार्यक्रमों तथा हिंदी भाषा के लिए इंडियन कौंसिल फ़ॉर कल्चरल रिलेशंस चेयर (ICCR Chair) द्वारा हिंदी के अभियान को एक प्रखर आयाम मिल सकता है।

भारत सरकार के सहयोग से हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में नई ऊर्जा लाने के लिए अंतरराष्ट्रीय नीति की तैयारी अनिवार्य है। मॉरीशस अन्य आप्रवासी देशों के लिए एक ऐसा महत्वपूर्ण केंद्र बन सकता है, जहाँ शिक्षण तथा संस्कृति के विकास का कार्य हो सकता है।

त्रिभाषी (अंग्रेज़ी, फ्रेंच और हिंदी) होने के फ़ायदे को उठाकर मॉरीशस के माध्यम से अफ्रीका के बाज़ार तक पहुँचा जा सकता है। इसके लिए मॉरीशस को एक बड़ी प्रयोगशाला के रूप में तैयार किया जा सकता है। भारत सरकार से माँग है कि पूर्णत: सज्जित हिंदी कारवाँ प्रदान किए जाएँ, जो गाँवों और शहरों में जाकर सामान्य लोगों तक मल्टीमीडिया संसाधनों के माध्यम से हिंदी भाषा तथा संस्कृति का प्रचार द्वार तक करें।

स्थापित भारतीय विश्वविद्यालयों के साथ आदान-प्रदान तथा समझौता ज्ञापन द्वारा हिंदी शिक्षण व शोध को नई स्फूर्ति प्रदान की जा सकती है। शिक्षण संबंधी सामग्रियों की तैयारी भी की जा सकती है जिनके फ़िजी, त्रिनिदाद, सूरीनाम, गयाना आदि प्रवासी देशों में प्रयोग किए जा सकते हैं। एक ऐसे राष्ट्रीय निधान की भी अनिवार्यता महसूस होती है, जहाँ हिंदी में निर्मित सभी संसाधनों का संरक्षण हो सके।

सृजनात्मक लेखन को प्रेरित करने के लक्ष्य से महात्मा गांधी संस्थान मॉरीशस द्वारा प्रत्येक 2 वर्ष में प्रवासी देशों के किसी रचनाकार को सम्मानित करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जा रहा है।

एक भारतीय भाषा केंद्र की स्थापना से भारी मात्रा में फ्रेंच, अंग्रेज़ी तथा अन्य भाषाओं के साहित्य का अनुवाद हिंदी में करने से हिंदी जगत की उपलब्धियों को अधिक सशक्तिकृत किया जा सकता है। न केवल साहित्य का अनुवाद, बल्कि पत्रकारिता का प्रशिक्षण, मल्टीमीडिया संसाधनों का निर्माण, हिंदी सीखने के लिए वेबसाइट, मोबाइल अनुप्रयोग आदि निर्मित किए जा सकते हैं।

हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाने का बीड़ा भारत सरकार, अनेक प्रवासी-आप्रावासी देशों की सरकारों तथा विश्व हिंदी सचिवालय जैसी संस्थाओं के सम्मिलित रूप से उठाने का समय आ गया है। इस महान लक्ष्य की पूर्ति हेतु विश्व हिंदी सचिवालय के सशक्तिकरण और प्रबलीकरण की

आवश्यकता है। परंतु इसके लिए एक सुनियोजित महायोजना (मास्टर प्लान) की आवश्यकता है विशेषकर भारत से बाहर उन सभी देशों के संदर्भ में, जो इस भव्य अभियान में अपना योगदान दे रहे हैं।

पूरे डायस्पोरा में प्रत्येक हिंदी शिक्षक को आई.सी.टी. के क्षेत्र में प्रशिक्षण दिया जाए।

पूरे डायस्पोरा के प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों के लिए शिक्षण सामग्री निर्माण के लिए एक केंद्र बने।

मॉरीशस में 'द्वितीय भाषा शिक्षण' के विशेषज्ञों की एक टीम बनाई जाए जो सभी प्रवासी देशों के अध्यापकों को ट्रेनिंग दे सके।

भारत सरकार की एक्स्पर्ट संस्थाएँ, फ्रांस सरकार की 'सांकोरे' (Sankoré) योजना के समान भारतीय भाषाओं की पढ़ाई के लिए एक 'इंटरैक्टिव बोर्ड' (Interactive board) के निर्माण पर काम करें। ये टेक्नोलॉजी एक परियोजना (scheme) के तहत प्रवासी देशों में भेजी जाए।

सभी प्रवासी देश अपनी पूर्वजीय बोलियों के संरक्षण हेतु हिंदी के पाठ्यक्रम में उस बोली के लिए प्रावधान करें। इसमें मॉरीशस आप सभी को सहयोग देने के लिए तैयार है।

भारत सरकार की ओर से डायस्पोरा देशों से हिंदी पढ़नेवाले बच्चों के छात्रवृत्ति (Scholarship) का कोटा बढ़ाया जाए और बच्चों को केवल हिंदी साहित्य नहीं, बल्कि बिज़नेस-हिंदी, कम्युनिकेशन, हिंदी व टेक्नोलॉजी, कॉमपारेटिव स्टडीज़ के लिए छात्रवृत्ति (Scholarship) दी जाए।

गिरमिटिया देशों की हिंदी संस्थाएँ अपनी समस्याएँ और अन्य जानकारी सचिवालय को दें। सचिवालय सभी के बीच एक सेतु (bridge) का काम करे और संसाधन (resources) तथा जानकारी के एक्सचेंज में सहायता करे। विदेश मंत्रालय भारत से अनुरोध है कि गिरमिटिया देशों में हिंदी की समस्याओं को लेकर उन देशों से या सचिवालय के माध्यम से जो भी माँग आती है, उसपर फ़ास्ट-ट्रैक आधार पर काम हो।

सभी महाद्वीपों में बेहतर पहुँच के लिए सचिवालय की क्षेत्रीय शाखाएँ खोली जाएँ।

वैश्विक स्तर पर श्रुतलेख, भाषण कौशल और नाटक का आयोजन हो, इससे बोलचाल की हिंदी भी आगे बढ़ेगी। सचिवालय जिस तरह अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताएँ आयोजित करता है, उनको और बढ़ाया जाए।

भारत सरकार का विदेश मंत्रालय विदेशों में हिंदी के प्रचार के लिए जो योजना बनाता है, उसको और मजबूत किया जाए तथा उसके तहत—

(1) गिरमिटिया देशों में 'बैठकाओं' को सहयोग दिया जाए।

(2) बैठका प्रणाली से पढ़नेवाले बच्चों के लिए विशेष छात्रवृत्ति का प्रबंध किया जाए।

(3) हिंदी दिवस और विश्व हिंदी दिवस के आयोजनों के लिए सहयोग दिया जाए।

(4) जिन देशों में हिंदी की संस्थाएँ नहीं हैं, वहाँ भारतीय सांस्कृतिक केंद्रों में भाषा की भी पढ़ाई हो।

(5) सांस्कृतिक आदान-प्रदान की योजनाओं में भाषा को अधिक महत्व दिया जाए।

दूरदर्शन के माध्यम से एक ऐसा चैनल स्थापित किया जाए, जिसमें हिंदी और भारतीय भाषाओं की शिक्षा के लिए बच्चों के रोचक कार्यक्रम हों और जो टेलिविज़न और स्मार्ट-फ़ोन्स आदि के माध्यम से पूरी दुनिया में मुफ़्त में प्रसारित (Broadcast) किए जाएँ।

भारत के विश्वविद्यालयों में हिंदी पाठ्यक्रम में प्रवासी हिंदी साहित्य की पढ़ाई अनिवार्य बनाई जाए। इसके साथ-साथ डायस्पोरा देशों के साहित्य पर शोध के लिए खास धन-राशि कायम की जाए।

तुलनात्मक साहित्य, तुलनात्मक भाषाविज्ञान एवं अनुवाद के माध्यम से हिंदी को फ्रेंच, डच, जर्मन, रशियन, जापानी आदि भाषा-समुदाय के करीब लाया जाए।

निष्कर्ष

वर्षों पहले महात्मा गांधी ने हिंदी की प्रासंगिकता एवं शक्ति को पहचान कर हिंदी सीखने की सलाह दी थी। सभी देशों की सरकार तथा हिंदी-सेवी लगातार इस दिशा में प्रयत्नशील हैं पर इनके सामने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अनगिनत बाधाएँ हैं। हमें इन्हीं संभावनाओं और चुनौतियों के बीच से नई राह को तैयार करना होगा, जिसमें सबका सहयोग अपेक्षित है।

❑

4 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन, भोपाल, भारत

10-12 सितंबर, 2015 तक विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा मध्य प्रदेश राज्य सरकार के सहयोग से भोपाल, भारत में 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का भव्य आयोजन किया गया। 10वाँ सम्मेलन भारत में आयोजित करने का निर्णय सितंबर 2012 में जोहान्सबर्ग, दक्षिण अफ्रीका में आयोजित 9वें विश्व हिंदी सम्मेलन के मंतव्यों में लिया गया था। तीन दशक बाद भारत में लौटे हिंदी के महाकुंभ के आयोजन ने हिंदी की ऊर्जा का अभूतपूर्व प्रदर्शन किया। उद्घाटन समारोह से लेकर विचार सत्र, सांस्कृतिक कार्यक्रम और प्रदर्शनियाँ सभी हिंदी के वैश्विक महत्व को उभारने में अति सफल रहे। विश्व हिंदी सचिवालय की ओर से इस विशाल आयोजन की सफलता की बधाई के साथ विश्व हिंदी समाचार के पाठकों के लिए सम्मेलन की विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत है।

उद्घाटन समारोह

सम्मेलन के लिए भोपाल के लाल परेड मैदान में विशेष रूप से 'माखनलाल चतुर्वेदी नगर' का निर्माण किया गया था। इस विशालकाय पंडाल के रामधारी सिंह दिनकर सभागार में ही 10 सितंबर की प्रात: देश-विदेश से आए लगभग पाँच हज़ार प्रतिभागियों और अतिथियों की उपस्थिति में मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री द्वारा स्वागत तथा विदेश मंत्री द्वारा सम्मेलन की प्रस्तावना के उपरांत भारत के प्रधान मंत्री द्वारा विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन किया गया। इस अवसर पर विशेष रूप से भारत की विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज, मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री, माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान, अनेक राज्यों के राज्यपाल, केंद्रीय मंत्रियों, राज्य मंत्रियों तथा मॉरीशस की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन के साथ अनेक गणमान्य लोग मंचासीन थे।

श्री नरेंद्र मोदी ने अपने संबोधन में कहा, ''दुनिया में हिंदी के प्रति आकर्षण बढ़ रहा है। हिंदी की समृद्धि के लिए इसे अन्य भाषाओं के साथ न केवल जोड़ने की प्रक्रिया चलनी चाहिए बल्कि इसे निरंतर जारी भी रखना चाहिए। हिंदी और अन्य भाषाओं के सम्मेलन करने पर भाषा शास्त्री विचार करें।''

श्री मोदी ने विश्व के 39 देशों से आए प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए हिंदी को चैतन्य भाषा बनाए रखने का आह्वान किया। उन्होंने विदेशों में हिंदी प्रचार-प्रसार के लिए किए जा रहे प्रयासों की सराहना की और मॉरीशस की सरकार, जनता और साहित्यकारों के योगदान को विशेष रूप से रेखांकित किया। इस अवसर पर उन्होंने समारोह के शुभंकर पर विशेष डाक टिकट के साथ विश्व हिंदी सम्मेलन की स्मारिका, 'गगनांचल' पत्रिका के विशेषांक और 'प्रवासी साहित्य जोहान्सबर्ग से आगे' का लोकार्पण भी किया।

उद्घाटन समारोह में अपने संबोधन में विदेश मंत्री माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने कहा, ''10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन ऐतिहासिक साबित होगा। अभी तक जितने भी विश्व हिंदी सम्मेलन हुए हैं वे साहित्य पर केंद्रित थे। यह पहला ऐसा सम्मेलन है जो भाषा को समर्पित है।'' उन्होंने बताया, ''पिछले नौ हिंदी सम्मेलन साहित्य को बढ़ावा देने के लिए आयोजित किए गए जबकि यह सम्मेलन हिंदी भाषा को बढ़ावा देने के लिए आयोजित किया गया है।''

उनके शब्दों में, ''यह सम्मेलन परिणाममूलक रहेगा और इसी उद्देश्य से सम्मेलन में ऐसे विषयों का चयन किया गया है जिसमें वर्तमान समय में हिंदी भाषा के विस्तार की संभावनाएँ हैं। संचार एवं सूचना, प्रशासन, सूचना प्रौद्योगिकी, विज्ञान और विदेश नीति ऐसे ही कुछ विषय हैं।''

इससे पूर्व अपने स्वागत वक्तव्य में मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान ने प्रधान मंत्री और अतिथियों का स्वागत करते हुए श्री मोदी का सम्मेलन के आयोजन की सहमति देने के लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा, ''जिस गुजरात से महात्मा गांधी ने हिंदी का जयघोष किया था उसी गुजरात से आज श्री मोदी

जी हिंदी का मान बढ़ा रहे हैं।'' उन्होंने कहा, ''हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की घोषणा भी गुजरात से हुई थी। श्री मोदी हिंदी बोलनेवाले प्रधान मंत्री हैं और उन्होंने देश-विदेश में हिंदी का मान बढ़ाया है यहाँ तक कि संघ लोक सेवा आयोग परीक्षा में भी हिंदी को सम्मान दिलाया है।''

सम्मेलन का शुभारंभ श्री महेश श्रीवास्तव द्वारा रचित हिंदी प्रशस्ति गान से किया गया जिसे संगीतबद्ध किया है युवा संगीतकार उमेश तरकस्वार ने व स्वर दिया है प्रख्यात गायिका सुहासिनी जोशी ने। मंचासीन मुख्य व विशेष अतिथियों का अंगवस्त्र भेंट कर स्वागत किया गया। कार्यक्रम के अंत में विदेश राज्य मंत्री माननीय जनरल वी.के. सिंह ने आभार व्यक्त किया।

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का मुख्य विषय 'हिंदी जगत : विस्तार एवं संभावनाएँ' रखा गया था। मुख्य उद्देश्य समकालीन वैश्विक परिस्थिति में हिंदी को मानव एवं राष्ट्र सेवा का साधन बनाना तथा हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ में आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाकर विश्व भाषा के रूप में स्थापना करना रहा।

इस अवसर पर राज्यपाल महामहिम श्री रामनरेश यादव, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल माननीय श्री केसरी नाथ त्रिपाठी, गोवा की राज्यपाल महामहिम श्रीमती मृदुला सिन्हा, भारत के केंद्रीय सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री माननीय श्री रविशंकर प्रसाद, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री माननीय डॉ. हर्षवर्धन, झारखंड के मुख्य मंत्री माननीय श्री रघुबर दास, गृह राज्य मंत्री माननीय डॉ. किरेन रिजिजू, विदेश सचिव श्री अनिल वाधवा, प्रबंधन समिति के उपाध्यक्ष सांसद श्री अनिल माधव दवे सहित विभिन्न देशों से आए हिंदी विद्वान और राज्य मंत्रिमंडल के सदस्य उपस्थित थे।

सम्मेलन

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का मुख्य विषय 'हिंदी जगत : विस्तार एवं संभावनाएँ' रखा गया था। मुख्य उद्देश्य समकालीन वैश्विक परिस्थिति में हिंदी को मानव एवं राष्ट्र सेवा का साधन बनाना तथा हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ में आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाकर विश्व भाषा के रूप में स्थापना करना रहा।

सम्मेलन में समकालीन मुद्दों और विषयों पर विचार-विमर्श किया गया तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, प्रशासन और विदेश नीति, विधि, मीडिया आदि के क्षेत्रों में हिंदी के सामान्य प्रयोग और विस्तार से संबंधित तौर-तरीकों पर भी गंभीर चर्चा हुई।

सम्मेलन में प्रथम दो दिनों के अंतर्गत 'गिरमिटिया देशों में हिंदी', 'विदेशों में हिंदी शिक्षण : समस्याएँ और समाधान', 'विदेशियों के लिए भारत में हिंदी अध्ययन की सुविधा', 'अन्य भाषा-भाषी राज्यों में हिंदी', 'विदेश नीति में हिंदी', 'प्रशासन में हिंदी', 'विज्ञान क्षेत्र में हिंदी', 'संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी', 'विधि एवं न्याय क्षेत्र में हिंदी और भारतीय भाषाएँ', 'बाल साहित्य में हिंदी', 'हिंदी पत्रकारिता और संचार माध्यमों में भाषा की शुद्धता', 'देश और विदेश में प्रकाशन : समस्याएँ एवं समाधान' शीर्षक से बारह निर्धारित विषयों पर मुख्य सभागार से अलग चार सभागारों में समानांतर सत्र चले। द्वितीय तथा तृतीय दिवस को इन विषयों पर आयोजित सत्रों की रिपोर्ट और अनुशंसाएँ प्रस्तुत की गईं तथा उनका अनुमोदन किया गया। इन सत्रों में पारित मंतव्यों को सम्मेलन के समापन समारोह में प्रत्येक सत्र के प्रतिवेदक द्वारा प्रस्तुत किया गया।

सम्मेलन स्थल पर कई विशेष प्रदर्शनियाँ लगाई गईं। इनमें अनेक वैश्विक कंपनियों जैसे गूगल, एप्पल, माइक्रोसॉफ़्ट द्वारा हिंदी से संबंधित अपने नवीनतम उत्पाद प्रदर्शित किए गए। इनके अतिरिक्त वेबदुनिया, सीडैक आदि की परियोजनाएँ और विश्वविद्यालयों तथा हिंदी क्षेत्र में कार्यरत अन्य संस्थाओं को भी मंच प्रदान किया गया था। प्रदर्शनी स्थल पर हिंदी की पुस्तकों के लोकार्पण के लिए अलग से एक स्थान निर्धारित किया गया था जहाँ पुस्तकों एवं पत्रिकाओं का लोकार्पण समानांतर रूप से चला।

समापन समारोह

तीन दिनों तक गंभीर चर्चा-परिचर्चा आदि के उपरांत 12 सितंबर, 2015 को अपराह्न में रामधारी सिंह दिनकर सभागार में

विश्व हिंदी सम्मेलन का औपचारिक समापन किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में भारत के केंद्रीय गृह मंत्री माननीय श्री राजनाथ सिंह उपस्थित हुए। इस अवसर पर माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान, भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री डॉ. हर्षवर्धन, माननीय श्री केसरी नाथ त्रिपाठी, माननीया श्रीमती मृदुला सिन्हा, छत्तीसगढ़ के मुख्य मंत्री माननीय डॉ. रमण सिंह, हरियाणा के मुख्य मंत्री माननीय श्री मनोहर लाल खट्टर, मॉरीशस की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुखन-लछुमन, विदेश राज्य मंत्री माननीय जनरल डॉ. वी.के. सिंह, राज्य सभा सांसद माननीय श्री अनिल माधव दवे तथा विदेश मंत्रालय में सचिव श्री अनिल वाधवा ने अपनी उपस्थिति से मंच की शोभा बढ़ाई।

मुख्य अतिथि माननीय श्री राजनाथ सिंह ने अपने वक्तव्य में कहा, ''हिंदी संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में शामिल होनी चाहिए और इसके लिए भारत सरकार अपनी ओर से पूरा प्रयास करेगी।'' उन्होंने कहा, ''यदि हम योग को 177 देशों के समर्थन से संयुक्त राष्ट्र में स्थान दिला सकते हैं तो मात्र 127 देशों के समर्थन से हिंदी को संयुक्त राष्ट्र में शामिल करने की क्षमता भी रखते हैं।'' आगे उन्होंने यह भी कहा, ''गिरमिटिया मज़दूरों ने हिंदी को सबसे बड़ा योगदान दिया है और विदेशों में इस भाषा को मरने नहीं दिया।''

अपने स्वागत भाषण में मुख्य मंत्री माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा, ''हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। हिंदी अत्यंत प्राचीन, उन्नत और श्रेष्ठ भाषा है और इसमें कोई कमी नहीं है। हमें हिंदी को मान-सम्मान दिलाने के लिए अपनी मानसिकता को बदलना होगा। मध्य प्रदेश में सारा कामकाज हिंदी में करने के लिए सरकार कृत संकल्प है।''

आगे उन्होंने कहा, ''एक हद तक आज पूरे हिंदुस्तान में हिंदी की चर्चा हो रही है। यह सम्मेलन की सबसे बड़ी सफलता है। जिस तन्मयता के साथ विश्व भर से आए हिंदी प्रेमियों ने इसमें भाग लिया, वे सभी प्रशंसा एवं बधाई के पात्र हैं।''

मुख्य अतिथि माननीय श्री राजनाथ सिंह ने अपने वक्तव्य में कहा, ''हिंदी संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में शामिल होनी चाहिए और इसके लिए भारत सरकार अपनी ओर से पूरा प्रयास करेगी।'' उन्होंने कहा, ''यदि हम योग को 177 देशों के समर्थन से संयुक्त राष्ट्र में स्थान दिला सकते हैं तो मात्र 127 देशों के समर्थन से हिंदी को संयुक्त राष्ट्र में शामिल करने की क्षमता भी रखते हैं।''

समापन समारोह का शुभारंभ विख्यात कवि श्री अशोक चक्रधर द्वारा रचित हिंदी गान से तथा मंचासीन मुख्य व विशेष अतिथियों का अंगवस्त्र से स्वागत करते हुए किया गया। समारोह में सम्मेलन के 12 सत्र में सभी विषयों पर प्रस्तुतियों और चर्चा के बाद स्वीकृत मंतव्यों की रिपोर्ट प्रस्तुत की गई। इसके अनुरूप सम्मेलन के मंतव्य पारित किए गए तथा अगला विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस में आयोजित किए जाने की घोषणा की गई। सम्मेलन में पारित प्रस्ताव का विस्तार आगे दिया जा रहा है।

विश्व हिंदी सम्मान

विश्व हिंदी सम्मेलनों में विद्वानों को सम्मानित करने की परंपरा रही है। यह सम्मान भारत तथा विदेश में विविध प्रकार से हिंदी के प्रचार-प्रसार व उन्नयन से जुड़े हिंदी सेवियों को दिया जाता है। 9वें विश्व हिंदी सम्मेलन के अंत में यह निर्णय लिया गया था कि 10वें सम्मेलन से इसे 'विश्व हिंदी सम्मान' के नाम से जाना जाएगा। दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन के समापन समारोह का एक प्रमुख अंग बीस भारतीय और बीस भारतेतर हिंदी सेवियों को विश्व हिंदी सम्मान प्रदान करने का कार्यक्रम रहा। 2015 में विश्व हिंदी सम्मान प्राप्त करनेवाले 40 विद्वानों का परिचय आगे दिया जा रहा है।

विदेश राज्य मंत्री माननीय जनरल डॉ. वी.के. सिंह द्वारा धन्यवाद ज्ञापन के साथ ही 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन संपन्न हुआ।

सांस्कृतिक कार्यक्रम व अन्य गतिविधियाँ

सम्मेलन के दौरान पूरे दिवस के अकादमिक कार्यों के उपरांत रात्रि में हिंदी और भारतीय संस्कृति से जुड़े अन्य पक्षों को उभारने के उद्देश्य से अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए गए जहाँ प्रथम रात्रि का कार्यक्रम भारत की प्रांतीय, जनजातीय और लोक परंपरा से संबंधित नृत्य और संगीत को अत्यंत कलात्मक रूप से मंच पर दिखाया गया वहीं द्वितीय रात्रि की सांस्कृतिक प्रस्तुति 'अथ हिंदी कथा' शीर्षक से एक भव्य नृत्य नाटिका रही। हिंदी भाषा के इतिहास, विकास और साहित्य पर आधारित इस प्रस्तुति में शब्द, संगीत, नृत्य, नाट्य और प्रकाश योजना का मनमोहक कलात्मक मिश्रण था।

'गिरमिटिया देशों में हिंदी' में माननीया मंत्री जी ने 'प्रवासी देशों में हिंदी व उसका भविष्य' विषय पर पत्र प्रस्तुत किया। अपनी प्रस्तुति में माननीया मंत्री जी ने प्रवासी देशों में हिंदी शिक्षण, संस्थाओं की भूमिका, मीडिया व पत्रकारिता की भूमिका, हिंदी व भूमंडलीकरण, मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की योजनाओं आदि की चर्चा करते हुए कुछ संभावनाओं की खोज की आवश्यकता पर बात की और कई ठोस सुझाव दिए जिनको खूब सराहा गया।

सम्मेलन व सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अतिरिक्त सम्मेलन प्रतिभागियों को भोपाल के ऐतिहासिक व रोचक भ्रमण स्थलों, मानव संग्रहालय/जनजातीय संग्रहालय आदि का भ्रमण करवाने का भी पूरा प्रबंध किया गया था।

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में विश्व हिंदी समुदाय की उपस्थिति

मॉरीशस

विश्व हिंदी सम्मेलन में प्रतिभागिता हेतु मॉरीशस की ओर से देश में हिंदी के प्रचार, शिक्षण, प्रसारण आदि से जुड़ी महत्वपूर्ण संस्थाओं के अधिकारियों व प्रतिनिधियों तथा साहित्य लेखन, प्रचार, शिक्षण व मीडिया से जुड़े वरिष्ठ हिंदी सेवियों के साथ 17 सदस्यों का एक प्रतिनिधि मंडल गठित किया गया था जिसका नेतृत्व मॉरीशस की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन ने किया। प्रतिनिधि मंडल के सदस्य भारत में मॉरीशस के उप-उच्चायुक्त श्री जोयकर नायक, श्री गंगाधरसिंह सुखलाल, डॉ. श्रीमती सरिता बुधु, श्री अजामिल माताबदल, डॉ. श्रीमती विनोदबाला अरुण, श्री टहल रामदीन, श्री केसन बधु, श्रीमती सूर्यकांति गयान, डॉ. श्रीमती संयुक्ता भुवन रामसारा, श्री सत्यदेव टेंगर, श्री यंतुदेव बुधु, श्री राजनारायण गति, डॉ. राजरानी गोबिन, श्री सत्यदेव प्रीतम, डॉ. हेमराज सुंदर व श्री प्रह्लाद रामशरण रहे।

10 सितंबर को सम्मेलन के प्रथम दिवस के प्रथम समानांतर सत्र 'गिरमिटिया देशों में हिंदी' में माननीया मंत्री जी ने 'प्रवासी देशों में हिंदी व उसका भविष्य' विषय पर पत्र प्रस्तुत किया। अपनी प्रस्तुति में माननीया मंत्री जी ने प्रवासी देशों में हिंदी शिक्षण, संस्थाओं की भूमिका, मीडिया व पत्रकारिता की भूमिका, हिंदी व भूमंडलीकरण, मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की योजनाओं आदि की चर्चा करते हुए कुछ संभावनाओं की खोज की आवश्यकता पर बात की और कई ठोस सुझाव दिए जिनको खूब सराहा गया। सम्मेलन में मॉरीशस के प्रतिनिधि मंडल के अन्य सदस्यों ने भी पत्र प्रस्तुत किए। यह सम्मेलन वैचारिक मंच के साथ-साथ एक संपर्क मंच के रूप में भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। शिक्षा मंत्री ने श्री शिवराज सिंह चौहान समेत भारत के अनेक वरिष्ठ नेताओं से भेंट करते हुए विश्व में हिंदी प्रचार की योजनाओं पर चर्चा की साथ ही प्रतिनिधि मंडल में शामिल संस्थाओं के अधिकारियों के लिए भी यह सम्मेलन भारत और विदेश की संस्थाओं से संपर्क जोड़ने और योजनाओं पर विचार करने का अवसर रहा।

विदेश

मॉरीशस के साथ-साथ विश्व के लगभग 39 देशों से प्रतिभागियों की उपस्थिति रही। जहाँ फ़िजी से एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रतिनिधि मंडल ने अपनी प्रतिभागिता दी वहीं श्री लंका, दक्षिण अफ्रीका, न्यू ज़ीलैंड, अमेरिका, कनाडा, बेल्जियम, सउदी अरब, जर्मनी, यू.के.,

पॉलैंड, सूरीनाम, त्रिनीदाद, इटली, हंगरी, रूस समेत अनेक देशों के वरिष्ठ हिंदी विद्वानों, साहित्यकारों और हिंदी सेवियों की उपस्थिति ने सम्मेलन को यथोचित वैश्विक रूप प्रदान किया।

सम्मेलन में पारित प्रस्ताव

भोपाल, भारत में 10-12 सितंबर, 2015 को आयोजित 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन ने निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए:

1. विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान देश-विदेश से आए अनेक विद्वानों, हिंदी मनीषियों एवं अन्य प्रतिभाशाली विशेषज्ञों ने 12 चयनित विषयों पर समानांतर सत्रों में गहन चर्चा के पश्चात जो अनुशंसाएँ की हैं, विदेश मंत्रालय एक विशेष समीक्षा समिति गठित कर उन अनुशंसाओं को यथोचित कार्यवाही हेतु विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों को अग्रेषित करे।

2. 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन सन् 2018 में मॉरीशस में किया जाए जिस दौरान वहाँ स्थित विश्व हिंदी सचिवालय के नए भवन का औपचारिक उद्घाटन भी किया जाए।

एंड्रॉयड एप्लिकेशन 'दृश्यमान' पर उपलब्ध हुईं विश्व हिंदी सम्मेलन की झलकियाँ

विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान आयोजित विभिन्न सत्रों की झलकियाँ एंड्रॉयड मोबाइल फ़ोन पर भी उपलब्ध कराई गईं। इसके लिए माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्व-विद्यालय, भोपाल द्वारा एक नया एंड्रॉयड एप्लिकेशन 'दृश्यमान' विकसित किया गया था। इस एप्लिकेशन के माध्यम से सम्मेलन की दृश्य-श्रव्य झलकियाँ देखने की सुविधा दी गई। इस एप्लिकेशन के अतिरिक्त माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय द्वारा सम्मेलन से जुड़ी सभी खबरें 'सम्मेलन समाचार' नाम से दैनिक पत्र में प्रकाशित की जाती रहीं। दूरदर्शन द्वारा भी सम्मेलन के मुख्य आकर्षण का सीधा प्रसारण किया गया तथा मध्य प्रदेश व संपूर्ण भारत के समाचार पत्रों में सम्मेलन से जुड़ी खबरों का खूब प्रकाशन हुआ।

हिंदी की खातिर एक छत के नीचे जुटे माइक्रोसॉफ़्ट, गूगल और एप्पल

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का भव्य व आकर्षक आयोजन स्थल हिंदी के प्रोत्साहन के साथ ही हिंदी के हाईटेक स्वरूप को बढ़ावा देने का भी स्थल बनकर उभरा जहाँ माइक्रोसॉफ़्ट, गूगल और एप्पल जैसी दुनिया की नामचीन कंपनियाँ एक छत के नीचे जमा हुईं। इनके अतिरिक्त वेबदुनिया, सीडैक आदि अनेक संस्थाओं द्वारा हिंदी और सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में किए जा रहे कार्यों को भी प्रदर्शनी में देखा जा सका।

हिंदी-भाषी लोगों के लिए हिंदी में आएगी सोशल नेटवर्किंग साइट 'मूषक'

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में शिरकत करने आए पुणे के अनुराग गौड़ व उनके साथियों ने भोपाल में ट्विटर की तर्ज़ पर पूरी तरह हिंदी में काम करनेवाला 'मूषक' सोशल नेटवर्किंग साइट देशवासियों और हिंदी प्रेमियों के लिए पेश किया।

❑

5 सम्मानित भारतीय विद्वान

डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय

आप एक प्रतिष्ठित आलोचक, नाटककार, निबंधकार व संपादक हैं। आप देश की शीर्ष साहित्य और भाषा संस्थाओं के निदेशक तथा भारतीय ज्ञानपीठ की पत्रिका 'नया ज्ञानोदय' के मुख्य संपादक रहे हैं।

डॉ. प्रभात कुमार भट्टाचार्य

आप उज्जैन विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर रह चुके हैं और रंगकर्म एवं नाट्य निदेशन में ख्याति प्राप्त की। उज्जैन में आपने मध्य प्रदेश नाट्य ग्रुप कला अकादमी की स्थापना की व संस्कृत वाङ्मय के 18 नाटकों की हिंदी में पुनर्रचना की।

डॉ. एन. चंद्रशेखरन नायर

आप मलयालम, हिंदी व संस्कृत के ज्ञाता हैं। हिंदी प्रचारक के रूप में आपने दक्षिण भारत में हिंदी का प्रचार-प्रसार किया। आपने भारत सरकार की विभिन्न हिंदी सलाहकार समितियों के सदस्य के रूप में राज भाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया तथा हिंदी अध्यापन से भी जुड़े रहे।

डॉ. मधु धवन

आपने दक्षिण भारत में हिंदी पाठ्यक्रम निर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया व अनेक पत्रिकाओं द्वारा हिंदी भाषा को बढ़ावा दिया। तमिल नाडु के स्कूल व कॉलेजों में कैरियर ऑरिएंटेड पाठ्यक्रम बनाया तथा निर्देशन किया। नाटकों के माध्यम से आपने दक्षिण भारत में बोलचाल की हिंदी को बढ़ावा दिया।

प्रो. माधुरी जगदीश छेड़ा

आप साहित्यकार, हिंदी-सेवी और भाषाविद हैं। आप मुंबई विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर थीं। आपने गुजराती, मराठी व हिंदी के बीच समन्वय स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आपने विभिन्न विश्वविद्यालयों के हिंदी पाठ्यक्रम के लिए पुस्तकें संपादित कीं तथा हिंदी भाषा प्रशिक्षण के अनेक शिविर आयोजित किए।

प्रो. अनंतराम त्रिपाठी

मुंबई विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य करने के बाद आप कई दशकों से राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा से जुड़े हैं। 1951 से आपने विभिन्न हिंदी संस्थाओं को प्रोत्साहित किया। आपने छठे, सातवें, आठवें तथा नौवें विश्व हिंदी सम्मेलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आप 'राष्ट्रभाषा' पत्रिका के संपादक मंडल के सदस्य और लगभग 25 पुस्तकों के संपादक रह चुके हैं।

कुमारी अहेम कामै

1980 से आप स्वैच्छिक रूप से नागा हिंदी विद्यापीठ में छात्रों को हिंदी पढ़ाती रहीं। आपने कठिन परिश्रम से और निजी पहल कर्मियों के सहयोग से मणिपुर में हिंदी की प्रगति व प्रचार-प्रसार में योगदान दिया व पूर्वोत्तर प्रांतों में हिंदी के प्रसार में सफलता पाई।

डॉ. परमानंद पांचाल

आप दक्खिनी हिंदी साहित्य के विद्वान, लिपि विशेषज्ञ और साहित्यकार हैं। 'नागरी' पत्रिका के संपादक के रूप में देवनागरी लिपि को लोकप्रिय बनाने में आपने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा राष्ट्रपति के विशेष कार्य अधिकारी रहकर हिंदी की सेवा की।

डॉ. नागेश्वर सुंदरम

आपको हिंदी, तमिल और कन्नड़ में महारथ हासिल है। आपकी रचनाएँ विविध विषयों को समाहित करती हैं। आप दक्षिण हिंदी प्रचार सभा मद्रास से जुड़े रहे हैं। दक्षिण में हिंदी को स्वीकार्य बनाने में आपने योगदान दिया।

प्रो. हरि राम मीणा

आप स्वतंत्र हिंदी लेखन में सक्रिय हैं तथा आपकी पुस्तकें विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल हैं। आपके साहित्य पर देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में दर्जनों शोधार्थी एमफ़िल तथा पीएचडी कर रहे हैं। आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति आपकी गहरी निष्ठा है।

डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी

आप कवि, कहानीकार, निबंधकार, आलोचक और संपादक के रूप में हिंदी भाषा व साहित्य के प्रचार-प्रसार में प्रयत्नशील रहे हैं। आपने हिंदी में 'अंडमान और निकोबार की लोक कथाएँ' पुस्तक लिखकर आदिवासी लोक कथाओं में निहित मान्यताओं, परंपराओं, मिथकों आदि को सफ़लतापूर्वक राष्ट्रीय फ़लक तक पहुँचाया। आप साहित्य अकादमी से जुड़े रहे हैं।

डॉ. सुरेश कुमार गौतम

आप साहित्यकार, कोशकार, विद्वान, समीक्षक, संपादक, मीमांसक तथा चिंतक रहे हैं। पिछले चार दशकों से आप हिंदी के प्रसार और उन्नयन में सक्रिय योगदान दे रहे हैं। आपने राष्ट्रीय सांस्कृतिक दृष्टि और मानवीय मूल्य चिंतन को एक निश्चित मंच प्रदान किया। आपने भारत की संपूर्ण भाषाओं और बोलियों के साहित्य को एकत्रित करने का सफल प्रयास किया।

श्री आदित्य चौधरी

आप दूरदर्शन और अन्य टी.वी. चैनलों के प्रसिद्ध कार्यक्रमों और धारावाहिकों के लेखक और रचनात्मक सलाहकार रहे हैं। आपने 'भारतकोश' का ऑनलाइन प्रकाशन किया जो यूनिकोड में है तथा जिसे प्रतिमाह दस लाख लोग देखते हैं। आपने छात्रों को नि:शुल्क कंप्यूटर ज्ञान और हिंदी टंकन का प्रशिक्षण दिया।

डॉ. के.के. अग्रवाल

आप सुप्रसिद्ध पुस्तक 'Alloveda' के लेखक और चिकित्सक हैं। आपने भारतीय संस्कृति एवं परंपरागत जीवन मूल्यों को आधुनिक चिकित्सा से जोड़कर हिंदी समाचार पत्रों में लेखन द्वारा लोगों में स्वास्थ्य और हृदय रोग के प्रति जागरूकता पैदा की। आपने सामाजिक अभियानों व हिंदी के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किए हैं।

श्री अन्नू कपूर

आपने हिंदी शब्दों के जादू से हिंदी सिनेमा में हिंदी को नई पहचान दिलाई। टी.वी. कार्यक्रमों द्वारा आपने हिंदी का प्रचार-प्रसार करते हुए लोगों का स्नेह बढ़ाया। हिंदी को जन मानस के पटल पर अंकित करने में आपने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

श्री अरविंद कुमार

आप समांतर कोश 'हिंदी थिसॉरस' के जनक हैं और अपनी पत्नी कुसुम के साथ पिछले 39 वर्षों से हिंदी-अंग्रेज़ी अभिव्यक्तियों के संसार में सबसे बड़े डेटाबेस 'अरविंद लेक्सिकन' का संकलन करते आए। फ़िल्मी पत्रिका 'माधुरी' के संपादक के रूप में आपने स्वस्थ फ़िल्मी पत्रकारिता को नया आयाम दिया।

श्री माता प्रसाद

आप अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल रहे हैं और अपने कार्यकाल में आपने प्रदेश के विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग खोलने में योगदान दिया एवं पूर्वोत्तर परिषद की बैठकों में हिंदी को बढ़ावा दिया। आप त्रिनिदाद एवं टोबैगो में आयोजित 5वें विश्व हिंदी सम्मेलन में सरकारी प्रतिनिधि मंडल के नेता थे। पूर्वोत्तर में हिंदी को स्थापित और सुदृढ़ करने में आपका प्रयास सराहनीय है।

श्री आनंद मिश्र 'अभय'

आप विद्यार्थी जीवन से ही शुद्ध एवं प्रांजल हिंदी के पक्षधर रहे हैं तथा प्रशासनिक पदों पर रहकर हिंदी व्याकरण पर कार्य किया। मुकदमों के निर्णयों में भी आपने वर्तनी पर ध्यान दिया। आपने 'राष्ट्र धर्म' पत्रिका का 18 वर्षों तक संपादन किया। आप हिंदी के प्रति गहरी निष्ठा तथा रुचि रखते हैं।

श्री रामबहादुर राय

आप हिंदी पत्रकार व 'यथावत' पत्रिका के संपादक हैं। दिल्ली में प्रकाशित हिंदी पाक्षिक 'प्रथम प्रवक्ता' व 'जनसत्ता' समाचार पत्र के संपादक तथा 'नवभारत टाइम्स' के संवाददाता रहे। गणतंत्र दिवस, 2015 के अवसर पर आपको पद्मश्री से नवाज़ा गया। आप देश की अनेक सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हैं। आपकी सामाजिक सेवाओं और पत्रकारीय योगदान के लिए आपको कई सम्मान दिए गए।

श्री रामदरश मिश्र

आप उपन्यासकार, कहानीकार तथा कवि हैं। आपने कई शैलियों में सृजनात्मक प्रतिभा से प्रभावशाली अभिव्यक्ति और ग़ज़ल में अपनी सार्थक उपस्थिति रेखांकित की। आप अनेक साहित्यिक, अकादमिक और सामाजिक संस्थाओं के अध्यक्ष रहे व आपकी अनेक कृतियाँ पुरस्कृत हुईं। सभी साहित्यिक विधाओं में आपका योगदान बहुमूल्य है और आप कई पत्रिकाओं के सलाहकार संपादक हैं।

सम्मानित भारतेतर विद्वान

श्री अनूप कुमार भार्गव (अमेरिका)

आप अमेरिका के न्यू जर्सी राज्य में स्वतंत्र कंप्यूटर सलाहकार के रूप में कार्यरत हैं। आप इंजीनियरिंग स्नातक हैं और कवि भी। आप 'इ-कविता' नामक ऑनलाइन मंच के संस्थापक हैं तथा विशाल वेबसाइट 'कविता कोश' में भी आपका योगदान उल्लेखनीय है। हिंदी अंतरराष्ट्रीय समिति के माध्यम से हिंदी संबंधी गतिविधियों में आप सक्रिय भूमिका निभाते रहे हैं तथा आप अनेक कवि सम्मेलनों के आयोजन से भी जुड़े रहे हैं।

श्रीमती स्नेह ठाकुर (कनाडा)

आप 'वसुधा' पत्रिका का संपादन करती हैं। आपने कनाडा में रहकर सक्रिय रूप से हिंदी साहित्य की कई विधाओं में लेखन कार्य किया है। हिंदी-उर्दू में आपकी अनेक पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है। आप द्विभाषी और अनुवादक भी हैं। आपको हिंदी सेवा के लिए कई सम्मान प्राप्त हैं। कनाडा में हिंदी के प्रचार-प्रसार में आपका योगदान उल्लेखनीय है।

प्रो. हाइंस वेर्नल वेसलर (जर्मनी)

आप उपसला विश्वविद्यालय, स्वीडन में प्राध्यापक हैं तथा जर्मनी के बॉन विश्वविद्यालय में अतिथि प्राध्यापक के रूप में कार्यरत हैं। आपने 'विष्णु पुराण में समय तथा इतिहास' पर महत्वपूर्ण शोध कार्य किया है। आपने जर्मनी में हिंदी के विभिन्न क्षेत्रों विशेषकर भाषा संवर्धन व हिंदी प्रकाशन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

डॉ. अकीरा ताकाहाशी (जापान)

आप भाषा तथा संस्कृति स्नातक स्कूल, ओसाका, जापान में प्रोफ़ेसर के रूप में कार्यरत हैं। आपने 'साहित्य में नैतिकता की समस्या' पर शोध किया है। आपने पिछले साढ़े तीन दशकों में अध्येता, अनुवादक, शोधार्थी तथा प्राध्यापक के रूप में हिंदी की सेवा की है। हिंदी के प्रति आपकी गहरी निष्ठा है और जापान में हिंदी के प्रचार-प्रसार में आपके प्रयास सराहनीय हैं।

प्रो. उषा देवी शुक्ला (दक्षिण अफ्रीका)

आप दक्षिण अफ्रीका स्थित हिंदी शिक्षा संघ की पूर्व अध्यक्षा व शैक्षणिक समिति की संयोजिका हैं। दक्षिण अफ्रीका में हिंदी भाषा, साहित्य और संस्कृति के प्रचार-प्रसार में आपका विशेष योगदान है। प्रवासी देशों में रामचरितमानस के प्रभाव पर आपका शोध महत्वपूर्ण है। आपने अनेक राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लिया है।

सुश्री कमला रामलखन (त्रिनिदाद एवं टोबैगो)

आप शिक्षिका हैं तथा हिंदी-सेवा के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं। आप 38 वर्षों से हिंदी तथा भारतीय संगीत के प्रचार-प्रसार के लिए कार्य कर रही हैं। आपकी हिंदी पुस्तकें त्रिनिदाद और टोबैगो में हिंदी सीखनेवालों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हैं। आप तीसरे, पाँचवें तथा छठे विश्व हिंदी सम्मेलनों में देश का प्रतिनिधित्व कर चुकी हैं। त्रिनिदाद और टोबैगो में हिंदी को लोकप्रिय बनाने में आपका सार्थक प्रयास रहा है।

डॉ. दैमंतास वलनचूनास (लिथुआनिया)

आप लिथुआनिया में हिंदी शिक्षक हैं। आपने अपने अध्यापन कार्य के माध्यम से हिंदी भाषा और संस्कृति को प्रचारित करने में अहम भूमिका निभाई है तथा रेडियो कार्यक्रम, वेबसाइट साक्षात्कार तथा सेमिनारों के माध्यम से हिंदी को पुष्पित तथा पल्लवित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

श्रीमती नीलम कुमारी (फिज़ी)

आप 'शांतिदूत' पत्रिका की संपादक हैं। भारत-फिजी छात्रवृत्ति योजना के अंतर्गत भारत में अध्ययन करने के बाद आप फिजी में हिंदी की सेवा कर रही हैं। फिजी में आपने अपने अध्यापन कार्य के माध्यम से हिंदी के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आपने रिपोर्ट लेखन तथा सामाजिक कार्यों में भी अपना योगदान दिया है।

डॉ. सार्ज वर्बेक (बेल्जियम)

आप बेल्जियम में भाषा तथा संस्कृति विभाग, घेंट विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं। आपने भारतीय आर्य भाषाओं के क्षेत्र में व्यापक कार्य किया है। आपने अनेक पुस्तकों का संपादन किया है तथा हिंदी और कश्मीरी भाषा पर गहन शोध कार्य भी किया है।

श्री अजामिल माताबदल (मॉरीशस)

आप पिछले चार दशकों से मॉरीशस में हिंदी के प्रचार-प्रसार से जुड़े हैं। आप मॉरीशस के शिक्षा मंत्रालय, विश्व हिंदी सचिवालय, हिंदी प्रचारिणी सभा, हिंदी संगठन और अन्य संस्थाओं से जुड़े

हैं तथा अनेक पत्रिकाओं में सह-संपादक और प्रबंध संपादक के रूप में कार्य किया है। हिंदी के प्रति आपकी गहरी निष्ठा है। मॉरीशस में सृजनात्मक लेखन के क्षेत्र में आपका महत्वपूर्ण योगदान है।

श्री गंगाधरसिंह गुलशन सुखलाल (मॉरीशस)

आप मॉरीशस स्थित विश्व हिंदी सचिवालय के कार्यवाहक महासचिव हैं। आप महात्मा गांधी संस्थान में वरिष्ठ प्राध्यापक रह चुके हैं। शिक्षण, सृजनात्मक लेखन, तकनीक तथा नवीन प्रचार अभियानों आदि के माध्यम से आपने मॉरीशस में हिंदी के उन्नयन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आपने अनेक साहित्यिक एवं शैक्षणिक प्रकाशनों में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

डॉ. इंदिरा गाज़िएवा (रूस)

आप रूसी राजकीय मानवीकी विश्वविद्यालय की हिंदी अध्यापिका हैं। आपने दाग़िस्तान और मास्को में हिंदी अध्ययन तथा हिंदी प्रचार-प्रसार के लिए उल्लेखनीय कार्य किए। आप एसोसिएशन ऑव साउथ एशियन स्टडीज़ और यूरोपियन एसोसिएशन ऑव साउथ एशियन स्टडीज़ की सदस्या हैं।

सुश्री मुदियंसेलागे इंद्रा कुमारी दसनायक (श्री लंका)

आप हिंदी की सर्टिफ़िकेट पाठ्यक्रम की प्रशिक्षिका हैं। आपने हिंदी-सिंहली-अंग्रेज़ी दृश्य शब्दकोश का प्रकाशन किया है। श्री लंका में हिंदी के प्रचार-प्रसार में आपकी प्रमुख भूमिका रही तथा कोलंबो सांस्कृतिक केंद्र में छात्रों को हिंदी भाषा का प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम पढ़ाती हैं।

श्री मोहम्मद इस्माईल (सउदी अरब)

आप सउदी अरब में वरिष्ठ हिंदी अध्यापक हैं। आपने अनेक हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन कर सउदी अरब में हिंदी भाषा को बढ़ावा देने का अभूतपूर्व कार्य किया है। सउदी अरब में हिंदी के प्रचार-प्रसार में आपका महत्वपूर्ण योगदान है।

श्री सुरजन परोही (सूरीनाम)

आप सूरीनाम में हिंदी के स्थापित कवि हैं। आपकी रचनाओं में राष्ट्रवादिता, धर्म, संस्कृति एवं समाज सुधार के गुण हैं। आप 'चंद्रमा' कार्यक्रम का भी प्रसारण करते हैं। आपको सूरीनाम में हिंदी प्रचार के लिए राष्ट्रपति सम्मान के साथ अनेक सम्मान प्राप्त हो चुके हैं।

श्री कैलाशनाथ बुधवार (यू.के.)

आप बी.बी.सी. विश्व हिंदी सेवा, लंदन के संपादक, निर्माता तथा प्रसारक हैं। साथ-साथ आप अनेक हिंदी संस्थाओं से जुड़े हैं। आपने 150 से अधिक रेडियो कार्यक्रमों का लेखन और प्रसारण किया है। आप लंदन की संस्था कथा यू.के. से भी जुड़े रहे हैं। आप पत्रकारिता से संबंधित अनेक पुस्तकों के रचयिता हैं।

डॉ. श्रीमती उषा राजे सक्सेना (यू.के.)

आप ग्रेट ब्रिटेन लेखक संघ की संस्थापिका हैं। हिंदी में आपकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। आप लंदन में विभिन्न शिक्षण संस्थाओं से भी जुड़ी रही हैं। आपकी रचनाएँ यू.जी.सी. द्वारा अनुशंसित पाठ्यक्रमों में शामिल हैं। ब्रिटेन में हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा संवर्धन में आपका महत्वपूर्ण योगदान है।

श्री हाशिम दुर्रानी (ऑस्ट्रेलिया)

आप स्कूल ऑव केमिस्ट्री में व्यावसायिक अधिकारी हैं। आप हिंदी, उर्दू, फ़ारसी, पश्तो भाषाओं के विद्वान हैं। आप 12 वर्षों से सिडनी विश्वविद्यालय में वरिष्ठ अकादमिक के रूप में कार्यरत हैं।

डॉ. इमरे बांगा (हंगरी)

आप ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय के प्राच्य अध्ययन संकाय में सहायक प्राध्यापक हैं। हिंदी विशेषकर खड़ी बोली, हस्तलेख, रीति कविता, ब्रज भाषा में रीतिमुक्त कविता आदि आपके शोध-क्षेत्र हैं। आपने हिंदी, उर्दू तथा बंगाली में भी प्रशिक्षण दिए हैं। हंगरी और यूरोप के अन्य प्रांतों में हिंदी शिक्षण व प्रचार में आपका विशेष योगदान है।

डॉ. पी. जयरामन (अमेरिका)

आप भारतीय विद्या भवन, अमेरिका के कार्यकारी निदेशक के रूप में कार्यरत हैं। आप संस्कृत, हिंदी, तमिल भाषा एवं साहित्य के विद्वान हैं। भारतीय संस्कृति तथा साहित्य के प्रति समर्पित होकर आपने इन विषयों पर गंभीर अध्ययन किया है। आपने भारतीय विद्या भवन के आदर्शों से प्रभावित होकर वर्ष 1980 में न्यू यॉर्क में भारतीय विद्या भवन की स्थापना की तथा भारतीय संस्कृति, परंपरा, दर्शन, भाषा, साहित्य एवं कलाओं का प्रचार-प्रसार किया। आपने अनेक धार्मिक पुस्तकों का हिंदी व अंग्रेज़ी में अनुवाद किया है। आपको अनेक पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हैं।

❑

6 भोपाल ने हमें भाषा का उत्सव मनाना सिखा दिया

• *श्री बालेंदु शर्मा दाधीच*

अनेक विद्वानों ने अनेक कोणों से दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन की आलोचना की है। नकारात्मकता का यह उद्घोष भी कहीं न कहीं हिंदी भाषा-संसार की सकारात्मकता और जीवंतता की ओर संकेत करता है। मैं ऐसे विद्वानों से क्षमायाचना सहित अपनी मतभिन्नता दर्ज करना चाहूँगा। मैंने बहुत अधिक विश्व हिंदी सम्मेलन तो प्रत्यक्ष नहीं देखे किंतु पिछले तीन सम्मेलनों (न्यू यॉर्क, जोहान्सबर्ग और भोपाल) के अपने अनुभव के आधार पर मैं भोपाल के आयोजन को बेहद उत्कृष्ट मानता हूँ। ऐसा नहीं कि इस बार के सम्मेलन में कोई कमियाँ नहीं रहीं। वे अवश्य थीं, जैसे कि हर बार होती हैं लेकिन सम्मेलन की विशेषताओं और सफलताओं के सामने मुझे उनकी कोई विशेष अहमियत प्रतीत नहीं होती। भोपाल ने अद्वितीय आयोजन करके दिखाया है। मेरी स्मृति में इतना भव्य, व्यापक और सुप्रबंधित कोई अन्य आयोजन नहीं दिखता, सिवाय माइक्रोसॉफ़्ट के सिऐटल (अमेरिका) स्थित मुख्यालय में आयोजित एम.वी.पी. समिट के, जिसमें भाग लेने का मौका मुझे कोई आठ साल पहले मिला था लेकिन वह दुनिया की सबसे बड़ी सॉफ़्टवेयर कंपनी थी जो तकनीकी लिहाज़ से सर्वसक्षम थी।

लेखक प्रसिद्ध हिंदी तकनीकविद और संपादक हैं। वे अमेरिका, रूस, इंग्लैंड, जापान, मॉरीशस, दक्षिण अफ्रीका, नेपाल आदि देशों में आयोजित अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में तकनीकी सत्रों का संचालन/भागीदारी कर चुके हैं। वे राष्ट्रपति के हाथों प्रदत्त आत्माराम पुरस्कार से सम्मानित हैं।

भोपाल में आयोजित दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन ने हमें सिखाया है कि अपनी भाषा का उत्सव कैसे मनाया जाता है, अंग्रेज़ी में जिसे अपनी भाषा को 'सेलिब्रेट' करना कहते हैं। हमारे किसी राज्य या शहर ने पहले कभी किसी भारतीय भाषा को इस अंदाज़ में सेलिब्रेट किया हो, ऐसा मेरी जानकारी में नहीं है। आज़ादी के बाद से हिंदी परस्पर विरोधाभासी भावनाओं के बीच पिसती रही है। एक वर्ग उसकी उपेक्षा से चिंतित है और दूसरा उसे थोपे जाने से। कोई 'पिछड़ेपन' के इस प्रतीक से मुक्ति के लिए छटपटा रहा है। अफ़सरशाही, मीडिया और पश्चिमपरस्तों ने कुछ ऐसा माहौल बना दिया है कि हिंदी-भाषी व्यक्ति सार्वजनिक रूप से हिंदी का अख़बार पढ़ते हुए, स्कूलों में अपने बच्चों से हिंदी में बात करते हुए और दफ़्तरों में हिंदी बोलते हुए संकोच का अनुभव करने लगा है और ऐसे माहौल में हम अपनी भाषा के गौरव को महसूस करने की बात करते हैं! भोपाल ने हिंदी के गौरव की लंबी-चौड़ी बातें नहीं कीं। उसने प्रत्यक्ष दिखाया है कि किसी भाषा के प्रति गौरव महसूस करना वास्तव में क्या होता है।

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान भोपाल मध्य प्रदेश की नहीं बल्कि हिंदी की राजधानी प्रतीत हो रहा था। अगर आप भाषा और साहित्य के लिए समाज में किसी गौरवशाली स्थान की कल्पना करते हैं तो आपको भोपाल जाना चाहिए था। भोपाल में यह सपना जीवंत हो गया था। हवाई अड्डे से आयोजन स्थल तक मार्ग में जगह-जगह विद्वानों का स्वागत करते अनगिनत बैनर और पोस्टर, चौराहों पर तुलसीदास से लेकर प्रेमचंद और माखन लाल चतुर्वेदी से लेकर अज्ञेय तक हिंदी के महान रचनाकारों के विशाल चित्र और अखबारों में हिंदी पर केंद्रित बड़े-बड़े परिशिष्ट एक आश्चर्यजनक, अविश्वसनीय किंतु आह्लादित कर देनेवाला अनुभव था। दुकानों के नामपट्ट हिंदी में बदल दिए गए थे, रास्तों के नाम हिंदी में थे। जिधर देखिए, हिंदी उत्सव मनाती दिख रही थी। समापन समारोह में मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की तरफ़ से कही गई इस बात में अतिशयोक्ति नहीं थी कि आज पूरा भोपाल हिंदीमय है। यहाँ के ताल-तलैया, शिखर-शिखरिया सब हिंदीमय हैं।

इसे आप भले ही भव्यता और आडंबर कह लें लेकिन भोपाल ने ऐसा माहौल रच दिया था कि हिंदी के प्रति गौरव का भाव स्वत: आता था। शायद ही कोई व्यक्ति हो जिसे वहाँ अंग्रेज़ी बोलने की आवश्यकता महसूस हो रही हो और हिंदी के प्रति हीनता का भाव प्रतीत हुआ हो। क्या आज हिंदी को सबसे बड़ी आवश्यकता इसी आत्म गौरव को जगाने की नहीं है? क्या हिंदी भाषियों को हिंदी की हीनता के भाव से मुक्ति दिलाना हमारा पहला लक्ष्य नहीं है? यदि हाँ, तो भोपाल को बधाई दीजिए कि उसने यह लक्ष्य हासिल करके दिखा दिया। इस शहर ने इन आयोजनों को भारत में ही स्थायी रूप से आयोजित करने की आवश्यकता को भी रेखांकित किया है। अगर सभी राजधानियाँ हिंदी को इसी तरह का गौरव और सम्मान दे सकें तो क्या बात हो!

विश्व हिंदी सम्मेलन को केंद्र और राज्य सरकारों से जैसी अहमियत इस बार मिली, वैसी इंदिरा गांधी के दौर के बाद कभी नहीं मिली। खुद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। विदेश मंत्री सुषमा स्वराज और उनके सहयोगी मंत्री जनरल डॉ. विजय कुमार सिंह कई सप्ताह से तैयारियों में जुटे थे। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान खुद राज्य स्तर पर सारे इंतजाम की देखरेख कर रहे थे। सुषमा स्वराज ने इस सिलसिले में भोपाल के कई दौरे किए और सम्मेलन शुरू होने से कुछ दिन पहले से वहाँ मौजूद थीं। मध्य प्रदेश के शिक्षा मंत्री और पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री की प्रत्यक्ष भूमिका रही। राज्यसभा सदस्य अनिल माधव दवे, मध्य प्रदेश के संस्कृति विभाग के प्रमुख सचिव मनोज श्रीवास्तव और लोकसभा सदस्य आलोक संजर दिन-रात प्रबंधन के काम में जुटे रहे। उसके बाद भोपाल के दो प्रमुख विश्वविद्यालयों—माखन लाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय और अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय ने ज़मीनी स्तर पर हुई तैयारियों, योजनाओं, ढाँचागत विकास और प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। महात्मा गांधी हिंदी विश्वविद्यालय (वर्धा) और केंद्रीय हिंदी संस्थान (आगरा) ने सम्मेलन की विषय-वस्तु के साथ-साथ प्रदर्शनियों और प्रकाशनों के ज़रिए अहम योगदान दिया। चारों संस्थानों के प्रमुख—बीके कुठियाला, मोहन लाल छीपा, गिरीश्वर मिश्र और कमल किशोर गोयनका शुरुआती तैयारी के समय से ही जुड़े रहे और सम्मेलन के समापन तक दौड़-धूप करते दिखाई दिए।

दिल्ली में विदेश विभाग ने एक अलग प्रकोष्ठ स्थापित किया था। सम्मेलन में भागीदारी करने से पहले लगता था कि इतने सारे पक्ष मिलकर विश्व हिंदी सम्मेलन का क्या हाल करेंगे? सबकी अपनी-अपनी प्राथमिकताएँ, अपना-अपना सोच, अपने-अपने तौर-तरीके और अपना-अपना अहं लेकिन सम्मेलन में जाने पर अहसास हुआ कि इतने सारे लोगों को सम्मेलन की व्यवस्था से जोड़ना कितना उपयोगी रहा।

अगर केंद्र और राज्य सरकार के बीच यह उत्कृष्ट तालमेल न होता, यदि ज़मीनी स्तर पर सैंकड़ों छात्रों और दर्जनों शिक्षकों को न लगाया जाता, यदि मध्य प्रदेश सरकार और भोपाल नगर निगम ने इसे प्रतिष्ठा और गौरव का प्रश्न न बनाया होता तो चार-पाँच हजार लोगों की भागीदारी वाला यह आयोजन इस किस्म की उत्कृष्टता की छाप नहीं छोड़ सकता था। किसी बड़े आयोजन का प्रबंधन कैसे किया जाना चाहिए, इसे भोपाल ने बखूबी सिखाया है। इतने लोगों की मौजूदगी के बावजूद कहीं कोई अफ़रा-तफ़री नहीं, कहीं कोई कुव्यवस्था नहीं, कहीं किसी चीज़ की कमी नहीं। हज़ारों लोगों का भोजन इतनी सुगमता से हो जाता था कि आश्चर्य होता था। न पानी की कमी, न जन-सुविधाओं की। सभी प्रतिनिधियों के पंजीकरण के लिए कई कैबिन लगे थे जहाँ कंप्यूटर से आपका नाम खोजकर तुरंत प्रतिभागी कार्ड हाथ में थमाने के लिए बेताब स्वयंसेवक मौजूद थे। कोई मदद चाहिए तो आपके सहयोग के लिए तत्पर। कहीं इधर-उधर होने या बहाना बना देने की प्रवृत्ति नहीं दिखी। मैंने इसे प्रत्यक्ष आज़माया था।

हिंदी के जिन विद्वानों और विशेषज्ञों को सम्मेलन में भाग लेने का मौका मिला, उनके लिए यह अविस्मरणीय अनुभव था। मध्य प्रदेश सरकार तो ऐसे जुटी थी जैसे हर मंत्री और अधिकारी के घर का अपना आयोजन हो। मुख्यमंत्री और उनके सहयोगियों के बीच इस आयोजन को लेकर भावुकता दिखाई देती थी। अब भले ही

आप इसे व्यापम से जोड़ लें या फिर बिहार में होने जा रहे विधानसभा चुनाव से लेकिन भोपाल के आयोजन में कुछ बात थी! अन्यथा हमने कब ऐसा देखा था कि किसी आयोजन में रवानगी से पहले ही टिकट के साथ-साथ आधिकारिक रूप से यह सूचना दी जाए कि भोपाल में आपके साथ फलां छात्र को सहायक के रूप में नियुक्त किया गया है और फलां वाहन चालक एक वाहन लेकर हमेशा आपके साथ रहेगा। हो सकता है कि कुछ लोग कहें कि धन खर्च कर कोई भी सरकार ऐसा कर सकती है लेकिन यदि दिल्ली से रवानगी के पहले खुद विदेश मंत्री के कार्यालय से फ़ोन कर आपसे पूछा जाए कि क्या आपको टिकट और अन्य चीजें मिल गई हैं और क्या भोपाल में आपके लिए नियुक्त सहायक ने आपसे फ़ोन पर बात कर ली है तो? दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर पहुँचकर चेक-इन कराने लगते हैं तो एयर इंडिया के अधिकारी बताते हैं कि आपका तो पहले ही 'वेब चेकिन' किया जा चुका है। आपको इस काम में समय लगाने की ज़रूरत नहीं है, बोर्डिंग पास लीजिए और सुरक्षा जाँच के लिए बढ़िए।

उत्कृष्ट प्रबंधन और मेहमाननवाज़ी की इससे बेहतर मिसाल कहाँ मिलेगी, वह भी किसी हिंदी आयोजन के संदर्भ में, कृपया बताएँ। इसकी तुलना न्यू यॉर्क से कीजिए, जब भारत से गए प्रतिनिधि घंटों तक पंक्तिबद्ध खड़े होकर यह स्पष्ट होने का इंतज़ार करते रहे थे कि उन्हें रहना कहाँ है और सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन में रूसी विद्वान वारान्निकोव तथा कमलेश्वर जी को कैसे अपमान का अहसास हुआ था, याद है आपको! भोपाल में ऐसी कोई घटना नहीं हुई। हिंदी और उसके साधकों को वहाँ यदि कुछ मिला तो वह था स्नेह और सम्मान।

भोपाल में हवाई अड्डे से आयोजन स्थल तक पहुँचने के मार्ग में आप चारों ओर हिंदी का जो सम्मान देखते हैं, वह आपको सम्मेलन की शुरूआत से पहले ही भावुक कर देता है। मुझे लगता है कि दोनों सरकारों के उस संकल्प और उन सैंकड़ों अधिकारियों तथा कार्यकर्ताओं की मेहनत के साथ हम बड़ी नाइंसाफ़ी कर रहे हैं अगर हम कतिपय छोटी चूकों और लापरवाहियों को बहुत बड़े आकार में पेश कर सम्मेलन को नाकाम सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। हमें नहीं भूलना चाहिए कि एक लेखक और पत्रकार के रूप में घटनाक्रम की निष्पक्ष तस्वीर पेश करना हमारा कर्तव्य है।

अब बात प्रधान मंत्री के भाषण की। कुछ विद्वानों ने लिखा कि उन्होंने यह कहा कि दुनिया में सिर्फ़ तीन भाषाएँ बच जाएँगी। क्षमा करें, मैं वहाँ मौजूद था और प्रधान मंत्री का भाषण तो रिकॉर्ड होकर विश्व हिंदी सम्मेलन की वेबसाइट पर उपलब्ध है, जरा उसे देख तो लीजिए। श्री नरेंद्र मोदी ने कहा था कि आज के तकनीकी दौर में, आगे चलकर जिन तीन भाषाओं का दबदबा रहने वाला है, वे हैं— अंग्रेज़ी, मंदारिन और हिंदी। यह वही बात है जो तकनीकी विश्व में एरिक श्मिट (गूगल के चेयरमैन) समेत बहुत से दिग्गज कह रहे हैं। हिंदी भाषा पर मोदी जी का अधिकार है, इसमें कोई संदेह नहीं है लेकिन वे भाषा को एक विश्लेषक की दृष्टि से भी देखते हैं और उसके बारे में उनकी एक अलग मौलिक दृष्टि है, इसका अनुमान सम्मेलन से पहले मुझे नहीं था। भाषा पर उनका भाषण न सिर्फ़ रुचिकर था बल्कि ज़मीन से जुड़ा हुआ था। उन्होंने कहा कि गुजरात में जब कोई झगड़ता है तो हिंदी में बोलने लगता है। यह एक तथ्य है जिसका ज़िक्र उन्होंने विनोदपूर्ण ढंग से किया था। आशय यह था कि जैसे कोई हिंदी भाषी व्यक्ति खास परिस्थितियों में अंग्रेज़ी बोलना अधिक प्रतिष्ठा का विषय समझता है, उसी तरह कुछ अन्य भारतीय भाषाएँ बोलनेवाले लोग हिंदी में बोलना प्रतिष्ठा का प्रश्न समझते हैं। झगड़ा होगा तो वे हिंदी में बोलने लगेंगे ताकि बात में ज़्यादा वज़न आए। मैं एक राजस्थानी होने के नाते इस तरह का अनुभव स्वयं अनेक बार कर चुका हूँ।

दिल्ली में एक आयोजन में जब यह कहा जा रहा था कि हिंदी पच्चीसेक साल में खत्म हो जाएगी, तब मैंने असहमति दर्ज करते हुए कहा था कि आज अगर एक धारा हिंदी से अंग्रेज़ी की ओर बह रही है तो दूसरी धारा भारतीय भाषाओं से हिंदी की तरफ़ भी बह रही है। अगर हिंदी कुछ लोगों को खो रही है तो बहुत से नए लोगों को जोड़ भी रही है। हिंदी की बोलियाँ बोलनेवाले इसका एक उदाहरण हैं। मैं जब अपने गांव जाता हूँ तो राजस्थानी में बोलता हूँ लेकिन

वहाँ के बच्चे मुझे हिंदी में जवाब देते हैं। कारण? उन्हें लगता है कि दिल्ली से आए व्यक्ति के साथ राजस्थानी की बजाय हिंदी में बात करेंगे तो ज़्यादा प्रभाव पड़ेगा। मोदी जी ने क्या गलत कहा?

जो अहम बात प्रधानमंत्री ने कही और जिसकी उपेक्षा कर दी गई, वह यह थी कि हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाओं को एक-दूसरे के करीब लाने के लिए आवश्यक है कि तमिल, तेलुगू आदि भाषा-भाषियों को यह अहसास कराया जाए कि हिंदी उनके लिए अंग्रेज़ी जैसी चुनौती नहीं है। परस्पर साहचर्य और मेल-मिलाप का एक अच्छा सुझाव भी उन्होंने दिया और वह यह कि हिंदी अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को ग्रहण करे तथा अन्य भारतीय भाषाएँ हिंदी के शब्द ग्रहण करें। जैसे हिंदी तमिल के और तमिल हिंदी के। कितना अच्छा सुझाव है यह? यदि हम ऐसा करेंगे तो क्या दोनों भाषाओं को समृद्ध नहीं करेंगे? दोनों भाषाओं को एक-दूसरे के करीब लाने का कितना सुगम मार्ग हो सकता है यह?

गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के बारे में जो टिप्पणी इस सम्मेलन में की, वैसी पिछले कई दशकों में नहीं सुनी गई। क्या हम हिंदी वालों को इस टिप्पणी के लिए उनका अभिनंदन नहीं करना चाहिए? माना कि लक्ष्य बहुत दूर है और आमतौर पर सरकारी तंत्र खुद ही हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के मार्ग में आ जाता है लेकिन यह कम साहसिक नहीं है कि देश का गृहमंत्री तमाम विवादों के बावजूद सार्वजनिक मंच से हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की बात करता है। हमें उनके बयान को ताकत देनी चाहिए या आलोचनाओं से उन्हें हतोत्साहित करना चाहिए?

मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने हिंदी के प्रति जिस किस्म की भावुकता दिखाई और एक आदर्श मेज़बान की जैसी भूमिका दुनिया भर से जुटे हिंदी विद्वानों और हिंदी प्रेमियों के प्रति दिखाई, वह भी अद्वितीय थी। उन्होंने खुद सम्मेलन के दौरान सत्रों की अध्यक्षता की और वहाँ पारित किए गए अनेक प्रस्तावों पर कम से कम मध्य प्रदेश में तुरंत प्रभाव से अमल करने की घोषणा भी समापन समारोह में ही कर दी। उदाहरण के तौर पर यह कि मध्य प्रदेश में सभी उत्पादों पर हिंदी में भी विवरण अंकित होगा। ऊँची अदालतों में हिंदी का प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए प्रदेश सरकार हाईकोर्ट से चर्चा करेगी। श्री चौहान की वह भावनात्मकता मध्य प्रदेश में हिंदी के उज्ज्वल भविष्य के प्रति आश्वस्त करती है जो उन्होंने अपने समापन भाषण में दिखाई। लंबे-चौड़े वायदे और घोषणाएँ कोई भी कर सकता है लेकिन वैसी भावुकता ज़बरदस्ती पैदा नहीं की जा सकती। वह हृदय के भीतर से निकलती है।

केंद्र और राज्य सरकारों ने सम्मेलन के सत्रों को कितना महत्व दिया होगा, वह श्री चौहान, दो राज्यपालों और केंद्र सरकार के मंत्रियों की निरंतर मौजूदगी से स्पष्ट है जिन्होंने हिंदी से जुड़े कुछ सत्रों की खुद अध्यक्षता की और कुछ में दर्शक के रूप में बैठे। सूचना प्रौद्योगिकी और दूरसंचार मंत्री रविशंकर प्रसाद ने 'सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी' विषय पर उस सत्र की अध्यक्षता की जिसमें मैंने भागीदारी की थी। विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्री डॉ. हर्षवर्धन ने एक अन्य सत्र की अध्यक्षता की। गोवा की राज्यपाल मृदुला सिन्हा और पश्चिम बंगाल के राज्यपाल केसरी नारायण त्रिपाठी ने दो अन्य सत्रों की अध्यक्षता की। विदेश राज्य मंत्री जनरल वी.के. सिंह अनेक सत्रों में दिखाई देते रहे। मॉरीशस की शिक्षा मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन लछुमन भी गिरमिटिया देशों में हिंदी संबंधी सत्र में निरंतर मंच पर उपस्थित रहीं। उनके भावपूर्ण भाषण के अंत में श्रोताओं ने खड़े होकर अभिनंदन किया। विश्व हिंदी सचिवालय मॉरीशस के कार्यवाहक महासचिव गंगाधरसिंह गुलशन सुखलाल ने प्रभावी उपस्थिति दर्ज की। हिंदी के सम्मेलनों को सरकारों की तरफ़ से इतनी अहमियत दिया जाना हमारे लिए एक नया अनुभव था लेकिन पता चला कि सुषमा जी और शिवराज सिंह जी चाहते हैं कि सम्मेलन की चर्चाएँ महज़ रस्म-अदायगी बनकर न रह जाएँ। मंत्री मुद्दों को समझें और जब मंत्री खुद ज़मीनी मुद्दों से वाकिफ़ होंगे तो सरकार के स्तर पर सम्मेलन के मंतव्यों को गंभीरता से लेना सुनिश्चित होगा। कोई ठोस नतीजा सामने आएगा।

विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान हुए सांस्कृतिक कार्यक्रमों के बारे में क्या कहा जाए! अभूतपूर्व और विलक्षण! 'अथ हिंदी कथा'

के रूप में नृत्य निर्देशिका मैत्रेयी पहाड़ी और उनके सैंकड़ों शिष्यों ने भाषा के अतीत और वर्तमान को नृत्यों की शृंखला में पिरोकर अविस्मरणीय बना डाला। अगर विश्व हिंदी सम्मेलन हिंदी की समृद्धि और जीवंतता का उत्सव था तो भोपाल में हुए सांस्कृतिक कार्यक्रम उसकी जान थे। मुझे एक भी प्रतिभागी नहीं मिला जिसने कार्यक्रम की प्रशंसा न की हो। भारत के लोक नृत्यों का एक कार्यक्रम पहले दिन हुआ। देश-विदेश से आए मेहमानों के बीच भारतीय संस्कृति के इस मज़बूत और अभिन्न पक्ष को प्रदर्शित करने का निर्णय काबिले तारीफ़ था। पहले के आयोजनों में बड़ी हस्तियाँ आती रही हैं और वे भी बहुत लोकप्रिय हुए हैं लेकिन इस बार सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भारत की आत्मा के दर्शन हुए। महिषासुर मर्दिनी और गुजरात के सिद्धियों (अफ्रीकी आव्रजकों) के लोकनृत्य क्या खूब थे!

सम्मेलन की कमियों को भी स्पष्ट किया जाना ज़रूरी है। साहित्यकारों की उपेक्षा का मुद्दा इनमें प्रमुख है। विश्व हिंदी सम्मेलनों सहित हिंदी के अधिकांश आयोजनों में अब तक साहित्य का दबदबा रहता आया है। किसी भाषा की समृद्धि का अनुमान उसके साहित्य की समृद्धि से ही होता है। भाषा के वर्तमान, भविष्य, उसके सामने मौजूद चुनौतियों, उपलब्धियों, उसकी संपदा आदि पर होनेवाला चिंतन-मनन और विमर्श साहित्य की उपस्थिति के बिना अधूरा है। सम्मेलन के चर्चा सत्रों में साहित्य को महत्व न दिया जाना एक कमज़ोर फैसला रहा। यदि यह कमी न छोड़ी जाती तो यह उत्कृष्ट आयोजन संभवत: अब तक का सफलतम आयोजन भी बन जाता। वरिष्ठ पत्रकार और पूर्व संपादक श्रीमती मृणाल पांडेय ने सवाल उठाया है कि यदि साहित्य को महत्व नहीं देना था तो फिर भोपाल शहर में और आयोजन स्थल पर साहित्यकारों के इतने बड़े-बड़े चित्र क्यों लगाए गए हैं? सचमुच यह एक विस्मयकारी विरोधाभास था। सम्मेलन में हिंदी के इस पहलू को उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए था।

ऐसा क्यों हुआ होगा, इस बारे में सिर्फ अनुमान ही लगाए जा सकता है। सम्मेलन की सत्रवार योजना विदेश मंत्रालय के स्तर पर बनी थी। मैं यह नहीं मान सकता कि मंत्रालय का उद्देश्य साहित्य या साहित्यकारों के प्रति असम्मान दर्शाना रहा होगा क्योंकि वह राजनीतिक रूप से बहुत अपरिपक्वतापूर्ण निर्णय होता। अगर ऐसा होता तो भोपाल शहर के चौराहों पर और आयोजन स्थल के भीतर हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकारों के विशाल चित्र न लगाए गए होते। मंत्रालय का मंतव्य यह रहा होगा कि इस बार सम्मेलन को अलग ढंग से आयोजित किया जाए। उन्होंने सम्मेलन को अलग ढंग से आयोजित करके दिखाया भी, अधिक व्यवस्थित, अधिक प्रबंधित, व्यापक और भव्य। इसी अलग के लिए सम्मेलन की विषय-वस्तु में भी परिवर्तन किया गया। उसे अधिक युवकोचित, अधिक समयोचित बनाने की दृष्टि विदेश मंत्रालय के स्तर पर रही होगी। इसी प्रक्रिया में साहित्य की उपेक्षा हो गई। विदेश मंत्रालय के वे सलाहकार भी इसके लिए जिम्मेदार रहे होंगे जिन्होंने मंत्रियों को ऐसा करने की सलाह दी। मंत्रियों को क्या पता कि हर विश्व हिंदी सम्मेलन में साहित्यकारों का दबदबा रहता है?

साहित्य की उपेक्षा भले ही अखरी हो, यह अच्छा लगा कि पहली बार किसी विश्व हिंदी सम्मेलन में साहित्येतर हिंदी को प्रमुखता मिली। इसमें कुछ और पक्ष जोड़े जा सकते थे, जैसे—कारोबारी हिंदी, कार्टून की विधा, फ़िल्म और टेलीविज़न की भाषा, हिंदी शब्द-संपदा, भाषा-विज्ञान इत्यादि। कुछ सत्रों, विशेषकर तकनीक पर आधारित सत्रों में पावर पॉइन्ट प्रस्तुतियाँ देने की नगण्य सुविधा अखरी।

यूँ साहित्य इस सम्मेलन से पूरी तरह नदारद हो, ऐसा नहीं था। आयोजन स्थल पर दर्जनों हिंदी साहित्यकारों के विशाल चित्र और मूर्तियाँ थीं। साहित्य से इतर अन्य सत्रों में कई हिंदी साहित्यकार मौजूद थे, मसलन—मृदुला सिन्हा, नरेंद्र कोहली, चित्रा मुद्गल, कमल किशोर गोयनका, सुरेश ऋतुपर्ण, प्रेम जनमेजय, हरीश नवल, डॉ. श्याम सिंह 'शशि', मृणाल पांडेय इत्यादि। बाल साहित्य के रूप में साहित्य की एक विधा पर चर्चा भी हुई किंतु हाँ, सम्मेलन के हज़ारों प्रतिभागियों को देखते हुए साहित्यकारों की संख्या बहुत थोड़ी थी। भोपाल के साहित्यकारों की उपेक्षा करने से बचा जा

सकता था। जिस शहर में इतना बड़ा वैश्विक आयोजन हो, वहाँ के हिंदी के व्यक्तित्वों को जोड़ना ज़रूरी है। उनके शहर में, उनके बिना, हिंदी का इतना बड़ा उत्सव एक ज़्यादती है। मीडिया की शिकायत रही कि सम्मेलन कवर करने आए पत्रकारों को सत्रों में बैठने की इजाज़त नहीं मिली। शिकायत जायज़ है लेकिन यह भी सच है कि सभी सत्रों में हॉल प्रतिभागियों से खचाखच भरे थे। ऐसे में मीडिया के साथी भीतर जाते और अगर उन्हें बैठने की जगह न मिलती तो फिर वे यह लिखते कि मीडियाकर्मियों को खड़े-खड़े सत्रों को कवर करना पड़ा। किसी सम्मेलन में कुछ हज़ार लोग हिस्सा ले रहे हों तो आयोजकों की दुविधा को भी समझा जा सकता है।

सम्मेलन की विशिष्टताओं में एक यह भी थी कि इसे निरी भाषणबाज़ी के बजाए दोतरफ़ा और समावेशी बनाने का प्रयास किया गया। प्रतिभागियों में युवाओं की अच्छी संख्या थी जिन्हें वक्ताओं से सवाल पूछने के लिए प्रोत्साहित किया गया। श्रोताओं के बीच मौजूद लोग भी बोले और एक सत्र में तो उनकी संख्या 50 से अधिक रही। सत्रों के मंतव्यों को भी बाकायदा सभी प्रतिभागियों के बीच पारित करवाया गया। हालाँकि अंत में उनकी संख्या कई दर्जन तक जा पहुँची जिनपर अमल कर पाना शायद इतना आसान न हो। मुझे लगता है कि जिन विषयों पर दो या तीन दिन तक सत्र रखे गए, उन्हें यदि एक दिन तक सीमित रखा जाता तो हिंदी के और भी कई पहलुओं पर सत्र रखे जा सकते थे। तब साहित्य को एक सत्र आवंटित करना बिल्कुल मुश्किल नहीं होता।

सत्रों के लिए वक्ताओं का चयन और बेहतर हो सकता था। विश्व हिंदी सम्मेलनों में इस चयन का क्या आधार होता है, यह मुझे कभी समझ नहीं आया। हर सम्मेलन के बाद मुझे यही लगा है कि विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों के बारे में आयोजकों की जानकारी इतनी सीमित है तो वे अपने सलाहकारों पर आश्रित रहने के बजाए भिन्न-भिन्न स्रोतों से जानकारी क्यों नहीं जुटाते? सम्मेलन की वेबसाइट को लेकर भी विवाद रहे। कुछ प्रतिभागी वेबसाइट के माध्यम से पंजीकरण कराने में कई-कई दिन तक प्रयास करते रहे लेकिन नाकामी हाथ लगी। वेबसाइट की हिंदी में वर्तनी की त्रुटियों की तरफ़ मंत्रालय का ध्यान दिलाने के लिए बाकायदा अभियान चलाया गया। साइट पर मौजूद सामग्री भी न्यूनतम थी। कोई रचनात्मकता नहीं, कोई कल्पनाशीलता नहीं, सिर्फ सत्रों के कार्यक्रम का ब्यौरा और विभिन्न समितियों के सदस्यों के नाम। सम्मानित किए जाने वाले विद्वानों के नामों को लेकर अंतिम समय तक रहस्यजाल सा बना रहा। 'अलग' से सम्मेलन में थोड़ा खुलापन भी होता तो वह और 'अलग' सिद्ध होता।

प्रतिभागियों के ठहरने की व्यवस्था बेहतरीन थी। भोपाल बहुत बड़ा शहर नहीं है। वहाँ होटलों आदि की व्यवस्था भी आसान नहीं रही होगी लेकिन देश-विदेश से आए प्रतिभागियों को न अपने कमरों से किसी तरह की शिकायत रही और न ही होटलों में ब्रॉडबैंड इंटरनेट की स्पीड में किसी तरह की कमी से। प्रदर्शनी भी उद्देश्यपरक और सार्थक थी जिसमें पहली बार माइक्रोसॉफ़्ट, गूगल और एपल जैसी कंपनियों ने भी हिस्सा लिया। सत्रों में जो कुछ जानने को मिला, उसे प्रदर्शनी ने और बढ़ाया।

दिल्ली से रवानगी से पहले किसी स्टेडियम में विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन की कल्पना मात्र से मैं आशंकित था लेकिन भोपाल में आयोजित हिंदी का यह वैश्विक आयोजन अद्वितीय रहा। याद रखने को बहुत कुछ था वहाँ—केंद्र और राज्य सरकारों की वह बेहतरीन जुगलबंदी, अभूतपूर्व किस्म की मेहमाननवाज़ी, हिंदी की भव्यता, समृद्धि, विशालता और गौरव, शैक्षणिक सत्रों का समावेशी स्वरूप और युवाओं के बीच भाषा के प्रति पैदा होता हुआ नया उत्साह। भोपाल ने हमें अपनी भाषा का उत्सव मनाना और उसके गौरव को जीना सिखा दिया! शिकायतें अपनी जगह हैं और रहें लेकिन भोपाल ने विश्व हिंदी सम्मेलनों की शृंखला में ऐसा प्रतिमान स्थापित किया है जिसे छू पाना अगले सम्मेलनों के लिए एक चुनौती रहेगी।

❑

गुड़गाँव, भारत
balendu@gmail.com

विश्व हिंदी के पथ प्रदर्शक

7 स्वर्गीय बालशौरि रेड्डी : जीवन संबंधी घटनाओं का ऐतिहासिक उल्लेख

श्रीमती देवी नागरानी

यादों के गलियारे से गुज़रते हुए मन परिंदा जब अँधेरे में रोशनी पाने के लिए टटोलता है तो किसी एक खास स्थान का स्मरण करता है और उस गलियारे की भूलभुलैया में एक सुरंग सी बनाता चला जाता है जहाँ पर अँधेरे का अंत होता है और रोशनी का आगाज़। श्री बालशौरि रेड्डी तेलुगु और हिंदी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार, 'चंदामामा' के पूर्व संपादक और बाल साहित्यकार जैसे पारसमणि महापुरुष से मिलने का सौभाग्य मुझे न्यू यॉर्क में मिला जहाँ उनके साथ तीन दिनों की परस्पर मुलाकात एक सुखद यादगार बनकर रह गई। यह मेरे लिए कठिन ज़रूर है कि श्री बालशौरि रेड्डी जैसे विराट व्यक्तित्व पर कुछ कहूँ और लिखना तो मेरी सामर्थ्य के बाहर है पर साथ गुज़ारे हुए पल जब यादों में उमड़ते हैं तो मनोभावों को अभिव्यक्त करने के सिलसिले में संचार आ ही जाता है।

जुलाई 13, 14, 15, 2007 – न्यू यॉर्क

8वें विश्व हिंदी सम्मेलन के शिखर पर UNO में एक सुनहरा दरवाज़ा भारतवासियों के लिए खुला, उसका गवाह इतिहास है। यहाँ गांधी जी का कथन सत्य बनकर सामने आया—''अपने दरवाज़े खुले रखो, विकास अंदर आएगा।'' न्यू यॉर्क की सरज़मीं ने मुझे श्री बालशौरि रेड्डी जी के साथ मुलाकात का अवसर प्रदान किया और उस रौशन याद के जुगनू मेरे ज़हन में उजाले भरने लगे। तीन दिवस के उस साहित्यिक महायज्ञ में पहले दिन खाने के समय डाइनिंग हॉल में श्री बालशौरि रेड्डी जी से मेरी पहली मुलाकात हुई जहाँ लावण्या शाह (पंडित नरेंद्र जी की सुपुत्री), रजनी भार्गव (अनूप भार्गव की पत्नी) भी साथ बैठी हुई थीं। डॉ. बालशौरि रेड्डी, उनकी पत्नी और विशाखापटनम से आई प्रोफ़ेसर डॉ. शेक्षारत्नम ('हिंदी साहित्य किरण' की अध्यक्ष) हमारे साथ ही बैठ गए। पहले मुसकान का, फिर नामों का आदान-प्रदान हुआ और सिलसिला आगे बढ़ा परिचय का, वार्तालाप का और फिर सोच-विचार के लेन-देन का। जब बातों-बातों में रेड्डी जी ने बताया कि वे आंध्र प्रदेश से आए हैं तो मेरी भावनाओं की ज़मीं हरी हो गई । मैं भी आंध्र प्रदेश की पली-बढ़ी जहाँ स्कूल में दूसरी भाषा के तौर पर तेलुगु भाषा पढ़ने की अनिवार्यता मुझपर भी लागू रही। मैंने तुरंत उनकी ओर

देखते हुए कहा, ''मीरू एटला उनाऊ सर''? (आप कैसे हैं सर?), यह सुनते ही वे बहुत खुश हुए कि मैं एक सिंधी भाषी होते हुए अमेरिका में बैठी अपनी प्रांतीय भाषा में बतिया रही हूँ। यह था उनसे मेरा पहला परिचय!

किसी भी भाषा का साहित्य, चाहे वह हिंदी हो या तेलुगु, सिंधी का हो या भोजपुरी, उस भाषा का वैभव है। उस भाषा का सौंदर्य है। हिंदी केवल भाषा नहीं, हमारी राष्ट्र भाषा है, हमारी पहचान है, बहती गंगा है, मधुर वाणी है। उसका विकास हमारे भारत के मान-सम्मान और उज्ज्वल भविष्य के साथ जुड़ा हुआ है।

डॉ. बालशौरि रेड्डी बहुआयामी व्यक्तित्व के मालिक रहे। उनका हिंदी भाषा के साथ लगाव और प्रेम उनकी बातों से झलकता रहा। सरल हिंदी भाषा में उनके संवाद, विचारों में पुख़्तगी और सोच एक दशा और दिशा दर्शाती हुई। कहीं कोई दो राय नहीं जब वे कहते थे, ''हिंदी भाषा नहीं है, एक प्रतीक है, भारत की पहचान है।''

विदेश में हिंदी को बढ़ावा मिल रहा है, यह वहाँ पर बसे प्रवासी भारतीयों की मेहनत का नतीजा है। अनेक भाषाओं के आदान-प्रदान से हमारी संस्कृति पहचानी जाती है। देश की तरक्की उसकी भाषा से जुड़ी हुई होती है। इसमें बड़ा हाथ साहित्यकारों, लेखकों, संपादकों और मीडिया का है। हिंदी भाषा हमारे साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों का माध्यम है और

वही अब एकता को दृढ़ करने लगी है। भारत की आवाज़ आज अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुनी जा रही है। यह एक उपलब्धि है।

हिंदी और बाल साहित्य विषयक सत्र डॉ. बालशौरि रेड्डी की अध्यक्षता में बहुत ही रुचिकर रहा। शायद इसलिए कि उन्होंने मनोवैज्ञानिक रूप से बच्चों के विकास और उन्नति पर अनेक सुझाव पेश किए जिसमें न्यू यॉर्क की वरिष्ठ लेखिक सुषम बेदी ने भी अपने सशक्त विचार रखे। मुझे आज भी याद है श्री बालशौरि रेड्डी ने अपनी प्रतिक्रिया संक्षेप में बताते हुए कहा था—''बाल साहित्य के सूत्रों से आपका कहने-सुनने का नाता था, है और चलता रहेगा। टिमटिमाते सितारे, पानी में मछली, जिज्ञासा भरे प्रश्न उत्पन्न करते हैं। प्रश्न-उत्तर की चाहत रखते हैं। बस बाल-मन समझने की ज़रूरत है। चिंतन-मनन के पश्चात उसको पाचन करने का समय देना हमारा कर्तव्य है।'' ज्ञान की वैज्ञानिक रूप से बाल-मन जैसी सरल परिभाषा!

रेड्डी जी की रचनाधर्मिता

रेड्डी जी अपने नाम के अनुसार शौर्यमान थे, यह शौर्य शिक्षा-दीक्षा के क्षेत्र में प्रकट हुआ। मैट्रिक पास करते ही वे शिक्षक-शिक्षण में भर्ती हुए और कुछ समय बाद ही प्रचार सभा की सेवा में लग गए। हिंदी के प्रचार और प्रसार में उनका योगदान अविस्मरणीय है। तमिल के प्राचीन ग्रंथ 'तिरुकुरल' में कहा गया है—''जन्मो तो यशस्वी होकर जन्मो, नहीं तो न जन्मना श्रेष्ठ है।'' उनकी निष्ठावान सोच और कार्य प्रणाली ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि वे हिंदी के साधक थे। उनकी प्रतिभा सर्वमुखी है, गद्य और पद्य दोनों को निरंतर समान गति से लिखते थे। जितनी सहजता से उनकी लेखनी कविता का सृजन करती थी, उतनी ही सहजता से लेख, निबंध, कहानियाँ और उपन्यास भी वे बुनते थे जिनमें शैली और प्रवाह दोनों थे। शब्दों के झरोखे से झाँकती है उनकी वैचारिक स्वछंदता, गहन चिंतन-मनन, अनुभव, रंजकता, रागात्मकता और सौंदर्यबोध जिसका एहसास पाठक को सहज ही होता है। हिंदी में उनकी 72 तथा तेलुगु में 16 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। उनके साहित्य पर 18 पीएचडी, 9 एमफ़िल हो चुके हैं। कुछ मौलिक उपन्यासों का यहाँ उल्लेख करना ज़रूरी है, वे हैं—'शबरी', 'ज़िंदगी की राह', 'यह बस्ती : यह लोग', 'स्वप्न और सत्य'।

जन्म : 11 मई, 1941, कराची (तब भारत)

प्रकाशन :

हिंदी संग्रह : 'चराग़े-दिल', 'दिल से दिल तक', 'लौ दर्दे-दिल की', 'भजन-महिमा', 'सहन-ए-दिल' (ग़ज़ल संग्रह-प्रेस), 'मई और ताजमहल' (कहानी संग्रह-प्रेस)

हिंदी से सिंधी अनुवाद : 'बारिश की दुआ', 'अपनी धरती' (कहानी), 'रूहानी राह जा पांधीअड़ा'—काव्य, 'बर्फ की ग़रमाइश'—लघुकथा, 'चौथी कूट' (सा.अ. पुरस्कृत वरियम कारा का कहानी संग्रह—प्रकाशन-साहित्य अकादमी)

सिंधी से हिंदी अनुवाद : 'और मैं बड़ी हो गई', 'पंद्रह सिंधी कहानियाँ', 'सरहदों की कहानियाँ', 'अपने ही घर में', 'दर्द की एक गाथा', 'एक थका हुआ सच' (अतिया दाऊद का सिंधी काव्य), 'भाषायी सौंदर्य की पगडंडियाँ', 'क़ायनात की गुफ्तगू'

सम्मान-पुरस्कार

अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति, शिक्षायतन व विध्याधाम संस्था NY-काव्य रत्न सम्मान, काव्यमणि सम्मान—Proclamation Honor Award-Mayor of NJ, सृजन-श्रीसम्मान, रायपुर-2008, काव्योत्सव सम्मान, मुंबई-2008, सर्व भारतीय भाषा सम्मेलन में सम्मान, मुंबई-2008, राष्ट्रीय सिंधी भाषा विकास परिषद-पुरस्कार-2009, ख़ुशदिलान-ए-जोधपुर सम्मान-2010, हिंदी साहित्य सेवी सम्मान-भारतीय-नॉर्वेजियन सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम, ओस्लो-2011, मध्य प्रदेश तुलसी साहित्य अकादमी सम्मान-2011, जीवन ज्योति पुरस्कार, गणतंत्र दिवस, मुंबई-2012, साहित्य सेतु सम्मान-तमिलनाडु हिंदी अकादमी-2013, सैयद अमीर अली मीर पुरस्कार-मध्य प्रदेश, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति-2013, डॉ. अमृता प्रीतम लिटरेरी नेशनल अवार्ड, नागपुर-2014, साहित्य शिरोमणि सम्मान-कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़-2014, विश्व हिंदी सेवा सम्मान-अखिल भारतीय मंचीय कवि पीठ, यू.पी-2014, भाषांतर शिल्पी सारस्वत सम्मान-भारतीय वाङमय पीठ-कोलकाता-जनवरी, 2015, हिंदी सेवी सम्मान-अस्माबी कॉलेज, त्रिशूर-केरल- सितंबर, 2015।

संप्रतिः शिक्षिका, न्यू जर्सी, यू.एस.ए (रिटायर्ड)

उनके उपन्यासों का अनुवाद कन्नड, गुजराती, डोगरी, तेलुगु में हुआ है। उनकी दो कहानियों 'हड़ताल' और 'चाँदी का जूता' का मैंने सिंधी भाषा में अनुवाद किया है। बाल साहित्य में भी उनकी लेखनी का खुला हुआ विस्तार है जैसे 'तेनालीराम के लतीफ़े', 'न्याय की कहानियाँ', 'दक्षिण की लोक कथाएँ', 'तेनालीराम की कहानियाँ' और 'हर-हर गंगे' (एकांकी-संग्रह), संस्कृति एवं साहित्य से संबंधित उनकी पुस्तक 'पंचामृत' हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद में प्रकाशित हुई हैं। लेखनी की तरह प्रकाशन का विस्तार भी अत्यंत वसीह है!

'प्रवासी पुस्तक प्रदर्शनी' के दौरान प्रदर्शनी को करीब से देखने के लिए सभी वरिष्ठ साहित्यकार अपने-अपने समयानुसार आए और अपनी टिप्पणी वहीं रखे हुए एक रजिस्टर में दर्ज करते रहे जिसमें से कुछ नाम मुझे याद आ रहे हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष डॉ. गिरिजा व्यास, देवनागरी लिपि के अध्यक्ष श्री बालकवि बैरागी, श्री कमल किशोर गोयनका, श्री गौतम कपूर, डॉ. बालशौरि रेड्डी और अन्य सभी ने भी अपनी टिप्पणी दर्ज की थी। बालशौरि जी ने प्रवासी साहित्य के संगठित प्रदर्शन को बहुत सराहा और भारतीय प्रवासी लेखन के समृद्ध साहित्य के लिए वहाँ मौजूद सभी लेखकों को मुबारकबाद देते हुए कहा, 'आप सभी बधाई के पात्र हैं कि वतन से दूर भी आपने एक और भारत यहाँ निर्मित किया हुआ है और अपनी मातृभाषा को, भारत की सभ्यता, संस्कृति को बनाए रखा है।'

उस मुलाकात के बाद उनके साहित्य को, उनपर लिखे लेख और कहानियों को पढ़ते हुए उनके समृद्ध साहित्य से परिचित हुई। कई बार इन विषयों पर उनसे फ़ोन पर बात करते हुए उनके व्यक्तित्व, कृतित्व की झलकियों से भी वाकिफ़ होती रही। बातों से जानना हुआ कि उन्होंने 23 वर्ष 'चंदामामा' बाल पत्रिका का संपादन किया। बच्चों के सिलसिले में जब मैंने उनसे पूछा कि आप उनका मन कैसे टटोलते हैं? तो बहुत ही सरल ढंग से उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि वे बाल मनोवैज्ञानिक के रूप में बच्चों से आदान-प्रदान उनके ही स्तर पर जाकर करते हैं और उन्हें समझने की कोशिश करते हैं, यकीनन इसी बल और निष्ठा की नींव पर ही वे बच्चों की पत्रिका 'चंदामामा' में उनकी पसंदीदा सामग्री का चुनाव करते रहे होंगे। सामग्री का चुनाव उनके शब्दों में 'जो बालमन को संतुष्टि प्रदान करे और उनके हर सवाल का जवाब देते हुए उनके मन का भी विकास करे।' श्री बालशौरि रेड्डी का वात्सल्य व अपनत्व उनकी शख्सियत का एक अहम पहलू है। जब भी मिले, अपनेपन के साथ और बातचीत में भी भाषा पर हुए वाद-विवाद पर अच्छे सुझाव देते रहे। उन दिनों प्रवासी साहित्य का मुद्दा आम मंज़र पर था, प्रवासी साहित्य को लेकर कुछ सवाल उठे कि वह हिंदी का साहित्य है भी या नहीं?

प्रवास में बसे हुए भारतीय साहित्यकार की हिंदी साहित्य के अंतर्गत कोई भी रचना, गज़ल या लेख भारतीय पत्रिकाओं में प्रकाशित होता तो ऊपर लिखा हुआ होता 'प्रवासी साहित्य'। सवाल यह उठता है कि प्रवास में लिखा यह साहित्य भारत के हिंदी साहित्य की धारा का हिस्सा है या नहीं? उसे हिंदी का साहित्य माना भी जाता है या नहीं? ऐसे कुछ उलझन भरे सवाल मंथन के उपरांत उभरे। बालशौरि रेड्डी जी से चेन्नई में फोन से इस विषय पर बात की और अपना सवाल उनके सामने रखते हुए उनकी राय जाननी चाही। उन्होंने बड़ी ही सरलता से उत्तर देते हुए कहा, 'हिंदी का साहित्य जहाँ भी रचा गया हो और जिसने भी रचा हो, चाहे वह जंगलों में बैठकर लिखा गया हो या ख़लिहानों में, देश में हो या विदेश में, लिखनेवाला कोई आदिवासी हो या अमेरिका के भव्य भवन का रहवासी, वर्ण, जाति धर्म और वर्ग की सोच से परे, अपनी अनुभूतियों को अगर हिंदी भाषा में एक कलात्मक स्वरूप देता है तो वह लेखक हिंदी भाषा में लिखनेवाला कलमकार होता है और उसका रचा हुआ साहित्य हिंदी का ही साहित्य है।' तमिलनाडु हिंदी अकादमी के अध्यक्ष डॉ. बालशौरि रेड्डी का इस विषय पर यह सिद्धांतमय कथन है।

साहित्य के माध्यम से ही हम एक-दूसरे से जुड़ सकते हैं। प्रवासी साहित्य को लेकर हिंदी की मुख्य धारा से जुड़कर एक मुकम्मिल कदम उठा सकते हैं जिसमें भारत के हिंदी लेखन की धारा प्रवासी साहित्य से मिलकर पुख़्तगी पा सके और एक महासागर का स्वरूप धारण कर पाए। पर धारा में होने और न होने के अंतर में भी लक्ष्मण रेखा की उपस्थिति दर्ज दिखाई पड़ रही है। उनसे मेरी दूसरी मुलाकात महाराष्ट्र में हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा अक्टूबर, 2008 में आयोजित "**सर्व भारतीय भाषा सम्मेलन**" के दौरान हुई जहाँ भाषा, साहित्य, संस्कृति के संगम की सरिता, अपने वाद-विवाद की पथरीली पगडंडियों के बीच से बहती रही।

भारतवर्ष की बुनियाद 'विविधता में एकता' की विशेषता पर टिकी है और इसी डोर में जुड़े हैं देश के विभिन्न धर्म, जातियाँ व भाषाएँ। ''**सर्व भारतीय भाषा सम्मेलन**'' के इस मंच पर भारतीय भाषाओं के इतिहास में एक नवसंगठित सोच से नव-निर्माण की बुनियाद रखी गई। मेरे पूछने पर कि वे अब तक कितने विश्व हिंदी सम्मेलनों में भागीदार रहे हैं ? रेड्डी जी ने बड़ी सरलता से बताया कि वे पाँच विश्व हिंदी सम्मेलनों में शामिल रहे हैं, सूरीनाम के छठे विश्व हिंदी सम्मेलन में वे अनुवाद संगोष्ठी के अध्यक्ष रहे और न्यू यॉर्क के आठवें सम्मेलन में भी वे 'बाल साहित्य' सत्र के अध्यक्ष रहे। समस्त भारतीय भाषाओं पर जब महायज्ञ होता है तो हर प्रांत से देश-विदेश से प्रतिनिधि अपनी विचारधाराओं व सुझावों के माध्यम से अपना-अपना योगदान देते हैं। ऐसे ही एक स्वर्ण सुअवसर पर देश विदेश से वरिष्ठ राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय साहित्य के स्तभ साहित्यकारों से मिलने का अवसर मिला।

हर देश की तरक्की उसकी भाषा से जुड़ी हुई होती है जो हमारे अस्तित्व की पहचान है, उसकी अपनी गरिमा है। भाषा केवल अभिव्यक्ति ही नहीं, बोलनेवाले की अस्मिता भी है और संस्कृति है जिसमें शामिल रहते हैं आपसी संबंधों के मूल्य, बड़ों का आदर-सम्मान, परिवार के सामाजिक सरोकार, रीति-रस्मों के सामूहिक तौर-तरीके। रेड्डी जी मूलत: तेलुगु भाषी थे लेकिन हिंदी भाषा के लिए उनका प्रेम एक साधना रही। वे हमेशा कहा करते थे, 'मेरी दो-दो मातृ भाषाएँ हैं।' उनकी सृजनशीलता से हम वाकिफ़ हैं, वे तेलुगु और हिंदी के हस्ताक्षर थे जिसके विस्तार में बाल साहित्य के साथ-साथ उपन्यास, कहानी, निबंध, समीक्षा, आलोचना आदि विधाओं के माध्यम से दक्षिण भारत में हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार की दिशा दर्शाने में उल्लेखनीय योगदान दिया। मौलिक लेखन के बावजूद उन्होंने अनुवाद को भी महत्व देते हुए भाषाओं की परिधियों में फ़ासले कम करने की चेष्टा की। यह होती है एक सृजनशील लेखक की जवाबदारी जो समाज में सकारात्मक क्रांति लाने में सक्षम होती है।

कवि या लेखक समाज का द्रष्टा होता है। श्री बालशौरि रेड्डी की कल्पना में एक आदर्श समाज वह है जहाँ जातिभेद न हो, वर्णभेद न हो, सामाजिक कुरीतियाँ न हों। सब शिक्षित हों, सामाजिक कुरीतियों से परे हों, कुछ ऐसे सिद्धांत उनकी सोच में कूट-कूटकर भरे रहें। उनका मानना है कि भाषा हमारे और आपके विचारों का माध्यम है। हिंदी को राष्ट्र भाषा का गौरव देने के लिए वे हिंदी में लिखते रहें। भाषा के मामले में उनकी वैचारिक प्रतिभा से मैं तब परिचित हुई जब एक साक्षात्कार में 'तेलुगु भाषी होते हुए हिंदी लेखन करने पर' किए गए सवाल पर उनका सरल, स्पष्ट जवाब पढ़ा। वे कहते हैं : 'मैं हिंदी का लेखक हूँ यह कहने में मुझे गर्व महसूस होता है। जब मैं हिंदी में लिखता हूँ तो हिंदी का लेखक होता हूँ इसका मेरी मातृ भाषा से कुछ लेना-देना नहीं है।' बात स्पष्ट हो जाती है जब मूल भाषा में लेखक लिखता है तो वह अपनी मातृ भाषा का लेखक होता है पर बावजूद इसके वह अगर हिंदी में लिखता है तो उसे अहिंदी या हिंदीतर कहकर संबोधित करना एक तरह से लेखक का और भाषा का अपमान है।'

हिंदी-विश्व काव्यांजलि (प्रथम-खंड) जिसका संपादन डॉ. राजेंद्रनाथ मेहरोत्रा जी ने किया है, के प्राथमिक पन्नों में हिंदी के उन्नायकों एवं निर्माताओं का चिंतन पेश किया गया है। यहाँ हिंदीतर-भाषी प्रांत तमिलनाडु के प्रख्यात हिंदी मनीषी एवं तमिलनाडु हिंदी अकादमी के अध्यक्ष **डॉ. बालशौरि रेड्डी** का कथन यूँ दर्ज है, ''विश्व में सभी स्वाभिमानी गणतंत्र राष्ट्रों के चार स्तंभ होते हैं, उनका अपना एक संविधान होता है, अपनी एक राष्ट्र भाषा होती है, एक राष्ट्र ध्वज होता है एवं एक राष्ट्रगान होता है। आज राष्ट्र भाषा के अभाव में भारत को एक गणतंत्र राष्ट्र मानना कहाँ तक उचित है, यह राष्ट्र के प्रबुद्ध विचारकों को सोचना चाहिए। विश्व में ऐसा कोई गणतंत्र नहीं है जिसकी राष्ट्र भाषा यानि प्रशासनिक भाषा विदेशी भाषा हो। यह करोड़ों भारतवासियों के लिए लज्जा की बात है। इसका तात्पर्य है कि हम अपनी भाषा व संस्कृति की दृष्टि से आज भी मानसिक रूप से परतंत्र हैं, गुलाम हैं।''

हिंदी के लिए उनकी आस्था, निष्ठावान प्रेम अपने आपमें बेमिसाल है। 1928 जुलाई में जन्मे श्री बालशौरि रेड्डी 15 सितंबर, 2015 के दिन हमें छोड़ गए। यह साहित्य जगत में एक कभी न भरनेवाली क्षति है। ऐसे हिंदी-सेवी को उनकी मौन साधना के लिए शत-शत नमन।

❐

यू.एस.ए.
dnangrani@gmail.com

8 हिंदी सेवी श्री गोविंद मधुसूदन दाभोलकर जी को श्रद्धांजलि

● *श्रीमती वर्षा डिसूज़ा*

श्री गोविंद मधुसूदन दाभोलकर, एक समर्पित हिंदी सेवी, शिक्षक, प्रचारक, प्रशिक्षक, लेखक, अनुवादक, संपादक, व्याकरणाचार्य, समाज सेवी, राष्ट्र प्रेमी का 4 अक्टूबर, 2015 को 76 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। इसी वर्ष मई में उन्हें कर्क रोग जैसी भीषण बीमारी हो गई जिसका उन्होंने बड़ी निडरता से सामना किया किंतु ईश्वर की कोई और ही इच्छा थी। अचानक ही उन्हें दिल का दौरा पड़ा और उन्हें अस्पताल में भरती कराया गया। उनकी इच्छा-शक्ति इतनी प्रबल थी कि वे इस जानलेवा आघात से भी बच गए और स्वस्थ होकर अपने घर जाने ही वाले थे कि उन्हें पक्षाघात (पैरालिसिस) का दौरा पड़ा जिसमें उनका अधिकतर शरीर बेकाम हो गया तथा उनकी दृष्टि भी चली गई। उनकी धर्मपत्नी का कहना है कि होश में आते ही दाभोलकर जी का सर्वप्रथम कथन यही था कि अब वे काम कैसे करेंगे? अगले दिन ही उनकी मृत्यु हो गई। इससे यह प्रतीत होता है कि उनके जैसे कर्मनिष्ठ व्यक्ति के लिए यह बंधनीय स्थिति कितनी कष्टप्रद प्रतीत हुई होगी। मृत्यु से पूर्व वे मूर्छित अवस्था में थे लेकिन कुछ समय के लिए उन्हें जब होश आया तो उन्होंने महाराष्ट्र की विभिन्न आदिवासी भाषाओं के साहित्य पर जो आखिरी हिंदी अनुवाद तैयार करके रखा था उसे टंकन के लिए भिजवाया। 5 अक्टूबर को उनका जन्मदिन था और उसी दिन उनकी अंतिम यात्रा भी निकली। शिक्षा क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान देनेवाले हिंदी को आजीवन समर्पित इस हिंदी सेवी का हिंदी जगत से परिचय कराए बिना इस दुनिया से विदा कराना अनुचित ही होगा। अत: इस लेख द्वारा उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर दृष्टि डालते हुए, हिंदी जगत के इस महान हिंदी सेवी को भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित की है।

हिंदी की सेवा में 56 वर्षों से कार्यरत तथा हिंदी को समर्पित गोविंद मधुसूदन दाभोलकर का जन्म 5 अक्टूबर, 1939 को कोंकण के केऊस गाँव में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा सिंधुदुर्ग में तथा उच्च शिक्षा रुइया कॉलेज मुंबई में हुई। कला एवं शिक्षा क्षेत्रों में स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद उन्होंने पुस्तकालय विज्ञान में डिप्लोमा प्राप्त किया और जीवन यापन के लिए शिक्षा क्षेत्र को अपनाया। उनकी जीवन यात्रा सिंधुदुर्ग से शुरू होकर मुंबई और फिर पुणे तक जारी रही। दाभोलकर जी महाराष्ट्र के हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षक, मार्गदर्शक, परामर्शदाता के रूप में जाने जाते थे।

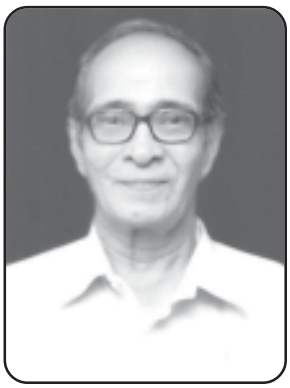

बालमोहन विद्यामंदिर, मुंबई

उनका सर्वप्रथम कार्यक्षेत्र संपूर्ण महाराष्ट्र का जाना-माना मुंबई का विद्यालय, बालमोहन विद्यामंदिर था जहाँ वे 38 वर्षों तक हिंदी के अध्यापक, पर्यवेक्षक, उप मुख्याध्यापक और फिर प्रधानाचार्य के रूप में कार्यरत रहे।

राष्ट्र भाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार-प्रशिक्षण कार्य में राज्यस्तरीय योगदान

'हिंदी पढ़ो, आगे बढ़ो, भारत जोड़ो', इसी ध्येय से प्रेरित होकर वर्ष 1959 से जीवन के अंतिम समय तक वे हिंदी प्रचार में जुटे रहे। लगभग 50 वर्षों से हिंदी के प्रचार-कार्य से संबद्ध पुणे की महाराष्ट्र राष्ट्र भाषा सभा के प्रचार-शिक्षण विभाग के वे प्रमुख थे। पिछले 17 वर्षों से वे बड़े उत्साह के साथ और लगनपूर्वक संस्था के साथ संलग्न थे। इनका कार्य केवल प्रचार तक सीमित नहीं था बल्कि सभा की परीक्षाएँ, हिंदी प्रशिक्षण शिविर, हिंदी नवलेखक शिविर, अनुवाद कार्यशाला, परिवर्तित पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों का निर्माण एवं चयन इत्यादि सभी क्षेत्रों में उन्होंने बड़ी कर्मठता से अपना योगदान दिया।

महाराष्ट्र हिंदी शिक्षक महामंडल

इस उम्र में भी उनकी कर्मशीलता के कारण वे कई संस्थानों में कार्यरत थे । उनका दूसरा कार्यक्षेत्र, महाराष्ट्र हिंदी शिक्षक महामंडल था जिसके वे दीपस्तंभ थे। मंडल के गठन एवं विकास में उनका योगदान अतुलनीय है। महाराष्ट्र में वे मानक हिंदी वर्तनी, शुद्धाक्षरी लेखन, अभिव्यक्ति बोध कौशल की परीक्षाओं के माध्यम से हज़ारों हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षक के रूप में जाने जाते थे और स्नेहपूर्वक भीष्म पितामह के नाम से संबोधित किए जाते थे। महाराष्ट्र के सतारा ज़िले के हिंदी अध्यापक मंडल तथा सतारा हिंदी शिक्षक भवन के निर्माण में उनका विशेष मार्गदर्शन एवं योगदान रहा है।

'हिंदी अध्यापक मित्र' पत्रिका के माध्यम से वे शिक्षकों की अध्यापन संबंधी समस्याओं का समाधान, उनके मौलिक लेखन एवं शैक्षिक शोधकार्य को प्रोत्साहन तथा उसे प्रसिद्धि दिलाने का काम करते थे।

महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक शिक्षण मंडल, पुणे

वे महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक शिक्षण मंडल के साथ 1973 से लेकर अब तक कार्यरत रहे। प्रतिनियुक्ति के आधार पर वे इसके मूल्यमापन अधिकारी रहे। हिंदी अध्ययन मंडल के समन्वयक, सदस्य, संपादक, राज्यस्तरीय प्रशिक्षक आदि सभी पदों को उन्होंने समय-समय पर बड़ी ज़िम्मेदारी से निभाया। उनके अभाव में अब पाठ्यपुस्तक-निर्माण का कार्य अधूरा-सा लगता है। इसके अंतर्गत आपने राज्यस्तरीय छात्र-शिक्षकों का प्रशिक्षण, कार्यशालाओं का संचालन, मार्गदर्शन, लेखन और संपादन-कार्य में सक्रिय योगदान दिया।

जन्म : पुणे, भारत

शिक्षण : पुणे विद्यापीठ से बी.कॉम, एम.ए.(हिंदी), अनुवाद पदविका, अकाउन्ट्स पदविका, एक्ज़ेक्युटिव सेक्रेटरी पदविका, हिंदी की प्रवीण, प्रबोध एवं प्राज्ञ परीक्षाएँ उत्तीर्ण की, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ से 'हिंदी का वैश्विक परिदृश्य–एक अनुशीलन' विषय पर शोध किया।

कार्य : 12 वर्षों तक रक्षा मंत्रालय में लिपिक एवं हिंदी अनुवादक के रूप में कार्य किया। इस नौकरी के दौरान कई कार्यालयीन अनुवाद किए।

महाराष्ट्र बोर्ड के लिए दसवीं तथा बारहवीं की हिंदी पाठ्यपुस्तकों में संपादन कार्य किया। शिक्षकों के लिए पाठ्यपुस्तक से संबंधित अनेक कार्यशालाओं का आयोजन किया।

पुणे के कॉन्वेंट विद्यालयों में हिंदी व्याकरण एवं हिंदी की पाठ्यपुस्तकों से संबंधित कई कार्यशालाएँ आयोजित कीं।

प्रकाशन : पत्र-पत्रिकाओं में कई लेख प्रकाशित।

मार्गदर्शक

दाभोलकर जी एक सफल संपादक, उत्तम लेखक तथा अनुवादक थे तथा उनके हस्ताक्षर मोती जैसे सुंदर थे। वे आठ सालों तक महाराष्ट्र के वर्तमान पत्र दैनिक 'लोकसत्ता' के दसवें मार्गदर्शन स्तंभ के समन्वयक एवं मार्गदर्शक रहे। उनका शैक्षिक साहित्य, व्याकरणिक लेखन तथा अनुवाद कार्य में योगदान सराहनीय है।

पुरस्कार

दाभोलकर जी के जीवनकाल में पुरस्कृत कुछ महत्वपूर्ण सम्मान इस प्रकार हैं—सन् 1986 में आदर्श शिक्षक का राज्य पुरस्कार, पंडित दीनदयाल उपाध्याय पुरस्कार, एस.एम.जोशी हिंदी प्रचार एवं साहित्य सेवी पुरस्कार, महाराष्ट्र हिंदी-शिक्षण साहित्य अकादमी का पद्मश्री अनंत गोपाल शेवडे हिंदी सेवा पुरस्कार, श्री स्वराज्य प्रसाद त्रिवेदी हिंदी सेवी सरस्वती सम्मान सिंगापुर, मृत्यु के दो दिन पूर्व उन्हें अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ, नई दिल्ली द्वारा पुरस्कृत किया गया।

लेखन-संपादन-अनुवाद कार्य (कुछ महत्वपूर्ण रचनाएँ)

'प्रायोगिक हिंदी व्याकरण रचना', 'गोमंतक हिंदी वाचनमाला', 'व्यावसायिक हिंदी शब्द लेखन', 'मानक हिंदी वाक्य रचना', 'जनसंख्या विस्फोट', 'हिंदी बालवाणी', 'हिंदी सुलेख का अभ्यास',

'उच्च माध्यमिक प्रशिक्षण मार्गदर्शिका', 'हिंदी व्याकरण', 'हिंदी स्वयं अध्ययन माला 7 भाग दो' खण्डों में प्रकाशित, 'हेल्प इन कन्वर्सेशन' तीन पुस्तकें (हिंदी-अंग्रेज़ी, मराठी-अंग्रेज़ी, अंग्रेज़ी-कोंकणी)

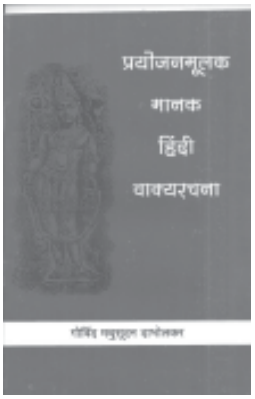

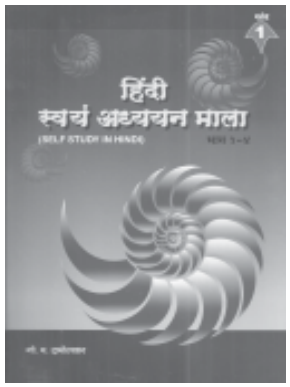

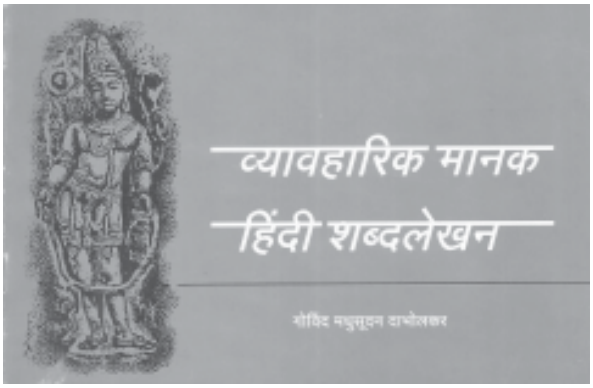

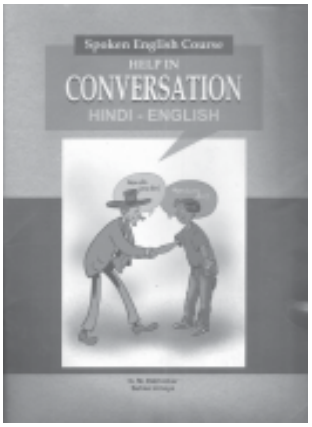

विचार एवं सोच

दाभोलकर जी ने अपने जीवनकाल के अंत तक प्राथमिक, माध्यमिक पाठ्यपुस्तकों पर कई अनुसंधान कार्य किए। उन्हें माध्यमिक, उच्च माध्यमिक पाठ्यपुस्तकों के परीक्षण के लिए आमंत्रित किया जाता था। वे एक सफल शोधकर्ता एवं एक अच्छे परामर्शदाता थे तथा उनका कहना था कि पाठ्यपुस्तकों का निर्माण एवं संपादन कार्य एक बहुत ही जटिल प्रक्रिया है अत: उसकी समीक्षा करते समय बिल्कुल तटस्थ दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता होती है। समीक्षक का दृष्टिकोण मात्र आलोचना से भरा नहीं होना चाहिए।

महाराष्ट्र में हिंदी की वर्तमान स्थिति के बारे में दाभोलकर जी का स्वर थोड़ा-सा निराशावादी था। महाराष्ट्र में हिंदी का अध्ययन पाँचवीं कक्षा से शुरू होता है और इसका स्तर दसवीं तक आते-आते इतना बढ़ जाता है कि यहाँ के छात्र हिंदी भाषा को जटिल समझते हैं तथा हिंदी से भयभीत रहते हैं। उनके शब्दों में, ''यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि सरकार ने हिंदी को सबसे अंतिम प्राथमिकता दी है। यद्यपि हिंदी राष्ट्र भाषा है। उसे संपर्क भाषा के रूप में रखा गया है। अंग्रेज़ी को अत्यंत महत्व दिया जा रहा है। शिक्षा के क्षेत्र में माध्यमिक स्तर पर हिंदी के लिए मात्र चार कालांश दिए जाते हैं। हिंदी के अध्यापक इससे काफ़ी नाराज़ हैं। हिंदी अध्यापक महामंडल के अध्यक्ष अनिल कुमार जोशी छ: कालांश के लिए प्रयासरत हैं। यहीं पर थोड़ी-सी आशा की किरण नज़र आ रही है। लगता है हिंदी का भविष्य एक बार फ़िर संवर जाएगा।''

पुणे, महाराष्ट्र
alusbaby@yahoo.com

9 हिंदी के स्थापनकर्ता : महामना पं. मदनमोहन मालवीय

• डॉ. राकेश कुमार दूबे

1915 ई. का वर्ष हिंदी भाषा के लिए अति महत्वपूर्ण है क्योंकि हिंदी के अध्ययन-अध्यापन एवं प्रचार में जिस काशी हिंदू विश्वविद्यालय एवं उसके हिंदी विभाग का महत्वपूर्ण योगदान है और जिसकी स्थापना के गौरवपूर्ण 100 वर्ष पूरे हो रहे हैं, उसके स्थापनकर्ता महामना पं. मदनमोहन मालवीय ही थे। मालवीय जी आधुनिक हिंदी के उन्नायकों में से एक थे। हिंदी भाषा एवं नागरी लिपि को कचहरियों एवं दफ़्तरों में स्थान दिलाने में उनका योगदान निर्णायक था और उन्होंने आजीवन हिंदी के लिए संघर्ष किया था। जिस हिंदी को लेकर पूरे राष्ट्रीय आंदोलन के समानांतर आंदोलन हुए एवं आंशिक रूप में ही सही, उसे भारतीय संविधान में भी स्थान दिया गया, उसी हिंदी को विश्व स्तर पर प्रचारित करने एवं उसे संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाने के उद्देश्य से ही भारत के हृदय प्रदेश मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया परंतु इस सम्मेलन में सबसे दुखद एवं अशोभनीय बात यह हुई कि इसमें आधुनिक हिंदी के जन्मदाता भारतेंदु हरिश्चंद्र, निर्माता बाबू श्यामसुंदरदास एवं परिष्कारकर्ता, हिंदी के प्रथमाचार्य पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी के साथ ही कितने ही लेखकों एवं कवियों के छायाचित्र तो दिखाए गए एवं उनपर चर्चा भी हुई पर उस हिंदी की स्थापना में जिस व्यक्तित्व का सबसे बड़ा योगदान था, उस विराट व्यक्तित्व महामना पं. मदनमोहन मालवीय की चर्चा होना तो दूर, उनका एक छायाचित्र भी लगाना आवश्यक नहीं समझा गया।

पं. मदनमोहन मालवीय का नाम लेते ही एक अत्यंत ही सौम्य सी सूरत साफ़ा, दुपट्टा, अचकन और पाजामा धारण किए सामने उपस्थित हो जाती है। उनका जन्म 25 दिसंबर, 1861 ई. को उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद के अहियापुर (वर्तमान मालवीय नगर) नामक मोहल्ले में हुआ था। इनके पूर्वज मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र से आकर यहाँ बसे थे, इसी कारण इनका परिवार 'मालवीय' कहलाने लगा था। मालवा क्षेत्र प्राचीन काल से ही समृद्ध एवं बौद्धिकता का केंद्र था जिसके बारे में कबीरदास जैसे अक्खड़ कवि तक ने कहा था 'देस मालवा गाहिर गंभीर, पग पग रोटी, डग-डग नीर।' इनके वंश में कई विद्वान पुरुष हुए एवं इनके पिता पं. ब्रजनाथ जी स्वयं संस्कृत साहित्य के उद्भट विद्वान थे, इसी कारण मालवीय जी की प्रारंभिक शिक्षा 'सर्वज्ञानोपदेश संस्कृत पाठशाला' तथा 'धर्मवर्द्धिनी सभा' की पाठशाला में हुई थी। मालवीय जी ने 1879 ई. में मैट्रिक, 1881 ई. में एफ. ए. एवं 1884 ई. में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। बी.ए. पास करने के बाद घर की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण मालवीय जी ने गवर्नमेंट हाई स्कूल, इलाहाबाद में 50 रु. मासिक वेतन पर असिस्टेंट मास्टर का पद स्वीकार कर लिया।

मालवीय जी में अपने छात्र-जीवन से ही समाज तथा साहित्य की सेवा करने की भावनाएँ विद्यमान थीं इसीलिए इन्होंने इलाहाबाद में 'लिटरेरी इंस्टीट्यूट' (साहित्य सभा) और 'हिंदू समाज' नामक संस्थाओं की स्थापना में सहयोग किया था। 1884 ई. में इलाहाबाद में 'हिंदी उद्धारिणी-प्रतिनिधि-मध्य सभा' की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य नागरी (हिंदी भाषा एवं नागरी लिपि) को उसका अधिकार दिलाना था। मालवीय जी ने इस संस्था के लिए दिल खोलकर कार्य किया, व्याख्यान दिया, लेख लिखे और अपने मित्रों को भी इस काम में भाग लेने को उकसाया। अपने छात्र जीवन से ही मालवीय जी राजनीतिक, धार्मिक तथा स्वदेशी प्रचार के आंदोलनों में भली-भांति भाग लेते थे और इससे उन्होंने जो अनुभव प्राप्त किया वह यह था कि विद्यार्थी राजनीतिक झगड़ों से दूर रहें जिसका पालन उन्होंने अपने विश्वविद्यालय में भी काफ़ी हद तक किया।

बाल्यावस्था से ही मालवीय जी को सभा-समाजों में बोलने की बड़ी इच्छा रहती थी और यही बात उनके विवाह के लिए उत्तरदायी हुई। एक बार मालवीय जी मिर्ज़ापुर में पंडितों की एक

सभा में भाग लेने गए और उसमें इतना प्रभावशाली और सुंदर भाषण दिया कि उससे प्रभावित होकर मिर्ज़ापुर के पं. नंदराम ने 1881 ई. में अपनी सबसे छोटी पुत्री कुंदन देवी का विवाह मालवीय जी के साथ कर दिया।

मालवीय जी ने अपनी शिक्षा तो अंग्रेज़ी भाषा में पाई थी पर साथ ही उन्होंने हिंदी भाषा का भी अच्छा अभ्यास किया था और आजीवन उसकी सेवा में रत रहे जो उनके बहुत काम आई। वे अपने छात्र जीवन से ही सुंदर कविताएँ लिखते थे। 'मकरंद' उपनाम से ब्रज भाषा में उन्होंने इतनी सुंदर कविताएँ की हैं कि उसे देखकर उनकी काव्य-प्रतिभा का सहज आभास मिलता है जो कि हिंदी के प्राचीन रीति कवियों की कविताओं से किसी दृष्टि से कम महत्व नहीं रखती। केवल 14 वर्ष की अवस्था में श्रृंगार रस के विषय में उनकी यह पंक्ति उनकी काव्य प्रतिभा को प्रदर्शित करती है—

यह रस ऐसो है बुरो, मन को देत बिगारि।
याके पास न जाइए, जब लौं होय अनारि।।

ब्रज भाषा में सवैये लिखने में उन्होंने काफ़ी प्रसिद्धि प्राप्त की थी और उनके सवैये 'घनानंद' के समकक्ष ठहरने की क्षमता रखते हैं ऐसा विद्वानों का मत है। उनका एक सवैया उदाहरणार्थ प्रस्तुत है—

इंदु सुधा बरस्या नलिनीन पै, वैन बिना रवि के हरशानी।
त्यों रवि तेज दिखायो तऊ, बिनु इंदु कुमोदिनि ना बिकसानी।।
न्यारी कहूँ यह प्रीति की रीति, नहीं 'मकरंद' जू जात बखानी।
साँवरे कामरी वारे गोपाल पै, रीझि लटू भई राधिका रानी।।

अपने कॉलेज के दिनों में मालवीय जी काफ़ी आनंद भरा जीवन जीते थे और स्वयं अपना नाम 'झक्कड़ सिंह' रख दिया था। इसी समय उन्होंने 'जेंटलमैन' नामक एक प्रहसन हिंदी में लिखा था जिसमें उन्होंने दो कविताएँ लिखीं जिनमें एक में स्वयं को झक्कड़ सिंह के रुप में चित्रित किया और दूसरे में उस समय के पढ़े-लिखे जेंटलमैनों की हँसी उड़ाई थी। अपने संबंध में उन्होंने लिखा था—

राकेश कुमार दूबे का जन्म 15 अक्टूबर, 1982 ई. को नेहियाँ, वाराणसी उत्तर प्रदेश में हुआ था। इतिहास विषय में स्नातकोत्तर एवं पीएचडी की डिग्री काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी से प्राप्त की। भारत की कई प्रतिष्ठित संस्थागत हिंदी पत्रिकाओं—नागरी, नागरी प्रचारिणी सम्मेलन, हिंदुस्तानी, दक्षिण भारत एवं केदार मानस में; पर्यावरण पर पर्यावरण संजीवनी एवं भगीरथ में तथा विज्ञान पर भारत की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं—'विज्ञान', 'विज्ञान आपके लिए', 'विज्ञान गंगा' एवं 'विज्ञान प्रगति' में लेख प्रकाशित हैं एवं ड्रीम 2047 तथा विज्ञान प्रकाश (अमेरिका) में आलेख प्रक्रिया में चल रहा है। हिंदी में विज्ञान-लेखन के लिए 'व्हिटेकर विज्ञान पुरस्कार, 2012' प्राप्त किया।

भारत से बाहर की पत्रिकाओं—'विश्व हिंदी पत्रिका' (मॉरीशस), 'विश्व हिंदी समाचार' (मॉरीशस), 'वसुधा' (कनाडा) एवं 'विश्वा' (अमेरिका) में भी आलेख प्रकाशित हुए हैं।

गरे जूही के हैं गजरे पड़ा रंगौ दुपट्टा तन।
भला क्या पूछिए धोती तो ढाके से मँगाते हैं।।
कभी हम वारनिश पहनें कभी पंजाब का जोड़ा।
हमेशा पास डंडा है ये झक्कड़ सिंह गाते हैं।।
न ऊधो से हमें लेना न माधो का हमें देना।
करें पैदा जो, खाते हैं व दुखियों को खिलाते हैं।।
नहीं डिप्टी बना चाहें न चाहें हम तसिल्दारी।
पड़े अलमस्त रहते हैं युहीं दिनको बिताते हैं।।
न देखें हम तरफ़ उनकी जो हमसे नेक मुँह फेरें।
जो दिल से हमसे मिलते हैं झुक उनको देख जाते हैं।।
नहीं रहती फ़िकर हमको कि लावें तीर औ लकड़ी।
मिले तो हलवे छन जावें नहीं झूरी उड़ाते हैं।।
सुनो यारो जो सुख चाहो तो पचड़े से गृहस्थी के।

छुटो फक्कड़पना ले लो यही हम सो सिखाते हैं।।
हमें मत भूलना यारो बसे हम पास 'मनमोहन'।
हुई है देर जाते हैं तुम्हारा शुभ मनाते हैं।।

जेंटलमैन की दशा का वर्णन करते हुए लिखा—

अहले यूरप पूरा जेंटलमैन कहलाता है हम।
'डोण्ट से बाबू' टुमी मिस्टर कहा जाता है हम।।
गंगा जाना पूजा जप-तप छोड़ो ये पाखंड सब।
घूरने में मुँह को गिरजाघर में नित जाता है हम।।
भाँग गांजा चरस-चंडूघर में छिप-छिप पीते थे।
अब तो बेखस्टके हमेशा 'वाईन' ढूरकाता है हम।।
हिंदुओं का खाना-पीना हमको कुछ भाता नहीं।
बीफ़ चमचसे कटे होटल में जा खाता है तल।।
बाबू ओ चाचा का कहना लाइक हम करता नहीं।
पापा कहना अपने बच्चों को भी सिखलाता है हम।।
कोट और पतलून पहने हैट एक सिरपर धरे।
ईवनिंग वाक करने पार्क में जाता है हम।।

मालवीय जी का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से भी उसके आरंभिक वर्षों से ही घनिष्ठ संबंध था। 1886 ई. में ही कांग्रेस के दूसरे अधिवेशन में ही जो कि कोलकाता में दादाभाई नौरो जी की अध्यक्षता में हुआ था, अपने गुरु पं. आदित्यराम भट्टाचार्य के साथ शामिल हुए और ऐसा ओजस्वी व्याख्यान दिया था कि कांग्रेस के लोग 24 वर्षीय नवयुवक के व्याख्यान को सुनकर चकित रह गए थे। कांग्रेस के सचिव ए.ओ. ह्यूम तक ने कांग्रेस की रिपोर्ट में मालवीय जी के बारे में लिखा, 'जिस भाषण के लिए कांग्रेस के अधिवेशन में कई बार तालियाँ बजीं और जिसको जनता ने बहुत उत्साह से सुना वह पंडित मदनमोहन मालवीय का भाषण था। पंडित जी की गौरवपूर्ण मूर्ति और हृदयग्राही भाषण ने वहाँ उपस्थित सभी व्यक्तियों के चित्त को अपनी ओर आकर्षित कर लिया था।'' मालवीय जी आजीवन कांग्रेस से जुड़े रहे एवं भारतीय राजनीति में महती भूमिका निभाई। 1909 एवं 1918 ई. में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष, 1908 ई. में प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन के अध्यक्ष; 1903-12 ई. तक प्रांतीय विधान परिषद के सदस्य; 1910-20 ई. तक भारतीय काउंसिल के सदस्य; 1916-18 ई. तक औद्योगिक आयोग के सदस्य; 1924-30 ई. तक इंपीरियल लेजिस्लेटिव असेंब्ली के सदस्य रहे। सविनय अवज्ञा आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की एवं जेल भी गए तथा 1931 ई. के गोलमेज़ सम्मेलन में भी भाग लिया था। उन्होंने अपने जीवन में अनगिनत भाषण दिए, उनके राजनीतिक भाषणों में हमें आवेशशून्य तर्कणा तथा प्रतीति करने की अद्‌भुत शक्ति देखने को मिलती है परंतु मालवीय जी के जीवन का एक दूसरा पक्ष यह भी था कि उन्होंने हिंदी को उसका स्थान दिलाने के लिए आजीवन संघर्ष किया और उसमें बहुत कुछ सफल भी रहे।

1886 ई. में मालवीय जी ने कांग्रेस के मंच से जो व्याख्यान दिया, वह हिंदी भाषा के लिए काफ़ी उपयोगी साबित हुआ। उनके व्याख्यान को सुनकर एवं उनकी योग्यता एवं सत्यनिष्ठा पर मुग्ध होकर दैनिक हिंदुस्तान के सर्वेसर्वा कालाकांकर के नरेश राजा रामपालसिंह ने 200 रु. मासिक वेतन पर उन्हें अपने पत्र का संपादक नियुक्त कर दिया। मालवीय जी ने 1887-89 ई. तक लगभग ढाई वर्ष तक पत्र का संपादन बड़ी ही योग्यता के साथ किया और हिंदी के प्रथम दैनिक पत्र का संपादक होने का गौरव प्राप्त किया। उन्होंने इस पत्र को इतनी कुशलता के साथ संपादित किया था कि सरकार के प्रशासनिक विवरण तक में इस पत्र की सार्वजनिक उपयोगिता स्वीकार की गई थी।

हिंदी के उत्थान में इलाहाबाद के भारती भवन पुस्तकालय का महत्वपूर्ण योगदान था और मालवीय जी का इससे घनिष्ठ संबंध था। 15 दिसंबर, 1889 ई. को लाला ब्रजमोहन लाल ने इस पुस्तकालय को स्थापित किया और निस्संतान होने के कारण अपने अंतिम समय में उन्होंने जो दान पत्र भारती भवन के लिए लिखा एवं उसके अनुसार पुस्तकालय का कार्य जिन लोगों को सौंपा गया उनमें मालवीय जी भी थे। मालवीय जी के उद्योग से ही इस पुस्तकालय को 375 रु. वार्षिक ज़िला बोर्ड से एवं 500 रु. वार्षिक प्रांतीय

सरकार से मिलते थे। इस पुस्तकालय के साथ मालवीय जी का नाम ऐसा जुड़ गया कि लोगों को यह विश्वास हो गया कि भारती भवन उनकी व्यक्तिगत निधि है। इस पुस्तकालय का कार्य उस युग में इतना महत्वपूर्ण था कि उसकी सुंदर समालोचना हिंदी 'प्रदीप' एवं पश्चिमोत्तर प्रदेश से प्रकाशित हिंदी के तत्कालीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण समाचार पत्र 'भारत जीवन' में हुआ करती थी।

मालवीय जी की वक्तृत्व शैली और प्रतिभा को देखकर उनके मित्रों एवं गुरुजनों ने उन्हें वकालत पढ़ने के लिए प्रेरित किया। फलस्वरूप मालवीय जी ने 1891 ई. में एल.एल.बी. पास कर लिया एवं 1892 ई. में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में वकालत करने लगे और अपने वकालत के सुनहरे दिनों में भी नागरी (हिंदी भाषा एवं नागरी लिपि) के पक्ष में प्रमाण और आँकड़े इकट्ठा किया करते थे।

मालवीय जी ने अपनी पुस्तक में यह मत स्थापित किया कि सभ्य संसार के किसी भी जनसमुदाय की शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा नहीं है। जिस देश की जो भाषा है, उसी भाषा में उस देश के न्याय, कानून, राजकाज, कौंसिल इत्यादि का कार्य होता है। केवल यही एक ऐसा देश है जहाँ सरकारी दफ़्तरों और न्यायालयों की भाषा न तो शासकों की मातृ भाषा है और न प्रजा की।

16 जुलाई, 1893 ई. को काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य हिंदी को उसका वास्तविक स्थान दिलाना था। सभा की स्थापना के प्रथम वर्ष में ही 20 मार्च, 1894 ई. को मालवीय जी इस सभा के सभासद बन गए और आजीवन इस संस्था से जुड़े रहे। हिंदी की इस संस्था के सभी आयोजनों में मालवीय जी ने सक्रिय रूप से भाग लिया। अपनी स्थापना के दूसरे वर्ष सभा ने 'प्रांतीय बोर्ड ऑव रेवेन्यू' में हिंदी को स्थान दिलाने का आंदोलन आरंभ किया जिसके परिणामस्वरूप सरकार ने अपने 20 अगस्त, 1896 के पत्र द्वारा हिंदी को बोर्ड ऑव रेवेन्यू में स्थान प्रदान कर दिया। इस बात से उत्साहित होकर सभा ने प्रांतीय गवर्नर की सेवा में प्रतिनिधि मंडल भेजकर निवेदन पत्र उपस्थित करने का निर्णय लिया। इस कार्य के लिए मिर्ज़ापुर, गाज़ीपुर, बलिया, गोरखपुर, गोंडा, बहराइच, बस्ती, फ़ैज़ाबाद, लखनऊ, कानपुर, बिजनौर, इटावा, मेरठ, सहारनपुर, मुज़फ़्फ़रनगर, झाँसी, ललितपुर, जालौन, आदि नगरों में भेजकर लगभग 60 हजार हस्ताक्षर एकत्र किए गए। सभा के इस उद्योग में मालवीय जी का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान था। उन्होंने दो वर्ष के कठिन परिश्रम से 'कोर्ट कैरेक्टर एंड प्राइमेरी एजुकेशन इन नॉर्थ वेस्ट प्राविंसेस एंड अवध' नामक ग्रंथ तैयार कर अपने व्यय से 1897 ई. में इंडियन प्रेस, इलाहाबाद से छपवाया।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा नियुक्त जिस डेप्युटेशन द्वारा 2 मार्च, 1898 ई. को इलाहाबाद में लेफ़्टिनेंट गवर्नर एंटनी मैकडॉनेल को मेमोरियल दिया गया, उसके नेता मालवीय जी ही थे। मेमोरियल के साथ पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवधवासी प्रजा की ओर से साठ हज़ार हस्ताक्षरों की सोलह जिल्दें तथा मालवीय जी की पुस्तक की एक प्रति अर्पण की गई जिसमें मुख्य रूप से यह बात कही गई थी 'अदालतों में नागरी-अक्षरों का प्रचार न होने से प्रजा विशेषकर ग्रामीण प्रजा को बड़ी असुविधा और कष्ट होता है तथा आरंभिक शिक्षा के प्रचार में बाधा उपस्थित होती है।'

मालवीय जी ने अपनी पुस्तक में यह मत स्थापित किया कि सभ्य संसार के किसी भी जन समुदाय की शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा नहीं है। जिस देश की जो भाषा है उसी भाषा में उस देश के न्याय, कानून, राजकाज, कौंसिल इत्यादि का कार्य होता है। केवल यही एक ऐसा देश है जहाँ सरकारी दफ़्तरों और न्यायालयों की भाषा न तो शासकों की मातृ भाषा है और न प्रजा की। इतना ही नहीं नागरी अक्षरों के पक्ष में प्रो. ब्लॉकम्यान, सर एर्सकिन पेरी, सर मोनियर विलियम्स इत्यादि विद्वानों के मत प्रमाण के रुप में उपस्थित किए और यह सत्य उद्घाटित किया कि जिस प्रदेश में सर्वप्रथम प्राइमेरी शिक्षा का प्रचार किया गया, उसी पश्चिमोत्तर प्रदेश में उर्दू के प्रचलन के कारण प्राइमेरी शिक्षा की स्थिति सबसे दयनीय है जबकि इसी प्रदेश में कुमाऊँ क्षेत्र में जहाँ की कचहरियों में नागरी

अक्षरों का व्यवहार है, शिक्षा का स्तर पूरे प्रदेश से तीन गुना है।

इस प्रकार मालवीय जी के नेतृत्व में निरंतर उद्योग करने पर आंशिक सफलता 18 अप्रैल, 1900 ई. को प्राप्त हुई जब पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवध की सरकार ने अपने आज्ञा पत्र सं० 585/3-343सी-68, 1900 द्वारा कचहरियों में नागरी अक्षरों में आवेदन पत्र दाखिल करने की आज्ञा दे दी तथा अन्य आदेश भी इस संदर्भ में प्रकाशित कर दिए। इस आज्ञा के बाद जब छोटे लाट इलाहाबाद आनेवाले थे तो उनके प्राइवेट सेक्रेटरी का पत्र मालवीय जी के पास आया कि छोटे लाट आपसे मिलना चाहते हैं। उस समय मालवीय जी को तीव्र ज्वर आ रहा था पर उसकी परवाह न करते हुए पं. शिवराम पांडेय वैद्य की कड़ी ज्वररोधी औषधि लेकर मालवीय जी मिलने गए और दो घंटों तक उनसे बातचीत की थी जिससे छोटे लाट काफ़ी खुश हुए थे और आज्ञा में परिवर्तन न होने का आश्वासन दिया था।

मालवीय जी द्वारा किए गए कितने ही कार्यों ने उन्हें अमर बना दिया किंतु उनकी कीर्ति को स्थायी बनाने के लिए उनके द्वारा स्थापित काशी हिंदू विश्वविद्यालय ही काफ़ी है और इस विश्वविद्यालय के माध्यम से भी उन्होंने हिंदी की अविस्मरणीय सेवा की। 1904 ई. में ही एक हिंदू विश्वविद्यालय स्थापित करने की बात मालवीय जी के मस्तिष्क में उठी और 1905 ई. में हुए कांग्रेस के सिंहद्वार काशी हिंदू विश्वविद्यालय बनारस अधिवेशन के मंच से उन्होंने यह बात कही।

एक भाषा एवं एक लिपि द्वारा संपूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने के उद्देश्य से ही अक्टूबर, 1910 ई. में काशी नागरी प्रचारिणी सभा में प्रथम हिंदी साहित्य सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें देश भर के अग्रणी साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, समाज सेवी, पत्रकार एवं विचारक सम्मिलित हुए। हिंदी भाषा के लिए मालवीय जी ने जो अविस्मरणीय एवं युगांतकारी कार्य किया था उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए हिंदी विद्वानों द्वारा एक स्वर से उन्हें इस सम्मेलन का सभापति बनाया गया। मालवीय जी ने 2 घंटे 45 मिनट तक अपनी ओजस्विनी वक्तृता में समय निर्धारण, हिंदी की उत्पत्ति, उसकी दशा तथा उन्नति, हिंदी की अन्यान्य भाषाओं की तुलना में उत्कर्षता तथा हीनावस्था के कारण म्लानता, लेखकों को प्रोत्साहित करने की चर्चा, संस्कृत-प्राकृत से हिंदी का संबंध, अन्य भाषाओं से हिंदी का संबंध, अन्य भाषाओं से हिंदी में अनुवाद की उपयोगिता, अन्यान्य भाषा के विद्वज्जन अपनी मातृ भाषा की ओर कैसे प्रवृत्त हैं और हिंदी भाषा-भाषी अधिक संख्यक होने पर भी उदासीन हैं, हिंदी का रूप कैसा हो? इत्यादि विविध विषयों की उत्तमतापूर्वक चर्चा कर हिंदी भाषा के विषय में बहत कछ सनाया। प्रथम हिंदी साहित्य सम्मेलन में ही 18 अप्रैल, 1900 ई. की आज्ञा को सतत जारी रखने, उच्च शिक्षा में हिंदी भाषा को माध्यम बनाने, टेक्स्ट बुक कमेटी में हिंदी के जानकार लोगों को रखे जाने, भारत की अन्य भाषाओं के सम्मेलनों के प्रतिनिधियों का एक संघ स्थापित करने तथा सरकारी स्टैम्पों एवं सिक्कों पर नागरी अक्षरों को स्थान देने के लिए प्रस्ताव पास हुए।

मालवीय जी हिंदी साहित्य सम्मेलन से घनिष्ठ रूप में जुड़ गए और सम्मेलन की दिनोंदिन उन्नति होने लगी। जब महात्मा गांधी भारत आए और राजनीति में सक्रिय भागीदारी देने लगे तो उन्हें हिंदी से जोड़ने का कार्य मालवीय जी ने ही किया जैसा कि उर्दू के राष्ट्रवादी कवि अकबर इलाहाबादी ने कहा था कि

गांधी ने मान ली है मदनी मोहनी सलाह
हिंदी तो थे ही अब मदानी भी हो गए।

गांधी जी के हिंदी पर अत्यधिक बल देने के कारण ही इंदौर में आयोजित 8वें हिंदी साहित्य सम्मेलन का उन्हें अध्यक्ष बनाया गया और उन्हीं के प्रयास से 1918 ई. में 'दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा' मद्रास में स्थापित की गई। 19-21 अप्रैल, 1919 ई. को बम्बई नाटक भवन एम्पायर थियेटर हॉल में आयोजित 9वें हिंदी साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष पुन: मालवीय जी को ही बनाया गया जहाँ उन्होंने अपनी ओजस्वी वक्तृता से सबका मन मोह लिया था।

1925 ई. के बाद हिंदी-हिंदुस्तानी का संघर्ष बढ़ता ही जा रहा

था, ऐसे समय में मालवीय जी ने हिंदी का खुला समर्थन किया। वे किसी भी बनावटी भाषा के विरोधी थे। हिंदी पर चौतरफ़ा हो रहे आक्रमणों को ध्यान में रखकर ही अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन का 28वां अधिवेशन काशी में अंबिकाप्रसाद वाजपेयी की अध्यक्षता में हुआ और इस सम्मेलन के लिए जो स्वागत समिति बनी थी उसके अध्यक्ष मालवीय जी ही थे। अपने स्वागत भाषण में उन्होंने कहा था ''काशी सदा से विद्या, ज्ञान और बुद्धि का केंद्र रही है और हिंदी के लिए तो सबसे अधिक सौभाग्य की बात है कि उसके प्रारंभिक काल में महाकवि तुलसीदास ने यहीं गंगा-तट पर भारत के क्या; समस्त संसार के रत्नकाव्य 'रामायण' की रचना की। इसी पुण्य क्षेत्र में कबीर ने भी समन्वय का पाठ सिखाया और यहीं पर वर्तमान युग के महाकवि विद्वान और लेखकों ने हिंदी साहित्य की भरपूर सेवा की।'' अपने भाषण में उन्होंने बिहार से प्रकाशित हिंदुस्तानी पुस्तकों की ओर बाबू राजेंद्र प्रसाद का ध्यान आकृष्ट किया और साथ ही उसका विरोध भी किया। हिंदी भाषा के स्वरूप और नागरी लिपि पर विषद व्याख्यान दिया और नागरी लिपि के साथ जो षड्यंत्र हो रहा था उसको भी रेखांकित किया। गांधी जी ने मालवीय जी की ही बहुत सी बातों को अपने जीवन में अपनाया था और दोनों में इतनी सहृदयता थी कि दोनों एक-दूसरे को 'भाई' कहा करते थे पर गांधी जी के हिंदुस्तानी का समर्थन करने के कारण भाषा एवं लिपि के प्रश्न पर दोनों में मतभेद था क्योंकि मालवीय जी गांधी जी के समान बनावटी भाषा को पसंद नहीं करते थे।

मालवीय जी समाचार पत्रों की महत्ता भली-भाँति समझते थे और उसे राष्ट्र निर्माण का एक विशेष अंग मानते थे क्योंकि समाचार पत्र जनता को वर्तमान नीति का उपदेश देते हैं और भविष्य के उपलक्ष्य की ओर बढ़ने को उत्साहित करते रहते हैं और साथ ही सरकारी कामों की आलोचना करके प्रजा की वास्तविक आवश्यकताओं को प्रगट करते हैं। इन बातों को ध्यान में रखकर और 1905 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मंच से जिस हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना की बात उन्होंने कही थी, उसके प्रचार के लिए बसंत पंचमी, 1907 ई. को 'अभ्युदय' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला। कुछ समय बाद अत्यधिक व्यस्तता के कारण उन्होंने यह पत्र पुरुषोत्तमदास टंडन को सौंप दिया। नवंबर, 1910 ई. में अभ्युदय प्रेस, प्रयाग से कृष्णकांत मालवीय के संपादकत्व में 'मर्यादा' नामक जो मासिक पत्रिका निकली, उसके मुख्य प्रेरणास्रोत एवं सहायक मालवीय जी ही थे। हिंदी भाषा आंदोलन एवं साहित्य के क्षेत्र में इन दोनों पत्रों ने जो योगदान दिया वह इतिहास प्रसिद्ध है।

मालवीय जी अंग्रेज़ी पत्रों से भी जुड़े रहे और उनके माध्यम से भी हिंदी की अच्छी सेवा की। जब अव्यवस्था के कारण अयोध्यानाथ का पत्र 'नेशनल हैरल्ड' बंद हो गया तो मालवीय जी ने एक अंग्रेज़ी दैनिक की आवश्यकता महसूस की और उसी के फलस्वरूप 1909 ई. में विजयदशमी के दिन 'लीडर' नामक पत्र की स्थापना हुई और 1926 ई. में जब इस पत्र का अपना कार्यालय बन गया तो इसी कार्यालय से 'भारत' नामक हिंदी पत्र निकला जो लंबे समय तक दैनिक रूप में निकलकर हिंदी की सेवा का माध्यम बना। इसी प्रकार 1924 ई. में जब दिल्ली से निकलनेवाले 'हिंदुस्तान टाइम्स' की अवस्था काफ़ी खराब हो गई तो मालवीय जी ने उसे अपने हाथ में लिया और काफ़ी समय तक इसके संपादक मंडल के अध्यक्ष रहे। इसी कार्यालय से हिंदी का 'हिंदुस्तान' भी दैनिक रूप में निकला। इन पत्रों के अतिरिक्त काशी से प्रकाशित 'सनातन धर्म' और लाहौर से प्रकाशित 'विश्वबंधु' नामक पत्रों के प्रमुख प्रेरणास्रोत मालवीय जी ही थे। इन पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से मालवीय जी ने हिंदी की असीम सेवा की।

मालवीय जी द्वारा किए गए कितने ही कार्यों ने उन्हें अमर बना दिया किंतु उनकी कीर्ति को स्थायी बनाने के लिए उनके द्वारा स्थापित काशी हिंदू विश्वविद्यालय ही काफ़ी है और इस विश्वविद्यालय के माध्यम से भी उन्होंने हिंदी की अविस्मरणीय सेवा की। 1904 ई. में ही एक हिंदू विश्वविद्यालय स्थापित करने की बात मालवीय जी के मस्तिष्क में उठी और 1905 ई. में हुए कांग्रेस के सिंहद्वार काशी हिंदू विश्वविद्यालय बनारस अधिवेशन के मंच से उन्होंने यह बात कही। उस समय तो कितने ही लोगों ने इसे मालवीय जी का दिवास्वप्न बतलाया पर यह मालवीय जी ही थे जो अपने धुन के पक्के थे और जिन्होंने इस कार्य को कर दिखाने का संकल्प लिया। इस कार्य के लिए उन्होंने एक भिक्षुक का वेश धारण

कर झोली काँधे पर रखी और पूरे देश में घूमकर भिक्षादान द्वारा धन एकत्र किया और 4 फरवरी, 1916 ई. को बसंत पंचमी के दिन उनका सपना साकार हुआ जब इस दिन काशी हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना हो गई। उन्होंने अपने परिश्रम से एक ऐसा विश्वविद्यालय स्थापित किया जो एशिया का सबसे बड़ा एवं विश्व का तीसरा सबसे बड़ा आवासीय विश्वविद्यालय है।

मालवीय जी की इच्छा थी कि विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम हिंदी भाषा ही रहे परंतु उस समय भारत पर अंग्रेज़ी शासन था और जब उन्होंने गवर्नर जनरल के सामने विश्वविद्यालय का विधान रखा तो उन्होंने शिक्षा का माध्यम हिंदी होना अस्वीकार कर दिया और जवाब दिया 'हम (अंग्रेज़) जिस भाषा को नहीं जानते उसे किसी 'चार्टर्ड' विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम नहीं बनाया जा सकता तब मजबूरन मालवीय जी को शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी रखना पड़ा, यह सोचकर कि जब अंग्रेज़ चले जाएँगे तब हिंदी को माध्यम होने से कौन रोकेगा परंतु इस फ़ैसले के कारण लोगों ने मालवीय जी की आलोचना की और असंतोष प्रकट करते हुए प्रस्ताव पास कर उनके पास भेजे। इसका कारण यह था कि जब धन एकत्र करने के लिए मालवीय जी देश का भ्रमण कर रहे थे तब सर्वत्र ही हिंदी में व्याख्यान देते एवं वार्ता करते थे और यदि उनका कोई सहयोगी अंग्रेज़ी में बोलता था तो उसके लिए भीड़ से 'शर्म' 'शर्म' की आवाज़ आती और जब मालवीय जी धाराप्रवाह हिंदी बोलते तो 'हर्ष' 'हर्ष' की ध्वनि आती थी।

इसी प्रकार के विरोध का सामना उन्हें 1916 ई. में ही मुज़फ़्फ़रपुर की हिंदी प्रचारिणी सभा के वार्षिकोत्सव में भी करना पड़ा था। तब उन्होंने अपना स्पष्टीकरण दिया था और अपने अध्यक्षीय भाषण में हिंदी की उपयोगिता और महत्ता तथा विविध उदाहरणों और प्रमाणों द्वारा संसार की समस्त लिपियों से नागरी लिपि की उत्तमता एवं सरलता बतलाते हुए कहा था ''जो लोग विश्वविद्यालय में हिंदी को स्थान मिलता न देख असंतोष प्रकट कर रहे हैं तथा प्रस्ताव पास कर अपना-अपना खेद प्रकट कर रहे हैं, उन्हें यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि अब हम लोगों ने इस विश्वविद्यालय को दो भागों में विभक्त कर एक में अंग्रेज़ी तथा दूसरे में हिंदी को माध्यम बनाना निश्चय किया है। ...जिस प्रकार भारत में गंगा और यमुना की दो धाराएँ हैं और दोनों आपस में मिलकर एक हो गई हैं अर्थात यमुना जी की धारा गंगा में विलीन हो गई है, उसी प्रकार इस विश्वविद्यालय में भी हिंदी और अंग्रेज़ी की दो धाराएँ रहेंगी और आगे चलकर यमुना की धारा की तरह अंग्रेज़ी की धारा भी हिंदी की धारा में मिलकर एक हो जाएगी अर्थात हिंदी ही रह जाएगी''।

विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद यह निश्चित हुआ कि एफ. ए. और बी. ए. की परीक्षा में प्रत्येक विद्यार्थी के लिए देशी भाषा में एक लेख लिखकर पास करना अनिवार्य होगा और हिंदी भाषा के लिए प्राध्यापकों के रूप में पं. रामचंद्र शुक्ल एवं लाला भगवानदीन की नियुक्ति हुई। 1921 ई. में मालवीय जी ने बाबू श्यामसुंदरदास की नियुक्ति हिंदी विभाग में की और उन्हें विभागाध्यक्ष भी बनाया। एफ.ए., बी. ए. और एम. ए. कक्षाओं में हिंदी की अलग से पढ़ाई का आरंभ जुलाई, 1922 से हुआ पर महत्वपूर्ण बात यह थी हिंदी और संस्कृत भाषा के अध्यापन एवं परीक्षा का माध्यम भी अंग्रेज़ी ही थी। इस संदर्भ में बाबू श्यामसुंदरदास ने दूरदर्शिता से काम लिया और धीरे-धीरे हिंदी भाषा में अध्यापन कार्य करने लगे और एक दिन सिनेट में जब मालवीय जी उपस्थित थे, यह मामला उठाया तो मालवीय जी ने कहा कि हिंदी और संस्कृत के प्रश्न पत्र जहाँ तक संभव हो उन्हीं भाषाओं में हों। इस बात से विश्वविद्यालय का नियम तो भंग होता था पर मालवीय जी का मानना था कि नियम कार्य की व्यवस्था ठीक करने के लिए हैं न कि उसमें बाधा डालने के लिए। इसका परिणाम यह हुआ कि हिंदी विभाग में अध्यापन एवं परीक्षा का माध्यम हिंदी हो गई और बाद में तो यह भी निश्चित हो गया कि हिंदी और संस्कृत में शोध का माध्यम भी ये दोनों भाषाएँ हो सकती हैं। मालवीय जी की संरक्षता में ही पं. रामचंद्र शुक्ल, लाला भगवानदीन, बाबू श्यामसुंदरदास, अयोध्यासिंह उपाध्याय, पं. केशवप्रसाद मिश्र, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. पीतांबरदत्त बड़थ्वाल, पं. विश्वनाथप्रसाद मिश्र सदृश विद्वान इस विश्वविद्यालय में अपनी सेवा दे चुके हैं।

मालवीय जी के समय से ही हिंदी के अतिरिक्त अन्य विभागों में

भी हिंदी भाषा को माध्यम बनाने का प्रयास जारी रहा। उच्च शिक्षा के माध्यम के लिए हिंदी ग्रंथों के प्रकाशन का कार्य आगे बढ़ाने की दृष्टि से मालवीय जी ने विश्वविद्यालय में 'हिंदी प्रकाशन मंडल' की स्थापना करवाई थी। विश्वविद्यालय की रजत जयंती के अवसर पर विश्वविद्यालय में हिंदी को उचित स्थान मिलता न देख जब महात्मा गांधी ने छात्रों एवं अध्यापकों को संबोधित करते हुए खेद प्रकट किया तो मालवीय जी ने अपने भाषण में इसका जवाब देते हुए कहा था कि ''मेरे भाई गांधी ने आपसे कहा है कि अपनी भाषा द्वारा शिक्षा न मिलने से हमारे देश की कितनी हानि हुई है। कितने साल हमको विदेशी भाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा पाने में बिताने पड़े, यह हम सबको मालूम है। हिंदी के द्वारा ऊँची से ऊँची पढ़ाई का प्रबंध करना इस विश्वविद्यालय का एक उद्देश्य रहा है। सेठ घनश्यामदास बिड़ला ने हिंदी में पुस्तकें तैयार करने के लिए विश्वविद्यालय को रु. 50000 दिए हैं और हमने कुछ पुस्तकें तैयार भी की हैं। हममें से लगभग सभी यह मानते हैं कि मातृ भाषा द्वारा पढ़ाई हो पर हम पर अंग्रेज़ी भाषा का ऐसा जादू चढ़ा है कि हमको अपनी भाषा को उसके स्थान पर बैठाने में कुछ समय लगेगा।''भविष्य में हिंदुस्तान की उन्नति हिंदी को अपनाने से ही हो सकती है। मैं गांधी जी को विश्वास दिलाता हूँ कि जैसे-जैसे हिंदी में पुस्तकें तैयार होती जाएँगी, हम हिंदी को अपनाते जाएँगे।'' विश्वविद्यालय में मालवीय जी की बात पर पूरी तरह से अमल किया गया और हिंदी को प्रोत्साहन प्रदान किया गया जिसपर प्रसन्नता ज़ाहिर करते हुए 1943 के हिंदी साहित्य सम्मेलन में 7वाँ प्रस्ताव पास हुआ, ''यह सम्मेलन काशी विश्वविद्यालय के अधिकारियों को इसलिए बधाई देता है कि वहाँ इंटर कक्षाओं में सब विषय हिंदी माध्यम से पढ़ाने तथा परीक्षा देने की व्यवस्था कर दी गई है।''

मालवीय जी का देहावसान तो 12 नवंबर, 1946 ई. को ही हो गया परंतु उसके बाद भी आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पं. करुणापति त्रिपाठी, डॉ. विजयशंकर मल्ल, प्रो. भोलाशंकर व्यास, प्रो. त्रिभुवन सिंह, प्रो. काशीनाथ सिंह, प्रो. नामवर सिंह, प्रो. बच्चन सिंह, पं. शिवप्रसाद मिश्र रुद्र 'काषिकेय' प्रो. चौथीराम यादव जैसे लब्धप्रतिष्ठ हिंदी विद्वानों ने हिंदी को विश्व मंच पर प्रतिष्ठित किया और आज भी काशी हिंदू विश्वविद्यालय का हिंदी विभाग न केवल भारत वरन विश्व के सबसे प्रतिष्ठित हिंदी विभागों में से एक है जहाँ पर 32 प्राध्यापक एवं अनुसंधान वैज्ञानिक हिंदी की सेवा कर रहे हैं। आज कला संकाय एवं सामाजिक विज्ञान संकाय के सभी विभागों के अलावा दूसरे अन्य संकायों के विभागों में भी हिंदी को प्रवेश मिल चुका है और इस विश्वविद्यालय में हिंदी दिन-ब-दिन उन्नति करती जा रही है।

मालवीय जी का पूरा जीवन राष्ट्र, राष्ट्रीय शिक्षा एवं राष्ट्र भाषा के लिए समर्पित रहा। अपने छात्र जीवन से ही मालवीय जी हिंदी के लिए कार्य करते रहे और हिंदी आंदोलन के वे प्रमुख नेता थे। हिंदी को कचहरियों एवं दफ़्तरों में स्थान दिलाने में उनका योगदान निर्णायक था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एवं हिंदी साहित्य सम्मेलन के वे दो-दो बार अध्यक्ष रहे। हिंदी का समर्थन करने के कारण कुछ लोगों ने मालवीय जी पर सांप्रदायिक होने का आरोप लगाया पर यह पूरी तरह सही नहीं है। अकबर इलाहाबादी जैसे सच्चे भारतीय मुसलमान कवि ने मालवीय जी की भूरि-भूरि प्रशंसा की है और उन्होंने तो यहाँ तक लिख दिया कि—

हज़ार शेख ने डाढ़ी बढ़ाई सन की-सी
मगर, वो बात कहाँ मालवी मदन की-सी।

मालवीय जी की राष्ट्र भाषा हिंदी तथा साहित्य संबंधी सेवाओं को दृष्टि में रखकर ही अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन ने इन्हें 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया था तथा भारत सरकार ने उन्हें उनके 153वें जन्मदिन पर 25 दिसंबर, 2014 को भारत के सर्वोच्च अलंकरण 'भारत रत्न' से अलंकृत किया। आज पूरा भारतवर्ष मालवीय जी द्वारा स्थापित विश्वविद्यालय की स्थापना की 100वीं वर्षगांठ मना रहा है और उनकी हिंदी सेवाओं को याद कर उनसे प्रेरणा ले रहा है। ❑

वाराणसी, भारत
rkdhistory@gmail.com

विश्व हिंदी : विविध संदर्भ

10 हिंदी : विश्व में भाषा भाषियों की दृष्टि से प्रथम एवं सबसे लोकप्रिय भाषा–शोध रिपोर्ट 2015

• डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल

प्रस्तावना

विश्व स्तर पर हिंदी की स्थिति के बारे में मेरा यह शोध 1981 में शुरू हुआ था और सन् 1997 में इसकी शोध रिपोर्ट भारत सरकार राज भाषा विभाग की पत्रिका 'राज भाषा भारती' में **'हिंदी एक अंतरराष्ट्रीय भाषा है'** नामक शीर्षक से प्रकाशित हुई। इस प्रकाशन के उपरांत सन् 2005 में इसकी विस्तृत रिपोर्ट विश्व भर में अनेक समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई जिसका संपूर्ण विश्व में स्वागत हुआ व साथ ही सराहना हुई एवं इस शोध को मान्यता प्राप्त हुई। विश्व के अधिकांश विद्वानों व भाषाविदों ने इस तथ्य को स्वीकार कर लिया कि विश्व में हिंदी जाननेवाले सर्वाधिक हैं तथा मंदारिन दूसरे स्थान पर है। यह शोध कार्य भारत सरकार के प्रतिलिप्याधिकार पंजीयक (Registrar of copyright, Govt. of India) के पास पंजीयन क्रमांक L-26910/2006 पर मेरे नाम से पंजीकृत है।

डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल ने विभिन्न क्षेत्रों में 11 डिग्री/डिप्लोमा प्राप्त की हैं जिसमें डिलिट, पीएचडी, एम.ए. हिंदी, एम.ए. इंग्लिश, एलएलबी आदि हैं। आज तक वे 28 संस्थाओं में कलाकार, रीडर, संपादक, पत्रकार आदि के रूप में कार्यरत रह चुके हैं। इनकी कुल 1530 साहित्यिक कृतियाँ प्रकाशित हैं जिसमें पुस्तकें, शोध पत्र/विनिबंध, आलेख, शैक्षिक पाठ/पाठ्यक्रम आदि हैं। इनके सक्रिय साहित्यिक योगदान के लिए इनको 57 पुरस्कार/सम्मान प्राप्त हैं। संप्रति, वे कॉर्पोरेशन बैंक, कॉर्पोरेट कार्यालय, मंगलूर के उप महा प्रबंधक हैं।

मेरे शोध के संबंध में कुछ प्रतिक्रियाएँ

विश्व में इंटरनेट आदि जैसे माध्यमों से इस शोध के प्रकाशित होने पर विश्व समुदाय के अनेक विद्वानों ने इसे सराहा तथा इसकी प्रामाणिकता एवं सत्यता को स्वीकारा लेकिन चीन के एक पोर्टल पर इस शोध पर विश्व समुदाय से अभिमत माँगे गए। इस पोर्टल पर मैंने निरंतर निगरानी रखी ताकि कोई प्रतिकूल टिप्पणी या कोई स्पष्टीकरण माँगा जाए तो मैं उसका समुचित उत्तर दे सकूँ लेकिन इस पोर्टल पर किसी भी विद्वान ने इस तथ्य को नकारा नहीं बलिक आश्चर्य व्यक्त किया कि हिंदी इतनी व्यापक व लोकप्रिय है, यह उन्हें पहली बार इस शोध से मालूम हुआ।

भारत और लंदन के कुछ विद्वानों ने हिंदी और उर्दू को समान भाषा मानने पर आपत्ति जताई लेकिन मैंने उन्हें बताया कि शब्दावली एवं वाक्य रचना तथा व्याकरण इन दोनों ही भाषाओं का समान है, यह अलग भाषा नहीं है बल्कि हिंदी का हिंदुस्तानी स्वरूप है। अत: इसे एक भाषा के अंतर्गत माना जाएगा। भाषा वैज्ञानिक नियमों के अनुसार भी विश्व भर में यही भाषाओं के वर्गीकरण का सिद्धांत है।

अब तक प्रस्तुत शोध रिपोर्टों का सार

हिंदी विश्व में सबसे अधिक बोली व समझी जाती है तथा वह विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा है, यह मैंने अपने शोध में सिद्ध किया है। इस शोध को समय-समय पर अद्यतम किया जाता रहा है ताकि हर दो-तीन साल के कालखंड में भाषागत परिदृश्य में आए परिवर्तनों को रेखांकित किया जा सके। अब तक प्रकाशित हुई शोध रिपोर्टों का सार निम्नवत है :

(आँकड़े मिलियन में)

शोध रिपोर्ट का वर्ष	विश्व में हिंदी जाननेवाले	विश्व में चीनी जाननेवाले	अंतर
1997	800	730	+70
2005	1022	900	+122
2007	1023	920	+103
2009	1100	967	+133
2012	1200	1050	+150
2015	1300	1100	+200

स्रोत : डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

ये शोध रिपोर्ट इस बात का अकाट्य प्रमाण हैं कि हिंदी जाननेवालों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है तथा यह निरंतर बढ़ती जा रही है। इससे यह सिद्ध होता है कि हिंदी विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा है।

हिंदी-विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा

'हिंदी विश्व नें सबसे लोकप्रिय भाषा है' यह तथ्य भी निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है। इस तथ्य को अब अधिकांश विद्वान स्वीकार करने लगे हैं। इसका एक प्रमाण यह भी है कि भारत के प्रधान मंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी जी ने संयुक्त राष्ट्र संघ सहित विश्व के अनेक देशों में अपना व्याख्यान हिंदी में ही दिया, यह व्याख्यान संपूर्ण विश्व में लोगों ने बड़े चाव से सुना व समझा। आदरणीय मोदी जी के सम्मान में इन कार्यक्रमों को भी हिंदी में ही प्रसारित किया गया। हिंदी भाषा की लोकप्रियता और उसका प्रभा मंडल केवल भारत या भारत के पड़ोसी देशों तक ही सीमित नहीं है बल्कि सुदूर कैरेबियाई राष्ट्रों तक फैला है। मॉरीशस, फ़िजी, गयाना, सूरीनाम, त्रिनिदाद और टोबैगो जैसे देशों में यह राज भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। इतना ही नहीं बल्कि इंडोनेशिया, अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, अफ्रीका और खाड़ी के देशों में हिंदी बहुत लोकप्रिय है। विश्व की 18 प्रतिशत जनता हिंदी जानती है। इसलिए अनेक देश अपने प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में हिंदी को स्थान दे रहे हैं। इतना ही नहीं भारतीय फ़िल्में और टी.वी. चैनलों के कार्यक्रम भी विश्व के कई देशों में चाव से देखे जाते हैं।

सार्वभौमीकरण और हिंदी

नब्बे के दशक के उपरांत जब उदारीकरण व सार्वभौमीकरण अर्थात लिबरलाइज़ेशन एवं ग्लोबलाइज़ेशन का दौर भारत में चला तब ज़्यादातर विचारकों का मत था कि ग्लोबलाइज़ेशन से भारत के आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य में आमूलचूल परिवर्तन हो जाएगा। आर्थिक दृष्टि से विदेशी पूँजीवाद फिर से शुरू हो जाएगा तथा हमारा सांस्कृतिक ताना-बाना ध्वस्त होकर पूरी तरह विदेशी संस्कृति हम पर हावी हो जाएगी व हमारी भारतीय भाषाएँ तथा विशेषत: हिंदी विलुप्त प्राय: हो जाएगी। हिंदी व भारतीय भाषाओं का स्थान अंग्रेज़ी ले लेगी। परंतु यह हर्ष का विषय है कि ऐसा कुछ नहीं हुआ जैसा कि पुर्वानुमान लगाया जा रहा था। यह सत्य सिद्ध नहीं हुआ... !

ऐसा ही चिंतन उस दौर में भी आया था जब भारत में कंप्यूटरों का आगमन हुआ था। अर्थात 1980 के दशक में यह चिंतन चलने लगा था और लोगों को यही भय सता रहा था परंतु भारत में भाषा प्रौद्योगिकी ने काफ़ी विकास किया है तथा आज हम सब काम हिंदी में व क्षेत्रीय भाषाओं में करने में सक्षम हैं। सोशल मीडिया में भी हिंदी काफ़ी तेज़ी से आगे बढ़ रही है।

अंग्रेज़ी परस्त मानसिकता व यथार्थ

यह जानकर दुख होता है कि आधुनिकता के इस दौर में भारतीय जन मानस को कुछ नफ़ासत पसंद और अंग्रेज़ी मानसिकता के लोग यह कह कर भ्रमित कर कर रहे हैं कि अब बिना अंग्रेज़ी जाने भारतीयों का कोई भविष्य नहीं है। यह नितांत हास्यास्पद है तथा यथार्थ इसके विपरित है। इस दौर में हिंदी भाषा का इतना विकास हुआ कि स्टार चैनल के रूर्पट मार्डोक को अपने स्टार कार्यक्रमों की टी.आर.पी. बढ़ाने के लिए हिंदी में लाना पड़ा। हिंदी का वर्चस्व निरंतर बढ़ता ही जा रहा है तथा आज वह उस मुकाम पर पहुँच गई है जहाँ उसकी लोकप्रियता और ग्राह्यता को कोई अन्य भाषा चुनौती नहीं दे सकती है। हिंदी आज विश्व में मनोरंजन की दुनिया में सबसे आगे है। यही कारण है कि सोनी, ज़ी टी.वी., डिस्कवरी चैनल, विदेशी 'कार्टून कार्यक्रम' भी भारत में व हमारे पड़ोसी देशों में हिंदी में प्रसारित होने लगे हैं।

भारत की सांस्कृतिक विरासत और हिंदी

भारत की सांस्कृतिक विरासत इतनी व्यापक है कि विश्व में इसकी तुलना किसी अन्य सभ्यता और संस्कृति से नहीं की जा सकती है। आपको मालूम ही होगा कि भारतीय वेद अर्थात ऋग्वेद को अंतरराष्ट्रीय ख्याति एवं विश्व थीती (धरोहर) का दर्जा तो पहले ही मिल चुका था। अब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर 175 देशों के समर्थन से संयुक्त राष्ट्र संघ ने 21 जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मान्यता दी है। 10 जनवरी को संसार के लगभग सभी देशों में 'विश्व हिंदी दिवस' मनाया जाता है। भारत और हिंदी दोनों का वर्चस्व विश्व स्तर पर दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। यह हमारे लिए गर्व का विषय है।

हिंदी की लोकप्रियता : आर्थिक एवं राजनैतिक प्रभाव

हिंदी संख्या बल की दृष्टि से सबसे अधिक है परंतु संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषाओं में इसको स्थान नहीं मिल पाया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि आर्थिक शक्ति और राजनैतिक शक्ति हिंदी से प्रत्यक्षत: नहीं जुड़ी थी जबकि भारत में परोक्ष रूप में हिंदी की राजनैतिक शक्ति व आर्थिक शक्ति का आधार पहले से ही रही है। आज स्थितियाँ बेहतर हो गई हैं। हिंदी के पास प्रत्यक्षत: राजनैतिक शक्ति भी है और आर्थिक शक्ति भी... !!

अत: इस परिदृश्य में हिंदी की लोकप्रियता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है।

विश्व में हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण का प्रभाव

विश्व में हिंदी की लोकप्रियता को देखते हुए विश्व के 150 से अधिक देशों में हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण के अनेक शिक्षण माध्यम शुरू हो गए हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि विश्व में हिंदी के प्रति अधिक झुकाव है। हिंदी अध्यापन अनेक हिंदी संघों तथा संस्थाओं द्वारा चलाया जा रहा है। केंद्र सरकार द्वारा भी हिंदी अध्ययन हेतु हिंदी शिक्षण योजना आदि चलाई जा रही है। विश्व के अनेक विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन तेज़ी से चल रहा है। भारत में केंद्र सरकार के प्रयासों व स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रयासों से हिंदी सीखनेवालों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। इसे निम्नलिखित तालिका से समझा जा सकता है :

क्षेत्र	कुल जनसंख्या	हिंदी जाननेवाले	प्रतिशत
क-क्षेत्र (हिंदी भाषी राज्य)	61,72,26,843	61,72,26,843	100 %
ख-क्षेत्र (हिंदी भाषा और प्रांतीय भाषा का समान स्तर)	20,82,78,328	18,74,50,495	90 %
ग-क्षेत्र (हिंदीतर भाषी राज्य)	44,8,685,821	20,74,54,095	46.24 %
कुल-संपूर्ण भारत	1,27,41,90,992	1,01,21,31,433	79.43 %
भारत को छोड़कर अन्य देश	5,94,64,09,008	28,64,86,562	4.81 %
विश्व की कुल जनसंख्या	7,22,06,00,000	1,29,86,17,995	17.98 %
पूर्णांकित	7,22,06,00,000	1,30,00,00,000	18 %

स्रोत: डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

विस्तृत जानकारी के लिए अनुबंध 1 व 2 देखें

मंदारिन बनाम हिंदी

संपूर्ण विश्व में यह प्रचारित किया जाता है कि मंदारिन सबसे अधिक बोली जानेवाली भाषा है जबकि सत्य यह है कि संपूर्ण विश्व में मंदारिन जाननेवाले 2015 के आँकड़ों के अनुसार सिर्फ़ 1110 मिलियन हैं। चीन की सरकारी भाषा मंदारिन है तथा चीन में कुल जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग ही मंदारिन जानता है। चीन की वर्तमान जनसंख्या 1360 मिलियन है। इसका अर्थ यह है कि चीन में मंदारिन जाननेवाले केवल 950 मिलियन हैं व 150 मिलियन अन्य देशों में हैं। यह ध्यातव्य है कि यह संख्या सन् 2012 में 1050 मिलियन थी। अत: इसमें 50 मिलियन की वृद्धि हुई है। हिंदी की लोकप्रियता व इसके अग्रणी होने की स्थिति इससे भी आँकी जा सकती है कि वर्ष 2012 में इसे जाननेवालों की संख्या 1200 मिलियन थी। यह 2015 में प्रचुर बढ़ोतरी से यह 1300 मिलियन हो गई अर्थात मंदारिन से 200 मिलियन ज़्यादा। अंग्रेज़ी को तो सभी स्रोतों से सभी बोलियों और प्रवीणता के विभिन्न स्तरों को जोड़ने पर भी यह आँकड़ा अधिकतम 1000 मिलियन तक बड़ी मुश्किल से पहुँचता है।

हिंदी के संबंध में एक साधारण सी गणना नीचे दी जा रही है—

1 भारत में हिंदी जाननेवाले	1012 मिलियन
2 पाकिस्तान में हिंदी जाननेवाले	165 मिलियन
3 बांग्लादेश में हिंदी जाननेवाले	70 मिलियन
4 नेपाल में हिंदी जाननेवाले	25 मिलियन
उपरोक्त का योग	1272 मिलियन
5 विश्व के अन्य राष्ट्रों में हिंदी जाननेवाले	28 मिलियन
संपूर्ण विश्व में हिंदी जाननेवाले	1300 मिलियन

स्रोत: डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015

(अनुमानित आँकड़े)

युवा भारत की आत्मा और पहचान है हिंदी

आनेवाले समय में हमारा युवा भारत विश्व की महाशक्ति बनने जा रहा है। इसलिए हिंदी के प्रति विश्व स्तर पर लोकप्रियता में निरंतर बढ़ोतरी हो रही है। इस प्रवृत्ति से सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि निकट भविष्य में हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषा के रूप में भव्य महत्व मिलेगा व यह 'विश्व भाषा' के पद पर भी आसीन होगी। भारत में तो हर भारतीयों के दिल और आत्मा में इसको स्वीकार्यता मिल चुकी है। 'हिंदी विरोध' बीते कल की बात हो चुकी है। समस्त दक्षिण भारत में हिंदी धीरे-धीरे संपर्क की भाषा का ध्वज धारण किए आगे बढ़ती जा रही है। यह आनेवाले समय का संकेत है। धार्मिक स्थलों, पर्यटन स्थलों पर तो हिंदी पहले से ही लोकप्रिय थी। अब हिंदी, उद्योग, व्यापार, शिक्षा एवं मनोरंजन के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण स्थान ले चुकी है। भारत की युवा पीढ़ी की पसंदीदा भाषा हिंदी ही है। आज भारत की युवा पीढ़ी भाषा के मामले में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाती है। अत: यह दृष्टिकोण हिंदी की लोकप्रियता बढ़ाने में और भी अधिक सहायक होगा।

संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषाएँ

संयुक्त राष्ट्र संघ के गठन के समय चीनी, अंग्रेज़ी, फ्रेंच, रूसी एवं स्पेनीश ही अधिकृत भाषाएँ थीं। 18 दिसंबर, 1973 में इसमें अरबी भाषा भी जोड़ दी गई। इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ में 6 अधिकृत भाषाएँ हो गई।

यह बड़े दुख की बात है कि विश्व के सबसे बड़े गणतंत्र की भाषा हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थान नहीं दिया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषाओं पर एक नज़र डालें :

(संख्या मिलियन में)

क्र.सं.	भाषा	मातृ भाषा	अर्जित भाषा	कुल भाषा भाषी
1.	अरबी	235	225	460
2.	चीनी	950	150	1100
3.	अंग्रेज़ी	350	650	1000
4.	फ्रेंच	70	60	130
5.	रूसी	148	112	260
6.	स्पेनिश	332	63	395
	कुल	**2035**	**1260**	**3345**
हिंदी की स्थिति				
	हिंदी	619	681	1300

स्रोत: डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषाओं का औचित्य

इन भाषाओं को अधिकृत किए जाने के पीछे तर्क यह है कि इनको प्रथम भाषा (मातृ भाषा), द्वितीय भाषा के रूप में बोलनेवालों की संख्या 3.34 बिलियन है। यह संपूर्ण विश्व की जनसंख्या का लगभग आधा हिस्सा है तथा संसार की आधे से अधिक राष्ट्रों में ये भाषाएँ प्रचलित हैं। यदि इन भाषाओं में हिंदी भी जोड़ दी जाए तो यह संख्या 4.64 बिलियन हो जाएगी तथा यह विश्व की संपूर्ण आबादी के 64.26 प्रतिशत भाग का प्रतिनिधित्व करेगी। विश्व की प्रमुख भाषाओं और भाषा-भाषियों की संख्या निम्नवत है :

श्रेणी Rank	भाषा Language	भाषा–भाषी Speakers	विश्व जनसंख्या का % % of the world population
1.	हिंदी Hindi	1300	18.00
2.	चीनी Mandarin	1100	15.23
3.	अंग्रेज़ी English	1000	13.85
4.	अरबी Arabic	460	6.37
5.	स्पेनीश Spanish	395	5.47
6.	रुसी Russian	260	3.60
7.	बंगाली Bangla	256	3.54
8.	पुर्तगाली Portuguese	200	2.77
9.	मलय Malay	190	2.63
10.	फ्रेंच French	130	1.80
11.	जापानी Japanese	126	1.74
12.	ज़र्मन German	120	1.66
13.	पंजाबी Punjabi	112	1.55
14.	मराठी Marathi	110	1.55
15.	तेलुगु Telugu	85	1.17
16.	तमिल Tamil	83	1.14
17.	वू (शंघाई) Wu	80	1.10
18.	वियतनामी Vietnamese	73	1.01
19.	कोरियाई Korean	70	0.96
20.	इटेलियन Italian	68	1.94
21.	थाई Thai	66	0.91
22.	कैंटोनी Cantonese	60	0.83
23.	तुर्की Turkish	55	0.76
24.	गुजराती Gujarati	52	0.72
25.	कन्नड़ Kannada	50	0.69
26.	हौसा Hausa (Afro-Asiatic)	50	0.69
27.	मिन नाम Min Nan	48	0.66
28.	पोलिश Polish	45	0.62
29.	फ़ारसी Persian	44	0.60
30.	भोजपुरी Bhojpuri	44	0.60
31.	बर्मी Burmese	43	0.59
32.	अवधी Awadhi	42	0.58
33.	हौसा Hausa (Afro)	42	0.58
34.	यूक्रेन Ukrainian	40	0.55
35.	जियांग Xiang	39	0.54
36.	मलयालम Malayalam	38	0.52
37.	उड़िया Oriya	36	0.49
38.	मैथिली Maithili	36	0.49
39.	अज़बेज़ानी Azarbaijani	32	0.44
40.	डच Dutch	30	0.41
41.	फ़िलिपिनो Filipino	29	0.40
42.	रोमेनियन Romanian	28	0.38
43.	राजस्थानी Rajasthani	28	0.38
44.	गन Gan (Hakka)	26	0.36
45.	सिंधी Sindhi	25	0.36
46.	लाओ Lao	25	0.34
47.	उज़बेक Uzbek	24	0.33
48.	योरूबा Yoruba	24	0.33
49.	बर्बर Berber	23	0.31
50.	छत्तीसगढ़ी Chhattisgarhi	22	0.30
51.	असमी Assamese	22	0.30
52.	अम्हारी Amharic	22	0.30
53.	सिंहली Sinhalese	20	0.27
54.	ओरमो Oromo	20	0.27
55.	सर्ब–क्रो Serbo-Croatian	19	0.26
56.	कुर्द Kurdish	19	0.26
57.	मलागासी Malagasy	19	0.26
58.	सेबुआनो Cebuano	18	0.24
59.	रंगपुरी Rangpuri	18	0.24
60.	खमेर Khmer	17	0.23

स्रोत : डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

निष्कर्ष

अब बारी हिंदी की है। विश्व के सबसे बड़े गणतंत्र की भाषा को संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषा का दर्जा मिलना ही चाहिए।

अनुबंध-1

भारत में हिंदी जाननेवालों की संख्या

संशोधित राज भाषा नियम के अनुसार 'क' क्षेत्र

क्र. सं.	राज्य/संघ शासित क्षेत्र	कुल जनसंख्या	हिंदी जाननेवाले	हिंदी जाननेवालों का %
1.	अंडमान एवं निकोबार	3,82,783	3,82,783	100
2.	बिहार	10,97,42,591	10,97,42,591	100
3.	छत्तीसगढ़	2,65,08,463	2,65,08,463	100
4.	दिल्ली	2,67,50,767	2,67,50,767	100
5.	हरियाणा	2,64,44,965	2,64,44,965	100
6.	हिमाचल प्रदेश	70,35,401	70,35,401	100
7.	झारखंड	3,33,13,459	3,33,13,459	100
8.	मध्य प्रदेश	7,60,70,288	7,60,70,288	100
9.	राजस्थान	7,20,55,927	7,20,55,927	100
10.	उत्तराखंड	1,00,53,951	1,00,53,951	100
11.	उत्तर प्रदेश	22,88,68,248	22,88,68,248	100
कुल:'क' क्षेत्र		**61,72,26,843**	**61,72,26,843**	**100%**
संशोधित राज भाषा नियम के अनुसार 'ख' क्षेत्र				
12.	चंडीगढ़	10,95,994	9,86,394	90
13.	दादर एवं नगर हवेली	3,77,138	3,39,424	90
14.	दमण एवं दीव	2,69,631	2,42,668	90
15.	गुजरात	6,30,89,998	5,67,80,998	90
16.	महाराष्ट्र	11,66,33,162	10,49,69,846	90
17.	पंजाब	2,68,12,405	2,41,31,165	90
कुल:'ख' क्षेत्र		**20,82,78,328**	**18,74,50,495**	**90%**

संशोधित राजभाषा नियम के अनुसार 'ग' क्षेत्र				
18.	आंध्र प्रदेश	8,80,98,809	4,40,49,405	50
19.	अरुणाचल प्रदेश	14,44,741	5,05,659	35
20.	असम	2,98,27,735	1,19,31,094	40
21.	गोवा	15,20,609	11,40,457	75
22.	जम्मू एवं कश्मीर	1,30,76,372	1,11,14,916	85
23.	कर्नाटक	6,08,37,239	3,04,18,620	50
24.	केरल	3,48,57,060	1,56,85,677	45
25.	लक्षद्वीप	66,006	19,802	30
26.	मणिपुर	28,30,843	12,73,879	45
27.	मेघालय	30,82,207	9,24,662	30
28.	मिज़ोरम	11,40,564	3,42,169	30
29.	नागालैंड	20,01,214	4,00,243	20
30.	उड़ीसा	3,99,34,980	2,19,64,239	55
31.	पांडिचेरी	12,44,242	2,48,848	20
32.	सिक्किम	6,33,072	3,79,843	60
33.	तमिलनाडु	6,98,45,516	1,39,69,103	20
34.	त्रिपुरा	37,96,228	11,38,868	30
35.	पश्चिम बंगाल	9,44,48,384	5,19,46,611	55
	कुल : 'ग' क्षेत्र	44,86,85,821	20,54,095	46.24
	कुल : क+ख+ग	1,27,41,90,992	1,01,21,31,433	79.43

अनुबंध-2

विश्व में हिंदी जाननेवालों की संख्या

क्र.सं.	देश	हिंदी जाननेवाले
1.	भारत	1012131433
2.	पाकिस्तान	165112311
3.	बांग्लादेश	70933178
4.	नेपल	25234117
5.	म्यांमार	3221134
6.	मलेशिया	2711212
7.	यूनाईटेड किंगडम	2532113

8.	अमेरिका	2212415
9.	दक्षिण अफ्रीका	1512111
10.	सऊदी अरब	1503216
11.	सऊदी अरब अमीरात	1431212
12.	कनाडा	1254123
13.	मॉरीशस	887634
14.	भूटान	864317
15.	फ़िजी	532126
16.	त्रिनिदाद टोबैगो	484311
17.	कुवैत	475166
18.	ओमान	465336
19.	गयाना	425125
20.	सिंगापुर	313779
21.	कतार	308083
22.	सूरीनाम	267244
23.	नीदरलैंड	265343
24.	बहरीन	264312
25.	थाइलैंड	174313
26.	केनिया	159135
27.	ऑस्ट्रेलिया	121677
28.	यमन	118116
29.	फ़िलीपीन	109307
30.	ज़र्मन	102010
31.	इटली	101301
32.	इंडोनेशिया	101122
33.	रीयूनियन (फ्रांस)	101110
34.	नाइजेरिया	98411
35.	श्री लंका	96333
36.	न्यू ज़ीलैंड	92234
37.	मेक्सिको	90012
38.	तंज़ानिया	90137

39.	ज़मैका	83100
40.	इज़रायल	75016
41.	फ्रांस	70180
42.	पुर्तगाल	62077
43.	हाँग-काँग	48069
44.	अफ़गानिस्तान	47170
45.	स्पेन	43103
46.	मोज़ांबीक	42210
47.	रुस	37310
48.	लीबिया	31213
49.	मैडागास्कर	29121
50.	युगांडा	28226
51.	बोट्स्वाना	26670
52.	चीन	25555
53.	पोलैंड	24666
54.	अर्जेंटीना	23522
55.	ज़ाम्बिया	22370
56.	जापान	21001
57.	स्विट्जरलैंड	19064
58.	स्वीडन	18/620
59.	नॉर्वे	17030
60.	कोरिया	16300
61.	ऑस्टिया	14404
62.	सेशेल्स	12711
63.	लेबनान	12572
64.	बेल्जियन	12639
65.	ब्रुनेई	11505
66.	मालदीव	10600
67.	ग्रीस	10313
68.	यूक्रेन	9108

69.	फ़िनलैंड	8562
70.	इक्काडोर	7571
71.	अंगोला	7299
72.	घाना	6567
73.	निकारागुआ	6052
74.	विएतनाम	6660
75.	वैनेज़ुएला	5976
76.	सूडान	5832
77.	सेंट लूसिया	5759
78.	प्युरटो रिको	5788
79.	जॉर्डन	5582
80.	पनामा	5472
81.	इजिप्ट	5399
82.	साइप्रस	5087
83.	दक्षिण कोरिया	3320
84.	डेनमार्क	3046
85.	ब्राज़ील	2579
86.	ताइवान	2525
87.	सीरिया	2430

88.	आयरलैंड	2306
89.	ज़िंबाब्वे	2223
90.	चेक गणतंत्र	2471
91.	कज़ाकिस्तान	1728
92.	सीरा लियोन	1510
93.	इथोपिया	1460
94.	वर्जिनिया	1482
95.	उज़बेकिस्तान	1444
96.	ईरान	1362
97.	चिली	1330
98.	कोंगो	1256
99.	बांग्लादेशी शरणार्थी	373214
100.	तिब्बती शरणार्थी	121690
101.	म्यांमार व अफ़गान शरणार्थी	101000
102.	शेष 135 देशों में	100000
	कुल हिंदी जाननेवाले	**1298617995**
	पूर्णांकित	1300000000
	विश्व की जनसंख्या	7220600000
	हिंदी जाननेवालों का %	18.00

स्रोत : डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

❐

कर्नाटक, भारत
jpn@corbank.co.in

11 ऑस्ट्रेलिया में हिंदी

• डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर

किसी कहानी की शुरुआत कब और कहाँ से होती है ? उसके पहले शब्द से ? पहले वाक्य से ? रचनाकार के मन में प्रेरणा आने के समय से, या फिर रचनाकार की जीवनी से, या उसके परिवार, समाज और संस्कृति के इतिहास से ? असल में कहना मुश्किल है और हर कहानी की कहानी भी अलग-अलग दृष्टि से बताई जा सकती है। मैं यह सब इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि जब हम ऑस्ट्रेलिया में हिंदी के बारे में बात करते हैं तो स्वाभाविक सा प्रश्न उठता है कि 'हम कहाँ से शुरू करें ?'

कहानी यहाँ से शुरू हो सकती है कि हाल में वैज्ञानिकों को डीएनए के आधार पर पता चला कि ऑस्ट्रेलिया में भारतीयों का आगमन साढ़े चार हज़ार साल पहले हुआ था। ऐसा नहीं कि दोनों महाद्वीपों के बीच आपसी संपर्क रहे हों लेकिन ऑस्ट्रेलियाई आदिवासियों के डीएनए में भारतीय डीएनए उस समय से ही मौजूद हैं। इस कहानी को लेकर इस साल ऑस्ट्रेलिया की एक विशिष्ट पत्रकार कुमुद मेरानी ने एक रेडियो कार्यक्रम बनाया जिसके लिए उनको 'साल की श्रेष्ठ पत्रकार' की उपाधि मिली। (http://www.indianlink.com.au/the-story-untold/) कुछ लोग कहेंगे कि यह तो एक पूर्व कथा मात्र है क्योंकि उस समय के लोग हिंदी भाषी तो नहीं रहे होंगे, चाहे वे हिंदुस्तान से ही क्यों न हों।

तो फिर कहानी कब से शुरू होगी ?

शायद जबसे अंग्रेज़ ऑस्ट्रेलिया में आने लगे ? ऐतिहासिक शोधकर्ताओं के अनुसार जब पहले पहल अंग्रेज़ों ने ऑस्ट्रेलिया की खोज की तो उनकी नावों में कार्यरत नाविकों में से कुछ भारतीय भी थे और ऑस्ट्रेलिया और तस्मानिया के बीच का स्ट्रैट, यानी 'बैस स्ट्रैट' की खोज किसी सिंह नामक नाविक ने की। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में ही कैदी और मज़दूर के रूप में भारतीय लोग ऑस्ट्रेलिया में आने लगे थे।

उनमें से कहाँ तक हिंदी-हिंदुस्तानी भाषी लोग थे, कहना मुश्किल है लेकिन लगता है कि उनमें हिंदुस्तानी और पंजाबी भाषी लोग काफ़ी थे। धीरे-धीरे भारत से आए ऊँटों के रखवालों की संख्या भी बढ़ने लगी क्योंकि ऑस्ट्रेलिया की केंद्रीय मरुभूमि में सफ़र करने के लिए अंग्रेज़ों ने भारतीय ऊँटवालों का सहारा लेना आवश्यक समझा। इनको ऑस्ट्रेलिया में 'अफ़गान' कहने लगे लेकिन असल में उन लोगों में पश्तून और सिख दोनों थे जो पश्चिमोत्तर भारत से आए थे।

हम भली-भाँति कल्पना कर सकते हैं कि उन ऊँटवालों के समूह में जब ऑस्ट्रेलिया के रेगिस्तान में गोधूलि के समय वे अपने कैंपों में आपस में बातें करते होंगे तो निश्चित रूप से हिंदी की ध्वनियाँ ऑस्ट्रेलिया के आसमान के नीचे गूंजती होंगी। इस इतिहास के बारे में आजकल काफ़ी शोध हो रहे हैं जैसे कि लेन केन्ना की किताबों में प्रकाशित हुए हैं। (http://www.theindiantelegraph.com.au/the-1st-fleets-indian-connection)

एक और कहानी भी इससे जुड़ी हुई है और वह है भारतीय फेरीवालों की कहानी। इनको ऑस्ट्रेलिया में 'हॉकर' कहते थे और उनमें अधिकांश सिख और चीनी लोग थे। मैं, वर्ष 2000 में कुछ लोगों के साथ चीनी मूल के लोगों के ऑस्ट्रेलियाई इतिहास के बारे में काम कर रहा था। एक दिन किसी ने मुझे एक बहुत ही पुरानी

जन्म–1956, कैंब्रिज, इंग्लैंड।

शिक्षा–सन् 1991 में आपने एस.ओ.ए.एस, लंदन विश्वविद्यालय से हिंदी के मध्यकालीन कवि, संत रविदास के जीवन एवं रचनाओं पर आधारित अपनी पीएचडी पूर्ण की है।

प्रकाशन–रविदास की जीवनी और कृतियाँ (1992), वेल्कुम संस्था में हिंदी हस्तलेखों की विवरणात्मक सूची (1996), दयाबाई की बानी (2004), चरणदास का भक्ति पदार्थ (2013), हिंदी जासूसी कहानियाँ (2015), मौखिक और हस्तलिखित परंपराओं में कबीर की बानी (2015)।

1996 से 2008 तक वे ला ट्रोब विश्वविद्यालय, मेलबॉर्न, ऑस्ट्रेलिया में हिंदी प्राध्यापक के रूप में कार्यरत रहे। 2008 से 2010 तक सिंगापुर में हिंदी कार्यक्रम की स्थापना की। संप्रति, ऑस्ट्रेलियाई राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में हिंदी प्राध्यापक हैं।

तस्वीर दिखाई और पूछा, ''यह किस तरह का चीनी आदमी हो सकता है ?'' असल में स्पष्ट था कि तस्वीर में कोई चीनी आदमी नहीं था बल्कि सिख था। अब इन हॉकरों के बारे में काफ़ी शोध हो रहे हैं जिनसे लोगों की समझ में यह स्पष्ट होने लगा है कि उस समय भारतीय फेरीवाले गाँव-गाँव घूमते थे और आम लोगों की ज़रूरतों का सामान बेचा करते थे।

(http://sikhchic.com/columnists/traders_of_goodwill_sikh_pioneers_of_australia)

शायद आप कहेंगे ये सब तो संभावनाएँ हैं। यह ऑस्ट्रेलिया में भारतीयों की कहानी है और शायद उस समय से हिंदुस्तानी, पंजाबी और उर्दू (भाषाएँ) ऑस्ट्रेलिया में प्रचलित हो गई हों लेकिन हिंदी की कहानी कब से शुरू होती है ?

इसको लेकर एक और कहानी है और वह जुड़ी है मेलबोर्न के राजकीय पुस्तकालय से। उसके संस्थापकों में से एक का नाम था रेडमंड बारी (1830-1880)। 1856 से उन्होंने ख़ुद ही पुस्तकालय के लिए पुस्तकों की खरीदारी की ज़िम्मेदारी ले ली और उनकी योजनाओं में से एक थी कि पुस्तकालय में भारत के बारे में एक खास संग्रह हो क्योंकि वे चाहते थे कि जैसे विकास कार्य अंग्रेज़ों के द्वारा भारत में किए जा रहे हैं वैसे ऑस्ट्रेलिया में भी किए जाएँ। इसलिए उस पुस्तकालय में बहुत सारी सामग्री हैं जो भारत से हैं। न सिर्फ़ पुस्तकें बल्कि भारत से लाए गए सामान जिनमें बंदूक, तलवार, सितार और वीणा जैसे विभिन्न प्रकार के संगीत वाद्य एवं औज़ार आदि शामिल थे। (Peter Friedlander, 2006, 'The State Library of Victoria's India Related Holdings', see:http:/arrow.latrobe.edu.au/store/3/4/5/5/2/public/slv.htm)

इस संग्रह में उन्नीसवीं शताब्दी की बहुत सारी किताबें हैं जो हिंदुस्तानी, उर्दू और हिंदी सिखाने के लिए हैं। मुख्यत: उनमें वे किताबें हैं जो भारत और इंग्लैंड में प्रकाशित हुईं जिनसे अंग्रेज़ों ने भारतीय भाषाएँ सीखीं लेकिन उनमें मैंने पाया कि कम-से-कम एक किताब ऐसी थी जो ऑस्ट्रेलिया के मेलबॉर्न शहर में लिखी गई और प्रकाशित हुई। उस लेखक का नाम 'सुखी नंद वर्मा' था और शीर्षक 'ए हैंडबुक ऑव इंग्लिश एंड हिंदुस्तानी' था। दुर्भाग्य से उसमें प्रकाशन का साल नहीं दिया गया था।

फ़िर भी उसमें ऐसे उदाहरण थे जिनसे स्पष्ट था कि यह उन लोगों के लिए लिखी गई थी जो ऑस्ट्रेलिया में हिंदी भाषी लोगों के साथ बात करना चाहते होंगे। एक उदाहरण है उसमें ग्रामीण क्षेत्रों में भेड़ों की देख-भाल के बारे में चर्चा की। इससे लगता है कि लेखक का लक्ष्य था कि उस पुस्तक को पढ़कर अंग्रेज़ लोग आम हिंदुस्तानियों के साथ बात कर सकें जो उस ज़माने में ऑस्ट्रेलिया में काम कर रहे थे। इस तरह से हम कह सकते हैं कि अगर हम हिंदी सीखने और सिखाने के बारे में बात करें तो ऑस्ट्रेलिया में हिंदी की पढ़ाई शायद डेढ़ सौ साल से हो रही है। ('A handbook of English and Hindustani, an easy introduction to the speaking of Hindustani : with an appendix of useful words in which English letters are adapted to the expression Hindustani words.' Sukhi Nand Verma, Melbourne : Atlas Printing n.d.).

इस शुभारंभ के बाद बीसवीं शताब्दी के पहले पचास वर्षों में ऑस्ट्रेलिया ने रंगभेद के आधार पर नीतियाँ अपनाईं जिनसे भारतीयों के लिए ऑस्ट्रेलिया आने के मौके लगभग बंद हो गए। यह संकीर्ण विचारधारा दूसरे विश्वयुद्ध के बाद धीरे-धीरे क्षीण होने लगी। आज़ादी के बाद जब भूमध्य सागर (मेडिटेरेनियन सागर) के आसपास के देशों के लोग ऑस्ट्रेलिया में बसने लगे थे तभी से एंग्लो-इंडियन लोग भी ऑस्ट्रेलिया में बसने लगे। यूनानी मूल के 'जिम मस्सेलोस', भारतीय इतिहास के जाने-माने ऑस्ट्रेलियाई विद्वान हैं। मस्सेलोस जी ने मुझे बताया कि पचास के दशक के अंत में जब वे युवा अवस्था में सिडनी विश्वविद्यालय में पढ़ते थे तब उन्होंने सिडनी के किसी यूनानी सिनेमाघर में 'मदर इंडिया' देखी जिसपर यूनानी, अरबी, अंग्रेज़ी और शायद फ्रांसीसी सब्टाइटल थे। फ़िर सिडनी में कभी-कभी विदेशी फ़िल्मों के उत्सव होते थे जिनमें हिंदी फ़िल्में भी होती थीं साथ ही उस ज़माने में उनके जैसे नौजवान ऑस्ट्रेलियाई समाज की संकीर्ण रूढ़ीवादी विचारधारा से मुक्त होने की अभिलाषा रखते थे और उनके लिए 'नेहरू जी का भारत' ऑस्ट्रेलिया के राजनीतिक विकास के क्षेत्र में आदर्श था। इसके बाद जिम साहब 1961 में पहली बार भारत गए और उस समय से सिडनी में भारतीय इतिहास की पढ़ाई का सिलसिला शुरू हुआ। (Jim Masselos : Two places and three times : fragments retrieved of India and Australia in the 1950s, 1960s and 1980s, Post Colonial Studies, 18.2.15, pp.133-144).

साथ ही साथ मेलबॉर्न में भी भारत और भारतीय संस्कृति के प्रति रुचि बढ़ने लगी और मेलबॉर्न विश्वविद्यालय में भारत सरकार

की ओर से एक 'नेहरू सेंटर फ़ॉर इंडियन स्टडीज़' की स्थापना हुई। मुझे अच्छी तरह से ज्ञात नहीं है कि इन संस्थाओं में कहाँ तक हिंदी की पढ़ाई हुई लेकिन कही-सुनी के अनुसार कुछ लोग हिंदी के नाम पर कुछ-न-कुछ तो सिखाते थे।

लेकिन शायद अगर हम सही मायनों में ऑस्ट्रेलिया में हिंदी की पढ़ाई की शुरुआत का समय निर्धारित करना चाहते हैं तो वह उस समय हुआ जब 1971 में ऑस्ट्रेलिया की राजधानी कैनबरा के ऑस्ट्रेलियाई राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में डॉक्टर मकग्रेगॉर ने वहाँ एक हिंदी कार्यक्रम स्थापित किया। फिर 1972 में रिचर्ड बार्ज़ ने हिंदी के अध्यापक का पद संभाला और तब से विश्वविद्यालय के स्तर पर हिंदी की पढ़ाई की परंपरा चली आ रही है।

सन् 1968 में मेलबॉर्न के ला ट्रोब विश्वविद्यालय में श्रीमती इंदिरा गांधी आईं और तभी से वहाँ भारत के बारे में अध्ययन हो रहा है और सन् 1990 के आसपास से हिंदी की पढ़ाई की परंपरा शुरू हुई और काफ़ी सालों तक श्रीमती सुधा जोशी ने वहाँ हिंदी सिखाई।

ऑस्ट्रेलिया में एक और बहुत ही महत्वपूर्ण बदलाव 2012 में आया। 1956 से ऑस्ट्रेलियाई स्कूलों में एशियाई भाषाओं की पढ़ाई में चार भाषाओं को प्राथमिकता दी गई थी—चीनी, जापानी, इंडोनेशियाई और कोरियाई भाषा। ऑस्ट्रेलियाई भारतीय और हिंदी संस्थाओं ने काफ़ी समय से यह माँग उठाई कि अब जब भारतीयों की आबादी चार-पाँच लाख होनेवाली है और हिंदी भाषी लोग काफ़ी मात्रा में यहाँ बसने लगे हैं तो हिंदी को भी राष्ट्रीय प्राथमिकता दी जाए।

असल में जैसे-जैसे ऑस्ट्रेलिया की रंगभेदी नीतियाँ ख़त्म होने लगीं वैसे-वैसे भारत जैसे देशों के लोग भी आकर ऑस्ट्रेलिया में बसने लगे थे। इसकी वजह से नब्बे के दशक में भारतीयों की आबादी यहाँ बढ़ने लगी और लोगों के मन में एक तीव्र भावना उत्पन्न हुई कि स्कूलों में भी हिंदी की पढ़ाई हो। सिडनी और मेलबॉर्न जैसे बड़े शहरों में हिंदी समाजों की स्थापना हुई और सिडनी में माला मेहता और मेलबॉर्न में दिनेश श्रीवास्तव जैसे कुछ लोगों ने हिंदी की स्कूली पढ़ाई के लिए कदम उठाए।

अब इन सारे कार्यों के फलस्वरूप ऑस्ट्रेलिया में हिंदी की स्थिति में काफ़ी बदलाव आया है। मेरे एक दोस्त योगेंद्र यादव सन् 1973 में कैनबरा आए, उनका कहना है कि उस समय कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि एक ऐसा दिन भी होगा कि कैनबरा जैसे छोटे शहर में भारतीयों की इतनी आबादी हो जाएगी। उस समय पूरे पूर्वी ऑस्ट्रेलिया में सिर्फ़ एक ही दुकान थी जिसमें दाल-मसाला वग़ैरह मिलते थे। वह भी कैनबरा से 300 किलोमीटर की दूरी पर सिडनी में थी लेकिन अब सभी शहरों में ढेर सारी भारतीय दुकानें हैं।

उस समय भी अगर हिंदी में रेडियो सुनना होता था तो श्रोताओं को आकाशवाणी या बी.बी.सी. सुनना पड़ता था लेकिन अब वर्षों से ऑस्ट्रेलिया की एस.बी.एस. रेडियो सेवा पर हिंदी के कार्यक्रम प्रसारित किए जा रहे हैं जो ख़ासतौर पर ऑस्ट्रेलियाई श्रोताओं के लिए ही प्रसारित होते हैं। कोई भी 40 वर्ष पहले यह कल्पना नहीं कर सकता था कि एक ऐसा दिन भी आएगा जब कैनबरा, मेलबॉर्न और सिडनी जैसे शहरों के सिनेमाघरों में हर हफ़्ते बॉलिवुड की नई-नई फ़िल्में चलेंगी और लोगों के घरों में आसानी से हिंदी सैटेलाइट चैनल उपलब्ध होंगी।

ऑस्ट्रेलिया में एक और बहुत ही महत्वपूर्ण बदलाव 2012 में आया। 1956 से ऑस्ट्रेलियाई स्कूलों में एशियाई भाषाओं की पढ़ाई में चार भाषाओं को प्राथमिकता दी गई थी—चीनी, जापानी, इंडोनेशियाई और कोरियाई भाषा। ऑस्ट्रेलियाई भारतीय और हिंदी संस्थाओं ने काफ़ी समय से यह माँग उठाई कि अब जब भारतीयों की आबादी चार-पाँच लाख होनेवाली है और हिंदी-भाषी लोग काफ़ी मात्रा में यहाँ बसने लगे हैं तो हिंदी को भी राष्ट्रीय प्राथमिकता दी जाए। यह बदलाव अंत में 2012 के सरकारी श्वेत पत्र 'दी एशियन सेंटुरी' में आया। (Peter Friedlander, 'Hindi after Henry' in Asian Currents, December 2012, pp. 4-6. See: http://asaa.asn.au/wp-content/uploads/2015/10/asian currents 12-12).

लेकिन मान्यता प्राप्त होने पर भी लोगों के सामने एक और समस्या आई कि किस तरह से यह प्रयास कार्यान्वित हो। असल में अगर किसी भी भाषा की पढ़ाई ऑस्ट्रेलियाई स्कूलों में हो तो उसके लिए सर्वप्रथम राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यक्रम तैयार होना चाहिए। इसके तहत केवल पाठ्यपुस्तक तैयार करना काफ़ी नहीं होता बल्कि संपूर्ण पाठ्यक्रम की एक विवरणात्मक रूपरेखा तैयार करना ज़रूरी है जो यह स्पष्ट करे कि पाठ्यक्रम में क्या-क्या होना चाहिए। यह कार्य 'अचारा' (Australian Curriculum, Assessment and

Reporting Authority) नामक संस्था के सौजन्य से किया जाता है। पिछले साल से ऑस्ट्रेलिया के मुख्य शहरों की हिंदी संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास से यह कार्य हो रहा है और 2015 के अक्टूबर में यह पाठ्यक्रम तैयार हो गया और आशा है कि साल के अंत तक उसे राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त हो जाएगी। (draft Hindi Curriculum at http://consultation.australiancurriculum.edu.au/)

अब आगे चलकर देखना पड़ेगा कि इन सभी ढांचों की मौजूदगी में किस तरह से अलग-अलग ऑस्ट्रेलियाई राज्यों में कहाँ तक स्कूलों में पढ़ाई होगी। इसमें सबसे ख़ास बात यह है कि कहाँ से उसके लिए पैसा मिले और कहाँ से और कैसे योग्य शिक्षकगण मिलें ताकि कार्यक्रम सफल हो।

उदाहरण के लिए मेलबॉर्न में रेंजबैंक प्राथमिक विद्यालय नामक सरकारी स्कूल है जो ऑस्ट्रेलिया का सबसे पहला सरकारी स्कूल है। अब वहाँ पर सभी बच्चे—चाहे वे भारतीय मूल के हों या नहीं, हिंदी पढ़ सकते हैं। इस स्कूल के प्रिंसिपल कोलिन एवरी का कहना है कि अगर उनके स्कूल को नमूने के तौर पर लिया जाए तो भविष्य में हिंदी पढ़नेवालों की संख्या बढ़ने की संभावना ज़्यादा हो जाएगी। (http://rangebankps.vic.edu.au/about/our-school/)

ऑस्ट्रेलिया की एक और समस्या है जिसको हम कहते हैं 'दूरी की तानाशाही' यानी देश तो बहुत बड़ा है लेकिन लोग एक-दूसरे से बहुत दूर-दूर रहते हैं और इसलिए गाँवों तक संसाधन पहुँचाना अति कठिन है। इस परिप्रेक्ष्य में दूरवर्ती शिक्षा एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इस क्षेत्र में 'विक्टोरियन स्कूल ऑव लैंग्वेजज़' के प्रिंसिपल फ्रैंक मेरलीनो की इच्छा है कि पूरे ऑस्ट्रेलिया की छोटी से बड़ी जगहों में हिंदी शिक्षण की सुविधा दूरवर्ती शिक्षा से उनके स्कूल की ओर से कराई जाए। (http://www.vsl.vic.edu.au/languages.aspx).

सिडनी जैसे घनी आबादीवाले क्षेत्रों में समस्या कुछ और है और वहाँ माला मेहता जी के अनुसार उनके स्कूल के ज़्यादा से ज़्यादा उपकेंद्र खोलने से सिडनी में हिंदी शिक्षा की माँग की आपूर्ति हो जाएगी। इसके साथ-साथ हिंदी में पत्रकारिता की परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए मेलबॉर्न में दिनेश श्रीवास्तव लगातर प्रयासरत हैं और सिडनी में रेखा राजवंशी जी हिंदी साहित्य के प्रोत्साहन में हमेशा सक्रिय हैं।

जहाँ तक विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई की बात की जाए तो इस समय भी मेलबॉर्न के ला ट्रोब विश्वविद्यालय में इअन वूलफ़ोर्ड हिंदी सिखाते हैं और कैनबरा के एएनयू में मैं हिंदी सिखा रहा हूँ। इसी साल मैंने हिंदी की एक राष्ट्रीय कार्यशाला भी कैनबरा में आयोजित की जिसमें देश भर के मुख्य हिंदी प्रचारकों ने भाग लिया।

इस समय यहाँ कोशिश भी की जा रही है कि यहाँ विश्वविद्यालय के स्तर का राष्ट्रीय दूरवर्ती हिंदी शिक्षा केंद्र बनाया जाए। मुझे आशा है कि आनेवाले सालों में हम वेब और स्काइप जैसे साधनों के सहारे से ऑस्ट्रेलिया की 'दूरी की तानाशाही' की समस्या का मुकाबला कर लेंगे।

जैसे शुरू में मैंने कहा कि किसी कहानी की शुरुआत की खोज मुश्किल होती है वैसे लेख के अंत में मुझे कहना पड़ेगा कि शायद मैं ऑस्ट्रेलिया में हिंदी की शुरुआत को ठीक-ठीक नहीं बता पाया। इसके बावजूद मुझे विश्वास है कि ऑस्ट्रेलिया में हिंदी की कहानी की समाप्ति नहीं होगी क्योंकि हिंदी आज ऑस्ट्रेलियाई सभ्यता का एक अभिन्न अंग बन चुकी है।

अंत में मुझे कहना है कि इस लेख को लिखते हुए मेरे मन में एक बात स्पष्ट हुई कि उन्नीसवीं शताब्दी में रेडमंड बारी जैसे महान लोगों को आर्थिक विकास के लिए भारत से प्रेरणा मिली थी और बीसवीं शताब्दी में जिम मस्सेलोस जैसे विद्वानों को भारत से विचारशीलता और राजनैतिक उदारता की प्रेरणा मिली। अब इक्कीसवीं शताब्दी में मेरी आशा है कि आनेवाली पीढ़ी के नौजवानों को भी भारत से प्रेरणा मिलेगी कि मानवता के विकास में हम एक-दूसरे से क्या सीख सकते हैं। निश्चित रूप से इस सांस्कृतिक आदान-प्रदान में हिंदी भी एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है क्योंकि हिंदी सीखने से ऑस्ट्रेलियाई लोग भारतीय संस्कृति की वास्तविक तह में पहुँच सकेंगे और ऑस्ट्रेलिया में बसे भारतीय मूल के लोग आनेवाली पीढ़ियों को भारतीय संस्कृति की धरोहर प्रदान कर सकेंगे।

कैनबेरा, ऑस्ट्रेलिया
peter.friedlandera@anu.edu.au

12 अमेरिका में हिंदी

• *श्रीमती निर्मला शुक्ल*

अमेरिका एक विशाल देश है और उसका हृदय भी विशाल है। यह देश यहाँ रहनेवाले प्रत्येक आप्रवासी नागरिक को धनोपार्जन और विद्योपार्जन के साथ-साथ अपनी भाषा, धर्म और संस्कृति के उत्थान के लिए कार्य करने की पूर्ण रूप से स्वतंत्रता प्रदान करता है। भाषा और संस्कृति का गहरा संबंध है। अपनी संस्कृति को सिर्फ़ अपनी भाषा द्वारा ही बचाई जा सकती है। हिंदी एक समृद्ध भाषा है और वह भारत की उच्च संस्कृति का द्योतक भी है। इसीलिए अमेरिकी-भारतीय अपने देश से दूर रहते हुए भी अपनी भाषा और संस्कृति पर ज़्यादा ही गर्व अनुभव करते हैं। प्राय: हिंदी-भाषी भारतीय (अमेरिकी) अपने घरों में तथा भारतीय मित्रों व संबंधियों के साथ हिंदी में ही वार्तालाप करना पसंद करते हैं। विश्व में सबसे ज़्यादा बोली जानेवाली भाषा में हिंदी भाषा का स्थान चौथा है।

जन्म–रायपुर, छत्तीसगढ़।
शिक्षा–एम.ए. हिंदी, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार तथा कंप्यूटर साइंस, कॉलेज ऑव अलामेडा, कैलिफोर्निया।
प्रकाशन–'स्मृतियाँ'–एक काव्य संग्रह, 'प्रवासिनी के बोल' नामक कविता संग्रह में कविताएँ, 'विश्वा', 'विश्व विवेक', 'हिंदी जगत्', 'मानस-भारती', 'ब्रह्मवाणी' एवं 'विवेक-ज्योति' में–आलेख, कहानियाँ, यात्रा-वर्णन एवं कविताएँ।
पुरस्कार–हिंदी विभाग, रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर द्वारा 'छत्तीसगढ़ रत्न सम्मान'।
संप्रति–सेवा-निवृत्त सीनियर सॉफ्टवेयर इंजीनियर, सिस्को सिस्टम्स, सैन होज़े, कैलिफोर्निया; अध्यक्ष, विश्व हिंदी न्यास, कैलिफ़ोर्निया शाखा; सहायक संपादक हिंदी जगत्, संपादक 'ब्रह्मवाणी'।

सन् 1960 के दशक तक जो भारतीय यहाँ आए, वे अधिकतर विद्याध्ययन या कुछ ट्रेनिंग के लिए आए। वे पढ़ाई समाप्त होते ही भारत वापस चले जाते थे क्योंकि उन दिनों भारतीयों के लिए इमिग्रेशन के नियम उतने उदारपूर्ण नहीं थे जितने कि यूरोपीय लोगों के लिए थे परंतु 1960 के दशक में राष्ट्रपति जॉन्सन ने इमिग्रेशन नियमों में कुछ आमूल परिवर्तन लाए जिसके कारण संसार के सभी देशों के लोगों के लिए एक सा नियम हो गया। तभी से भारतीय आप्रवासियों का अमेरिका में आना प्रारंभ हुआ। भारतीय आप्रवासियों को पाँच वर्षों में जैसे ही अमेरिकी नागरिकता प्राप्त हो जाती है वैसे ही वे अपने माता-पिता और भाई-बहनों को भी अमेरिका बुला लेते हैं। इस तरह भारतीयों की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती गई। जैसे-जैसे अमेरिका में कंप्यूटर उद्योग का विकास हुआ वैसे-वैसे भारतीय इंजीनियरों और वैज्ञानिकों की माँग बढ़ी और भारत से बहुत मात्रा में भारतीय अपने परिवार सहित यहाँ आए।

2010 के दशक तक अमेरिका में भारतीयों की संख्या लगभग 34 लाख हो गई है। जैसे-जैसे भारतीयों की संख्या बढ़ी वैसे-वैसे हिंदी भाषियों की संख्या भी बढ़ी है। प्राय: सभी बड़े शहरों में हिंदू मंदिरों का निर्माण हुआ और अनेक भारतीय संस्थाओं की स्थापना हुई जहाँ बच्चों को हिंदी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाएँ—गुजराती, पंजाबी, मराठी, तेलुगु आदि पढ़ाई जाती हैं। उन शैक्षणिक संस्थाओं में पढ़ाई जानेवाली भारतीय भाषाओं को शासन द्वारा विदेशी भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। कुछ प्राथमिक पाठशालाओं में भी हिंदी पढ़ाई जाती है। अमेरिका के करीब 100 विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में हिंदी पढ़ाई जा रही है। इतना ही नहीं यहाँ भारतीय संगीत-नृत्य, गायन व वादन की शिक्षा देने के लिए भी कक्षाएँ प्रारंभ हो गई हैं। स्थानीय सरकार कम्युनिटी पुस्तकालयों में नि:शुल्क पुस्तकें पढ़ने के लिए देती है। वहाँ हिंदी साहित्य पर नि:शुल्क किताबें और हिंदी सिनेमा की डी.वी.डी. भी प्राप्य हैं।

साधारणत: व्यावसायिक रूप से भारत से यहाँ संगीतकार, नाटककार, हास्य कलाकार व कविगण आते रहते हैं जो एक तरह से हिंदी को भी अपने साथ अमेरिका में रहनेवाले भारतीयों के लिए मनोरंजन स्वरूप लाते हैं। इससे हिंदी भाषा के प्रति रुचि और भी बढ़ती है। नई हिंदी फ़िल्में भी अमेरिका के बड़े शहरों में भारत से पहले ही दिखाई जाती हैं। हिंदी सिनेमा सिर्फ़ भारतीयों में ही नहीं, अपितु अमेरिका में रहनेवाले अन्य विदेशी भाषी लोगों जैसे अफ़गानी, रूसी, अरबी और ईरानी लोगों में भी लोकप्रिय हो गया है। भारत से

विभिन्न फ़िल्मी कलाकार भी आकर अपना कार्यक्रम करते हैं जिसे देखने सभी आयु व वर्ग के लोग उमड़ पड़ते हैं। संचार माध्यमों के आधुनिकीकरण ने भी अमेरिका में हिंदी शिक्षा के विस्तार को सहायता पहुँचाई है। भारत का समाचार भारतीय हिंदी और अंग्रेज़ी टी.वी. चैनलों—ज़ी टी.वी., टी.वी. एशिया, सोनी टी.वी., स्टार टी.वी. आदि से भी यहाँ प्राप्त होने लगा है। छोटे बच्चे भी हिंदी चैनल्स में कार्टून द्वारा धार्मिक कथाएँ देखते हैं। बच्चों को उनके प्रति इतनी रुचि उत्पन्न हो जाती है कि वे ध्यानमग्न होकर उन कार्यक्रमों को नियमित रूप से देखते हैं। इस तरह बचपन से ही वे हिंदी भाषा और अपनी संस्कृति से परिचित होने लगते हैं। भारतीय लोग अपने परिवार व मित्रों के साथ बैठकर घर में ही हिंदी सिनेमा व अन्य कार्यक्रम टी.वी. द्वारा देख लेते हैं। इस तरह मनोरंजन का साधन होने के सिवाय हिंदी टी.वी. अब हिंदी भाषा के प्रचार और प्रसार में एक तरह से परोक्ष रूप से योगदान देता है। आधुनिक तकनीकी उपकरण जैसे गूगल, फेसबुक, यू ट्यूब, इमेल आदि भी हिंदी के प्रचार और प्रसार में सहायक हैं। गूगल-ट्रांसलेट भी बड़े आसानी से इंग्लिश से हिंदी और हिंदी से इंग्लिश में अनुवाद कर देता है जो इंग्लिश या हिंदी सीखने में सहायक हो सकता है। आशा है अमेरिका में रहनेवाले भारतीय हिंदी सीखने में इसका लाभ उठाएँगे।

किसी भी भाषा को सीखने और समझने के लिए यह आवश्यक है कि उस भाषा का अभ्यास मौखिक रूप से किया जाए। इस संबंध में मेरा अपना एक अनुभव है। मैं एक कंप्यूटर कंपनी में सॉफ़्टवेयर-इंजीनियर के पद पर काम करती थी। वहाँ एक गुजराती महिला जो उसी कंपनी में सॉफ़्टवेयर-इंजीनियर के पद पर काम करने आई, मुंबई में पली-बढ़ी थी। वह हिंदी थोड़ी-थोड़ी जानती थी पर उसे बोलने का अभ्यास नहीं था। उससे परिचय होने के बाद जब हम आपस में मिलते थे तब हम इंग्लिश में ही बातें किया करते थे क्योंकि मुझे पता था कि वह हिंदी नहीं बोल सकती थी। जब उससे घनिष्ठता बढ़ी तो एक दिन उसने मुझसे आग्रह किया कि हम आपस में हिंदी में ही बातें करें। उसकी तीव्र इच्छा थी कि वह हिंदी बोलने का मेरे साथ अभ्यास करे और हिंदी अच्छी तरह बोल सके। हमने एक ही कंपनी में लगभग सात वर्ष काम किया और हिंदी में ही बातें करते थे। प्रारंभ में उसे कठिनाई होती थी। कभी इंग्लिश और कभी गुजराती मिलाकर हिंदी बोलती थी पर वह धीरे-धीरे अच्छी तरह हिंदी बोलने लगी। आज हम अच्छे मित्र बन गए हैं। अब वह सिर्फ़ मुझसे ही नहीं अन्य हिंदी भाषी लोगों के साथ भी हिंदी में ही बातें करना पसंद करती है और अपनी हिंदी सीखने का श्रेय मुझे देने से नहीं चूकती।

2006 से पहले विदेशी भाषा की सूची में केवल स्पेनिश, इटालियन, फ्रेंच और जर्मन भाषाओं को विदेशी भाषा की श्रेणी में रखा गया था। उसके पश्चात अमेरिकी शासन ने हिंदी राष्ट्रीय सुरक्षा और वाणिज्य की दृष्टि से हिंदी को महत्वपूर्ण विदेशी भाषाओं के साथ सम्मिलित किया। अमेरिकी सरकार की उस नीति का लाभ यह हुआ कि हिंदी को एक विशेष विदेशी भाषा के रूप में मान्यता मिल गई और अमेरिका की विदेशी भाषा अनुसंधान संस्थाओं द्वारा हिंदी शिक्षा का विशेष प्रयास प्रारंभ हुआ।

हिंदी सीखने व बोलने में फ़िल्मी गाने या नाटक के वार्तालापों का भी मौखिक उपयोग कर आज अमेरिका की भारतीय पीढ़ी हिंदी सीखने का प्रयास करने लगी है विशेषकर गाना गाने व सीखनेवालों को शब्दों का उचित उच्चारण करना आवश्यक होता है तथा इससे उनके शब्द ज्ञान में भी वृद्धि होती है। अमेरिका में भारतीयों के बीच हिंदी भाषा का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। इस दिशा में बहुत से हिंदी के शुभचिंतक भी प्रयत्नशील हैं। अधिकांश हिंदी-भाषी माता-पिता अपने बच्चों को हिंदी सीखने व बोलने के लिए प्रेरित करते हैं।

अमेरिका में हमने देखा है कि भारतीय मूल के विद्यार्थी हाई स्कूल तक अपनी भाषा व संस्कृति सीखने में विशेष ध्यान नहीं देते पर कॉलेज पहुँचने पर उन लोगों में अपनी संस्कृति के प्रति विशेष आकर्षण और गर्व का अनुभव होने लगता है। यदि कॉलेज में उन्हें अपनी मातृ भाषा उपलब्ध नहीं है तो वे हिंदी सीखना ही पसंद करते हैं।

2006 से पहले विदेशी भाषा की सूची में केवल स्पेनिश, इटालियन, फ्रेंच और जर्मन भाषाओं को विदेशी भाषा की श्रेणी में रखा गया था। उसके पश्चात अमेरिकी शासन ने हिंदी राष्ट्रीय सुरक्षा और वाणिज्य की दृष्टि से हिंदी को महत्वपूर्ण विदेशी भाषाओं के साथ सम्मिलित किया। अमेरिकी सरकार की उस नीति का लाभ यह हुआ कि हिंदी को एक विशेष विदेशी भाषा के रूप में मान्यता

मिल गई और अमेरिका की विदेशी भाषा अनुसंधान संस्थाओं द्वारा हिंदी शिक्षा का विशेष प्रयास प्रारंभ हुआ।

संस्कृत के साथ हिंदी भाषा की शिक्षा पिछले 50 वर्षों से हार्वर्ड, कोलंबिया, प्रिंसटन, यूनिवर्सिटी ऑव कैलिफ़ोर्निया, बर्कले आदि सुप्रसिद्ध विश्वविद्यालयों में दी जा रही है। हिंदी-भारतीय संस्कृति की विश्व में उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए पेन्सिल्वेनिया विश्वविद्यालय के व्हार्टन बिज़िनेस कॉलेज में एम.बी.ए. के कार्यक्रम में हिंदी को सम्मिलित किया गया है।

हिंदी साहित्य में अमेरिका के भारतीयों का जो योगदान हो रहा है वह अमेरिकी प्रवासी हिंदी साहित्य के नाम से जाना जाता है। यहाँ अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति, विश्व हिंदी न्यास और विश्व हिंदी समिति नामक तीन हिंदी संस्थाएँ हैं जो भारतीय संस्कृति, भाषा तथा साहित्य के विकास के लिए अनेक वर्षों से कार्य कर रही हैं। ये संस्थाएँ 'विश्वा', 'हिंदी जगत', 'विज्ञान प्रकाश', 'सौरभ' आदि त्रैमासिक पत्रिकाएँ निकालती हैं जिनमें प्राय: कहानियाँ, लेख एवं कविताएँ प्रकाशित होती रहती हैं। भारतीय विद्या भवन और चिन्मय मिशन भी हिंदी के प्रचार-प्रसार में सक्रिय हैं। अमेरिका में कविता, कहानी और उपन्यास लिखनेवाले भारतीयों का बाहुल्य है। यहाँ के हिंदी साहित्य में निबंध, कहानी-संग्रह, काव्य-संग्रह, संस्मरण, नाटक, आत्मकथा और यात्रा-वर्णन भी सम्मिलित हैं। अब तक यहाँ के भारतीय साहित्यकारों के 50 से भी ज़्यादा कविता-संग्रह छप चुके हैं।

अमेरिका में हिंदी से जुड़ी कुछ साहित्यिक प्रतिभाएँ जैसे (स्व.) प्रो. रामदास चौधरी, डॉ. वेदप्रकाश बटुक, डॉ. गुलाब खंडेलवाल, डॉ. सुषम बेदी, डॉ. भूदेव शर्मा, डॉ. विजयकुमार मेहता, डॉ. श्याम नारायण शुक्ल, डॉ. इला प्रसाद एवं डॉ. अंजना संधीर आदि ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

भारतीय आप्रवासियों के लिए अमेरिका का द्वार खुले अर्ध शताब्दी से अधिक समय हो गया है। इस अवधि में यहाँ अब तक दो नई पीढ़ियाँ आ गई हैं। अब देखना यह होगा कि जिस तरह पहली पीढ़ी को अपनी भाषा को बचाए रखने की चिंता थी वैसी नई पीढ़ियों को रहेगी या नहीं। यह समय ही बता पाएगा। यहाँ वह साहित्यिक वातावरण नहीं बन पाता जो भारत में है। यहाँ भारतीय सभी जगह पाठशालाओं-कॉलेजों, कार्यालयों व सामाजिक संस्थाओं में अंग्रेज़ी से ही घिरे रहते हैं। यहाँ की जीवन-गति इतनी तीव्र है कि वे सवेरे से संध्या तक जीविकोपार्जन में ही लगे रहते हैं। सप्ताहांत के दो दिन का अवकाश घर और परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति में ही लग जाती है। पहली पीढ़ी के भारतीय अधिकतर भारतीयों के बीच उठते-बैठते थे। यहाँ के पले-बढ़े भारतीय अपने अमेरिकी मित्रों और सहकर्मियों के साथ ज़्यादा सामाजिक दायित्व निभाते हैं। अत: वे हिंदी के प्रति वैसा दायित्व नहीं निभा सकते जैसा हमारी पहली आप्रवासी पीढ़ी ने निभाया था। इसलिए यह देखना होगा कि भविष्य में हिंदी किस मंज़िल पर पहुँचती है। ❑

फ्रीमोंट, कैलिफ़ोर्निया
nirmalashukla@comcast.net

13 दक्षिण भारतीय राज्यों में हिंदी का विकास

• डॉ. लालसा यादव

हिंदी-भाषी राज्यों में हिंदी पढ़ना और समझना सामान्य बात है किंतु जिन प्रदेशों की भाषा हिंदी या उससे जुड़ी बोलियाँ नहीं हैं, वहाँ हिंदी की स्थिति थोड़ी दयनीय भले है पर वहाँ भी तमाम सरकारी, गैर सरकारी संस्थाएँ इसके प्रचार-प्रसार में लगी हैं। वैसे प्रत्येक भाषा की अपनी निजी अस्मिता एवं प्रकृति होती है जो उसके बोलनेवालों के भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश पर निर्भर करती है। हिंदी भी भारतीय जीवन एवं संस्कृति में जन्मी भाषा है। उसके मूल में संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंश के साथ विभिन्न भाषाओं की कमोबेश उपस्थिति है क्योंकि भाषा अतीत और वर्तमान दोनों से अपना स्वरूप गढ़ती है। भाषा का प्रश्न जातीय अस्मिता से भी जुड़ा होता है।

जन्म : 1 मई, 1964

डॉ. लालसा यादव ने इलाहाबाद विश्व-विद्यालय से स्नातक, हिंदी एवं संस्कृत में परास्नातक तथा हिंदी में डी.फिल. किया है। 'विद्यापति और उनका काव्य' नामक पुस्तक तथा कई पत्रिकओं में स्त्री विमर्श पर आधारित कहानियाँ प्रकाशित हैं।

इनको भाषा विज्ञान, प्राचीन-मध्य कालीन काव्य एवं स्त्री विमर्श की सैद्धांतिक अध्ययन में गहरी रुचि।

सितंबर, 1996 से इलाहाबाद विश्व-विद्यालय के हिंदी विभाग में अध्यापन कार्य से जुड़ी हैं। संप्रति वहीं पर एसोशिएट प्रोफ़ेसर के पद पर कार्यरत हैं।

हिंदी को सार्वदेशिक रूप प्रदान करने और राष्ट्र भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में अहिंदी भाषी मनीषियों का योगदान सराहनीय रहा है। नवजागरण काल में सुधार आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भाषा को काफ़ी बढ़ावा मिला। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद, बंगाल के आचार्य केशवचंद्र सेन, महर्षि अरविंद, महाराष्ट्र के बाल गंगाधर तिलक, मद्रास के रामगोपालाचार्य, गुजरात के महात्मा गांधी, बंगाल के नेता सुभाषचंद्र बोस आदि विचारक इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं।

दक्षिण भारत में हिंदी के प्रचार व प्रसार के लिए महात्मा गांधी ने अपने पुत्र देवदास गांधी को मद्रास भेजा था और वहाँ सन् 1918 में 'दक्षिण भारत प्रचार सभा' की स्थापना करवाई थी। स्वतंत्रता पूर्व ही हिंदी के महत्व को समझा जाने लगा था। इसके महत्व को देखते हुए मोतीलाल नेहरू ने अहिंदी भाषियों के लिए हिंदी पढ़ाने की पाठशाला का शिलान्यास नासिक में किया था। जवाहरलाल नेहरू ने हिंदी के विकास के लिए विद्वानों के परामर्श से अनेक योजनाएँ चलाई थीं जिनमें हिंदी में 'विश्वकोश', 'शब्द सागर' तथा सैकड़ों ज्ञान-विज्ञान के ग्रंथ लिखे जा सके।

हमारे देश में अधिकतर भारोपीय परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। इस दृष्टि से अन्य क्षेत्रीय भाषाएँ हिंदी की भगिनी हैं। इसके शब्द भंडार और इसकी विशालता को देखकर ही गुरुदेव रविंद्रनाथ ठाकुर ने लिखा होगा, ''भारतीय भाषाएँ नदियाँ हैं और हिंदी महानदी। हिंदी में यदि और नादियों का पानी आना बंद हो जाए तो हिंदी स्वयं सूख जाएगी और वे नदियाँ भी भरी पूरी नहीं रह सकेंगी।''

हिंदी में अस्सी प्रतिशत शब्द तत्सम शब्द हैं। इस आधार पर दक्षिण की चार भाषाओं में तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम के साथ हिंदी की समरसता हो जाती है क्योंकि ये भाषाएँ संस्कृत बहुल हैं। इसीलिए शंकराचार्य मलयालम, रामानुजाचार्य तमिल, माधवाचार्य कन्नड़ और बल्लभाचार्य तेलुगु भाषी होते हुए भी सबने संस्कृत को स्वीकार किया। इस तरह कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल में संस्कृत के साथ हिंदी भाषा का भी प्रचार-प्रसार एवं विकास हुआ।

कर्नाटक में राष्ट्र भाषा हिंदी का प्रचार बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में, स्वतंत्रता प्राप्ति आंदोलन के समय उपजा। ऐतिहासिकता की दृष्टि से इसके पूर्व कर्नाटक के बीजापुर में

आदिलशाही राज्य में दक्खिनी जन्म ले चुकी थी लेकिन उसमें राष्ट्र भाषा हिंदी में निहित भावनात्मक एकतावाली बात का अभाव था। आर्य समाजी श्री धर्मदेव 'विद्यावाचस्पति' ने 1923 ई. में कर्नाटक के प्रसिद्ध अंग्रेज़ी नेता ना.सु. हर्डीकर ने हिंदुस्तानी सेवा दल का संगठन कर कार्यकर्ताओं को हिंदी पढ़ाने का कार्य किया। सन् 1924 में यहाँ कांग्रेस अधिवेशन शुरू हुआ। महात्मा गांधी ने यहाँ राष्ट्र भाषा हिंदी प्रचार की बात दुहराई। इससे कर्नाटक में हिंदी के प्रचार ने ज़ोर पकड़ा। सदाशिवराव कर्नाड, श्री शिवराम शर्मा और देवदूत विद्यार्थी आदि के सहयोग से पश्चिमी तटवर्ती प्रदेश; मुख्यत: मैंगलूर हिंदी प्रचार का गढ़ बन गया। फलस्वरूप जुलाई 1927 में बेंगलूर में 'प्रथम अखिल कर्नाटक हिंदी-प्रचारक सम्मेलन' आयोजित हुआ। महामना पंडित मदनमोहन मालवीय ने 1.7.1927 को इस सम्मेलन का उद्घाटन किया जिसकी अध्यक्षता महात्मा गांधी ने की।

कर्नाटक में हिंदी का प्रचार व्यक्ति के स्तर पर होता रहा और संस्थाओं के माध्यम से भी। कर्नाटक में हिंदी प्रचार के लिए स्थापित सरकारी पंजीकृत पहली संस्था 'हिंदी प्रचार सभा' मैसूर है जिसकी स्थापना 1931 ई. में हुई। श्री निट्टूर श्रीनिवास राव के प्रयत्न से सन् 1935 ई. में अखिल कर्नाटक प्रांतीय हिंदी प्रचार सभा की स्थापना मैंगलूर में हुई। सन् 1937 में दक्षिण भारतीय हिंदी प्रचार सभा ने इसे अपनी प्रांतीय शाखा के रूप में स्वीकृति दी। इसी वर्ष धारवाड़ में कर्नाटक हिंदी विद्यालय खुला। श्री ना. नगप्पा दक्षिण के पहले व्यक्ति हैं, जिन्होंने हिंदी से एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।

मद्रास की दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, अपनी कुछ विशिष्ट भाषा नीति के कारण, दक्षिण भारतीय हिंदुस्तानी प्रचार सभा बन गई। सन् 1943 में डॉ. डी.के. भारद्वाज ने नागरी लिपि लिखित हिंदी प्रचार के लिए 'मैसूर हिंदी प्रचार परिषद' की स्थापना की। तब से आज तक यह संस्था हिंदी प्रचार का कार्य कर रही है। इसकी एक विशेषता यह है कि हिंदी के माध्यम से कन्नड़ पढ़ाती है।

दक्षिण भारत में हिंदी की परीक्षाओं में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की अधिक संख्या को देखते हुए गांधीजी ने विचार व्यक्त किया कि दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार के लिए स्वतंत्र महिला संगठन की आवश्यकता है। इससे प्रेरित होकर बंगलौर में श्रीमती मुत्तुबाई माने की अध्यक्षता में सन् 1952 में कर्नाटक महिला हिंदू सेवा समिति की स्थापना की गई। (केवल महिलाओं द्वारा ही यह संस्था चलाई जाती है) इस संस्था का निजी प्रेस है, प्रकाशन है जिसमें केवल महिलाएँ काम करती हैं। इनकी परीक्षाओं में स्त्री-पुरुष दोनों शामिल होते हैं। सन् 1984 से समिति ने हिंदी माध्यम से बी.एड. का पाठ्यक्रम भी तैयार किया है। हिंदी सेवी संस्थाओं में इसका उल्लेखनीय योगदान है।

मैसूर विश्वविद्यालय कर्नाटक का पहला विश्वविद्यालय है जिसने सबसे पहले पाठ्यक्रम में हिंदी को स्थान दिया। जुलाई सन् 1938 से इंटरमीडिएट में हिंदी पढ़ाने की सुविधा प्राप्त हो गई।

कर्नाटक में इस तरह हिंदी का प्रचार पर्याप्त मात्रा में हुआ है लेकिन राजभाषा की स्थिति को देखते हुए हिंदी के प्रचार-प्रसार में तेज़ी लाने की आवश्यकता है।

दक्षिणी प्रदेशों में आंध्र प्रदेश साहित्यिक व सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत संपन्न राज्य है। यद्यपि यह हिंदी साहित्य का विशिष्ट केंद्र नहीं रहा है तो भी यहाँ की सृजनात्मकता तथा हिंदी के साहित्यिक दाय और संपादन कार्य की श्रेष्ठता को नकारा नहीं जा सकता। सांस्कृतिक समरसता को प्रतिष्ठित करने के लिए 1918 से 1935 तक महात्मा गांधी के आह्वान पर प्रतिभाशाली लेखकों ने रचनात्मक योगदान देना शुरू किया। 1936 तक हिंदी का प्रचार आंध्र की शिक्षित जनता में किया गया। फलस्वरूप सरकार ने भी इनको मान्यता प्रदान कर विद्यालयों में भी हिंदी का प्रवेश कराया और सन् 1937 तक हिंदी अध्ययन-अध्यापन का विषय बन गई। 1949 तक हज़ारों युवकों को हिंदी पढ़ने और लिखने को प्रेरित किया गया। दिसंबर 1949 में यहाँ हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग का आयोजन चंद्रबली पांडेय की अध्यक्षता में हुआ था। उसी दौर में युवा प्रतिनिधि बदरीविशाल पित्ती द्वारा संचालित 'कल्पना' (15 अगस्त, 1949 से प्रारंभ) ने न केवल साहित्यिक आंदोलन के परीक्षण, विश्लेषण व

नवरचनाकारों के प्रस्तुतीकरण में ऐतिहासिक भूमिका निभाई बल्कि कला साहित्य, संस्कृति के विभिन्न पक्षों के विवादास्पद मुद्दों पर भी अखिल भारतीय चर्चाएँ पत्रिका के माध्यम से आयोजित कीं। 'अजंता' पत्रिका ने न केवल दक्षिण की संस्कृति को उजागर किया बल्कि उर्दू, हिंदी, संस्कृति व विदेशी साहित्य की श्रेष्ठ रचनाओं को भी अपनी पत्रिका के माध्यम से प्रस्तुत किया।

आंध्र प्रदेश में हिंदी में मौलिक रूप से सफलतापूर्वक लिखनेवालों में मोटूरि, सत्यनारायण, रमेश चौधुरी, आरिगपूडि, स्व. बालशौरि रेड्डी, इब्राहिम शरीफ़, राममूर्ति रेणु, सूर्यनारायण मूर्ति, डॉ. ए. पांडुरंग राव आदि प्रमुख हैं। इस बात का उल्लेख डॉ. भीमसेन निर्मल ने 'माध्यम' पत्रिका के आंध्र विशेषांक (मार्च-अप्रैल 1968) में किया था। आंध्र के कई नेताओं ने भी 42 के आंदोलन में जेल में रहते हुए हिंदी सीखी थी। स्व. अललूरि सत्यनारायण राजू ने जेल में रहते हुए हिंदी सीखकर महापंडित राहुल के 'बोल्गा से गंगा तक' का तेलुगु में अनुवाद किया है। इसी तरह से कवि शेषेंद्र शर्मा की लगभग सभी कृतियों का अनुवाद हिंदी जगत में उपलब्ध है।

आंध्र के दैनिक पत्रों में 'हिंदी मिलाप' 1945 से आज तक छप रहा है। हिंदी साप्ताहिक पत्रों में 'आर्य भानु' और 'संगम' उल्लेखनीय हैं। आंध्र प्रदेश शासन की ओर से कई वर्षों तक 'आंध्र प्रदेश' हिंदी मासिक छपता रहा। श्री एन.टी. रामाराव के जीवनी लेखक व उसके हिंदी शिक्षक वेभूरि राधाकृष्ण मूर्ति के संपादन काल में यह पत्रिका बंद हो गई। आंध्र प्रदेश की हिंदी पत्रकारिता के योगदान विषय पर विस्तृत अध्ययन की अपेक्षा है जो कि इस पर्चे की सीमाओं में संभव नहीं है।

उस्मानिया विश्वविद्यालय, केंद्रीय विश्वविद्यालय, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हिंदी प्रचार सभा (नामपल्ली), आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी, जनवादी लेखक संघ (आंध्र प्रदेश इकाई), इंडियन एयरलाइंस तथा रेलवे निलयम के अकादमिक साहित्यिक, सांस्कृतिक प्रयासों द्वारा हिंदी का प्रचार-प्रसार हुआ है। आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी शिविरों के आयोजनों, मौलिक कृतियों के प्रकाशनों, अनुदानों से शहरी ही नहीं, ग्रामीण अंचलों में बसे रचनाकारों को भी हिंदी पढ़ने और लिखने को प्रेरित किया है।

तमिलनाडु भी अहिंदी भाषी राज्य है। इसकी भाषा 'तमिल' दक्षिण भारतीय भाषाओं में सबसे प्राचीन है। अत: इसके ऊपर हिंदी का प्रभाव सबसे कम पड़ा है। संस्कृत और तमिल साथ-साथ विकसित होने से संस्कृत का आपस में कुछ आदान-प्रदान अवश्य हुआ है। तमिल के भाषा वैज्ञानिक स्वरूप को देखने से स्पष्ट होता है कि ध्वनि समूह की भिन्नता के कारण दोनों में पार्थक्य है। तमिल और हिंदी में शब्दों की समानता भले न हो, भावों और विचारों की समानता अवश्य है।

सन् 1937 में स्वर्गीय सी. राजगोपालाचारी के नेतृत्व में अंतरिम सरकार का गठन किया गया था। उसी समय राज्य के सरकारी स्कूलों में हिंदी को अनिवार्य विषय बना दिया गया था जिसकी घोषणा करते हुए कहा गया था ''हिंदी एक सरल भाषा है जिसे कोई भी आसानी से सीख-पढ़ सकता है।'' ई.व्ही. रामास्वामी नायकर 'पेरियार' ने इस घोषणा का ज़ोरदार विरोध किया। इन्होंने हिंदी विरोधी आंदोलन का आह्वान किया। स्वतंत्रता के पश्चात हिंदी को राजभाषा के रूप में मान्यता मिलने पर सर्वाधिक विरोध तमिलनाडु में हुआ। यह विरोध विशुद्ध राजनीतिक था। हिंदी के द्रविड़ नेताओं को देखते हुए तथा देश के लिए हिंदी के महत्व को समझते हुए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की प्रेरणा से दक्षिण भारतीय हिंदी प्रचार सभा के प्रयासों से तमिलनाडु भी हिंदी से महरूम न रह सका। इच्छुक लोग हिंदी प्रचार सभा के माध्यम से हिंदी पढ़ने और सीखने लगे। केंद्र सरकार ने सन् 1957 में अपनी शिक्षा और भाषा नीति के तहत अहिंदी भाषी राज्यों में हिंदी को लोकप्रिय बनाने की योजना बनाई। भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय जवाहरलाल नेहरू ने अगस्त 1959 में तमिलनाडु हिंदी विरोध को देखते हुए यह घोषणा की कि हिंदी अहिंदी भाषी राज्यों पर थोपी नहीं जाएगी। अंग्रेज़ी सहभाषा के रूप में जारी रहेगी तब तक जब तक कि राज्य के लोग इसके लिए अपनी इच्छा न व्यक्त करें। द्रमुक तथा अन्नाद्रमुक के शासन काल में केंद्र सरकार ने जिन हिंदी पढ़नेवाले छात्रों की

छात्रवृत्ति मंज़ूर की थी, उसे राज्य सरकार ने नहीं दी, जो दी वह काफ़ी हाय-तौबा मचाकर।

तमिलनाडु में हिंदी-प्रचार की दृष्टि से दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के प्रयत्नों से तमाम परेशानियों के बाद भी राज्य में शायद ही ऐसा कोई नगर, गाँव, कस्बा हो जहाँ हिंदी जाननेवाले न हों। आज तमिलनाडु के लोग हिंदी की आवश्यकता को गंभीरता से महसूस करने लगे हैं जिसके कारण हिंदी जाननेवालों की संख्या बढ़ी है। अनुवाद के माध्यम से साहित्य का आदान-प्रदान निरंतर हो रहा है। मैंने अपनी दक्षिण भारत रामेश्वरम यात्रा के दौरान देखा कि जितना तमिल बोलनेवालों की संख्या थी, उतना ही हिंदी जानने, समझनेवालों की भी संख्या थी। सभी विश्वविद्यालयों में हिंदी में उच्च शिक्षा एवं शोध की व्यवस्था उपलब्ध है। कम्ब रामायण के अनेक अनुवाद हिंदी में उपलब्ध हैं। हिंदी और तमिल पर शोध के संदर्भ में अनेक ग्रंथ सामने आए हैं। इन सबको देखते हुए लगता है हिंदी की अब पहले जैसी उपेक्षा नहीं हो रही है।

अन्य दक्षिण भारतीय राज्यों की अपेक्षा केरल में हिंदी बोलने और समझने की प्रथा पुरानी है। यहाँ हिंदी विरोध उस रूप में नहीं दिखा जैसा कि तमिलनाडु में। केरल में पहले देव मंदिरों के पास 'गोसाई मठ' नामक खास प्रकार की सराय अथवा मुसाफ़िर खाने बने हुए थे। उन मठों में द्विभाषिए नामक कर्मचारी नियुक्त होते थे जिनका मुख्य काम समय-समय पर केरल आने वाले तीर्थ यात्रियों का स्वागत-सत्कार करना था। द्विभाषिए के पद पर नियुक्त होने के लिए हिंदी या हिंदुस्तानी का काम चलाऊ ज्ञान आवश्यक माना जाता था जिसके लिए वे अपने हिंदी ज्ञान को मलयालम में लिख लिया करते थे। उनकी हिंदी को पहले गोसाईं भाषा अथवा हिंदुस्तानी के नाम से लोग पुकारते थे। ये द्विभाषिए आज भी केरल के प्रसिद्ध तीर्थों के किनारे मिल जाते हैं। कुछ के पास तो हिंदुस्तानी भाषा सीखने के लिए उन दिनों की मलयालम में लिखी हुई प्राचीन पुस्तकें भी मिलती हैं।

प्राचीन काल में ही तिरिविंताकुर राज्य के राजा लोग बड़े धर्मनिष्ठ, कला कुशल, साहित्यानुरागी एवं बहु-भाषा प्रेमी रहते थे। वे अपने दरबार में हिंदी विद्वानों द्वारा कवियों का विशेष रूप से स्वागत-सम्मान किया करते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में स्वाति नक्षत्र राजवर्मा राजा संस्कृत, तमिल, हिंदी, अंग्रेज़ी, मलयालम, कन्नड़, तेलुगु आदि विभिन्न भाषाएँ जानते थे। हिंदी में उन्होंने कई गीत, कीर्तन और पद लिखे। वे गर्भ श्रीमान और स्वाति तिरुनाल के नाम से प्रसिद्ध हुए। 1936 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा की मुख्य पत्रिका 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' में उन गीतों का एक संग्रह कवि की जीवनी के साथ प्रकाशित कराया था। 'उस प्रकाशन में गर्भ श्रीमान के जितने हिंदी पद और कीर्तन उपलब्ध थे, सब संग्रहीत हैं।' (भारतीय साहित्य—डॉ. लक्ष्मीकांत पांडेय, पृ. 274)। 1936 के बाद दक्षिण भारत प्रचार सभा के आदेशानुसार उसी के तत्वावधान में कर्नाटक, आंध्र, तमिलनाडु और केरल की प्रांतीय सभाओं के आधार पर उन चारों प्रांतों में हिंदी प्रचार का काम स्वतंत्र रूप से चलाने की प्रेरणा देने के उद्देश्य से अलग-अलग चार प्रांतीय हिंदी सभाएँ स्थापित हो गईं। उनमें केरल की प्रांतीय सभा का संविधान, जुलाई सन् 1936 में सभा के सदस्यों का जो विराट सम्मेलन 'एरणाकुलम्' में बुलाया गया था, उसमें सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। दक्षिण भारतीय हिंदी प्रचार सभा ने अपने सुयोग्य और महान कार्यकर्ता पंडित देवदूत विद्यार्थी को केरल की नवीन प्रांतीय सभा के मंत्री पद पर नियुक्त किया। यहाँ आज तक प्रचार सभा के द्वारा हिंदी के प्रचार का कार्य बड़ी दक्षता के साथ किया जा रहा है। हिंदी की प्रारंभिक तथा उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए विभिन्न केंद्रों में प्रारंभिक हिंदी विद्यालयों तथा महाविद्यालयों का संचालन भी सभा करती है। हिंदी अध्यापकों को प्रशिक्षण देने के लिए सभा जो 'प्रचारक' परीक्षा चलाती है, उसमें उत्तीर्ण होने के बाद स्वयं हिंदी पढ़ाने के कार्य में लग जाते थे। केरल में ऐसे हिंदी प्रचारकों की संख्या बढ़ती जा रही है। आज केरल का कोई ऐसा गाँव-कस्बा नहीं होगा जहाँ पर कोई-न-कोई हिंदी प्रचारक अपना हिंदी विद्यालय न चलाता हो।

इलाहाबाद, भारत
lalsayadavhinau@gmail.com

14 नेपाल में हिंदी के बढ़ते चरण

• श्री डिल्लीराम शर्मा

भाषा का विकास या भाषा में परिवर्तन सदैव धीरे-धीरे होता है। आज हम जिस हिंदी भाषा को बोल रहे हैं इस भाषा का शुरुआती स्वरूप यही नहीं था। हिंदी भाषा के विकास में विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रस्तुत किए हैं। कुछ विद्वान हिंदी का विकास संस्कृत भाषा से जोड़ते हैं तो कुछ विद्वान इसे अस्वीकार करते हैं। संस्कृत से हिंदी का विकास माननेवाले विद्वानों की संख्या ज़्यादा है और उनके अनुसार संस्कृत बहुत समय तक पूरे भारत की बोलचाल की और साहित्यिक रचना की भाषा रही। संस्कृत व्याकरण के कठोर नियमों में जकड़ी थी इसलिए जनसाधारण की भाषा का प्राकृत के रूप में विकास हुआ। प्राकृत में भी साहित्य रचना होने लगी एवं इसे व्याकरण के नियमों से जकड़ दिया गया तो जनसाधारण की भाषा ने अपभ्रंश के रूप में आकार ग्रहण किया। अपभ्रंश में साहित्य रचना और व्याकरण का नियंत्रण होने के पश्चात जनसाधारण की भाषा हिंदी बनी। तात्पर्य यह है कि संस्कृत से प्राकृत का, प्राकृत से अपभ्रंश का और अपभ्रंश से हिंदी का विकास हुआ (श्रीवास्तव, 1994)।

इतिहास के झरोखे से

नेपाल एक शांतिप्रिय देश है जहाँ बहुत से भाषा-भाषी लोग मिल-जुलकर बसे हुए हैं। नेपाल के प्राचीन काल में कोई भाषा समस्या नहीं थी। शिक्षा और संस्कृति की एकमात्र भाषा संस्कृत थी और इस भाषा को उच्च, निम्न या सामान्य लोग स्वीकार करते थे। गौतम बुद्ध के इस देश में अनेक ब्रजयानी सिद्धों और नाथ योगियों का रहन-सहन था। वे धर्म की बातों की अपभ्रंश भाषा में रचना करते थे जो आज तक नेपाल उपत्यका में 'चर्या गीत' के नाम से प्रसिद्ध है। हिंदी भाषा विकास के क्रम में भी चर्या गीत का वर्णन मिलता है। मध्य युग में काठमांडू उपत्यका में नेवारी के साथ मैथिली एवं ब्रज भाषा का भी प्रयोग होता था। उपत्यका के बाहर मैथिली, अवधी, भोजपुरी, ब्रज भाषा का प्रयोग पर्याप्त होता था। हिंदी साहित्य के इतिहास में सिद्धों की वाणी 'चर्या गीत' का वर्णन है जो नेपाल में रचा गया था। उसका प्राचीनतम अंश आज भी उपलब्ध है। उसे सुरक्षित रखने का श्रेय नेपाल का ही है। आज के दिनों में भी नेपाल का नेवार समुदाय अपने सांस्कृतिक अवसरों पर 'चर्या गीत' के गीत गाते हैं। उन चर्यापदों का पता नेपाल दरबार पुस्तकालय में हरप्रसाद शास्त्री ने लगाया था। तत्कालीन शाह वंशीय राजा पृथ्वीनारायण शाह द्वारा वर्तमान नेपाल राज्य की स्थापना के बाद भी इन क्षेत्रों में प्रशासनिक कार्य क्षेत्रीय भाषा (हिंदी) में होता था। ऐसा नेपाल सरकार द्वारा प्रकाशित पुरातत्व पत्र संग्रह से पता चलता है। शाह वंश के पुराने राजाओं के काल में वास्तव में नेपाल में दो ही भाषाओं की प्रधानता थीं—नेपाली और हिंदी। धार्मिक और शैक्षिक कार्यों में संस्कृत और अंग्रेज़ी का महत्व भी था (मिश्र, 1994)।

शाहवंशीय राजाओं ने नेपाली के साथ हिंदी को बराबरी का सम्मान दिया। पृथ्वीनारायण शाह, रणबहादुर शाह, राजेंद्र शाह के मंझले पुत्र उपेंद्र विक्रम शाह ने तो हिंदी भाषा में रचनाएँ भी की हैं। काठमांडू के अनेक स्थानों में हिंदी दोहों और चौपाइयों में शिलालेख खुदे हैं।

हिंदी साहित्य का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ 'वर्ण रत्नाकार' जो उपलब्ध नहीं है उसकी रचना भी नेपाल में ही हुई थी। यह ग्रंथ नेपाल की तराई में अवस्थित सिम्रौनगढ़ के कर्नाटवंशी राजा हरिसिंह देव के राज कवि ज्योतिश्वर ठाकुर द्वारा रचित है। सिद्धों और नाथों की कविताएँ नेपाल से पर्याप्त प्राप्त हुई थीं। नेपाल के जोशमणि निर्गुण संत साहित्य के उद्धारक जनकलाल शर्मा के अनुसार चौरासी सिद्धों में से अनेक नेपाल के ही रहनेवाले थे (मुकेश कुमार मिश्र—साहित्यलोक—2014)

नेपाली साहित्य के अधिकांश पुराने साहित्यकारों ने हिंदी और नेपाली दोनों भाषाओं में दक्षता से रचना की है। हज़ार वर्ष पहले के 'चर्या गीतों' के लेखकों से लेकर मल्लकाल के नाटककारों तथा आधुनिक काल के कवि मोतीराम भट्ट से लेकर लेखनाथ, देवकोटा, वी.पी कोइराला, भिक्षु, गोपाल सिंह नेपाली तथा केदारमान व्यथित

जैसे प्रतिभावान नेपाली साहित्यकारों ने हिंदी में ही रचना की है (मिश्र, 1995)

इतिहास की ओर मुड़के देखा जाए तो लगभग साढ़े ग्यारह सौ वर्ष पूर्व साधु-महात्माओं ने जो रचनाएँ हिंदी में रचीं वे आज भी काठमांडू में मनोयोग से गाई जाती हैं। पश्चिम नेपाल की दांग घाटी में प्राप्त शिलालेख में दांग के तत्कालीन राजा रतनसेन की एक 'दंगीशरण कथा' नामक रचना भी मिलती है। यह हिंदी की भाषिक विकास प्रक्रिया को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। मध्यकालीन नेपाल के नाटक साहित्य में समकालीन हिंदी भाषा का प्रयोग हुआ है। उत्तर मध्यकाल में नेपाल के पहाड़ी क्षेत्रों में जोशमणि, निर्गुण संत संप्रदाय तथा कृष्ण प्रणामी संप्रदाय का हिंदी रचित साहित्य प्रचारित हुआ।

नेपाल में विक्रम संवत 2018 तक हिंदी शिशु कक्षा से लेकर विश्वविद्यालय तक शिक्षा की भाषा थी। स्कूलों में नेपाली के साथ हिंदी, नेवारी, मैथिली आदि स्थानीय भाषाओं का भी अध्यापन होता था। निर्दलीय पंचायती व्यवस्था लागू होते ही विभिन्न जगहों पर हिंदी अध्यापन एकाएक बंद कर दिए गए जिसके कारण तराई में हिंदी पढ़नेवालों की संख्या अत्यंत कम हो गई। केवल ऐच्छिक विषय के लिए 9वीं, 10वीं कक्षा में हिंदी पढ़ने के लिए अवसर रहा था। स्वाभाविक रूप से हिंदी पढ़ने में जनता की रुचि घटती गई। आज भी तराई में आई.ए., बी.ए. कक्षाओं में विद्यार्थी हिंदी पढ़ने की इच्छा रखते हैं और त्रिभुवन विश्वविद्यालय में एम.ए. तक हिंदी पढ़ने की व्यवस्था है।

पाल्पा के सेनवंशीय नरेशों तथा मोरंग और अन्य तत्कालीन नरेशों ने तो हिंदी को अपनी राज भाषा ही बना ली थी। कृष्ण शाह, मुकुंद सेन आदि नरेशों के सभी पत्र और हुकुनामें हिंदी में ही मिलते हैं। मल्लकालीन युग से लेकर शाहवंशीय राजाओं के समय में भी हिंदी रचना का इतिहास है। साहित्य के अतिरिक्त अभिलेख, समाचार-पत्र, व्यापार, मनोरंजन के क्षेत्रों में नेपाल में हिंदी का व्यवहार हुआ है और हो रहा है (विनोदकुमार विश्वकर्मा, 'साहित्यलोक' 2013)।

शिक्षा का माध्यम हिंदी

नेपाल में विक्रम संवत 2018 तक हिंदी शिशु कक्षा से लेकर विश्वविद्यालय तक शिक्षा की भाषा थी। स्कूलों में नेपाली के साथ हिंदी, नेवारी, मैथिली आदि स्थानीय भाषाओं का भी अध्यापन होता था। निर्दलीय पंचायती व्यवस्था लागू होते ही विभिन्न जगहों पर हिंदी अध्यापन एकाएक बंद कर दिए गए जिसके कारण तराई में हिंदी पढ़नेवालों की संख्या अत्यंत कम हो गई। केवल ऐच्छिक विषय के लिए 9वीं, 10वीं कक्षा में हिंदी पढ़ने के लिए अवसर रहा था। स्वाभाविक रूप से हिंदी पढ़ने में जनता की रुचि घटती गई। आज भी तराई में आई.ए., बी.ए. कक्षाओं में विद्यार्थी हिंदी पढ़ने की इच्छा रखते हैं और त्रिभुवन विश्वविद्यालय में एम.ए. तक हिंदी पढ़ने की व्यवस्था है। त्रिभुवन विश्वविद्यालय से प्रत्येक साल कुछ-न-कुछ विद्यार्थी स्नातकोत्तर उर्त्तीण हो रहे हैं और अब तो विद्यावारिधि के लिए विद्यार्थीगण उत्सुकतावश जुटे हुए हैं। दुख की बात यह है कि हिंदी के चाहनेवालों की संख्या अच्छी है लेकिन पढ़ने के लिए जगह नहीं है। अगर विद्यालय स्तर से हिंदी का अध्ययन-अध्यापन हो तो हिंदी पढ़नेवालों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाएगी।

हिंदी शिक्षण में स्कूलों की भूमिका

नेपाल सरकार की ओर से हिंदी शिक्षण में कोई विशेष सहयोग नहीं दिखता है। हिंदी पठन-पाठन के रूप में नेपाल सरकार के किसी भी विद्यालय में अवसर प्राप्त नहीं है। प्रत्येक विद्यालय में नेपाली माध्यम से पढ़ाई होती है और प्राइवेट स्कूलों में भी हिंदी के लिए स्थान नगण्य है। कुछ प्राइवेट स्कूलों ने सी.बी.एस.ई. (CBSE) भारत से संबद्धता लेकर हिंदी पढ़ाने में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं जिनके नाम हैं—डी.ए.वी सुशील केडिया विश्वभारती, मॉडर्न इंडियन स्कूल, राई स्कूल, आलोक विद्याश्रम, गुरुकुल स्कूल, रुपिज इंटरनेशनल स्कूल आदि। भारतीय राजदूतावास के अंदर मौजूद

केंद्रीय विद्यालय भी बहुत पहले से हिंदी पठन-पाठन में सक्रिय है। इन विद्यालयों के विद्यार्थियों से बातचीत करते समय स्पष्ट रूप से हिंदी के प्रति मोह झलकता है।

नेपाल में पत्र-पत्रिकाएँ

हिंदी भाषा के विकास में नेपाल की अनेक पत्र-पत्रिकाएँ भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। हिंदी भाषा प्रेमी समय-समय पर कुछ-न-कुछ लिख रहे हैं और प्रकाशित कर रहे हैं। हिंदी प्रेम को ध्यान में रखते हुए कुछ मासिक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं जैसे 'हिमालिनी', 'द रिपब्लिक', 'अभ्युत्थान', 'द पोलिटिक्स', 'इनकलाब' आदि। इन पत्रिकाओं में राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय एवं समसामयिक गतिविधियाँ शामिल हैं। ये पत्रिकाएँ हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार, संरक्षण एवं विकास में सराहनीय कार्य कर रही हैं।

नेपाल की हिंदी रचना एवं रचनाकार

सिद्धों एवं नाथों ने अनेक धार्मिक बातें अपभ्रंश में लिखी थीं। 'दंगीशरण कथा' एक पौराणिक उपाख्यान है जो दोहा-चौपाई के छंदों में सधुक्कड़ी (अवधी) भाषा में लिखी गई थी। इसमें दांग राज्य की स्थापना की कथा मिलती है। 'रतनबोध' और 'गुरु बाबा की जनमौती' नाथ संप्रदाय से प्रभावित रचनाएँ हैं। संत अभयानंद ने भी हिंदी में कविताएँ लिखी थीं। वे नेपाल के महान सेनानी अमरसिंह थापा के पुत्र थे। पंडित वाणीविलास पांडे ने संस्कृत के साथ-साथ हिंदी में भी रचनाएँ की थीं (पुराने कवि और कविता, बाबुराम आचार्य) पंडित विद्यारण्य केशरी ने नेपाली और हिंदी में 'गोपिका स्तुति' और 'द्रोपदी स्तुति' जैसे स्तोत्र काव्यों की रचना की है। सुप्रसिद्ध चारण कवि मौलाराम ने नेपाल संबंधी अनेक काव्यों की रचना की है। उनकी कृतियों में 'रणबहादुर चंद्रिका', 'गोरखाली अमल' उल्लेखनीय हैं। जनकपुर के महात्मा सुरकिशोर ने 'मिथिला विलास' और 'सीतायन' नामक काव्य लिखे थे लेकिन 'सीतायन' को लोग स्वामी रामप्रिया शरण की रचना मानते हैं। हिंदी के प्रति मोह एवं प्रेम आदिकाल से है। आधुनिक काल में कुछ लेखकों ने हिंदी प्रेम दर्शाया है—लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा, केदारमान व्यथित, धुस्वां सायमी, गोपाल सिंह नेपाली, भवानी गुप्त 'भिक्षु' आदि (गोप, 1994)।

हिंदी सेवी कवि रामहरि जोशी की रचना 'नया सबेरा' प्रशंसनीय है। यदुवंशलाल के 'पुष्पांजलि' तथा 'सुधा', रामदेव द्विवेदी की 'अलमस्त', सुंदर झा 'शास्त्री' की 'परवशता', चंद्रदेव ठाकुर की 'शैलबला', अनंत बिहारी लाल दास की 'रागमयी', गोबिंद भट्ट नेपाली की 'बुद्ध', डॉ. शिवशंकर यादव की 'परकटे जटायु' प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

काव्य के अतिरिक्त गद्य में भी नेपाली लेखकों ने हिंदी भाषा में उल्लेखनीय योगदान दिया है। अमर शहीद शुक्रराज शास्त्री ने अनेक ग्रंथ लिखे हैं। उनकी 'ब्रह्मसूत्र शंकरभाष्य की हिंदी टीका' सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इसकी प्रशंसा स्वयं महात्मा गांधी और नेताजी सुभाषचंद्र बोस आदि विद्वानों ने भी की थी। इसी प्रकार काशीप्रसाद श्रीवास्तव की 'नेपाल की कहानी' भी उल्लेखनीय है।

हिंदी भाषा के प्रति लोगों का जो प्यार है, वह प्रशंसनीय हैं। वे कभी कविता के माध्यम से कभी गीत, ग़ज़ल, कहानी आदि के माध्यम से अपना प्रेम जता रहे हैं। अब तो नेपाल के नव हिंदी रचनाकारों की सूची लंबी हो चुकी है जिनमें उत्तम नेपाली (काठमांडू), महंथ रामटहल दास (जनकपुर), डॉ. सूर्यनाथ गोप (सिरहा), डॉ. रामदयाल राकेश, डॉ. उषा ठाकुर (काठमांडू), राजेश्वर नेपाली (जनकपुरधाम), लोकेश्वर दत्त 'व्यथित' (काठमांडू), बसंतकुमार विश्वकर्मा (सप्तरी), अवध किशोर दास, उमंग (जनकपुरधाम), अवध किशोर लाल, सरयुग चौधरी (जनकपुरधाम), रुद्रनारायण भारती (धनुषा), रमेश प्रसाद मिश्र (नपलपरासी), जय नारायण झा 'जिज्ञासु' (धनुषा), बुन्नीलाल सिंह (सिरहा), पूनम यादव (सिरहा), भाग्यनाथ गुप्ता (वीरगंज), पं. जिवेश्वर मिश्र (सर्लाही), गंगाप्रसाद अकेला, सुश्री रंजना कुँवर, अवध किशोर प्रसाद, रविंद्र कुमार शाह (जनकपुरधाम), एल.एस. शर्मा (झापा) राजेंद्र शलभ (काठमांडू), डॉ. संजीता वर्मा (काठमांडू), रवि शर्मा (काठमांडू), ब्रजलाल दास, विजय बंधु (रौतहट) जीतेंद्र जीत (विराटनगर), श्यामलाल

मिश्र (इनरुवा), कृष्ण चंद्र मिश्र, रामबहादुर महतो (जनकपुरधाम), हरेकृष्ण शाह (रुपन्देही), रामस्वार्थ ठाकुर (महोत्तरी), अशोककुमार सिंह (महोत्तरी), गोपाल 'अश्क' (वीरगंज), विनोदकुमार विश्वकर्मा (सप्तरी), डॉ. श्वेता दीप्ति (सप्तरी), लक्ष्मी जोशी (बैतडी) आदि हैं। इनकी रचनाएँ हिंदी भाषा की श्रीवृद्धि में सहायक हैं। (ठाकुर, उषा 2014)।

नेपाली नागरिक का हिंदी भाषा से संबंध

भाषा हमेशा सभी को जोड़ती है, तोड़ती नहीं। हिंदी भाषा ने भी नेपाली नागरिकों का समन्वय किया है, संबंध को प्रगाढ़ किया है। दोनों देशों के बीच में अनुपम और अद्‌भुत संबंध कायम किया है। दोनों देशों के बीच के सांस्कृतिक संबंधों को शक्तिशाली बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। दोनों देशों के अनेक सांस्कृतिक एवं धार्मिक पहलुओं को देखा जाए तो दोनों के बीच में एकरूपता पाई जाती है। केवल भौगोलिक सीमाएँ सटी होने के कारण संबंधों में निकटता नहीं हुई है। निकटता का मुख्य कारण है हिंदी भाषा क्योंकि नेपाली और हिंदी भाषा में बहुत समानताएँ पाई जाती हैं। दोनों भाषाओं के लगभग साठ प्रतिशत शब्द समान हैं। नेपाली नागरिक हिंदी भाषा को समझ जाते हैं और हिंदी भाषा में अपनी भावनाओं को प्रकट कर पाते हैं। नेपाल से लाखों की संख्या में लोग तीर्थस्थल और धार्मिक चारधाम में दर्शन करने के लिए भारत जाते हैं और भारत से भी उसी तरह नेपाल में आते हैं और दोनों देश के नागरिक टूटी-फूटी हिंदी में ही बातें करते हैं। नेपालियों को भारत में कभी भाषाई कठिनाई नहीं हुई, वे आराम से संपर्क साध सकते हैं। नेपाल के तराई भू-भाग की जनता आराम से हिंदी में वार्तालाप कर लेती है। शिक्षा, चिकित्सा, धर्म-कर्म, व्यापार आदि अनेक कारकों को लेकर नेपाली जनता भारत आती-जाती है और आसानी से भावनाओं का आदान-प्रदान करती है। दोनों नागरिकों के बीच रोटी-बेटी का संबंध भी सदियों से बरकरार है। नेपालियों के मंदिरों में या उपासना या पूजा पद्धतियों में हिंदी भजन सुनाई देते हैं। धार्मिक पर्व या उत्सव जैसे विवाह पंचमी, होली, दुर्गापूजा, रामनवमी, छठ आदि में हिंदी भजन, श्लोक ही गूंजित होते हैं। नेपाल के सिनेमाघरों में हिंदी फ़िल्म देखने के लिए हज़ारों की भीड़ रहती है। काठमांडू के सिनेमाघरों में अंग्रेज़ी फ़िल्म उतनी नहीं चलती है, शायद इसके पीछे हिंदी भाषा के प्रति लगाव ही है। नेपाल के नागरिक हिंदी फ़िल्म, धार्मिक चैनल, हिंदी सिरियल से इतने जुड़े हैं कि वे इनसे अलग नहीं हो सकते (पुरुषोत्तम पोखरेल-अभ्युत्थान अंक 1)

परिषद ने 'हिंदी भाषा को संवैधानिक अधिकार मिलना चाहिए या नहीं' विषय पर गोष्ठी भी की थी। इस गोष्ठी में नेपाल के विभिन्न स्थानों से हिंदी प्रेमी की उपस्थिति उल्लेखनीय थी। प्रमुख अतिथि के रुप में महामहिम उपराष्ट्रपति परमानंद झा जी थे। उन्होंने हिंदी भाषा की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हिंदी भाषा को संवैधानिक मान्यता मिले या न मिले लेकिन नेपाली जनता इस भाषा को दिलो-दिमाग से स्वीकारती हैं।

हिंदी को संवैधानिक मान्यता मिलनी चाहिए

अंतरराष्ट्रीय हिंदी परिषद, नेपाल, हिंदी भाषा के विकास, संवर्द्धन, प्रचार-प्रसार एवं सेवा में क्रियाशील है। इस संस्था ने संविधान सभा के अध्यक्ष, प्रधानमंत्री तथा राष्ट्रपति को नए संविधान में हिंदी भाषा को संवैधानिक मान्यता दिलाने के लिए ज्ञापनपत्र प्रस्तुत किया है।

परिषद ने 'हिंदी भाषा को संवैधानिक अधिकार मिलना चाहिए या नहीं' विषय पर गोष्ठी भी की थी। इस गोष्ठी में नेपाल के विभिन्न स्थानों से हिंदी प्रेमी की उपस्थिति उल्लेखनीय थी। प्रमुख अतिथि के रूप में महामहिम उपराष्ट्रपति परमानंद झा जी थे। उन्होंने हिंदी भाषा की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हिंदी भाषा को संवैधानिक मान्यता मिले या न मिले लेकिन नेपाली जनता इस भाषा को दिलो-दिमाग से स्वीकारती हैं। जब जनता इसे स्वीकारती है तो नेपाल सरकार इसे आज नहीं तो कल अवश्य सम्मान के साथ मान्यता देगी।

उपसंहार

नेपाल बहुजातीय, बहुभाषीय, बहुसांस्कृतिक तथा बहुधार्मिक पहचान के कारण विश्व में परिचित है। यहाँ प्राचीन काल से सामाजिक व्यवस्था, सहिष्णुता तथा सांप्रदायिक सद्भाव का संरक्षण होता आया है। व्यवस्था, सहिष्णुता तथा सांप्रदायिक सद्भाव का संरक्षण तथा संवर्धन करने के लिए देश के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जानेवाली भाषाओं का प्रयोग एक सशक्त माध्यम रहा है। उसमें भी नेपाली और हिंदी भाषा की प्रमुख भूमिका रही है। नेपाल के पहाड़ी क्षेत्रों में राई, तामांग, मगर, गुरुंग, डोटेली, नेवारी आदि विभिन्न स्थानीय भाषाएँ बोली जाती हैं तो तराई क्षेत्रों में मैथिली, भोजपुरी, अवधी, मगही, थारु, उर्दू आदि बोली जाती हैं। इन सभी भाषाओं को जोड़नेवाली मुख्य संपर्क भाषा हिंदी ही रहती आई है। भारत के साथ सदियों से जुड़ी हुई सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं पारंपारिक संबंध को हिंदी भाषा ने और अधिक प्रगाढ़ बनाने की भूमिका निभाई है। भारत ने अपने संविधान में नेपाली भाषा को संवैधानिक दर्जा देकर सम्मान दिया है जिससे दोनों देशों के बीच सुमधुर संबंध स्थापित है। नेपाली तथा हिंदी एक-दूसरे के पूरक हैं, इस तथ्य को हृदय से स्वीकारना सभी के लिए आवश्यक है।

यदि नेपाल के इतिहास को देखा जाए तो मल्लकालीन युग से शाहवंशीय राज्यकाल तक के राजा-रजौटाओं ने अपने शासन काल में हिंदी भाषा का प्रयोग किया था। नेपाल के राजनीतिज्ञ, चाहे वे भारतीय प्रवास में से हों या स्वदेश में, हिंदी भाषा का प्रयोग करते आए हैं। नेपाली साहित्यकारों ने भी नेपाली में ही नहीं बल्कि हिंदी में भी साहित्य की रचना करके हिंदी एवं नेपाली भाषा तथा साहित्य को जन समक्ष प्रस्तुत किया है। शैक्षिक विकास, मनोरंजन, खाड़ी मुल्कों में रोज़गार की तलाश में जाने वाले नेपाली युवाओं में, पर्यटन विकास, आर्थिक एवं व्यावसायिक विकास आदि क्षेत्रों में हिंदी भाषा का महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय योगदान रहा है (अंतरराष्ट्रीय हिंदी परिषद, नेपाल, 2011)।

अत: यही कहा जा सकता है कि नेपाल में हिंदी भाषा का प्रयोग अत्यधिक रूप में होता आ रहा है और इस भाषा के प्रेमी भी अनेक हैं लेकिन सरकार की ओर से इस भाषा के प्रति और सहयोग की अपेक्षा है। अगर शिशु कक्षा से ही हिंदी की पढ़ाई हो तो नेपाल फिर हिंदीमय हो जाएगा इसमें कोई दो मत नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ

1. गोप, डॉ. सूर्यनाथ—नेपाल में हिंदी और हिंदी साहित्य, किताब महल, वाराणसी, 1994।
2. ठाकुर, प्रा. डॉ. उषा—नेपाल-भारत के बीच सांस्कृतिक संबंध में हिंदी की भूमिका (कार्यपत्र) विश्व हिंदी दिवस, 2014।
3. मिश्र, डॉ. कृष्णचंद्र-नेपाल में हिंदी, 2015।
4. शुक्ल, शैलेंद्र कुमार, डॉ. रामदयाल राकेश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व (शोध-पत्र) केंद्रीय हिंदी विभाग, त्रि.वि.वि., कीर्तिपुर, 2068।
5. साहित्यलोक वर्ष 16 अंक 1, 2014, त्रि.वि.वि. हिंदी केंद्रीय विभाग का मुख-पत्र।
6. गुप्त, बी.के. सुबोध हिंदी व्याकरण तथा रचना, नई दिल्ली एस.चंद्र रोड कंपनी लिमिटेड, 1994।
7. नागेंद्र हिंदी साहित्य का इतिहास, सहारा दिल्ली मानसरोवर पार्क, 2012।
8. अंतरराष्ट्रीय हिंदी परिषद, नेपाल, कार्यपत्र 2071।
9. अभ्युत्थान, हिंदी मासिक अंक 1, 2071।

साभार : हिमगंगा स्मारिका, सितंबर 2015

अंतरराष्ट्रीय हिंदी परिषद, नेपाल

hindinepal.nepal04@gmail.com

❑

15 तेलंगाना में हिंदी

• डॉ. अनीता गांगुली

2 जून, 2014 को बना भारत का 29वाँ राज्य तेलंगाना अपनी भाषा, कला एवं संस्कृति के बारे में काफ़ी सजग है। इसकी वजह यह है कि इस राज्य की भाषा तेलुगु और उर्दू है। उर्दू हिंदी की सहोदरा है। दूसरा कारण यह भी है कि तेलंगाना की पड़ोसन मराठी है जो हिंदी की निकटतम भाषा है। तेलंगाना का हिंदी से काफ़ी पुराना संबंध है। दिल्ली के सुल्तान के कारण हिंदी दक्षिण में पहुँची। भाषाई पृष्ठभूमि के कारण तेलंगाना में 19वीं सदी से ही हिंदी लेखन दिखाई पड़ता है। तेलंगाना की जनता अपनी संस्कृति और तेलुगु भाषा के साथ-साथ हिंदी भाषा का समान रूप से आदर करती है। कभी तेलंगाना में शिक्षा का माध्यम (उच्च शिक्षा) उर्दू भी था। तेलंगाना सरकार हिंदी भाषा को उचित स्थान दिलाने के लिए प्रयासरत है। हिंदी के विकास में तेलुगु-भाषियों का बहुत योगदान है। हिंदी के प्रति तेलंगाना में स्नेह भाव दिखाई पड़ता है। तेलंगाना में हिंदी की स्थिति को हम विभिन्न क्षेत्रों में देखेंगे।

जन्म : कोलकाता (1954)
शिक्षा : एम.ए. (संस्कृत, हिंदी) भाषा विज्ञान में डिप्लोमा, पीएचडी हिंदी एवं बंगला क्रियाएँ (आगरा विश्वविद्यालय)
व्यवसाय : 10 वर्षों तक हिंदी शिक्षण सामग्री का निर्माण। कई प्रांतों के पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के साथ उराँव क्षेत्र में जाकर आदिवासी कुडुख बोली पर कार्य किया तथा पहली दूसरी एवं तीसरी कक्षा के लिए कुडुख में पाठ्यपुस्तकों को बनाने में सहायता प्रदान की। मेघालय, मणिपुर एवं नागालैंड में क्षेत्र सर्वेक्षण का भी कार्य किया। 20 वर्षों से हिंदीतर भाषी राज्यों (तमिल, तेलुगु, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, गोवा, पांडिचेरी एवं अंडमान निकोबार) के हिंदी अध्यापकों के अध्यापन में कार्यरत। इसी अध्यापन के तहत भारत सरकार द्वारा फिनलैंड भेजा गया। जहाँ तीन वर्ष तक (1994-97) हेलसिंकी विश्वविद्यालय के छात्रों को बंगला, हिंदी एवं कुडुख भाषाओं का अध्यापन किया तथा भारतीय संस्कृति से परिचय करवाया। हिंदी से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए स्वीडन, नॉर्वे, डेनमार्क, रूस, पॉलेंड एवं इटली का दौरा किया। 1996 में फिनलैंड विश्वविद्यालय की ओर से त्रिनिदाद में हुए पंचम विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लिया।

शैक्षिक स्थिति

तेलंगाना में द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी छठी कक्षा से आरंभ होती है। हिंदी में उत्तीर्ण होना अनिवार्य है पर उत्तीर्ण होने के लिए कसौटियाँ आसान रखी गई हैं। नौवीं एवं दसवीं में हिंदी प्रथम भाषा के रूप में भी लेने का प्रावधान है। विद्यालयीय स्तर पर अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए ए.सी.ई.आर.टी. आगे आ रहा है तथा राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान हिंदी अध्यापकों की भाषा को बढ़ावा देने की कोशिश कर रहा है। तेलंगाना में अनेक सरकारी स्कूल हैं। निजी स्कूल भी हैं, नवोदय एवं केंद्रीय विद्यालय हैं। इसके अलावा पिछड़े एवं निम्न वर्ग के बच्चों के लिए तेलंगाना समाज कल्याण पाठशाला, गिरिजन कल्याण पाठशालाएँ भी सराहनीय कार्य कर रही हैं जहाँ हिंदी पढ़ाई जाती है। पिछले वर्ष स्कूली स्तर पर हिंदी की नई पुस्तकें सी.सी.ई. के नमूने पर अनुभवी भाषाविदों के संपादकत्व में निर्मित की गईं। द्वितीय भाषा के रूप में बाल बगीचा 1, 2, 3, छठी से आठवीं तक के लिए एवं सुगंध-1 एवं 2 कक्षा नौवीं एवं दसवीं के लिए तैयार की गई हैं। यह हिंदी के प्रति जागृति एवं उसके उज्ज्वल भविष्य का संकेत है। तेलंगाना में हिंदी माध्यम के विद्यालय भी हैं।

यहाँ इंटरमीडिएट स्तर पर हिंदी पढ़नेवाले छात्रों की संख्या कम होती है क्योंकि अधिक अंक प्राप्त करने की संभावना के कारण छात्र संस्कृत या फ्रेंच की ओर उन्मुख होते हैं। बहुत से जूनियर कॉलेजों में तो हिंदी अध्यापक नहीं है। अत: हिंदी विषय लेनेवाले छात्रों को स्वयं के प्रयास से ही हिंदी पढ़नी पड़ती है।

महाविद्यालयी स्तर पर पूरे दक्षिण में तेलंगाना की स्थिति सबसे अच्छी है। हैदराबाद में ही अनेक महाविद्यालय हैं। जैसे विवेक वर्धनी कॉलेज (जिसने अपनी स्थापना के सौ वर्ष पूरे किए), बदुरका कॉलेज (जिसने इस वर्ष रजत जयंती

मनाई), कोठी वुमेंस कॉलेज, बेगमपेट वुमेंस कॉलेज, संघी कॉलेज, सिटी कॉलेज, (1928 में स्थापित), इंदिरा प्रियदर्शिनी कॉलेज, सरकारी डिग्री कॉलेज, पी. जी. कॉलेज आदि। इनमें हिंदी महाविद्यालय काफ़ी प्रसिद्ध है। यह दक्षिण भारत का प्रथम महाविद्यालय है जहाँ पहले हिंदी माध्यम से स्नातकोत्तर तक सभी विषय (कला, वाणिज्य एवं विज्ञान) पढ़ाए जाते थे। परिस्थितियों को देखते हुए अब अंग्रेज़ी माध्यम भी रखना पड़ा है। इसकी स्थापना सन् 1961 में हुई अर्थात यह जो अपनी स्वर्ण जयंती भी मना चुकी है। अहिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी माध्यम के कॉलेज खोलने का विचार स्व. विनायकराव जी विद्यालंकार के मन में आया जिसे उन्होंने मूर्त रूप दिया। वे ही इसके मूल प्रेरणा स्रोत रहे।

बेगम बाज़ार स्थित राजा बहादुर सर बंसीलाल बालिका विद्यालय ने अमृत जयंती महोत्सव इस वर्ष मनाया। यह 10 अक्टूबर, 1940 को बालिकाओं के लिए हिंदी माध्यम से हाइ स्कूल की परीक्षा देने का पहला परीक्षा केंद्र बना और आज यह महिला महाविद्यालय बन चुका है। तेलंगाना में बहुत से विश्वविद्यालय हैं। अकेले हैदराबाद में चार विश्वविद्यालय हैं—उस्मानिया विश्वविद्यालय, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू विश्वविद्यालय, हैदराबाद विश्वविद्यालय, अंग्रेज़ी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय। इसके अलावा महबूब नगर में पालमूरू विश्वविद्यालय है। निज़ामाबाद में तेलंगाना विश्वविद्यालय है, वारंगल में काकतिया विश्वविद्यालय है। इन सभी विश्वविद्यालयों में हिंदी विभाग है तथा उसमें एम.ए., एमफ़िल तथा पीएचडी की सुविधा है। इसके साथ ही दो मुक्त विश्वविद्यालय हैं। एक उस्मानिया विश्वविद्यालय के अंतर्गत आता है दूसरा अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, जुबली हिल्स में है जो हिंदी शिक्षण की नई-नई तकनीकों का प्रयोग कर रहा है। उस्मानिया विश्वविद्यालय की परिधि में तुलसी भवन है जो तुलसीदास जी पर शोध करनेवाले विद्यार्थियों की सहायता करता है।

प्रचार-प्रसार की स्थिति

इसके अलावा तेलंगाना में हिंदी के प्रचार-प्रसारार्थ कुछ स्वैच्छिक संस्थाएँ कार्य कर रही हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं:-

1) हैदराबाद हिंदी प्रचार सभा— इसकी स्थापना 1935 में हुई। इसके तत्वावधान में पाँच प्रारंभिक तथा पाँच उच्च स्तरीय परीक्षाएँ होती हैं। इस प्रकार यह सभा नागरी 'बोध' से 'विद्वान' तक की परीक्षा लेकर हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार कर रही है। हिंदी शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा 'हिंदी पंडित' को सरकार द्वारा बीएड के समान मान्यता प्राप्त है।

2) आंध्र प्रदेश हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद

3) आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी— इसकी स्थापना वर्ष 1982 में हुई थी परंतु बीच में कुछ वर्षों तक यह बंद रही थी। हिंदी प्रेमियों द्वारा इसे पुन: सक्रिय किया गया तथा इसका पुनर्गठन 2007 में हुआ। इसके मुख्यत: तीन उद्देश्य हैं—

क) हिंदी के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देना

ख) तेलुगु-भाषी हिंदी रचनाकारों के लेखन को प्रोत्साहन देना

ग) तेलुगु भाषा, साहित्य और संस्कृति को राष्ट्रीय स्तर तक पहुँचाना

इसके साथ ही यह संस्था तेलुगु के उत्कृष्ट ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद करवाकर प्रकाशित भी करवाती है तथा मासिक साहित्यिक गोष्ठियों एवं कवि सम्मेलनों का आयोजन करती है।

4) दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा— वैसे तो इसका मुख्यालय चेन्नई में है। हैदराबाद में इसकी एक सक्रिय शाखा है। यह हिंदी में सभी स्तर की परीक्षाएँ लेती है। इसका उच्च शिक्षा एवं शोध संस्थान नियमित एवं दूरस्थ सभी प्रकार की सुविधाएँ प्रदान करता है। यह संस्थान शिक्षण-प्रशिक्षण का कार्य भी करता है। इस संस्था से बहुत प्रचारक जुड़े हुए हैं। दक्षिण के चारों राज्यों में इसके प्रचारक बहुत अच्छा कार्य कर रहे हैं।

5) सरकारी संस्था-केंद्रीय हिंदी संस्थान, शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए समय-समय पर अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए दिशा-निर्देश की भी आवश्यकता होती है। उस दायित्व का निर्वाह केंद्रीय हिंदी संस्थान का हैदराबाद केंद्र 1976 से करता आ रहा है। यह मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत आता है। केंद्रीय शिक्षा मंत्री इसके माननीय अध्यक्ष होते हैं। संस्थान प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक प्रशिक्षण से संबंधित है। इस प्रकार यह संस्थान हिंदी के अध्ययन-अध्यापन, शोध शिक्षण-प्रशिक्षण के सारस्वत अनुष्ठान में अवदान दे रहा है। संस्थान प्रतिवर्ष हिंदी सेवी सम्मान योजना के अंतर्गत हिंदी विद्वानों/हिंदी सेवियों को पुरस्कार प्रदान करता है। इस वर्ष हैदराबाद से दो विद्वानों के नाम की घोषणा

हुई है—प्रो. एम. वेंकटेश्वर एवं प्रो. सत्यनारायण।

कार्यालयीय स्थिति

तेलंगाना में राज्य व केंद्र सरकार के अनेक कार्यालय हैं जैसे कर्मचारी राज्य बीमा निगम, भारत डायनामिक्स लिमिटड, एन.एम.डी.सी., एन.टी.पी.सी., भारतीय खान ब्यूरो, कुक्कट अनुसंधान निदेशालय, पावर ग्रिड कॉर्पोरेशन, तिलहन अनुसंधान निदेशालय आदि जहाँ हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा व माह बड़े ही धूमधाम से मनाया जाता है। इस वर्ष विश्व हिंदी दिवस मनाने की भी धूम रही है। राज भाषा कार्यान्वयन समिति के दक्ष प्रशिक्षकों के दिशा निर्देश में यह कार्य होता है। बैंकिंग क्षेत्र में राज भाषा अधिकारी, हिंदी अधिकारी तथा अनुवादक का सहयोग तो होता ही है। जहाँ तक व्यावसायिक हिंदी का सवाल है, हैदराबाद में सभी दुकानों में नाम पट्ट अधिकतर अंग्रेज़ी में होते हैं। कहीं-कहीं अंग्रेज़ी के ऊपर तेलुगु दिखता है सिर्फ़ सरकारी कार्यालयों में आपको हिंदी दिखाई पड़ सकती है।

संचार माध्यमों की स्थिति

तेलंगाना में केबल द्वारा दूरदर्शन पर एवं रेडियो पर हिंदी के अनेक कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। हैदराबाद में हिंदी की काफ़ी पत्रिकाएँ निकलती रही हैं जो पूरे दक्षिण में और कहीं दिखाई नहीं देती हैं। जैसे-

1. 'स्रवंति'—द्विभाषा मासिक पत्रिका, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा
2. 'साहित्य सेतु'—आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी/राज्य सरकार
3. 'संकल्प'—त्रैमासिक पत्रिका, हिंदी अकादमी, हैदराबाद
4. 'श्री मिलिंद'—मासिक पत्रिका, मिलिंद प्रकाशन
5. 'पूर्ण कुंभ'—साहित्यिक मासिक पत्रिका, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा
6. 'गोलकोंडा दर्पण'—कविता प्रधान साहित्यिक मासिक पत्रिका
7. 'जिज्ञासा'—वार्षिक वैज्ञानिक पत्रिका, सी.सी.एम.बी.
8. 'अग्रतारा'—त्रैमासिक पत्रिका, दक्षिण भारत हिंदी प्रतिष्ठान
9. 'समुच्चय'—अंग्रेज़ी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय की वार्षिक शोध पत्रिका
10. 'भास्वर भारत'—सचित्र सांस्कृतिक पत्रिका

इनमें से कुछ पत्रिकाएँ बंद हो गई हैं तथा कुछ नई पत्रिकाएँ निकल रही हैं। इस तरह हिंदीतर प्रांत तेलंगाना में साहित्य, कला, संस्कृति की पत्र-पत्रिकाओं का हिंदी प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान है।

सन् 1949 से 1978 तक हैदराबाद में 'कल्पना' पत्रिका निकलती थी। पत्रकारिता के इतिहास में एक कीर्तिमान स्थापित करनेवाले बदरी विशाल पित्ती जी इसके जन्मदाता थे। आपने 20 वर्ष की उम्र में ही हिंदी साप्ताहिक 'उदय' आरंभ किया था। उसके एक वर्ष बाद 1949 में साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया था। 'कल्पना' अपने समय की श्रेष्ठ पत्रिका मानी जाती रही है और इसमें हिंदी के उभरते लेखकों जैसे हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, निराला, निर्मल वर्मा, अशोक वाजपेयी, मुक्तिबोध आदि की रचनाएँ छपती थीं। कोई भी रचनाकार 'कल्पना' में प्रकाशित अपनी रचना को देखकर गर्वित महसूस करता था। तेलंगाना में हिंदी को जगाए रखनेवाली कई संस्थाएँ सक्रिय हैं—हिंदी लेखन संघ, कादंबिनी क्लब, गीत चाँदनी, यहाँ नाटक संघ भी है जो समय-समय पर हिंदी नाटकों का मंचन करता है। रंगमंच के प्रति यहाँ के लोगों में रुचि है। हैदराबाद में दैनिक समाचार पत्र 'हिंदी मिलाप' और 'स्वतंत्र वार्ता' सराहनीय कार्य कर रहे हैं। 'दक्षिण समाचार' (साप्ताहिक) श्री मुनींद्र जी द्वारा स्थापित, अपने तरीके से कार्य कर रहा है। हैदराबाद में हिंदी की सभी पुस्तकें भी सरलता से उपलब्ध हो जाती हैं। साथ ही हिंदी में पुस्तक प्रकाशन भी सुलभ है। इस संदर्भ में मिलिंद प्रकाशन उल्लेखनीय कार्य कर रहा है।

अनुवाद एवं प्रोत्साहन

आचार्य आनंद ऋषि साहित्य पुरस्कार— यह पुरस्कार आचार्य आनंद ऋषि साहित्य निधि की ओर से 1991 से प्रतिवर्ष दक्षिण भारत के हिंदीतर-भाषी लेखक को सृजनात्मक लेखन के लिए दिया जाता है। आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी हिंदी रचनाकारों एवं अनुवादकों का उत्साहवर्द्धन करती है, पुरस्कार देती है तथा हिंदी भाषा एवं साहित्य की पुस्तकों, कोश आदि के प्रकाशन में प्रोत्साहन देती है।

हैदराबाद में 'भीमसेन निर्मल पुरस्कार' अनुवादकों को दिया जाता है। इस वर्ष यह पुरस्कार हैदराबाद के प्रोफ़ेसर सर्राजु को प्राप्त हुआ है। अनुवाद के क्षेत्र में प्रो. माणिक्यंबा हैदराबाद की जानी-

मानी हस्ती हैं। कमला गोयनका फाउंडेशन 1999 से प्रतिवर्ष हिंदी को बढ़ावा देती आ रही है। हिंदी से तेलुगु में अनूदित कृतियों को प्रतिवर्ष पुरस्कार दिए जाते हैं। वर्ष 2015 में अनुवाद का यह पुरस्कार डॉ. सुमनलता जी को मिला है। इसके अलावा इस फाउंडेशन की ओर से हिंदी साहित्यकार तथा पत्रकार को भी सम्मान मिलता है। 'मिलाप' समाचार पत्र का 'युद्धवीर फाउंडेशन' समय-समय पर हिंदी की विभिन्न विधाओं पर प्रतियोगिताओं का आयोजन कर नए लेखकों को प्रोत्साहित करता है। तेलंगाना ने हिंदी को अनेक कवि, कवयित्री, गीतकार, साहित्यकार, रचनाकार और अनुवादक दिए हैं जिनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं—राजा पन्नालाल पित्ती, दुर्गादत्त पांडेय, वेणुगोपाल, अहिल्या मिश्र, ज्योति नारायण, उपेंद्र विजयराघव रेड्डी आदि। दक्षिण में हिंदी के विकसित होने में इन लोगों का महत्वपूर्ण योगदान है। यह खरा सत्य है कि हिंदी को विकसित करने में हिंदीतर लोगों की बहुत बड़ी भूमिका है।

समाज में हिंदी

हैदराबाद के अलावा दूसरे 8 ज़िलों नलगोंडा, निज़ामाबाद, खम्मम, मेदक, वारंगल, महबूबनगर, करीमनगर, आदिलाबाद में हिंदी से काम नहीं चलता। क्षेत्रीय भाषा जानना अनिवार्य है परंतु आजकल अधिकतर भारतीय भाषाओं में हिंदी शब्दों का धड़ल्ले से प्रयोग हो रहा है। यही हिंदी की शक्ति की पहचान है। यहाँ तेलुगु में बात करते समय हिंदी का प्रयोग करना आम बात है। वैसे तेलंगाना की जनता इस तथ्य से परिचित है कि हिंदी भारत की संपर्क भाषा है। इसे सीखने से नुकसान नहीं वरन अनेक फ़ायदे हैं। इस प्रकार हिंदी इस क्षेत्र की संपर्क भाषा के रूप में अपना सुदृढ़ आधार बना रही है। यहाँ के लोग भी हिंदी प्रेमी हैं। राजनीतिज्ञ तो इस भाषा में अपनी बात दिल्ली तक पहुँचा सकते हैं। हिंदी के विकसित होने का श्रेय यहाँ के मारवाड़ियों को जाता है। अगर हम इतिहास पर दृष्टि डालते हैं तो पाते हैं कि हिंदी यहाँ बहुत पहले से है। 13वीं सदी के अंत से अलाउद्दीन खिलजी, मुहम्मद तुगलक एवं औरंगज़ेब आदि जिन सुल्तानों के नेतृत्व में दक्षिण में आक्रमण हुए उनका संबंध किसी न किसी प्रकार दिल्ली से रहा। उस समय हज़ारों सैनिक, व्यापारी एवं श्रमिक उत्तर से दक्षिण आकर बस चुके थे तथा हिंदी भी उनके साथ स्वत: चली आई थी। औरंगज़ेब के बाद यहाँ आसफ़जाही वंश ने राज किया। तेलंगाना में 1712 से निज़ाम का वर्चस्व रहा। उनके समय में भी हिंदी यहाँ फली-फूली तथा यहाँ की क्षेत्रीय भाषाओं से प्रभावित हुई। यही भाषा यहाँ मिश्रित हिंदी 'दक्खिनी हिंदी' के नाम से जानी जाती है।

दक्खिनी हिंदी की विशेषताएँ, खड़ी बोली के साथ उसकी व्याकरणिक व भाषा वैज्ञानिक समानताएँ और विषमताएँ अपने आप में एक संपूर्ण अलग आलेख की पूरी संभावना रखते हैं जिसको अगले वर्ष पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का पूरा प्रयास करूँगी। अभी के लिए इस आलेख की समाप्ति आपको यह दिखाते हुए करना चाहूँगी कि अहिंदी प्रांत में फल-फूल रही हिंदी की इस शैली में किस प्रकार का उत्कृष्ट साहित्य लिखा जा रहा है।

एकीच है तुम तो बता दियो
कायकू फिर ये हजारों चर्च मंदिरा
सब जगह तुम घेर के बैठो तो
कहाँ से मिलते हम गरीबा कू घरा

आजकल नरेंद्र राय की बात किए बिना हैदराबाद की आधुनिक दक्खिनी की बात अधूरी मानी जाती है। उनकी दक्खिनी कविता हर सप्ताह छपती है। वे कवि रूप में दक्खिनी को अपार साहित्य दे रहे हैं। दक्खिनी में लोक गीत का एक नमूना देखिए—

''पैसा मेरा कैसा गया माँ
मेरी तो जान जाना था
पैसा के चावल आते थे
मेरे कु खाना होता था
पोट्टे कू पींच होती थी
पैसा कू घोषत आना था
मेरी कू बोटी होती थी
अम्मा कू शोरबा होता था
पोट्टे कू हड्डी मिलती थी
पैसे कू कपड़ा आता था
मेरे कू कुर्ता होता था
अम्मा कू चोली होती थी
पोट्टे कू चड्डी होती थी।''

❑

हैदराबाद, भारत
anitaganguly1954@gmail.com

16 शब्दों की यात्रा : तुर्की की झलक

• डॉ. तेज कृष्ण भाटिया

हालाँकि तुर्किस्तान से एक-दो बार पहले गुज़र चुका था लेकिन इस बार तुर्किस्तान में जाना और रहना एक और तरीके का अनुभव था। मुझे याद है कि पहली बार जब मैं इस्तांबुल पहुँचा। 'पैन-एम' के हवाई अड्डे पर उतरते ही तरह-तरह के टैंकों की उपस्थिति में ज़रा 'कबाब में हड्डी' जैसा अनुभव हुआ। मन में आता था कि जल्दी इस देश या हवाई अड्डे से निकलें तो शांति मिले।

लेकिन इस बार बात कुछ और ही थी। एक मीडिया कॉन्फ़्रेंस में भाग लेने जा रहा था—इज़मेर में। दुविधा में था जाऊँ या न जाऊँ लेकिन वह दुविधा उत्साह एवं आकांक्षा में परिवर्तित हो गई जब मुझे पता चला कि मेरा एक छात्र-अहमत वहीं इज़मेर में अब प्रोफ़ेसर है। अहमत ने मुझे आश्वासन दिया कि अब मैं तुर्की में एक अजनबी के रूप में नहीं लेकिन अपने-स्वरूप देश में आ रहा हूँ।

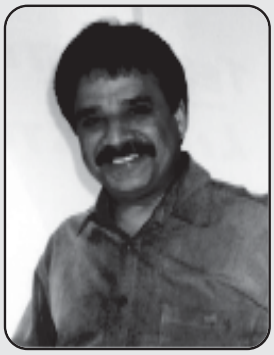

प्रो. तेज कृष्ण भाटिया ने इलिंवा विश्वविद्यालय से भाषा विज्ञान में पीएचडी तथा एम.ए. की उपाधि प्राप्त की है। वे भाषा विज्ञान के प्रोफ़ेसर तथा सीराक्यूज़ विश्वविद्यालय, सीराक्यूज़, न्यू यॉर्क में साउथ एशिया लैंग्वेज के निदेशक हैं। साथ ही वे भाषाई अध्ययन प्रोग्राम के निदेशक तथा संज्ञानात्मक विज्ञान के कार्यवाहक निदेशक भी रहे। वे लोकप्रिय टी.वी. अध्ययन केंद्र एस.आई. न्यूहॉउस स्कूल ऑव पब्लिक कॉम्यूनिकेशन में फेलो भी रह चुके हैं। जापान, अमेरिका, भारत तथा अन्य देशों के विश्वविद्यालयों में वे विज़िटिंग प्रोफ़ेसर के रूप में कार्यरत रहे।

अहमत का आश्वासन साक्षात सत्य बन गया। पूरे तीन सप्ताह के दौरान मुझे और मेरी पत्नी को लगा ही नहीं कि हम कहीं विदेश में हैं। तीन सप्ताह के दौरान हम तीन शहरों में गए इज़मेर, इस्तांबुल और कैपोडोशिया। यात्रा के दौरान एक हिंदी गाना कई बार मेरे मस्तिष्क में गूँज रहा था 'अजनबी तुम जाने-पहचाने से लगते हो'। पुराने दोस्तों से मिलने की प्रसन्नता के अतिरिक्त खाना और जाने-पहचाने शब्दों के साक्षात्कार के कारण भी यह देश अपरिचित सा नहीं लगा।

हरेक शब्द एक भूले-बिसरे रिश्ते की याद दिलाता था। मीडिया कॉन्फ़्रेंस एक 'शब्दों के सम्मेलन' का प्रतीक बन जाएगा, ऐसी मेरी कल्पना भी नहीं थी। तुर्की एक 'वतन', 'वाकिफ़ ज़मीन' सा लगने लगा।

टर्किश एयरलाइंस के जहाज़ में घुसते ही 'हवा' शब्द हावी होने लगा। होटल के कमरे में आते ही 'साबुन' मिला। 'वज़ीर', 'हिकमत' और 'पाशा' बचपन में सुनी कहानियों की याद दिला रहे थे। सड़कों पर 'दिक्कत' सावधानी बरतने पर ज़ोर दे रहे थे।

किसी भी होटल में जाओ 'सादा', 'ताज़ा', 'मशहूर', 'तिन्दूर', 'तवा', 'पनीर', '(अ)नार', 'शक्कर', 'चाय', 'मसालेदार', 'प्याज़', 'बादाम' आदि जैसे शब्दों का अर्थ समझना कोई पहेली नहीं थी। बैंकों में जाओ तो 'किताब' और 'हिसाब' से साक्षात्कार हो ही जाता था। खाना भी कोई विदेशी सा नहीं था, 'कबाब' के अतिरिक्त हमारा मनपसंद खाना 'गोज़लेमे' था। यह शब्द सचमुच अपरिचित था। लेकिन गोज़लेमे एक आलू का परांठा था जिसकी माँग हम यात्रा के दौरान बार-बार करते रहे। 'शक्कर पारा' भी मिलता रहा लेकिन एक विज्ञापन में 'निकाह शक्कर' की सचमुच अपनी ही मिठास थी जो कि आमतौर पर मेट्रिमोनियल में नहीं मिलती। जब मैंने 'पहिलवान' शब्द देखा तो वह मेरे मन में दारासिंह के अखाड़े और सिनेमाघरों में मध्यांतर में दिखाए जानेवाले पहलवान छाप बीड़ी के विज्ञापनों को सचित्रित करने लगा।

इज़मेर से हम 'कापाडोशिया' गए जहाँ का परिदृश्य अद्‌भुत है। ऐसा लगता है कि या तो आप चाँद पर हैं या आप डिज़नी की

फ़िल्म देख रहे हैं जहाँ घर मशरूम की तरह हैं। मेरी पत्नी जो सिविल इंज़ीनियर है, उसके लिए 'कापाडोशिया' खास शोध एवं आकर्षण का विषय बन गया। 'कापाडोशिया' 'नव शहर' के पास है। 'नव शहर' का अर्थ बताने की कोई ज़रूरत नहीं। गुलामों का जगत 'कैपोडोशिया' है।

'सिल्क रोड' जिसका व्यापार जगत में अपना महत्व है, मैं इसके छोर पर जा चुका हूँ। तुर्की में 'सिल्क रोड' के बारे में काफ़ी पढ़ चुका था लेकिन वहाँ पहली बार जाने का अवसर मिला। 'मुसाफ़िर', 'कारवाँ' और 'सराय' शब्दों का समन्वय यहाँ हर जगह पर दिखाई देता था। सराय देखकर एहसास हुआ कि सराय आजकल 'रीज़ॉर्ट होटल' से छोटे नहीं हैं। यात्रियाँ ही नहीं पशुओं के लिए भी पूरी व्यवस्था थी। 'सराय' किले जैसी दीवारों से ढँका एक छोटे से शहर का रूप था।

'सिल्क रोड' जिसका व्यापार जगत में अपना महत्व है, मैं इसके छोर पर जा चुका हूँ। तुर्की में 'सिल्क रोड' के बारे में काफ़ी पढ़ चुका था लेकिन वहाँ पहली बार जाने का अवसर मिला। 'मुसाफ़िर', 'कारवाँ' और 'सराय' शब्दों का समन्वय यहाँ हर जगह पर दिखाई देता था। सराय देखकर एहसास हुआ कि सराय आजकल 'रीज़ॉर्ट होटल' से छोटे नहीं हैं। यात्रियाँ ही नहीं पशुओं के लिए भी पूरी व्यवस्था थी।

इस्तांबुल हवाई अड्डे पहुँचने पर दो-तीन बसें आई.टी. के युवक एवं युवतियों से भरी हुई दिखाई दीं। वह एक नई सिल्क रोड है जिसमें भारत एवं तुर्की का अपना-अपना योगदान है। इसके साथ ही भारत एवं तुर्की नए शब्दों के भ्रमण का शुभारंभ हो रहा है। तीन हफ़्तों के दौरान मिले परिचित शब्दों का अपना इतिहास है, कितना योगदान फ़ारसी और कितना अरबी का है, यह तो अलग शोध का विषय है, विशेषकर ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान का लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि 'उर्दू' तुर्की का शब्द है न तो यह भारतीय है, न अरबी और न ही फ़ारसी। इस्तांबुल में मेरी मुलाकात एक प्रोफ़ेसर से हुई जो इस्तांबुल विश्वविद्यालय में उर्दू के अध्यक्ष हैं एवं जो हाल ही में दिल्ली में एक कॉन्फ़्रेंस से वापस लौटे थे। यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई कि तुर्की में अंकारा विश्वविद्यालय में (जहाँ मैं नहीं जा पाया) संस्कृत और हिंदी भी पढ़ाई जाती है। अंकारा से मेरी एक छात्रा हमसे मिलने के लिए इस्तांबुल आई जिसका नाम 'बहार' है जिसका मतलब 'वसंत' है। बहार ने बताया कि उसकी बहन इस्तांबुल में उर्दू सीख रही है। जाने की 'तारीख' आ गई थी। हम तुर्की से रवाना हुए सिराक्यूज़ के लिए। एक भाषा वैज्ञानिक होने के नाते तुर्की भाषा की संरचना एवं सार्वभौमिक व्याकरण में विशेष रुचि तो है ही लेकिन इस यात्रा ने शब्दों के बारे में नई रुचि पैदा कर दी है।

❑

न्यू यॉर्क, यू.एस.ए.
tkbhatia@syr.edu

17 तुर्की में हिंदी भाषा एवं साहित्य का अध्ययन-अध्यापन

• डॉ. साईनाथ विट्ठल चपले

भारत और तुर्की का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध रहा है। दोनों देशों के बीच इस सांस्कृतिक आदान-प्रदान का इतिहास गवाह रहा है। मौलाना जलालुद्दीन रूमी के सूफ़ी दर्शन का प्रभाव स्पष्ट रूप से भारतीय सूफ़ी दर्शन एवं भक्ति साहित्य पर देखा जा सकता है। अरबी उत्पत्ति के कारण हिंदी (हिंदुस्तानी) और तुर्की भाषा में ऐसे अनेकानेक शब्द हैं जो थोड़े-बहुत बदलाव के बावजूद समानार्थी हैं।

हिंदी प्रेमी इस बात से भिज्ञ हैं कि गत वर्षों में विदेशों में हिंदी का प्रचार-प्रसार हुआ है, हो रहा है। वर्तमान परिदृश्य पर यदि हम नज़र फेरें तो पाएँगे कि भारत के वर्तमान प्रधान मंत्री माननीय नरेंद्र मोदी का हिंदी भाषा के प्रति प्रेम और विदेशों में उनके द्वारा दिए गए हिंदी संबोधनों के कारण इस भाषा के प्रचार-प्रसार में अभूतपूर्व तेज़ी आई है, इसमें दो राय नहीं है कि इन दिनों विदेशों में हिंदी भाषा के प्रति लोगों के नज़रिए में बदलाव आया है।

डॉ. साईनाथ विट्ठल चपले का जन्म 5 मार्च, 1980 ई., बन्नाली, जिला नांदेड़, महाराष्ट्र राज्य में हुआ। इन्हें हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय से एमफ़िल, पीएचडी तथा एम.ए. की उपाधि प्राप्त है। 'मिथक का काव्यात्मक आख्यान' पुस्तक शिल्पायन, 2009, हिंदी कोविद रत्नमाला– संपादित, 2014, नेहा 2014 में प्रकाशित तथा अन्य कई पत्र-पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशित हैं।

हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय से एमफ़िल में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर 'रूपचंद छाजेड जैन स्वर्ण पदक' से पुरस्कृत हैं। हिंदी गद्य साहित्य में मुख्यतः हिंदी के दुर्लभ उपन्यास एवं कहानियों पर कार्य और साहित्य के समाजशास्त्र में इनकी विशेष रुचि है।

संप्रति डॉ. चपले भारतीय विद्या विभाग, एजीएस विश्वविद्यालय में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं।

तुर्की में हिंदी अध्ययन-अध्यापन की शुरुआत केवल हिंदी भाषा एवं साहित्य से न होकर भारतीय विद्या विभाग के तहत संस्कृत से प्रारंभ हुई। इस विभाग में संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति के बारे में तुर्की छात्रों को पढ़ाया जाता था। अतातुर्क का यह विश्वास था कि तुर्की में राष्ट्रीय चेतना निर्माण करने के लिए युवाओं को तुर्की भाषा के साथ-साथ विदेशी भाषाएँ, साहित्य, संस्कृति, इतिहास और भूगोल की जानकारी का होना आवश्यक है। इसी आधार पर सन् 1935 में अंकारा विश्वविद्यालय में भाषा और इतिहास-भूगोल संकाय की स्थापना की गई।

भाषा और इतिहास—भूगोल संकाय को आधिकारिक तौर पर 9 जनवरी, 1936 को स्थापित किया गया। संकाय उद्घाटन कार्यक्रम में राष्ट्रपति अतातुर्क, प्रधान मंत्री इस्मेइनोनू, मंत्री मंडल के कई सदस्य एवं कई विदेशी गणमान्य व्यक्तिगण शामिल थे। इस संकाय में आठ विभागों की स्थापना की गई थी। उन्हीं आठ विभागों में से भारतीय विद्या विभाग एक था। प्रसिद्ध जर्मन इंडोलॉजिस्ट प्रो. वाल्टर रूबेन इस संकाय के पहले अध्यक्ष थे।

तुर्की में भारतीय विद्या विभाग की स्थापना सन् 1989 में अंकारा विश्वविद्यालय में की गई। मुख्य रूप से यह विभाग 1989 तक प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं शास्त्रीय संस्कृत साहित्य पर केंद्रित था। सन् 1989 में भारत सरकार के भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की ओर से अतिथि प्राध्यापक चेयर की स्थापना की गई। इस चेयर स्थापना के बाद अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग में हिंदी भाषा एवं साहित्य अध्यापन की शुरुआत हुई। इस विभाग में स्नातक, स्नातकोत्तर एवं शोध की शिक्षा-दीक्षा दी जाती है। अब तक अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग में आठ भारतीय अतिथि प्राध्यापकों ने अपनी सेवा प्रदान की है जिनमें प्रो.राकेश, प्रो.नूरजहाँ बेगम, प्रो.तिवारी, प्रो.सीतालक्ष्मी किदाम्बी, प्रो. शकिला खानम, प्रो. सुशीला थॉमस, डॉ. विनोद तिवारी आदि शामिल हैं। संप्रति इस चेयर पर डॉ. अनुपमा अलवेकर कार्यरत हैं।

तुर्की में हिंदी के स्नातक, स्नातकोत्तर एवं शोध स्तर पर लगभग 70 छात्र पंजीकृत हैं। सन् 1989 से तुर्की से चार छात्र प्रतिवर्ष भारत में हिंदी भाषा एवं साहित्य तथा भारतीय संस्कृति का अध्ययन एवं शोध कार्य करने जाते हैं। इन सभी छात्रों को भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की ओर से छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।

तुर्की में दूसरे भारतीय विद्या विभाग की स्थापना डॉ. अली कुचुकलेर ने एर्जीएस विश्वविद्यालय में सन् 2009 में की। सन् 2009 में विभाग की स्थापना तो हो गई पर कोर्स चलाने के लिए पर्याप्त अध्यापक न होने के कारण और सरकारी अनुमोदन के कारणवश इस विश्वविद्यालय में अभी तक किसी कोर्स की शुरुआत नहीं हुई है। संप्रति इस विश्वविद्यालय में डॉ. अली कुचुकलेर, जानान एर्देमीर कार्यरत हैं। फ़िलहाल इस विभाग में अंतर्विषयक अध्ययन के तहत एकाध पाठ्यक्रमों की शुरुआत की गई हैं जिनमें कोरियाई, जापानी, आर्मीनियाई भाषा के विद्यार्थी हिंदी भाषा एवं साहित्य तथा भारतीय संस्कृति के पाठ्यक्रम में पंजीकृत होते हैं। विभाग के अध्यक्ष डॉ. अली कुचुकलेर जी का प्रयास है कि जल्द से जल्द विभाग में स्नातक एवं स्नातकोत्तर एवं शोध अध्ययन की शुरुआत हो, इसके लिए वे दिन-रात प्रयासरत हैं। आशा है कि जल्द ही यहाँ पर आधिकारिक तौर पर अध्ययन-अध्यापन की शुरुआत होगी।

तुर्की में इन्हीं दो विश्वविद्यालयों में हिंदी एवं भारतीय संस्कृति का अध्ययन-अध्यापन एवं शोध कार्य होता है। अंकारा विश्वविद्यालय में हिंदी के साथ-साथ संस्कृत की पढ़ाई भी होती है। खास बात यह है कि तुर्की के अध्यापकों का संस्कृत और हिंदी पर समान अधिकार है। तुर्की में संप्रति प्रो. कोर्हन काया (प्रोफ़ेसर), डॉ. दरियाल जान (प्रोफ़ेसर), डॉ. अली कुचुकलेर (असोसिएट प्रोफ़ेसर), यालचीन कयाली, जानान एर्देमीर और असारा गुवेन (शोध सहायक) पद पर कार्यरत हैं।

प्रो. कोर्हन काया ने संस्कृत एवं हिंदी में अपना अध्ययन-अध्यापन का कार्य किया है। वे मूलतः संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं। काया जी ने सन् 1985 में अपने स्नातक के अध्ययन के दौरान महाभारत के किस्से एवं कहानियों पर अपना स्नातक शोध प्रबंध लिखा। प्रो. कोर्हन काया ने सन् 1990 ई. में अपना शोध प्रबंध 'कथासरित्सागर' (महासागर दास्तां नदी का आलोचनात्मक अध्ययन) विषय पर अपनी कलम चलाई है। इन्हें भारत सरकार द्वारा कई विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में आमंत्रित किया गया है। आप अपने शोध के दौरान भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों जैसे बनारस विश्वविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय दिल्ली, संस्कृत विद्यापीठ बनारस, कोलकाता विश्वविद्यालय कोलकाता और जाधवपुर विश्वविद्यालय कोलकाता आदि विश्वविद्यालयों में अपना अध्ययन कार्य किया है।

तुर्की में हिंदी के प्रचार-प्रसार में तुर्की विद्वानों का योगदान

1. प्रो. कोर्हन काया

प्रो. कोर्हन काया का जन्म 1959 में अंकारा में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा सन् 1976 ई. में अन्तिपी हाइ स्कूल में हुई।

प्रो. कोर्हन काया ने संस्कृत एवं हिंदी में अपना अध्ययन-अध्यापन का कार्य किया है। वे मूलत: संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं। काया जी ने सन् 1985 में अपने स्नातक के अध्ययन के दौरान महाभारत के किस्से एवं कहानियों पर अपना स्नातक शोध प्रबंध लिखा। प्रो. कोर्हन काया ने सन् 1990 ई. में अपना शोध प्रबंध 'कथासरित्सागर' (महासागर दास्तां नदी का आलोचनात्मक अध्ययन) विषय पर अपनी कलम चलाई है। इन्हें भारत सरकार द्वारा कई विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में आमंत्रित किया गया है। आप अपने शोध के दौरान भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों जैसे बनारस विश्वविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली, संस्कृत विद्यापीठ, बनारस, कोलकाता विश्वविद्यालय, कोलकाता और जाधवपुर

विश्वविद्यालय कोलकाता आदि विश्वविद्यालयों में अपना अध्ययन कार्य किया है।

कोर्हन काया ने पच्चीस किताबें लिखी हैं जिनमें अनुवाद और स्वतंत्र लेखन सम्मिलित हैं। उनकी कुछ प्रमुख किताबें निम्नलिखित हैं:—

1. भारतीय मिथक शब्दावली 1997
2. भारतीय देवी-देवता 1998
3. बौद्ध बाइबिल 1999
4. हिंदू धर्म 2001
5. भगवत् गीता (अनूदित) 2001
6. भारत तुर्की यूरोपीय दास्तां 2001
7. भारत की भाषाएँ 2005
8. भारतीय दास्तां (अनूदित) 2002
9. रामायण-महाभारत हरिवंश महाकाव्यों का अनुवाद 2002
10. उपनिषद (अनूदित) 2008
11. हिंदी तुर्की शब्दावली 2009

इसके अलावा काया जी के लगभग पचासों शोध आलेख राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। संप्रति वे अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग के विभागाध्यक्ष पद पर कार्यरत हैं तथा ऋग्वेद का अनुवाद एवं भारतीय दर्शन के मूलतत्वों पर कार्य कर रहे हैं।

अली जी ने 2009 में एर्जीएस विश्वविद्यालय कैसरी में अपना पदभार संभालते ही भारतीय विद्या विभाग स्थापित किया और विभाग को पूर्ण रूप से अद्यतन रखने के लिए दिन-रात निष्ठा से कार्य कर रहे हैं। उन्होंने अपने विभाग एवं एर्जीएस विश्वविद्यालय के तत्वावधान में 2011 में ADES (एशियाई भाषाएँ एवं साहित्य) पहला अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

2. प्रो. एच.देरिया जान

प्रो. देरिया जी का जन्म तुर्की में सन् 1965 में हुआ। इन्होंने अपनी स्नातक की पढ़ाई 1990 ई. में भारतीय विद्या विभाग अंकारा विश्वविद्याल से प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने स्नातकोत्तर की उपाधि भारतीय विद्या विभाग अंकारा विश्वविद्यालय से सन् 1995 में पूर्ण की। अपने परास्नातक अध्ययन के दौरान 'रामायण के पात्रों का विश्लेषण' विषय पर प्रबंध लिखा। इसी विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग से सन् 2000 ई. में इन्हें विद्यावाचस्पति उपाधि से नवाज़ा गया। इन्होंने 'विष्णु पुराण के महापुरुष' विषय पर शोध किया है।

देरिया जान जी का तुर्की, संस्कृत और हिंदी पर समान अधिकार है। इन्होंने तुर्की में संस्कृत और हिंदी के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन्हें भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा 1995 ई. में अनुसंधान छात्रवृत्ति प्रदान की गई। देरिया जी को केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, संस्कृत साहित्य अकादमी, नई दिल्ली में शैक्षणिक चर्चा हेतु आमंत्रित किया गया है।

देरिया जी ने स्वतंत्र लेखन एवं अनुवाद कार्य किया है। इन्होंने अब तक हिंदी एवं संस्कृत में पाँच किताबें प्रकाशित की हैं जो निम्नलिखित हैं—

1. संस्कृत देवनागरी वर्णमाला 2007
2. संस्कृत व्याकरण 2008
3. रामायण (अनूदित) 2012
4. मालविकाग्निमित्र (अनूदित) 2013
5. भारतीय पर्यटन 2015 — प्रो. देरिया जान एवं जानान एर्देमीर

इसके अलावा देरिया जी के राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में लगभग तीस आलेख प्रकाशित हैं। इनके अध्ययन एवं अनुसंधान के क्षेत्र हैं— संस्कृत साहित्य, शास्त्रीय संस्कृत साहित्य, भारतीय पौराणिक कथाएँ और भारतीय इतिहास एवं संस्कृति आदि। संप्रति वे अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग में प्रोफ़ेसर पद पर कार्यरत हैं।

3. डॉ. अली कुचुकेलर

डॉ. अली का जन्म जून 1970 में हुआ। इन्होंने अपनी पढ़ाई भारतीय विद्या विभाग से पूर्ण की। अली जी की शोध रुचि के क्षेत्र हैं—भारतीय विद्या वेब और विज्ञान अनुसंधान क्षेत्र, एशियाई अध्ययन साहित्य और इतिहास, भारतीय साहित्य और दर्शन का विज्ञान आदि। अली जी का तुर्की, संस्कृत, हिंदी और अंग्रेज़ी भाषा पर अधिकार है।

अली जी को स्नातक की उपाधि सन् 1998 में प्रदान की गई। इन्होंने स्नातकोत्तर अध्ययन अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग से सन् 2001 में पूर्ण किया। स्नातकोत्तर पढ़ाई के दौरान ही इन्होंने कौटिल्य के अर्थशास्त्र पर अपना प्रबंध लिखा। शोध के अगले क्रम में अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग से ही सन् 2008 में इन्हें विद्यावाचस्पति की उपाधि प्रदान की गई। इनकी पीएचडी का विषय है—'प्राचीन भारत में विचार एवं स्थान'।

अली जी ने 2009 में एर्जीएस विश्वविद्यालय, कैसरी में अपना पदभार संभालने ही भारतीय विद्या विभाग स्थापित किया और विभाग को पूर्ण रूप से अद्यतन रखने के लिए दिन-रात निष्ठा से कार्य कर रहे हैं। इन्होंने अपने विभाग एवं एर्जीएस विश्वविद्यालय के तत्वावधान में 2011 में ADES (एशियाई भाषाएँ एवं साहित्य) पहली अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया। इस संगोष्ठी में लगभग 80 देशों के अध्यापक एवं शोध छात्रों ने भाग लिया। अब तक इन्होंने ADES की तीन अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियाँ सफलतापूर्वक संपन्न किए जिसमें सौ से अधिक देशों के प्रतिभागियों ने भाग लिया। अली जी शोध कार्य करने के लिए भारत में कई बार यात्रा कर चुके हैं। इन्हें भारत सरकार द्वारा शोध कार्य करने के लिए जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में सन् 2012 में आमंत्रित किया गया था। वे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय विशेष अध्ययन के आजीवन सदस्य हैं। उन्हें भारत सरकार द्वारा उच्च शिक्षा विदेश छात्रवृत्ति सन् 2012 में प्रदान की गई।

अली जी की तीन किताबें प्रकाशित हुई हैं:—

1) भारत में विज्ञान के पायनियर्स : वैदिक गणित
2) एशियन भाषाएँ एवं साहित्य-संपादित
3) 21वीं सदी में एशियाई भाषाओं के शिक्षण पर अध्ययन 2014

इसके अलावा अली जी के लगभग बीस आलेख राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। संप्रति वे भारतीय इतिहास एवं संस्कृति तथा हिंदी भाषा विषय पर कार्यरत हैं।

उपरोक्त तीन महानुभावों के अतिरिक्त अन्य चार शोध छात्र संस्कृत, हिंदी एवं भारतीय अध्ययन पर अपना अनुसंधान कर रहे हैं। संप्रति अंकारा विश्वविद्यालय में यालचीन कयाली, जानान एर्देमीर, असरा गुवेन और गुरख़ान अकमाज़ पीएचडी में पंजीकृत हैं। यालचीन कयाली और असरा गुवेन अंकारा विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग में शोध सहायक के रूप में कार्यरत हैं तथा जानान एर्देमीर एर्जीएस विश्वविद्यालय कैसरी के भारतीय विद्या विभाग में शोध सहायक के रूप में कार्यरत हैं। उपरोक्त शोध छात्रों में से जानान एर्देमीर ने भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद छात्रवृत्ति के तहत सन् 2010-2011 में हिंदी तथा भारतीय अध्ययन के लिए केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा में प्रवेश लिया है। जानान एर्देमीर ने केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा से हिंदी भाषा दक्षता डिप्लोमा की उपाधि प्राप्त की है।

साफ़ देखा जा सकता है कि हिंदी के प्रति तुर्की का प्रेम इन उक्त विद्वानों के माध्यम से व्यक्त होता है। वे पढ़ते-पढ़ाते दोनों हैं, हिंदी के प्रति समर्पण भाव रखते हैं, ऐसे में उनके इस प्रेम को सलाम, शत-शत नमन।

आशा है कि भविष्य में तुर्की में हिंदी तथा भारतीय विद्या का प्रचार-प्रसार तेज़ी से हो और इससे दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों को और मज़बूती मिले। आमीन।

❐

कैसरी, तुर्की
saichaple@gmail.com

18 आई.बी. पाठ्यक्रम में हिंदी और चुनौतियाँ

• *श्रीमती एमा कुमुदिनी मेंडा*

पृष्ठभूमिः इंटरनेशनल बैकलॉरिएट संगठन और आई. बी. पाठ्यक्रम

विभिन्न भारतीय पाठ्यक्रमों के लगभग 20 वर्षों के अध्यापन के बाद मुझे आई.बी. पाठ्यक्रम में हिंदी पढ़ाने का अवसर मिला।

1961 में स्थापित आई.बी.ओ. अर्थात इंटरनेशनल बैकलॉरिएट संगठन (*The International Baccalaureate Organization*) का मुख्यालय जिनेवा में स्थित है और यह 3 से 19 वर्ष के बच्चों के लिए 4 शैक्षिक कार्यक्रम प्रस्तुत करता है।

आई.बी.ओ. का यह पाठ्यक्रम Marie-Therese Mauette द्वारा लिखित "Educational Techniques for peace. Do they exist?" पर आधारित है। इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य ऐसे खोजी, समझदार और दयालु युवाओं को तैयार करना है जो अंतर-सांस्कृतिक समझ और मानव मात्र के लिए सम्मान से एक बेहतर और शांतिपूर्ण दुनिया का निर्माण करने में मदद कर सकें। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह संगठन विभिन्न स्कूलों, देश-विदेश की सरकारों और अनेक अंतरराष्ट्रीय संगठनों के साथ मिलकर एक चुनौतीपूर्ण अंतरराष्ट्रीय पाठ्यक्रम और कठोर मूल्यांकन पद्धति विकसित करने में सतत प्रयत्नशील रहता है। यह पाठ्यक्रम दुनिया भर के विद्यार्थियों को सक्रिय, दयालु और आजीवन शिक्षार्थी बने रहने और साथ ही यह समझ रखने के लिए प्रोत्साहित करता है कि हर व्यक्ति अपनी अलग सोच रखते हुए भी सही हो सकता है। (आई.बी. मिशन स्टेटमेंट)

जन्म : जबलपुर।
शिक्षा : हिंदी में एमफिल एवं स्नातकोत्तर, विज्ञान में स्नातकोत्तर शिक्षा, बीएड, भरतनाट्यम की शिक्षा भी प्राप्त की।
सम्मान : रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय की महिला परीक्षार्थियों में सर्वोच्च अंक प्राप्त होने पर इनको 'श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान स्वर्ण पदक' प्राप्त हुआ।
कार्यक्षेत्र : कुमुदिनी मेंडा जी हवाबाग महिला विद्यालय, मुंबई के जूनियर कॉलेज, पंचगनी के सेंट पीटर्स स्कूल आदि कई संस्थाओं में हिंदी अध्यापन कार्य में जुटी रहीं।
संप्रति : वे मुंबई की एक जानी-मानी अंतरराष्ट्रीय पाठशाला; एकॉल मोंजियाल या वर्ल्ड स्कूल में पिछले 11 वर्षों से हिंदी पढ़ा रही हैं।

IBO, अपने इस पाठ्यक्रम के संचालन की अनुमति सिर्फ़ उन्हीं पाठशालाओं को देता है जो पाठ्यक्रम की आवश्यकता और माँग की पूर्ति कर सकें जैसे समृद्ध लाइब्रेरी, विज्ञान और कंप्यूटर की आधुनिक प्रयोगशालाएँ, खेलकूद की उत्तम व्यवस्था, पाठशाला का उत्तम बुनियादी ढाँचा और इस पाठ्यक्रम की समुचित समझ रखनेवाले प्रशिक्षित शिक्षकगण। संगठन की इन बुनियादी माँगों को पूरा करने के लिए और विद्यार्थियों को सभी सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए ये पाठशालाएँ उसी अनुपात में शुल्क भी रखती हैं। ऊँचा शुल्क होने के कारण यह पाठ्यक्रम भारत में अब भी अभिजात्य वर्ग की पहुँच तक ही सीमित है जबकि विदेश में ऐसी स्थिति नहीं है।

पूरे विश्व में लगभग 4329 पाठशालाएँ हैं जो आई.बी. पाठ्यक्रम का सफलतापूर्वक संचालन कर रही हैं। जहाँ अमेरिका 1688 पाठशालाओं के साथ अव्वल नंबर पर है वहाँ भारत में लगभग 122 पाठशालाएँ हैं। भारत में इनकी लगातार बढ़ती संख्या इस प्रणाली की प्रयोगात्मकता, सरलता और पारदर्शिता की सूचक है और शायद लोकप्रियता की भी!

आई.बी. पाठ्यक्रम में भाषाएँ और हिंदी का स्थान

इस पाठ्यक्रम में किन्हीं दो भाषाओं का अध्ययन अनिवार्य है। प्रथम वर्ग में प्रथम भाषा के रूप में और द्वितीय वर्ग में द्वितीय भाषा के रूप में एक-एक भाषा का अध्ययन किया जाता है। भाषा को

प्रथम भाषा के रूप में पढ़ते समय, उसमें रचित साहित्य का समावेश होता है, साथ ही आवश्यक होती है उस साहित्य की मीमांसा की। द्वितीय भाषा के रूप में भाषा सीखने का उद्देश्य इतना गहन नहीं होता है। विद्यार्थी इस भाषा का अध्ययन केवल ज्ञात और अज्ञात परिस्थितियों में भाषा की सांस्कृतिक समझ और अपनी भाषाई क्षमता का प्रदर्शन करते हुए स्पष्ट और प्रभावशाली ढंग से भाषा-प्रयोग कर पाने तथा अपने मनोरंजन के लिए भी करता है।

अगर हम भारत की बात करें तो इन अंतरराष्ट्रीय शालाओं में बहुत ही कम विद्यार्थी हिंदी को प्रथम भाषा के रूप में चुनते हैं। भारत के महँगे प्राइवेट स्कूलों में शिक्षण का माध्यम अंग्रेज़ी ही होता है इसलिए विद्यार्थी इसे ही अपनी प्रथम भाषा के रूप में चुनते हैं। द्वितीय भाषा के रूप में फ्रेंच, स्पेनिश, जर्मन, हिंदी इत्यादि में से कोई एक अन्य विदेशी भाषा चुनी जाती है। भारत में हिंदी को ज़्यादातर द्वितीय भाषा या विदेशी भाषा की श्रेणी में पढ़ा जाना मन को खलता तो अवश्य है पर संतोष इस बात का है कि किसी न किसी रूप में यह विदेशी पाठ्यक्रम में जमी हुई है और इस रूप में विदेशों में पहुँच तो रही है!

आज से 11 वर्ष पहले जिस जोश-ओ-ख़रोश से मैंने इस पाठ्यक्रम को अपनाया था अब वह कहीं डूबता हुआ दिखता है। इस पाठ्यक्रम को चुनने का विशेष कारण था; इसकी चुनौती-भरी माँग! द्वितीय भाषा को पढ़ाने के लिए किसी निश्चित पाठ्यपुस्तक को निर्धारित करने के बदले पाठ्यक्रम को वास्तविक जगत और उसमें होनेवाली समसामयिक गतिविधियों से जोड़ा जाना इसकी सबसे बड़ी विशेषता है।

आई.बी. पाठ्यक्रम की शिक्षण पद्धति और मूल्यांकन के अनूठे अंदाज़ के कारण मेरी उससे जुड़ने की तीव्र उत्कंठा हमेशा से थी। अपने 20 साल के कार्यकाल के पश्चात जिसके अंतर्गत मैंने भारत के लगभग सभी पाठ्यक्रमों में अध्यापन का अनुभव प्राप्त किया जब मुझे एकॉल मोंडियाल/वर्ल्ड स्कूल में पढ़ाने का अवसर मिला तो लगा मनवांछित फल मिल गया हो! एक तो मुंबई की प्रतिष्ठित पाठशाला और उस पर अंतरराष्ट्रीय पाठ्यक्रम! फलने-फूलने के अवसर की कल्पना मात्र से मन बल्लियों उछलने लगा लेकिन हाथ लगे इस अवसर के साथ मुँह बाए खड़ी चुनौतियों की शायद मैंने कल्पना भी नहीं की थी।

आई.बी. प्रणाली में हिंदी-शिक्षण की चुनौतियाँ

आज से 11 वर्ष पहले जिस जोश-ओ-ख़रोश से मैंने इस पाठ्यक्रम को अपनाया था अब वह कहीं डूबता हुआ दिखता है। इस पाठ्यक्रम को चुनने का विशेष कारण था; इसकी चुनौती-भरी माँग! द्वितीय भाषा को पढ़ाने के लिए किसी निश्चित पाठ्यपुस्तक को निर्धारित करने के बदले पाठ्यक्रम को वास्तविक जगत और उसमें होनेवाली समसामयिक गतिविधियों से जोड़ा जाना इसकी सबसे बड़ी विशेषता है।

इसके अलावा एक वर्ग में विद्यार्थियों की संख्या का कम होना, अत्याधुनिक कक्षाएँ, शिक्षण में प्रयोग की छूट, बेहतर कार्यस्थल, आधुनिक सुविधाएँ, व्यक्तिगत व व्यावसायिक उन्नति के अनेक अवसर, देश-विदेश के लोगों से मिलने का अवसर, उनकी संस्कृति समझने और अपनी संस्कृति की झलक देने के अवसर, बेहतर तनख्वाह और इसके पाठ्यक्रम की भारत में नवीनता आदि कारणों ने मेरे अंदर एक नया जोश भर दिया था।

लेकिन यह जोश-ओ-ख़रोश बनाए रख पाना अब मेरे लिए भारी पड़ रहा है। इस पाठ्यक्रम से 12वर्षों से जुड़े होने के बाद भी इस पाठ्यक्रम को सही तरीके से अपनाने और उसका निर्वहन करने में कहीं न कहीं कसर रह ही जाती है।

अ. प्रणालीगत चुनौतियाँ

पाठ्यक्रम के ढाँचे को ध्यान में रखते हुए जीवन से जुड़े विषयों की पठन-पाठन सामग्री के चयन का ज़िम्मा अध्यापक का ही होता है। यह सामग्री किस प्रकार की हो, उसकी शब्द सीमा क्या हो, इन सभी के स्पष्ट निर्देश संगठन ने पहले ही निश्चित कर दिए हैं जिनका अध्यापक वर्ग के पास मार्गदर्शिका के रूप में उपलब्ध रहना अनिवार्य होता है। यहाँ मैं यह बता दूँ कि इन सब आवश्यकताओं

की पूर्ति आसान नहीं होती है।

जहाँ एक ओर यह पाठ्यक्रम अपनी पारदर्शिता के लिए पसंद किया जाता है, वहीं पारदर्शिता लाने के लिए तैयार की गई मार्गदर्शिकाओं के बोझ तले दबा शिक्षक-जगत, दबी ज़ुबाँ से इसकी शिकायत भी कर रहा है।

अपनी समसामयिकता के कारण इस पाठ्यक्रम की नवीनता को बनाए रखने के लिए इसमें सतत परिवर्तन होते रहते हैं। समय की माँग और विद्यार्थियों और शिक्षक-जगत से मिली प्रतिपुष्टि पर आधारित ये परिवर्तन वैयक्तिक रूप से अलग-अलग विषय से संबंधित होते हैं। उनमें चुने गए विषयों और मूल्यांकन के तरीके में आवश्यकता अनुसार फेरबदल होता रहता है जिसकी सूचना और प्रशिक्षण की ज़िम्मेदारी संगठन की होती है। फेरबदल होना उचित है किन्तु कभी-कभी जब तक शिक्षक वर्ग पाठ्यक्रम में आए बदलाव को ठीक से समझ पाता है; पाठ्यक्रम में दूसरा बदलाव आ जाता है और फिर वही समझने-समझाने का क्रम चालू हो जाता है।

शिक्षा जगत में हुए नवीनतम अनुसंधानों पर आधारित यह पाठ्यक्रम पूर्णतः विद्यार्थी केंद्रित होता है जहाँ विद्यार्थी की ज्ञानार्जन की व्यक्तिगत पद्धति को ध्यान में रखकर उसे शिक्षा दी जाती है। इस पाठ्यक्रम में उन विद्यार्थियों को भी सहजता से स्वीकार किया जाता है जिन्हें शारीरिक अक्षमता के कारण किसी भी प्रकार के 'Learning Support' की आवश्यकता होती है। उनकी आवश्यकताओं और सुविधाओं को ध्यान में रखकर ही उन्हें शिक्षा दी जाती है।

शिक्षा-जगत में हुए नवीनतम अनुसंधानों पर आधारित यह पाठ्यक्रम पूर्णत: विद्यार्थी केंद्रित होता है जहाँ विद्यार्थी की ज्ञानार्जन की व्यक्तिगत पद्धति को ध्यान में रखकर उसे शिक्षा दी जाती है। इस पाठ्यक्रम में उन विद्यार्थियों को भी सहजता से स्वीकार किया जाता है जिन्हें शारीरिक अक्षमता के कारण किसी भी प्रकार के 'Learning Support' की आवश्यकता होती है। उनकी आवश्यकताओं और सुविधाओं को ध्यान में रखकर ही उन्हें शिक्षा दी जाती है। यह सहयोग उन विद्यार्थियों को कैसे दिया जाए, इसके लिए सतत विशेषज्ञ लगे रहते हैं और उन्हें पढ़ानेवाले अध्यापक वर्ग को मार्गदर्शित करते रहते हैं। अध्यापक वर्ग के लिए यह सदैव एक चुनौती होती है कि किस प्रकार अलग-अलग आवश्यकताओंवाले विद्यार्थियों को उनके पसंदीदा तरीके से न सिर्फ़ पढ़ाया जाए बल्कि उनका मूल्यांकन भी उचित/अपेक्षित तरीके से किया जाए।

आई.बी. में मूल्यांकन पद्धति भी थोड़ी पेचीदा है जिसमें मूल्यांकन के लिए 'रुब्रिक' निश्चित किए गए हैं। न्यूनतम से अधिकतम उपलब्धि को 7 से 8 स्तरों में बाँटकर यह 'रुब्रिक' तैयार किए जाते हैं और फिर उनसे मेल खाते स्तर के अनुसार विद्यार्थी की वास्तविक उपलब्धि को आँका जाता है। इन 'रुब्रिक्स' में भी कहीं-कहीं स्पष्टता की कमी झलकती है। मूल्यांकन के स्तरों का अंतर कभी इतना अस्पष्ट या नहीं के बराबर होता है कि शिक्षक के लिए यह निश्चित कर पाना मुश्किल हो जाता है कि विद्यार्थी को ऊपरवाले स्तर में रखा जाए या निचले!! शिक्षक के लिए किए गए मूल्यांकन का औचित्य दे पाना बहुत मुश्किल हो जाता है।

जैसा कि मैंने पहले भी कहा, पारदर्शिता इस पाठ्यक्रम की सबसे बड़ी विशेषता है, शिक्षक वर्ग से भी यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने शिक्षण और मूल्यांकन संबंधी क्रियाकलापों को उचित रूप से लेखबद्ध रखें। इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति करते-करते शिक्षक के लिए शिक्षण में कलात्मकता बनाए रखना टेढ़ी खीर बन जाता है।

दूसरी सबसे महत्वपूर्ण बात है कि इंटरनेशनल बैकलॉरिएट संगठन की सभी मार्गदर्शिकाएँ अंग्रेज़ी में मुद्रित हैं और संगठन की दार्शनिकता या कार्य प्रणाली को समझने के लिए अंग्रेज़ी की अच्छी मालूमात ज़रूरी हैं। इसके अभाव में और समय की कमी के कारण या तो मार्गदर्शिका को पढ़ने के लिए मानसिक रूप से तैयार होना पड़ता है या फिर जल्दी में पढ़ने या उसको ठीक से न समझ पाने के कारण कार्यक्रम का निर्वाह सही नहीं हो पाता है या फिर उसके निर्वाह के समय बहुत कठिनाइयाँ आती हैं।

आ. प्रविधिगत चुनौतियाँ

संकल्पनाओं पर आधारित शिक्षण पद्धति होना (concept based) इस पाठ्यक्रम की दूसरी विशेषता है जो कि इसे और क्लिष्ट बना देती है। किसी संकल्पना को आयु के अनुरूप बनाते हुए बच्चों को पूरी तरह समझाना आसान नहीं होता। यह प्रणाली तब क्लिष्टतम हो जाती है जब यह पूरी तरह शिक्षण उद्देश्य निर्धारित/निर्वाहित (Objective Driven) होती है और सोने पर सुहागा तब होता है जब पाठ्यक्रम की माँग को देखते हुए इसे आवश्यक रूप से विद्यार्थी केंद्रित रखना पड़ता है।

इस पाठ्यक्रम की अन्य चुनौतियों में एक और प्रमुख चुनौती है इसका खोज-पूर्ण (inquiry based) होना। शिक्षक के लिए अनिवार्य होता है कि वे अपनी शिक्षण पद्धति में ऐसी स्थितियों का निर्माण करे जहाँ विद्यार्थी जिज्ञासु होकर प्रश्न पर प्रश्न पूछें, समीक्षा करें और विषय का/अवधारणा का ज्ञान प्राप्त करते चले जाएँ। यह प्राविधि समझना और उसका भली-भाँति निर्वाह करना आसान नहीं। हर शिक्षक अरस्तु या सुकरात नहीं हो सकता!! कितनी बार ऐसा देखा गया है कि खुद शिक्षक इस प्रविधि के सही जानकार नहीं होते। इस कारण उनके लिए इस प्रविधि का प्रयोग कर विद्यार्थियों के लिए दिशा निर्धारित करना कठिन हो जाता है।

एक बात और, विद्यार्थियों की संख्या एक कक्षा में कम तो अवश्य होती है परंतु हर विद्यार्थी को ध्यान में रखकर, वैयक्तिक दृष्टिकोण से अध्यापन सामग्री तैयार करना और उसका मूल्यांकन और फिर उसके बाद उनके किए गए काम पर व्यक्तिगत प्रतिक्रिया, बहुत अधिक समय की माँग करती है।

इन सबके अलावा शिक्षण को व्यावहारिक और रुचिपूर्ण बनाने के लिए यह अपेक्षित है कि ऐसी गतिविधियों को अध्यापन में मिलाया जाए जो आपकी पढ़ाई जानेवाली इकाई से सीधी-सीधी जुड़ें और साथ ही अर्थ-ग्रहण और विषय से संबंधित ज्ञान बढ़ाने में सहायक हों। कई बार ऐसी गतिविधियाँ मिल जाती हैं अन्यथा शिक्षक को या तो दूसरों पर आश्रित होना पड़ता है या फिर खुद सिर खपाना पड़ता है।

इसके अलावा विद्यार्थियों के उत्साह को बनाए रखने के लिए शिक्षा को शाला की चारदीवारी से निकालकर बाहर की दुनिया में ले जाना पड़ता है जिसके लिए शैक्षणिक यात्रा करनी पड़ती है जिसका एक बार फिर पढ़ाई जानेवाली इकाई से अर्थपूर्ण तरीके से सीधी-सीधी जुड़ना आवश्यक होता है। ऐसे में कहाँ जाना है कब जाना है, कैसे जाना है, वहाँ क्या करना है? और आमतौर पर यात्रा के लिए की जानेवाली तैयारियाँ शिक्षक की अभिनव कुशलता पर ही निर्भर करती हैं।

इ. प्रौद्योगिकी संबंधित (Technology related)

अपनी समसामयिकता के कारण यह संगठन शिक्षण में तकनीक के प्रयोग पर अत्यधिक ज़ोर देता है। इसके लिए वह सुविधाएँ तो उपलब्ध कराता है पर समय तो शिक्षक को ही उपलब्ध करना पड़ता है। अगर आप आज की पीढ़ी की बात करें जो तकनीक के साथ ही पली-बढ़ी है तो उनके लिए तो यह बाएँ हाथ का काम है पर कुछ लोगों के लिए तकनीक आज भी हौवा है।

इस पाठ्यक्रम की जो सबसे बड़ी चुनौती है वह है एक ओर द्वितीय भाषा के लिए पाठ्यपुस्तक का न होना और दूसरी ओर विद्यार्थी को वास्तविक जगत से जोड़ना। इस माँग की पूर्ति के लिए पठन-पाठन सामग्री पत्र-पत्रिकाओं, अन्य पुस्तकों और इंटरनेट से ही उठाई जाती हैं। अन्य विदेशी भाषाओं के लिए यह कोई समस्या नहीं क्योंकि उन भाषाओं में इंटरनेट पर बहुत ज़्यादा सामग्री उपलब्ध है जो समसामयिक, रंगीन और रुचिपूर्ण तरीके से बनाई गई है, साथ ही जो या तो मुफ़्त या फिर बहुत थोड़ी कीमत पर डाउनलोड की जा सकती है। हिंदी शिक्षकों के लिए सबसे बड़ी चुनौती यही होती है। कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं के लिए तो यह सामग्री न्यूनाधिक मात्रा में मिल जाती है परंतु छोटी कक्षाओं के लिए बालोचित विविध लेख, कहानियाँ, कविताओं का गंभीर अभाव है और जो थोड़ी बहुत सामग्री उपलब्ध है भी वे या तो घिसे-पिटे विषयों पर या घिसे-पिटे तरीके से तैयार की गई होती हैं।

इस सच्चाई से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता कि सूचना और प्रौद्योगिकी का क्षेत्र सामान्यत: हिंदी शिक्षक वर्ग के लिए दिल्ली की तरह बहुत दूर है। कंप्यूटर की शिक्षा का हिंदी में कम होना उन्हें इस क्षेत्र में अपेक्षित दक्षता नहीं दिला पाता और यही है इंटरनेट पर हिंदी की सामग्री के अभाव का मुख्य कारण। आम हिंदी शिक्षक वर्ग उसकी ओर आकर्षित नहीं हो पा रहा है और न ही वहाँ अपना कार्य पहुँचा रहा है। यूनीकोड के आने के बाद स्थिति थोड़ी संभली है फिर भी हम दूसरी भाषाओं की तुलना में कई साल पीछे हैं।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इन सब चुनौतियों का सामना करते हुए एक पल भी आप द्वितीय भाषा-शिक्षण के उद्देश्य और लक्ष्य को नहीं भुला सकते। अब आप ही कल्पना कीजिए कि एक आई.बी. शिक्षक का धारदार होना कितना आवश्यक है। समय प्रबंधन में ज़रा चूके कि उबरना मुश्किल हो जाता है और फिर मनोरंजन, परिवार, सामाजिक संबंध सब कुछ दांव पर लग जाता है क्योंकि 'परफॉर्मेंस' की दौड़ में लगा रहना पड़ता है।

हर व्यक्ति अंग्रेज़ी सीखना, पढ़ना, पढ़ाना और बोलना चाहता है। भारत में अंग्रेज़ी की महिमा और माँग को देखते हुए व्यापारियों ने इसे भुनाना शुरू कर दिया है। विज्ञापन अंग्रेज़ी में, कामकाज अंग्रेज़ी में, वार्तालाप अंग्रेज़ी में, पढ़ना अंग्रेज़ी में और पढ़ाना भी अंग्रेज़ी में!! इस कारण जहाँ एक ओर माता-पिता भी हिंदी का कोई भविष्य न देखकर स्वभावत: हिंदी के प्रति अपना आकर्षण खो रहे हैं और दूसरी ओर हम भी अपने विद्यार्थियों के अंदर हिंदी के प्रति प्रेम जागृत नहीं कर रहे हैं। प्राइमरी स्कूल में हिंदी पढ़नेवाला बच्चा वही घिसे-पिटे तरीके से हिंदी सीखता हुआ हिंदी से कब छुटकारा मिले बस इसकी राह देखता रहता है।

प्रणाली से मानसिकता है अथवा मानसिकता से प्रणाली?

हमारी पाठशाला, मुंबई के मशहूर और कीमती इलाके में विद्यार्थियों को पंच-सितारा सुविधाएँ प्रदान करने के कारण बेहद ही महंगी पाठशालाओं में से एक है। इस कारण यह समाज के उच्चतम वर्ग के बच्चों के लिए ही उपलब्ध है। इस बात का उल्लेख करने का अभिप्राय इस पाठशाला में पढ़नेवाले विद्यार्थियों की सामाजिक स्थिति का चित्र आपके समक्ष खींचना ही है। समाज के जिस अत्याधुनिक वर्ग से विद्यार्थी इस पाठशाला में पढ़ने आते हैं उनमें से कइयों की मातृ भाषा हिंदी ही होती है किंतु पूरी तरह पाश्चात्य संस्कृति में रचे-बसे इन परिवारों में हिंदी दादा-दादी, नाना-नानी, ड्राइवरों या घर में काम करनेवाली बाइयों की भाषा होती है।

भारतीय होते और भारत में रहते हुए भी उनके घरों का वातावरण पूरी तरह से विदेशियत में डूबा होता है। ऐसे में ये विद्यार्थी प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी अनिवार्य विषय होने के कारण पढ़ते तो हैं लेकिन जैसे ही इनके सामने अन्य भाषाओं में चुनाव करने का अवसर आता है, ये चाहे स्पेनिश चुनें या फ्रेंच पर सबसे पहले ये हिंदी छोड़ने का मन बना लेते हैं।

हमने अंग्रेज़ी के इस्तेमाल को लोगों के आधुनिक या बुद्धिमान होने का मापदंड बना लिया है। आधुनिकीकरण के इस दौर में कहें या वैश्वीकरण के नाम पर जितनी दुर्गति भारतीय भाषाओं की, ख़ासकर हिंदी की हुई है उतनी शायद किसी देश में किसी भाषा की नहीं हुई होगी।

हर व्यक्ति अंग्रेज़ी सीखना, पढ़ना, पढ़ाना और बोलना चाहता है। भारत में अंग्रेज़ी की महिमा और माँग को देखते हुए व्यापारियों ने इसे भुनाना शुरू कर दिया है। विज्ञापन अंग्रेज़ी में, कामकाज अंग्रेज़ी में, वार्तालाप अंग्रेज़ी में, पढ़ना अंग्रेज़ी में और पढ़ाना भी अंग्रेज़ी में! इस कारण जहाँ एक ओर माता-पिता भी हिंदी का कोई भविष्य न देखकर स्वभावत: हिंदी के प्रति अपना आकर्षण खो रहे हैं दूसरी ओर हम भी अपने विद्यार्थियों के अंदर हिंदी के प्रति प्रेम जागृत नहीं कर पा रहे हैं। प्राइमरी स्कूल में हिंदी पढ़नेवाला बच्चा वही घिसे-पिटे तरीके से हिंदी सीखता हुआ 'हिंदी से कब छुटकारा मिले' बस इसकी राह देखता रहता है। भाषा सीखने के प्रारंभिक 6 महीने तक रट्टू तोते की तरह क, का, कि, की करते-करते वह भाषा सीखने का सारा

मज़ा ही खो देता है। हमारे भारत की बहुभाषीयता ही हिंदी के आड़े आ रही है। भारत में जहाँ भी हिंदी द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाई जाती है वहाँ भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों का एक ऐसा दल रहता है जिसमें हिंदी के जाननेवाले अलग-अलग भाषाई क्षमता के साथ होते हैं जिनमें से कुछ के घरों में हिंदी वातावरण होने के कारण वे अच्छी-खासी हिंदी बोल लेते हैं और अपनी कक्षा के सिरमौर बन जाते हैं। शिक्षिक/शिक्षिका उन्हीं को ध्यान में रखकर कक्षा का संचालन करते हैं और बाकी बच्चे अपनी सीमित भाषाई क्षमता के कारण पिछड़ जाते हैं और उचित प्रणाली और प्रविधि के अभाव में शिक्षा ही हिंदी के छात्रों को दो श्रेणियों में बाँट रही है।

आई.बी. प्रणाली और हिंदी की संभावनाएँ

अ. संभावनाएँ

अपने लम्बे शैक्षणिक अनुभव के बाद जब मैंने आई.बी. पाठ्यक्रम में कदम रखा तो लगा कि पढ़ाने का वास्तविक आनंद तो अब आएगा। किताबों का बंधन छूटना और प्रयोगात्मकता की छूट जो यह पाठ्यक्रम देता है, वैसी छूट किसी और पाठ्यक्रम में उपलब्ध नहीं है। इसलिए समसामयिक विषयों का चुनाव करके हिंदी को आसानी से रोचक बनाया जा सकता है। भाषा के ज्ञान के साथ-साथ विद्यार्थी का सामान्य ज्ञान भी बढ़ाया जा सकता है। भाषा-कौशल के साथ अगर वे व्यवहार कुशल और जागरूक भी बन जाएँ तो यह विद्यार्थियों के हित में तो होगा ही, साथ ही इससे भाषा की व्यावहारिकता देखते हुए पसंद भी किया जाएगा। दुनियाभर में फैला यह पाठ्यक्रम हिंदी को कहाँ-कहाँ पहुँचा सकता है, इसकी कलपना मात्र ही मन को अनंदित कर देती है। आवश्यकता है सिर्फ़ इसके व्यावहारिक रूप से लोगों को परिचित कराने की। एक आई.बी. विद्यार्थी देश या विदेश में कहीं भी, इस पाठ्यक्रम के माध्यम से मिली अपनी तमाम विशेषताओं के साथ जब अपनी हिंदी भाषा का प्रयोग करेगा तो हिंदी को उसका सम्मान मिलने में समय नहीं लगेगा। सबसे बड़ी बात है, यह पाठ्यक्रम महंगा होने के कारण अभी तक अभिजात्य वर्ग के लोगों तक ही सीमित है और जब अभिजात्य वर्ग के होनहार कल पेज थ्री की शोभा हिंदी के साथ बढ़ाएंगे तो उसका असर कुछ और ही होगा। बात मानसिकता की ही हो भले, पर है सर्वथा सत्य !

आ. कुछ सुझाव

हिंदी प्रेमियों की सतत और पुख़्ता कोशिशों से लगता तो है कि हिंदी एक बार फिर जड़ पकड़ सकती है। हाल ही में भोपाल में हुए 'विश्व हिंदी सम्मलेन' से हिंदी को मिले प्रचार-प्रसार से लगता है कि हिंदी को UN तक पहुँचाकर ही रहेगी। इस प्रयास में इस प्रकार की अंतरराष्ट्रीय पाठशालाएँ बहुत योगदान दे सकती हैं।

लगभग 9 या 10 वर्ष पहले आई.बी. हिंदी का एक और पाठ्यक्रम था जो द्वितीय भाषा की श्रेणी में ही था परंतु इसका स्तर ibintio अर्थात आरंभिक स्तर था जो अब किन्हीं कारणों से बंद कर दिया गया है। यह कार्यक्रम अपनी सरलता के कारण अहिंदी-भाषियों और विदेशियों में बहुत पसंद किया जाता था। अगर किसी तरह इस कार्यक्रम को पुनर्जीवित करवा दिया जाए तो इससे हिंदी का बहुत लाभ होगा और हिंदी आसानी से देश-विदेश में लोकप्रिय हो जाएगी।

आई.बी.ओ. मातृ भाषा अध्ययन पर ज़ोर देता है इसलिए भारत में निचली कक्षाओं में हिंदी अनिवार्य है। इस पाठ्यक्रम की बढ़ती लोकप्रियता को हमारे हित में अच्छी तरह भुनाया जा सकता है। इसके लिए त्रि-भाषाई सूत्र अपनाया जा सकता है, जहाँ तीसरी भाषा पूर्णत: विदेशी हो। भारत सरकार को ज़ोर देकर इस पाठ्यक्रम में भारत में उच्च कक्षाओं में भी द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी अनिवार्य करनी चाहिए, साथ ही विदेशी विश्वविद्यालयों से मिलकर मातृ भाषा अध्ययन करनेवाले इन विद्यार्थियों के लिए दाखिले के लिए विशेष रियायत रखवानी चाहिए। विदेशी विश्वविद्यालयों को जिनको भारतीय विद्यार्थियों से अच्छा व्यापार मिलता है, इस प्रकार की रियायत विशेषकर कला और साहिय के क्षेत्र में, मेरे मतानुसार नहीं खलेगी!

अध्ययन-अध्यापन सामग्री

हिंदी के प्रति विद्यार्थियों की उदासीनता हम सभी अंतरराष्ट्रीय पाठशालों में पढ़ानेवाले अध्यापक महसूस करते हैं। मैंने भी महसूस की और कक्षा पहली को पढ़ाने की ज़िम्मेदारी ली और कुछ परिवर्तन लाने का लक्ष्य साधा पर वास्तविकता से सामना बहुत ही डरावना था। अन्य भाषाओं की तुलना में बच्चों को खेलने और खेल-खेल में हिंदी सिखाने के लिए फ़्लैश काड्र्स, चाट्र्स या अन्य खेलों की गिनती नहीं के बराबर है और जो थोड़े-बहुत हैं, वे सदियों पुराने तरीके से बनाए गए हैं जो नवीन शिक्षा पद्धति से मेल ही नहीं खाते। छोटे बच्चों को भाषा को औपचारिक रूप से पढ़ाने के लिए बाल मनोविज्ञान का आधार लेना चाहिए लेकिन अफ़सोस जो बाल कविताएँ उपलब्ध हैं, उनको समझना द्वितीय भाषा के बच्चों के लिए असंभव नहीं तो कम से कम दुष्कर अवश्य है। ऐसा नहीं कि हिंदी जगत में बाल साहित्य की रचना ही नहीं हुई है पर या तो वह सहज-सरल और विविध नहीं है या फिर आम लोगों के लिए आसानी से उपलब्ध ही नहीं है। इक्का-दुक्का प्रकाशन कंपनियों को छोड़कर हिंदी में मुद्रित होनेवाली किताबों के कागज़, उनमें दिए गए चित्र, रंगों के इस्तेमाल या छपाई की स्याही और अशुद्धियाँ आँखों को ही नहीं, मन को भी चुभती हैं। वहीं अगर हम छोटे बच्चों की अंग्रेज़ी की किताबें उठाएँ तो उनकी सजीवता व कलात्मकता देखते ही बनती है।

विदेश की कई प्रमुख प्रकाशन संस्थाओं द्वारा अन्य भाषाओं में प्रकाशित ऐसी कई किताबें हैं जिन्हें आई.बी.ओ. के लिए अध्ययन सामग्री के रूप में प्रकाशित किया गया है। सुंदर, आकर्षक चित्रों से सजी द्वितीय भाषा शिक्षण की पद्धति को ध्यान में रखकर बनाई गई हैं। आई.बी.ओ का एक निर्दिष्ट विभाग, भली-भाँति परखकर, संस्था के मापदंडों पर खरा उतरनेवाली इन पुस्तकों को संस्था की ओर से समर्थन दे देता है और फिर दुनिया भर के देश उसे सहायक पुस्तिका के रूप में प्रयोग में लाने लगते हैं। आवश्यकता है ऐसा ही काम हिंदी में भी किए जाने की। इन प्रकाशन संस्थाओं को हिंदी की आवश्यकता समझते हुए इस दिशा में कार्य करने में पहल करनी चाहिए और भारत सरकार और आई.बी.ओ. को उन्हें इस दिशा में बढ़ावा देना चाहिए।

आई.बी.ओ. द्वारा प्रकाशित ये पुस्तकें न केवल उन भाषाओं को लोकप्रिय बना रही हैं, साथ ही उन शिक्षकों का काम आसान कर देती हैं। बचे हुए समय का उपयोग कर वे अपने शिक्षण को अनोखा, कलात्मक और रुचिपूर्ण बना देते हैं। इधर हम हिंदी शिक्षक ऐसी कोई सामग्री खोजने में ही संघर्ष करते रहते हैं और हिंदी शिक्षण को उबाऊ या रसहीन बनने से नहीं रोक पाते हैं।

निष्कर्ष

सीधी सी बात है अगर आप वृक्ष को पुष्पित और पल्लिवत देखना चाहते हैं तो उसकी जड़ों को पोषित करना होगा। हमें तब सावधानी बरतने की आवश्यकता है जब हम बच्चे को उसकी बाल्यावस्था में औपचारिक रूप से भाषा से परिचित कराते हैं। बड़ी उठा-पटक के बाद मुझे डॉ. चंद्रिका माथुर जी के द्वारा लिखित 'हिंदी की दुनिया' ही एक मात्र ऐसी पाठ्यपुस्तक मिली जो अन्य द्वितीय भाषाओं की व्यवस्थित और वैज्ञानिक रूप से लिखी गई पुस्तकों की तुलना में खड़ी की जा सकती है।

हिंदी के सुरक्षित भविष्य को ध्यान में रखते हुए, मेरी गुहार है उन गुणी जनों से जिन्हें लेखनी का वरदान प्राप्त है या जो ICT में अच्छा दखल रखते हैं, वे बाल मनोविज्ञान और नवीन शिक्षा पद्धति को ध्यान में रखकर बाल साहित्य और पठन-पाठन सामग्री तैयार करें। बच्चों के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तकों के निर्माण में बालमनोविज्ञान और शिक्षा मनोविज्ञान के सिद्धांतों का ध्यान रखते हुए विविधता और नवीनता लाएँ, उन्हें रोचक, आकर्षक, सहज और सरल बनाएँ। भविष्य वाणी की क्षमता मुझमें नहीं है परंतु यह भय बना हुआ है कि हिंदी जो बड़े शहरों की अंतरराष्ट्रीय पाठशालों में द्वितीय भाषा के रूप अभी तक बरकरार है, द्वितीय भाषाओं को पसंद की जाने की दौड़ में कहीं दौड़ से बाहर ही न हो जाए!

❐

मुंबई, भारत
emenda@ecolemondiale.org

19

जापान में प्रेमचंद साहित्य : इतिहास के परिप्रेक्ष्य में

• *प्रो. ताकेशी फुजिई*

जापान में भारतीय भाषाएँ : पूर्वपीठिका

जापान में आधुनिक भारतीय भाषाओं का शिक्षण सन् 1908 में हमारी यूनिवर्सिटी में शुरू हुआ था। उस समय हिंदुस्तानी के नाम पर ज़बान-ए-उर्दू पढ़ाई जाती थी। देवनागरी लिपि में लिखी हुई हिंदी का अध्ययन-अध्यापन जापानी प्रोफ़ेसरों के निजी प्रयत्नों द्वारा अनौपचारिक रूप में किया जाता था। स्थायी रूप से हिंदी की पढ़ाई मई 1952 में जापान और स्वतंत्र भारत के बीच राजनयिक संबंध की स्थापना के बाद ही शुरू हुई।

यह सर्वविदित बात है कि किसी विदेशी भाषा के अध्यापन के लिए ऐसे अध्यापक की आवश्यकता होती है जिनकी मातृ भाषा या प्रथम भाषा वही लक्ष्य भाषा हो। हमारी यूनिवर्सिटी में हिंदुस्तानी की पढ़ाई शुरू करते समय एक बड़ी समस्या हमारे सामने आकर खड़ी हो गई थी जिसका समाधान असंभव तो नहीं पर बहुत ही मुश्किल ज़रूर था क्योंकि बीसवीं शताब्दी के शुरू में ब्रिटिश भारत की उच्च शिक्षा में सिर्फ़ हिंदुस्तानी ही नहीं बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं के अध्यापन के लिए कोई जगह नहीं थी, मान्यता भी नहीं दी जाती थी। भारतीय भाषाओं की पढ़ाई कॉलेज से नीचे दर्जे के स्कूलों में सीमित थी। नागरी प्रचारिणी सभा (काशी) और हिंदी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) तो क्रमशः सन् 1893 और सन् 1910 में स्थापित किए गए थे पर दोनों संस्थान उस समय सरकारी मान्यता-प्राप्त शैक्षिक संस्थान न होने के कारण यहाँ से जारी किए जानेवाले सर्टिफ़िकेट वगैरह को सरकारी मान्यता नहीं दी जाती थी। यह एक कटु तथ्य था। बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी और इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने उच्च शिक्षा के स्तर पर हिंदी की औपचारिक पढ़ाई शुरू करने में अगुआई की है पर वहाँ हिंदी की पढ़ाई क्रमशः सन् 1920 और सन् 1924 से शुरू हुई थी। ऐसी परिस्थितियों में बाध्य होकर हमारी यूनिवर्सिटी की प्रबंधक समिति ने उस ज़माने में तोक्यो शहर और योकोहामा बंदरगाह के इलाके में बसे हुए प्रवासी भारतीयों में से सुयोग्य आदमी को ढूँढ़ने का निर्णय कर लिया था। हमारी यूनिवर्सिटी में नियुक्त किए गए हिंदुस्तानी भाषा के प्रथम विदेशी प्रशिक्षक ऐसे ही एक प्रवासी भारतीय थे लेकिन इसका मतलब यह कभी नहीं होगा कि जिनकी मातृ भाषा हिन्दुस्तानी है, वे अच्छे भाषा मुंशी या प्रशिक्षक बन सकेंगे।

फलतः जापान के शिक्षा मंत्रालय ने ब्रिटिश भारत सरकार से सहायता माँगने का निर्णय कर लिया। यह याद रखें कि उस समय जापान और ब्रिटेन के बीच

जन्म—16 मई 1955, सप्पोरो होक्काइदो, जापान

शिक्षा—
बी.ए., हिंदी विभाग, तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑव फॉरेन स्टडीज़ (मार्च, 1981)

➢ एम.ए., हिंदू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय (मार्च, 1985)

➢ असमी में सर्टिफ़िकेट, आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय (मार्च, 1985)

➢ एम.ए., तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑव फॉरेन स्टडीज़ (मार्च, 1986)

कार्य—

➢ तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑव फॉरेन स्टडीज़, हिंदी विभाग में सहायक शिक्षक, वरिष्ठ शोध सहायक, प्राध्यापक, एसोशिएट प्रोफ़ेसर, प्रोफ़ेसर दक्षिण, निदेशक (सेंटर फ़ॉर डॉक्यूमेंटेशन एंड एरिया-ट्रांस्कल्चरल स्टडीज़) पदों को संभाला (1986-2002)।

➢ तोक्यो विश्वविद्यालय में प्राध्यापक (1991)

➢ तोक्यो विमन क्रिश्चियन विश्वविद्यालय में प्राध्यापक (1997-2012)

➢ चीबा विश्वविद्यालय में प्राध्यापक (1994-2003)

➢ स्कूल ऑव ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज़, लंदन तथा दिल्ली विश्वविद्यालय, हिंदी विभाग में रिसर्च फेलो (मार्च, 1990-दिसंबर, 1990)

➢ ब्रिटिश पुस्तकालय, लंदन तथा दिल्ली विश्वविद्यालय, हिंदी विभाग में विदेशी शोध फेलो (फरवरी, 1997-मार्च, 1997)

प्रकाशन—जापानी तथा अंग्रेज़ी में 5 पुस्तकें प्रकाशित। जापानी में हिंदी भाषा तथा साहित्य पर लगभग 15 अकादमिक पेपर।

सम्मान—8वें विश्व हिंदी सम्मेलन, न्यू यॉर्क में विश्व हिंदी सम्मान (2007)।

मैत्री-संधि कायम रहती थी तथा भारत जापान के लिए सिर्फ़ कच्चे माल के निर्यातक के रूप में ही नहीं, बल्कि एक बहुत बड़े मार्केट के रूप में भी उभर आया था लेकिन जापान सरकार का यह अनुरोध ब्रिटिश भारत सरकार के लिए एक सिरदर्द का विषय बन गया था क्योंकि उस समय एशिया में जापान और श्यामदेश (थाईलैंड) को छोड़कर बाकी सारे देश परतंत्र होकर यूरोप व अमेरिका के उपनिवेश बन चुके थे। ऐसे देशों में ज्यों-ज्यों स्वतंत्रता आंदोलन ज़ोर पकड़ने लगे त्यों-त्यों अनिवार्यत: विदेशी शासन की ओर से तरह-तरह के बंधनों से जकड़े हुए दमनचक्र भी उग्र होते चले गए। इसी वजह से उदाहरणार्थ महात्मा गांधी जी की दक्षिण अफ्रीका से वापसी से पहले अनेक भारतीय क्रांतिकारियों को विदेशों में शरण लेनी ही पड़ी। कई लोग यूरोप-महाद्वीप के देशों में चलकर बस गए तो कई लोगों ने जापान का रास्ता पकड़ लिया। सिर्फ़ भारत से ही नहीं बल्कि अन्य एशियाई देशों जैसे चीन और इंडोचीन से, राजनीतिक शरणार्थी जापान में आकर बसने लगे। ऐसे लोगों में से मुहम्मद बरकतुल्लाह भोपाली (1854-1927) और रासबिहारी बोसु (1886-1945) के नाम उल्लेखनीय हैं। बरकतुल्लाह सन् 1909 में और रासबिहारी सन् 1915 में जापान में आ पहुंचे थे। तोक्यो प्रवासी क्रांतिकारी आंदोलन के एक केंद्र के रूप में उभरकर जाना जाने लगा था। इसका प्रभाव ब्रिटिश भारत सरकार द्वारा हमारी यूनिवर्सिटी में भेजे गए भारतीय अध्यापकों पर पड़े बिना नहीं रह सकता था। कई अध्यापक जिनके राजनीतिक विचार मूल में नर्म होने के बावजूद जापान में आने के बाद क्रांतिकारियों के संपर्क में आकर गदर पार्टी जैसे गर्म दल के समर्थन में बदल गए थे।

20 के दशक के उत्तरार्द्ध में आते-आते जापान और ब्रिटेन के राजनीतिक संबंध में परिवर्तन आने लगा। यह संबंध चीन और दक्षिणपूर्व एशिया के देशों में आर्थिक और राजनीतिक हितों को लेकर और बिगड़ने लगे। इसका प्रभाव सीधे हमारी यूनिवर्सिटी के ऊपर पड़ गया और ब्रिटिश भारत सरकार की सिफ़ारिश पर अध्यापकों की नियुक्ति का सिलसिला भी बंद कर दिया गया लेकिन इसके बावजूद हिंदुस्तानी की पढ़ाई तो जारी ही रखनी थी। फिर यूनिवर्सिटी के प्रबंधक जापान में बस गए क्रांतिकारियों की ओर नज़र डालने लगे क्योंकि अब ब्रिटिश सरकार की ओर से शिकायत या दबाव आने की संभावना भी कम होती जा रही थी। यह निर्णय किया गया कि जिनके पास योग्यता के साथ-साथ हिंदुस्तानी भाषा पर सही जानकारियाँ हैं, उनको ढूँढ़कर नियुक्त किया जाए।

एक भूले-बिसरे प्रवासी भारतीय : जापान में केशोराम सबरवाल[1]

इसके नतीजे में चुने गए थे केशोराम सबरवाल जी (Keshoram Sabarwal, 1894-1981)। वे कुल मिलाकर तीन बार हमारी यूनिवर्सिटी में हिंदुस्तानी भाषा के पार्ट-टाइम लेक्चरर नियुक्त किए गए और निम्नलिखित अवधि में कार्यरत रहे थे।

प्रथम टर्म; 10 अप्रैल 1924-10 जुलाई, 1924

द्वितीय टर्म; 10 अप्रैल, 1930-10 जुलाई, 1930

तृतीय टर्म; 10 अप्रैल 1932-10 जुलाई, 1932

सबरवाल जी का जन्म पेशावर में हुआ था और उन्होंने मैट्रिक्युलेशन तक की पढ़ाई पूरी करने के बाद क्रांतिकारी आंदोलन में भाग लिया और बंगाल को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। कहा जाता है उनका गदर पार्टी के सदस्यों से गहरा संबंध रहा था। इस सिलसिले में एक बार वे पेशावर में गिरफ़्तार भी किए गए और तीन महीने जेल में डाले गए। इसके फलस्वरूप वे भारत छोड़ने को बाध्य हो गए। पहले उन्होंने अमेरिका में राजनीतिक शरण लेने की सोचकर उत्तर अमेरिका जानेवाले जहाज़ को पकड़ा पर सिंगापुर से होकर जापान के योकोहामा बंदरगाह तक आते-आते अपने एक पुराने दोस्त से मिलने के बाद इरादे को बदलकर जापान में ठहरने का निर्णय कर लिया था। उनके कथन के अनुसार वे जापान में पहुँचे थे जुलाई, 1915 में।

सबरवाल जी के बाद जब रवींद्रनाथ जी ठाकुर मई, 1916 में पहली बार जापान में पधारे तब कई भारतीय क्रांतिकारी रवींद्र की

टोली के सदस्यों के छद्मवेशों में अंतरराष्ट्रीय सीमाओं को पारकर जापान में आकर बस गए[3])। ऐसे लोगों में थे रासबिहारी बोसु और हेरंबलाल गुप्त।

सबरवाल जी जापान में दक्षिण पंथी दलों की छत्रछाया में आकर क्यूशू (दक्षिण पश्चिमी जापान का एक बड़ा द्वीप) में रहने लगे। उसके बाद क्योतो, नारा (पश्चिमी जापान का एक पुराना शहर) आदि में कई बार रहने की जगहें बदलकर आखिर में तोक्यो को स्थायी आवास बना दिया। वहाँ जब लाला लाजपतराय जी पाँच महीनों के लिए ठहरने आए तब उनकी सेवा में लगे रहते थे।

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर जापान में बहुत से जापानी साहित्यकारों के संपर्क में आए। उनकी कविताओं और गद्य रचनाओं का अनुवाद भी जापानी साहित्यकारों द्वारा किया जाने लगा। जापान में जो लोग रवींद्रनाथ जी के संपर्क में आए थे उनमें सबरवाल जी के कई परिचित भी थे। सबरवाल जी के जापानी साहित्यकारों से मिलना-जुलना भी ऐसे ही शुरू हुआ था। हो सकता है इसी दौरान उन लोगों ने सबरवाल जी से यह अनुरोध किया होगा कि समकालीन भारतीय साहित्य की एक झाँकी को जापान के आम पाठकों तक पहुँचाने की कोशिश करें, साथ ही हिंदुस्तानी भाषा के पार्ट-टाइम लेक्चरर होने के नाते उनको सोच-विचारकर यह निर्णय करना ही था कि कौन-सी किताबें कोर्स में लगाएँ। आखिरकार चुनी गई थीं प्रेमचंद जी की उर्दू व हिंदी की रचनाएँ। उन्होंने क्लास में सिर्फ़ प्रेमचंद जी की रचनाओं को पढ़ाया ही नहीं बल्कि जापानी समाज के आम आदमियों तक उनको पहुँचाने का काम भी हाथ में लिया था। इस काम को आगे बढ़ाने के लिए उनकी जापानी साहित्यकारों से दोस्ती बहुत ही मददगार रही।

तोक्यो प्रवास के दौरान उन्होंने उस समय के युवा साहित्यकार श्री इबुसे मासूजी (IBUSE Masuji; 1898-1993) की सहायता से प्रेमचंद जी की तीन कहानियों का जापानी में अनुवाद कर दिया और इनको उस ज़माने की सुप्रसिद्ध जापानी साहित्यिक पत्रिका 'काइज़ो' में प्रकाशित कराया। अनुभवी जापानी लेखक श्री सतो हरुओ जी (1892-1963) ने उन अनूदित रचनाओं में से एक पर व्याख्या भी लिखी। प्रेमचंद जी की अनूदित कहानियों के मूल और अनूदित शीर्षक इस प्रकार हैं।[4])

1. 'मुक्ति-मार्ग' (माधुरी, अप्रैल, 1924) 'Saido no michi', काइज़ो, खंड 10, नं.6 (1 जून, 1928), पृ. 110-122

2. 'मंत्र' (माधुरी, फ़रवरी, 1926) 'Majinai H', काइज़ो खंड 12, नं.4 (1 अप्रैल, 1930), पृ. 185-198.

3. 'राजपूत की बेटी' (ज़माना, जनवरी, 1917) 'मर्यादा की वेदी' (नव-निधि, 1917) 'Tadashiki gisei' (स्वतंत्र रूप से अनूदित, बाद में निम्नलिखित कहानी संग्रह में संकलित)

अब यह जानने के लिए बड़ी कठिनाई महसूस की जाती है कि प्रेमचंद जी की रचनाओं के प्रति जापानी आम पाठकों की ओर से कैसी प्रतिक्रियाएँ हुईं पर बाद में ये अनूदित रचनाएँ सितंबर, 1936 में एक कहानी-संग्रह के रूप में प्रकाशित की गईं[5]। यह निश्चित है कि सबरवाल जी जापान और भारत के सांस्कृतिक संबंधों को आगे बढ़ाने के लिए एक कड़ी के रूप में बड़ा काम किया था। सबरवाल जी इसके अलावा समकालीन भारत की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति के बारे में कई आलेख उसी पत्रिका और इंडियन नेशनल कांग्रेस की जापान शाखा के मुख पत्र में लिखते रहे[6]। वे जापान में एक नामी विदेशी पत्रकार के रूप में पहचाने जाने लगे।

लेकिन 28 मई, 1936 को अख़बार में अचानक यह ख़बर आई कि जापान की खुफ़िया पुलिस ने सबरवाल जी को 'एक विदेश के गुप्तचर होने' और 'जापान के सम्राट के प्रति अपमानजनक टिप्पणियाँ प्रकाशित करने' के आरोप में गिरफ़्तार कर लिया[7]। उस खबर के बाद उनके व्यक्तिगत जीवन को लेकर तरह-तरह की अफ़वाहें भी छपने लगीं। आखिरकार रिहा होने के बाद उनको जापान से बाहर मंचूरिया में शरण लेनी पड़ी। सन् 1950 में द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने के बाद, वे स्वतंत्र भारत में वापस चले गए।

सबरवाल जी का देहांत सन् 1981 में हुआ था। तब तक वे नई दिल्ली में रहकर पत्रकारिता जगत में काम करते रहे। इसी बीच कई

जापानियों के संपर्क में आकर उन्होंने दो-तीन बार इंटरव्यू भी दिए। साक्षात्कार के दौरान उन्होंने अपनी गिरफ़्तारी के बारे में कुछ नहीं बताया और प्रश्नकर्ताओं को भी उनके व्यक्तिगत जीवन के बारे में खास जानकारियाँ भी नहीं थीं। सबरवाल जी को अपने जीवन और अनुभवों पर एक संस्मरण लिखकर प्रकाशित करना चाहिए था। हमें यह मालूम नहीं है कि उनके परिवारजनों के पास अप्रकाशित पांडुलेख आज भी रह गया है या नहीं। अत: वास्तव में हुआ क्या था, यह सच्चाई उनके देहांत के साथ हमेशा के लिए इतिहास की अंधेरी गुहा में चल बसी।

जापान में प्रेमचंद साहित्य

प्रेमचंद साहित्य को कोर्स में लगाने का निर्णय सबरवाल जी ने व्यक्तिगत रूप से नहीं लिया था। हमारी यूनिवर्सिटी में प्रेमचंद जी की उर्दू रचनाएँ पहले से जापानी प्रोफ़ेसर द्वारा पढ़ाई जाती थीं। मरहूम प्रोफ़ेसर गामो (GAMO Reiichi; 1901-1977) हमारी यूनिवर्सिटी में हिंदुस्तानी विभाग के प्रथम जापानी प्रोफ़ेसर रहे थे। इसी वजह वे जापान में आधुनिक भारतीय भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन के प्रवर्तक माने जाते हैं। शोबा-ए-फ़ारसी के मरहूम प्रो. कुरोयानागी त्सुनेओ (Kuroyanagi Tsuneo; 1925-2014) साहब, शोबा-ए-उर्दू के मरहूम प्रो. सुजूकी ताकेशी (Suzuki Takeshi; 1932-2005) साहब और हिंदी विभाग के स्वर्गीय प्रो. दोई क्यूया जी (DOI Kyuya; 1916-1983) उनके शिष्य रहे थे। प्रो. गामो क्लास में प्रेमचंद जी की उर्दू रचनाओं में से कहानियों को अक्सर पढ़ाया करते थे पर हिंदी की रचनाओं को नहीं लेकिन इसके बारे में कोई शक नहीं कि उनकी प्रेरणा से ही सबरवाल जी ने मूल उर्दू व हिंदी भाषा से जापानी में अनुवाद का कार्य शुरू किया था।

प्रो. गामो मई, 1936 से जुलाई, 1938 तक जापान सरकार के शिक्षा मंत्रालय की ओर से हिंदुस्तानी भाषा और इस्लाम से संबंधित अध्ययन-अध्यापन की स्थिति और गतिविधियों का आकलन करने के लिए ईरान, ब्रिटिश, भारत और यूरोप में दौरे पर भेजे गए। ध्यान रखें; जिस समय प्रो. गामो भारत में ठहरे हुए थे ठीक उसी समय प्रेमचंद जी का निधन हुआ था। प्रो. गामो की मुलाकात प्रेमचंद जी से नहीं हो पाई पर वे प्रेमचंद जी के अंतिम उपन्यास 'गोदान' के प्रथम संस्करण सहित बहुत से प्रेमचंद साहित्य को अपने साथ लेकर जापान में वापस आ गए। प्रो. गामो साहब की निजी लाइब्रेरी अब हमारी यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी को दान में दी गई है जिसमें प्रेमचंद जी की बहुमूल्य प्रथम संस्करण की किताबें संगृहीत हैं। प्रेमचंद साहित्य के अध्ययन की परंपरा प्रो. गामो के शिष्यों व शागिर्दों द्वारा संजोकर और भी आगे बढ़ाई गई। प्रो. दोई जी ने खुद 'गोदान' और एक कहानी-संग्रह का जापानी में अनुवाद किया था और उनके शिष्यों ने मिलकर 'पूस की रात' आदि कहानियों का अनुवाद करके एक संग्रह के रूप में प्रकाशित कराया था। अब तक जापानी भाषा में प्रेमचंद जी की उर्दू व हिंदी की रचनाओं में से बीस से अधिक कहानियों के अनुवाद निकल चुके हैं।

आप लोगों को यह जानकार आश्चर्य के साथ-साथ प्रसन्ता भी हुई होगी कि गैर-हिंदुस्तानी भाषाओं में प्रेमचंद साहित्य के अनुवाद पहले पहल जापानी भाषा में समसामयिक रूप से हुए थे, सालों बाद अंग्रेज़ी में। किताबें या साहित्यिक रचनाएँ अपनी इच्छाओं के अनुसार मनवांछित गंतव्य तक अर्थात अपने सुरुचिसम्पन्न पाठकों के पास खुद पहुँच जाती हैं। जापान में प्रेमचंद साहित्य का आगमन भी ऐसी प्रक्रिया से हुआ था और इसमें एक प्रवासी भारतीय का योगदान भी रहा था।

प्रेमचंद जी ने जापान को देखा नहीं, यह निश्चित था पर वे जापान के बारे में जानने के लिए गहरी रुचि ज़रूर रखते होंगे क्योंकि जब धनपतराय श्रीवास्तव जी ने नवाबराय से प्रेमचंद बनकर उर्दू अदबी जगत में लिखना शुरू किया था तब जापान-रूस युद्ध में जापान की जीत के कारण सिर्फ़ भारत में ही नहीं बल्कि अन्य एशियाई देशों में भी जापान को और अच्छी तरह जानने की बड़ी उत्सुकता दिखाई देने लगी थी। इसके बारे में खुद गांधी जी और जवाहरलाल नेहरू जी ने भी अपनी आत्मकथाओं में ज़िक्र किया था।

हमारा मन कल्पना की दुनिया में प्रेमचंद जी से मिलकर यह पूछने के लिए लालायित हो उठता है कि क्या आपको जापानी भाषा में अपनी रचनाओं के अनुवाद होने की खबरें मिली थीं या नहीं? अगर मिलीं तो अनुवाद में कहानियों के चयन के बारे में क्या कहेंगे? आत्मकथा को लिखे बिना चल बसे सबरवाल जी से भी यह ज़रूर पूछना चाहते हैं असल में हुआ क्या था और आपकी कौन-सी राम कहानी थी?

ये रहे जापान में एक प्रवासी भारतीय और प्रेमचंद साहित्य के भूले-बिसरे इतिहास के पन्ने।

नोट्स :

1. सबरवाल जी के संक्षिप्त जीवनी के बारे में देखिए, नकामुरा हिसाशी (NAKAMURA Hisashi) 'जापान में प्रवासी भारतीयों के राष्ट्रवादी आंदोलन : के.आर. सबरवाल के संस्मरण के बारे में', तनाका हिरोशी (Tanaka Hiroshi), सं. Nihongunesei to Ajia no minzoku-undo (Tokyo : Institute to Developing Economies, 1983), pp.167-178 (जापानी भाषा में) और तकाहारा मसाको (Takahara Masako), सबरवाल जी के बारे में एक संस्मरण किंदाईबुङ्गाकू शिरोन, नं. 10 (30 सितंबर, 1972), pp.56-59 (जापानी भाषा में : यह आलेख वेब में उपलब्ध है, देखिए http://ir.lib.jiroshima.u.ac.jp/00015586).
2. देखिए, the Alumni Association of the Departments of Urdu and Hindi, ed., Memoirs (Tokyo: the Alumni Association of the Departments of Urdu and Hindi, 2003) (in Japanese)। द्वितीय महायुद्ध के पहले जापान में पधारे हिंदुस्तानी भाषा के अध्यापकों के बारे में इस पत्रिका के पिछले अंक में प्रकाशित मेरे आलेख को देखें।
3. रवींद्रनाथ ठाकुर की जापान यात्राएँ इस प्रकार हैं : मई 1916, जनवरी 1917, जून 1924 और मार्च व मई, 1929। देखिए टैगोर अभिनंदन समिति, सं., टैगोर और जापान (तोक्यो : टैगोर अभिनंदन समिति, 1961) (जापानी भाषा में)
4. अनुवाद में उर्दू व हिंदी का शीर्षक नहीं दिया गया है। इसी वजह से मूल रचना का पता लगाने के लिए कमल किशोर गोयनका, सं. प्रेमचंद कहानी रचनावली, 6 खंडों में (नई दिल्ली : साहित्य अकादमी, 2010) से सहायता ली है।
5. सतो हरुओ (SATO Haruo), सं., चीन/भारत प्रतिनिधि कहानियाँ (तोक्यो : कवादे प्रकाशन, 1936) (जापानी भाषा में)।
6. मुख पत्र का नाम है (the Voice of India) इसके प्रकाशक आनंदमोहन सहाय जी सन् 1923 में जापान में आए और उन्होंने सन् 1928 में कोबे शहर (पश्चिमी जापान) में इंडियन नेशनल कांग्रेस की जापान शाखा की स्थापना की थी और सन् 1930 से इस मुखपत्र का प्रकाशन शुरू किया था लेकिन बाद में उनकी शाखा पर कांग्रेस हाइ कमान की ओर से मान्यता वापस कर ली गई और सहाय जी नेता जी सुभाष चंद्र बोस के खेमे में शरीक हो गए।
7. Sabarwal Taiho (सबरवाल की गिरफ़्तारी) तोक्यो निचिनिचि सिम्बुन (जापानी दैनिक)
   28 मार्च, 1936 यह न्यूज़ पेपर कटिंग वेब में उपलब्ध है। देखिए
   http://www.lib.kobe-u.ac.jp/das/jsp/ja/ContentViewM.jsp? METAID=10064818 & TYPE=IMAGE_ FILE&POS=1
8. देखिए सकता तेइजी (SAKATA Teiji), सं., Genken no yoru/पूस की रात और प्रेमचंद की अन्य कहानियाँ

❑

तोक्यो, जापान
tfujii@tufs.ac.jp

20

अमेरिका में हिंदी भाषा के विकास की नई परिधि

• सुश्री गब्रिएला निक इलिएवा

आज भारत और विदेश में 60 करोड़ से अधिक लोग मातृ भाषा या द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी बोलते, और लिखते हैं। विदेशों में भी अमेरिका, ब्रिटेन, मॉरीशस, दक्षिण अफ्रीका, यमन, युगाण्डा, सिंगापुर, नेपाल, न्यू ज़ीलैंड, जर्मनी आदि देशों में भारतीय मूल के निवासियों की भाषा हिंदी ही है। भारत से गए आप्रवासी भारतीयों ने भी हिंदी को अपनी भाषा के रूप में अपनाया है। अत: आज हिंदी दुनिया के प्रत्येक कोने में बोली जाती है। वर्तमान में हिंदी भाषा दुनिया भर में अपनी पहचान बना चुकी है। इसलिए आजकल भारत में राष्ट्र भाषा को द्वितीय श्रेणी की भाषा नहीं समझते हैं और हिंदी को विश्व भाषा के रूप में मान्यता मिलती जा रही है।

वैश्वीकरण के इस युग में हिंदी के विकास की ओर विश्व का ध्यान तेज़ी से बढ़ रहा है और विश्व में हिंदी का एक भाषा और संस्कृति के रूप में सम्मान निश्चित तौर पर प्रारंभ हुआ है। उदाहरण के लिए अमेरिकी सरकार ने अपने शिक्षा और सुरक्षा मंत्रालयों के द्वारा विदेशी भाषाओं से संबंधित एक नया आंदोलन चलाया है। उसमें वाणिज्य, सुरक्षा, राजनीति और संस्कृति की दृष्टि से कई महत्वपूर्ण भाषाओं में (अरबी, रूसी, फ़ारसी, तुर्की, चीनी, कोरियन, पुर्तगाली, उर्दू) हिंदी को स्थान दिया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि ऐसे विशेषज्ञों की आवश्यकता है जिनकी हिंदी भाषा की प्रवीणता उच्च स्तर पर हो। विदेशी भाषा की प्रवीणता का अर्थ है कि किसी भाषा में ऐसी सामर्थ्य विकसित होनी चाहिए जिसके द्वारा व्यक्ति अन्य भाषा बोलनेवाले और अन्य संस्कृति के समुदायों के सदस्यों से व्यावसायिक संदर्भ में उचित बात कर सके और देश-विदेश के मुद्दों पर भाग लेने को तैयार हो।

सबसे उल्लेखनीय उदाहरण स्टारटॉक (Star Talk) है जिसका सन् 2007 में कई भाषाओं के साथ प्रारंभ हुआ था और 2008 में उसमें हिंदी भी सम्मिलित हुई। स्टारटॉक का उद्देश्य है कि अमेरिका में अन्य भाषी समुदायों की भाषाएँ और संस्कृतियाँ सुरक्षित रहें, उपेक्षित न की जाएँ।

अर्थात आज एक नया शैक्षिक परिवेश उभरकर आ रहा है। इस नई सरकारी नीति के तीन प्रमुख पहलू हैं—एक है विद्यार्थी संबंधी, दूसरा अध्यापक संबंधी और तीसरा है प्रशिक्षक संबंधी।

विद्यार्थी संबंधी पहलू

इस नए वातावरण का बच्चों के भविष्य के लिए पूरा लाभ उठाया जा रहा है। जिन बालकों की मातृ या घरेलू भाषा हिंदी है, उनको अपनी भाषा के प्रयोग और शिक्षा प्राप्त करने के सुअवसर स्थायी रूप से स्थापित कर दिए जाने की संभावनाएँ

डॉ. गब्रिएला निक इलिएवा ने सन् 2000 में मिनेसोता विश्वविद्यालय से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की। संप्रति वे न्यू यॉर्क विश्वविद्यालय के मध्य एशिया और इस्लाम अध्ययन विभाग की क्लिनिकल प्रोफ़ेसर तथा हिंदी और उर्दू कार्यक्रमों की संयोजिका हैं। हिंदी भाषा पाठ्यक्रम के अतिरिक्त प्राचीन भारतीय साहित्य और आधुनिक दक्षिण एशिया का साहित्य भी पढ़ाती हैं। सन् 2007 से हर साल की गर्मियों में हिंदी और उर्दू भाषा अध्यापकों का न्यू यॉर्क विश्वविद्यालय के स्टारटॉक प्रशिक्षण कार्यक्रम की शैक्षिक निदेशिका हैं। वे स्टारटॉक सलाहकार समिति और कृतिक दल की सदस्या तथा नेशनल हेरिटेज लैंग्वेज रिसोर्सेस सेन्टर, कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय में साउथ एशियन लैंग्वेज डाटाबेज़ प्रोजेक्ट की अध्यक्षा भी हैं। सन् 2010 में इनकी पुस्तक 'भारत : आवाज़ और रंग' प्रकाशित हुई। बुल्गेरियाई भाषा में यशपाल, मुक्तिबोध, कमलेशवर, अमृता प्रीतम और मंगलेश डबराल की रचनाओं का अनुवाद किया है और अब हिंदी में बुल्गेरियाई कवयित्रियों की कविता-संग्रह पर काम कर रही हैं। सन् 2007 में इनको न्यू यॉर्क विश्वविद्यालय द्वारा गोल्डन डोजन पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

विद्यमान हैं। फलस्वरूप वैज्ञानिकों के अनुसार सिर्फ़ हिंदी में ही नहीं बल्कि दूसरी भारतीय भाषाओं, अंग्रेज़ी और दूसरी भाषाओं में बच्चों की प्रवीणता बढ़ती है। विद्वानों का यह भी कहना है कि द्विभाषी होने से सब विषय सीखने की योग्यता बढ़ती जाती है और उनका आत्मविश्वास एवं जीवन में प्रगति भी बढ़ती जाती है।

इसके अलावा हिंदी भाषा भारतीय संस्कृति और संस्कारों का प्रतिबिंब है और उसको सीखने से बालक अपनी भारतीयता, अपनी उत्पत्ति और सभ्यता समझना चाहते हैं और समझ पाते हैं। इससे वे सांस्कृतिक विविधता और लोगों की विभिन्नता के प्रति अपनी सहिष्णुता बढ़ाते हैं और दुनिया के देशों के संस्कारों के बारे में अपनी जानकारी विस्तृत करते हैं। ये सब इक्कीसवीं शताब्दी के आधुनिक मानव के स्वभाव की विशेषताएँ हैं। इनके साथ एक और महत्वपूर्ण लाभ यह है कि देशी समुदाय के बच्चे हिंदी पढ़ने के कारण अपने परिवार, मंदिर और समुदाय की कार्रवाई में सहर्ष भाग लेते हुए सार्थक सहायता भी दे सकेंगे और माता-पिता बनने पर अपना उत्तरदायित्व निभाते हुए अगली पीढ़ी को हिंदी भाषा और भारतीय संस्कार भी सिखा पाएँगे।

इस उद्देश्य से आज मंदिर से लेकर विश्वविद्यालय तक हिंदी की पढ़ाई के कार्यक्रम इस ढंग से सुव्यवस्थित किए जाते हैं कि निरंतरता, अनुक्रमण और मानकीकरण में तीव्र गति से विकास हो। परिणामस्वरूप न सिर्फ़ प्रवासी समुदाय के बच्चों के लिए बल्कि सब विदेशी विद्यार्थियों के लिए जिनकी रुचि है, हिंदी भाषा पढ़ने की संभावनाएँ संपूर्ण और आकर्षक होती हैं। यही आवश्यक पद्धति है जिसके द्वारा भारतीय संस्कृति, इतिहास और उपलब्धियों की अधिक प्रशंसा की जाती है। सिर्फ़ प्रवासी समुदाय के भीतर नहीं बल्कि अमेरिका में और दुनिया भर में हिंदी के प्रति रुचि बढ़ती जाती है और इसका प्रसार किया जाता है।

विगत दो दशकों से पहले अमेरिका और दुनिया के दूसरे देशों में हिंदी शिक्षकों का काम एकांत वातावरण में किया जाता था और एक-दूसरे से संपर्क रखने, विचार-विमर्श करने और सहयोग करने की संभावनाएँ कम होने के कारण उनकी वृद्धि करने का प्रयास किया जाता था। परंतु आधुनिक संदर्भ भिन्न है! आप्रवासी समुदाय के और शैक्षिक क्षेत्र के प्रशासकों के इस प्रयास से तथा तकनीकीकरण से हिंदी शिक्षा के क्षेत्र पर प्रभाव पड़ा है और आधुनिकीकरण को सफलता मिली है।

अध्यापक संबंधी पहलू

हिंदी के विकास की नई परिधि में अमेरिका की शिक्षा प्रणाली में हिंदी भाषा की पढ़ाई की अच्छी सुविधाएँ मिलनी शरू हुई हैं और प्रामाणिक पाठ्यक्रमों पर निर्मित कार्यक्रम स्थापित किए जा रहे हैं। अतएव आजकल हिंदी के प्रारंभिक, माध्यमिक और उच्च विद्यालय के विद्यार्थियों को हिंदी की शिक्षा के लिए सरकार से सहायता मिलती आ रही है लेकिन यह प्रक्रिया अध्यापकों की प्रवीणता और उनके प्रशिक्षण पर अवलंबित है। जैसे ही आज की नई पीढ़ी की दुनिया, उनका जीवन और भविष्य बदल रहे हैं, वैसे ही अध्यापकों की भाषा-शास्त्र के क्षेत्र में जानकारी और भाषा पढ़ाने की पद्धति के क्षेत्र में निपुणता बदलनी शुरू हुई है और बदलती रहनी चाहिए। अध्यापकों की क्षमताओं में निरंतर विकास को आवश्यक रास्ता बनाना तथा भाषा-शिक्षण के क्षेत्र से दूसरी भाषाओं के नमूने प्राप्त करना एवं अपनाना, सबसे प्रथम और आवश्यक कदम समझा जा सकता है।

विगत दो दशकों से पहले अमेरिका और दुनिया के दूसरे देशों में हिंदी शिक्षकों का काम एकांत वातावरण में किया जाता था और एक-दूसरे से संपर्क रखने, विचार-विमर्श करने और सहयोग करने की संभावनाएँ कम होने के कारण उनकी वृद्धि करने का प्रयास किया जाता था। परंतु आधुनिक संदर्भ भिन्न है! आप्रवासी समुदाय और शैक्षिक क्षेत्र के प्रशासकों के इस प्रयास से तथा तकनीकीकरण से हिंदी शिक्षा के क्षेत्र पर प्रभाव पड़ा है और आधुनिकीकरण को सफलता मिली है। सन् 2008 से न्यू यॉर्क यूनिवर्सिटी ने एक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रारंभ किया है जिसमें 120 से अधिक अध्यापकों का प्रशिक्षण किया जा चुका है। हिंदी भाषा की शिक्षा के क्षेत्र में

SALTA-M लिस्ट-सर्व और STARTALK@NYU फेसबुक द्वारा हिंदी शिक्षकों को प्रशिक्षण पाने एवं हिंदी पढ़ाने की संभावनाओं की जानकारी दिलाई जाती है। यह बात इसलिए उल्लेखनीय है क्योंकि ऐसे कार्यक्रम विद्यालयों में नियमित रूप से हिंदी की पढ़ाई स्थापित करने के मौके पैदा करते हैं। इसके फलस्वरूप, उनके पाठ्यक्रमों में सुधार और मानकीकरण की प्रक्रिया का आधार बन रहा है।

इसके अलावा सन् 2014 में अमेरिका में हिंदी को एक विश्व भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किए जाने के उद्देश्य से न्यू यॉर्क में स्थित भारतीय प्रदूतावास, न्यू यॉर्क यूनिवर्सिटी और प्रवासी समुदाय के संगठनों ने पहला कदम उठाया और अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन वार्षिक गतिविधि के रूप में स्थापित किया गया। उसमें शिक्षाविद और प्राध्यापकों के अतिरिक्त अमेरिकी और भारतीय प्रशासनिक तंत्र, राजनीति, व्यापार-वाणिज्य आदि क्षेत्रों के प्रतिनिधि और कार्यरत लोग एकत्रित होते हैं और एक साथ हिंदी के अंतरराष्ट्रीय विकास के लिए अपना योगदान देते हैं। यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है परंतु बहुत काम शेष है।

बहुत विश्वविद्यालय और संगठन भी सामग्री इकट्ठा करने में और विदेशी भाषा पढ़ाने की नई-नई पद्धतियाँ प्रयोग में लाने में अपना योगदान देते हैं या देने को तैयार हैं लेकिन इस नए आयाम को सुनियोजन करने की आवश्यकता है। इस आयाम में सम्मिलित संस्थाओं—स्कूल डिस्ट्रिक्ट, विश्वविद्यालय, प्रवासी स्कूल और सरकार, उन सबके बीच सुव्यवस्थित तालमेल स्थापित करना है।

न्यू यॉर्क यूनिवर्सिटी के आठ साल से संयोजित हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षण-कार्यक्रम के आधार पर कई दिशाएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं जो हिंदी-क्षेत्र के विकास के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। सर्वप्रथम बात है कि अनुभवी प्राध्यापकों को हिंदी-प्रशिक्षण-क्षेत्र में नेता के रूप में पहचाना जाए और उनको विशेष प्रशिक्षण दिलाना महत्वपूर्ण उद्देश्य समझा जाए।

प्रशिक्षक संबंधी पहलू

न्यू यॉर्क यूनिवर्सिटी के आठ साल से संयोजित हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षण-कार्यक्रम के आधार पर कई दिशाएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं जो हिंदी-क्षेत्र के विकास के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। सर्वप्रथम बात है कि अनुभवी प्राध्यापकों को हिंदी-प्रशिक्षण-क्षेत्र में नेता के रूप में पहचाना जाए और उनको विशेष प्रशिक्षण दिलाना महत्वपूर्ण उद्देश्य समझा जाए। उनको विदेशी भाषा-शिक्षण के नए अध्ययन और नए सिद्धांत सिखाने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त उनके साथ हिंदी की विशेष चुनौतियों एवं प्रवृत्तियों के प्रति जागरूकता बढ़ाना और शोध करके ज्ञान विस्तृत करना चाहिए ताकि प्रशिक्षण वास्तव में लाभकारी सिद्ध हो।

उदाहरण के लिए अपनी शिक्षा से और अपनी पढ़ाने की आदतों से प्रभावित अध्यापकों की यह प्रवृत्ती है कि वे हिंदी कक्षा की सारी सामग्री, गतिविधियाँ और पाठ्यक्रम अपने हाथ से नियंत्रित करते हैं जिससे क्लास में अभिरुचि का अभाव होने लगता है। विशेषज्ञों के अनुसार यदि पढ़ाई से जुड़े निश्चय करने में विद्यार्थियों को भी शामिल किया जाए तो उनकी रुचि बढ़ जाती है और वे अधिक उत्तरदायी हो जाते हैं।

दूसरा उदाहरण यह है कि साधारणत: हिंदी अध्यापक व्याकरण और शब्दावली को प्राथमिक समझकर उनकी पढ़ाई पर ही ध्यान केंद्रित करते हैं लेकिन यदि विद्यार्थियों के लिए कक्षा से बाहर सामान्य जीवन के संदर्भ में भाषा सीखने के क्रियाकलाप निर्मित करें तो उनके लिए लाभप्रद होगा। भाषा विशेषज्ञों के अनुसार उसी तरह बच्चों की हिंदी भाषा की पढ़ाई पर ध्यान और तत्परता में बढ़ौती ला सकते हैं।

उसी दिशा में प्रशिक्षकों को एक और बात की जागरूकता मददगार होगी कि यदि हिंदी की कक्षा में पाठ पढ़ने और शिक्षक की बात सुनने पर कम बल दिया जाए और विद्यार्थियों के लिए पारस्परिक रूप से सार्थक बात करने की संभावनाओं को अभिकल्प किया जाए तो बच्चों में हिंदी पढ़ने का उत्साह उत्पन्न होगा और वे आजीवन हिंदी सीखने के लिए प्रेरित होंगे। हिंदी पाठन का

आधुनिकीकरण नई पीढ़ी के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। कक्षा से बाहर के अवसरों से और तकनीकी संसाधनों से भी लाभ उठाने के लिए योजनाएँ बनाने के लिए शिक्षकों को उत्तेजित करने के प्रयास किए जाने चाहिए।

आज तक अमेरिका और दूसरे देशों में हिंदी भाषा के शिक्षण-प्रशिक्षण के विकास के लिए दो प्रकार की प्रक्रियाएँ देखी जा सकती हैं। एक है नीचे से ऊपर की प्रक्रिया अर्थात देसी समुदाय के व्यक्तिगत या सामूहिक प्रयासों के द्वारा नियोजन किया जाता है। ऐसे प्रयास लोगों की आवश्यकताओं के अनुसार किए जाते हैं और उनको समाज का समर्थन भी मिलता है लेकिन ऐसे प्रयासों में अक्सर देखा गया है कि ये घर, मंदिर या कम्यूनिटी हॉल तक ही सीमित रहते हैं और यहाँ की शिक्षा प्रणाली का भाग नहीं बन पाते हैं और दूसरा, पैसों का भी अभाव रहता है। इसलिए उनके विकास की गति काफ़ी धीरे होती है।

जो दूसरी प्रक्रिया है, वह उलटी है, ऊपर से नीचे की जिसका आधार सरकार या शिक्षा-संस्थान है जिनके द्वारा हिंदी के पठन-पाठन का प्रायोजन किया जाता है। नए कार्यक्रमों को स्थापित या पुराने कार्यक्रमों को विस्तृत करने के लिए सहायता मिलती है और इसके लिए धन राशि भी उपलब्ध की जाती है परंतु यह थोड़े समय के लिए ही सहायक होती है जो अक्सर राजनीतिक निर्णयों के अधीन होती है। इसमें हिंदी-भाषी समुदाय का कोई योगदान नहीं होता और उनकी आवश्यकताओं पर भी ध्यान नहीं दिया जाता।

जब हिंदी के विकास के लिए दोनों ओर से प्रयत्न किए जाएँ तब अधिक सफलता मिल सकती है। हम सब अपनी-अपनी राह से परिचित हैं क्योंकि हमने हिंदी भाषा की पढ़ाई की उन्नति के लिए काम किया है लेकिन यह सारी मेहनत विविक्त में और भटकते हुए की गई थी। आज हम एक ऐसे मोड़ तक पहुँच आए हैं जिसके आगे सिर्फ़ एक मार्ग है और हमें कंधे से कंधा मिलाकर इस पर नियमशील कदमों से चलना है।

1. Brecht, R. D., & Walton, A. R. (1994). National Strategic Planning in the Less Commonly Taught Languages. *Annals of the American Academy of Political and Social Science*, *532*, 190–212. Retrieved from http://www. jstor.org/stable/1048259
2. American Council on the Teaching of Foreign Languages. (2012). ACTFL Proficiency Guidelines—Speaking. Retrieved March 15, 2012 from http://www.actfl.org/files/public/Guidelinesspeak.pdf
3. Borg, S. (2006). The distinctive characteristics of foreign language teachers. Language Teaching Research, 10(1), 3–31
4. Johnson, K. E. (2009). Second language teacher education: a socio cultural perspective. New York: Routledge.
5. Wang, S. (2009). Preparing and supporting teachers of less commonly taught languages. Modern Language Journal, 93(2), 282–287.
6. Blyth, C. (2012). Opening up foreign language education with open educational resources. F. Rubio & J. Thoms (Eds.), Hybrid language teaching and learning: Exploring theoretical, pedagogical and curricular issues (pp. 196–218). Boston, MA: Heinle Thomson.

न्यू यॉर्क

gni1@nyu.edu

21

आज के बच्चे कल के भाषा एवं सांस्कृतिक दूत कैसे बनेंगे : न्यू ज़ीलैंड में हिंदी प्रचार-प्रसार की चुनौतियाँ

• *श्रीमती सुनीता नारायण*

न्यू ज़ीलैंड उन देशों में से है जहाँ अंग्रेज़ी राष्ट्र भाषा है। ऐसे देशों में आप्रवासी भाषाओं के संरक्षण पर इसका प्रभाव अधिक पड़ने की संभावना है खासतौर पर बच्चों पर! यहाँ भाषा और संस्कृति को सुरक्षित रखने के लिए कई प्रणालियाँ ज़बरदस्त और प्रभावशाली सिद्ध हुई हैं पर योजनाओं को स्थापित करना और इनका अनुरक्षण करना कोई आसान काम नहीं है। यद्यपि स्वयंसेवी हर्ष एवं उल्लास के साथ काम करते हैं, पाठ्यक्रम तैयारी, उपयुक्त पाठ्यक्रम व पठन-पाठन सामग्री निर्माण, उपयुक्त संख्या में अध्यापकों का प्रशिक्षण, समाज-परिवार एवं माता-पिता को प्रोत्साहित करना, धन इकट्ठा करना, सहयोग प्राप्त करना और समाज में मातृ भाषा के प्रति जागरूकता लाने के लिए परिश्रम करना पड़ता है।

यह लेख मैं वेलिंगटन हिंदी विद्यालय की संचालिका, हिंदी अध्यापिका, बोर्ड सदस्या और कम्यूनिटी लैंग्वेजज़ एसोसिएशन ऑव न्यू ज़ीलैंड की प्रधान, अन्य भाषा संस्थाओं के साथ सहयोग तथा एक आप्रवासी माँ होने के अनुभवों के आधार पर एक नृवंश संबंधी दृष्टिकोण से प्रस्तुत कर रही हूँ।

प्रस्तुत परिस्थितियाँ अन्य अंग्रेज़ी-भाषी देशों पर भी लागू हो सकती हैं। आशा है कि अन्य देशों के विशेषज्ञ, अनुभवी शिक्षक एवं कार्यकर्ता न्यू ज़ीलैंड में विद्यमान इन परिस्थितियों पर विचार करेंगे तथा इनके समाधान ढूँढ़ने में हमें सहयोग देंगे जिससे कि हमारी आगामी पीढ़ी प्रेरित होकर अपनी भाषा और संस्कृति को धरोहर के रूप में संजोकर रख सके।

जन्म–आपका जन्म फिजी में हुआ तथा 27 सालों से न्यू ज़ीलैंड की निवासी है।

शिक्षा–एडवांस्ड डिप्लोमा हिंदी (सी.एच.आई), डिप्लोमा एजुकेशन (यू.एस.पी., फिजी), टीचिंग हिंदी एज सेकंड लैंग्वेज, बी.ए., डिप्लोमा बिज़नेस एडमिनिस्ट्रेशन (मैसी विश्वविद्यालय, न्यू ज़ीलैंड), हिंदी अभिविन्यास (महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय)

अन्य जानकारियाँ–आप मानव संसाधन विकास विशेषज्ञ तथा भाषा एवं संस्कृति की शिक्षिका है।

आप फिजी के कॉलेजों में शिक्षिका रह चुकी हैं तथा 20 सालों से न्यू ज़ीलैंड में बच्चों से लेकर वयस्कों तक के हिंदी व संस्कृति शिक्षण में प्रवृत्त हैं। बच्चों के लिए हिंदी शिक्षण के संसाधन भी लिखती हैं।

संप्रति–आप वेलिंग्टन हिंदी स्कूल की संचालिका हैं तथा कम्यूनिटी लैंग्वेजज़ एसोसिएशन ऑव न्यू ज़ीलैंड की अध्यक्षा भी हैं।

न्यू ज़ीलैंड एक बहुजातीय व बहुभाषी देश है। सरकारी संविधान आप्रवासियों को अपनी भाषा और संस्कृति बनाए रखने की अनुमति देता तो है पर कुछ ही को सहायता प्राप्त है। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम में भाषा वर्ग दो भागों में विभाजित है (1) अंग्रेज़ी और (2) अन्य भाषाएँ। पाठ्यक्रम अंग्रेज़ी के माध्यम से पढ़ाया जाता है और इयर 7 में विदेशी भाषाओं की पढ़ाई आरंभ होती है। इनमें सम्मिलित हैं चीनी, जर्मन, स्पेनिश, फ्रेंच, जापानी, मावरी (आदिवासियों की भाषा), कुछ प्रशांतीय भाषाएँ और संकेत भाषा। स्कूलों में क्या पढ़ाया जाएगा, इसका निर्णय खुद स्कूल का संचालन मंडल करता है।

आज यहाँ आप्रवासी भारतीयों की संख्या लगभग 100,000 हो गई है। हिंदी अब न्यू ज़ीलैंड में चौथे स्थान पर है और ऑक्लैंड नगर में तीसरे स्थान पर है जहाँ 50,000 से ज़्यादा हिंदी-भाषी निवास करते हैं। आँकड़ों के अनुसार भारतीय मूल के समुदाय में न्यू ज़ीलैंड में पैदा हुए लोगों में केवल 18.5 प्रतिशत हिंदी बोलते हैं। यह संख्या विदेशों में पैदा हुए भारतीयों की तुलना में तीन गुना कम है। भविष्य में क्या हो सकता है, इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं है।

हिंदी सीखने की आकांक्षा

यहाँ हिंदी की पढ़ाई का औपचारिक साधन नहीं है, मात्र 2-3 सरकारी सेकंडरी विद्यालयों में ही हिंदी का विकल्प दिया जाने लगा है। कमी को पूरा करने के लिए यहाँ आप्रवासियों द्वारा कई सामुदायिक विद्यालय स्थापित किए गए हैं जहाँ मातृ भाषा एवं संस्कृति के संरक्षण और विकास के उद्देश्य से हिंदी शिक्षा प्रदान की जाती है। इन छोटे-छोटे स्कूलों में ज़्यादातर बच्चों के लिए शनिवार अथवा रविवार को कक्षाएँ लगती हैं। युवा और बड़ों के लिए आवश्यकतानुसार कक्षाएँ आयोजित की जाती हैं। लगभग पच्चीस वर्षों से यहाँ बहुत लोग हिंदी को बढ़ावा देने और उसके संरक्षण के लिए पढ़ाने-लिखाने में जुटे हुए हैं और ज़्यादातर नि:शुल्क शिक्षा प्रदान करते हैं। अध्यापक अपना सार्थक प्रयास जारी रखते हैं। उन सबका एक ही लक्ष्य है कि हमारे बच्चों और युवाओं में भारतीयता होने का और हिंदी बोल पाने का गर्व हो। शिक्षण कार्य बाल विहार, प्राथमिक और माध्यमिक स्तर तक किया जाने लगा है। ये पाठशालाएँ केवल हिंदी शिक्षण संस्था ही नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता से जुड़े रहने के साधन भी हैं। इन स्कूलों के अतिरिक्त आजकल अनगिनत सामाजिक और धार्मिक संस्थाएँ हैं जो बड़ों और बच्चों के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन करती हैं जिससे कि लोग अपनी संस्कृति से जुड़े रहें। इन वर्षों में जहाँ विकास हुआ है वहीं कुछ ऐसी परिस्थितयाँ हैं जो प्रसरण में चुनौतियाँ बन जाती हैं।

परिस्थितियों का अवलोकन

निम्नलिखित परिस्थितियों में कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनका समाधान स्थानीय होना आवश्यक है और कुछ हैं जो हम भूमंडलीय रूप से सुलझा सकते हैं।

1. मातृ भाषा शिक्षण में परिवार का स्थान

आधुनिक समय में माता-पिता बाहर काम करते हैं और उनका दैनिक जीवन बहुत व्यस्त होता है। घर का काम-काज, बच्चों की देख-रेख, उनकी अनेक ज़रूरतें, पाठ्येतर गतिविधियाँ आदि के कारण बच्चों को सामुदायिक पाठशालाओं में भर्ती करते हैं ताकि वे अपनी मातृ भाषा और संस्कृति से जुड़े रहें और कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकें। भाषा सीखने का सबसे बेहतर वातावरण घर ही है जहाँ परिवार के सदस्य स्वाभाविक रूप से भाषा का उपयोग करते हैं। कई आप्रवासी परिवारों में बड़े-बुज़ुर्ग भी नहीं हैं जो हिंदी बोलते हों। इससे बच्चों की भाषा बोलने की क्षमता और भी घट जाती है। अंग्रेज़ी में साक्षर बनने के प्रयास में मातृ भाषा कम बोली जाने लगती है। अंग्रेज़ी में सक्षम होना आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण समझा जाता है।

सबसे पहले तो मातृ भाषा सिखाने की ज़िम्मेदारियाँ माता-पिता की होती हैं। बच्चों की मातृ भाषा का शिक्षण माँ और घर से शुरू होता है। परंतु आज हम यह देख रहे हैं कि अंग्रेज़ी को हम ज़्यादा महत्व दे रहे हैं। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारा भारतीय समुदाय यह नहीं समझ पा रहा है कि अपनी मातृ भाषा में निपुण होने से हमारा मानसिक विकास और प्रबल होता है।

2. माता-पिता की बढ़ती अपेक्षाएँ

भाषा के संरक्षण में माता-पिता की भूमिका और निर्णय अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। समय-समय पर हमने अपने विद्यालय में उनसे विचार-विमर्श किया है और उनके विचारों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया है। 2015 की शुरुआत में हमने एक ऐसा ही सर्वेक्षण किया। उनके फ़ीडबैक से पता चलता है कि कुछ अभिभावक चाहते हैं कि उनके बच्चे पढ़ने-लिखने में निपुणता प्राप्त करें, कुछ बस संस्कृति से ही जुड़े रहें तो कुछ बोलचाल में ही सफल हों। हमें यह सीख मिलती है कि विद्यालय में अपने बच्चों को भर्ती करने का लक्ष्य सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टिकोण से समीचीन हैं। वे इन विद्यालयों की तुलना सरकारी और प्राइवेट विद्यालयों से करते हैं और पेशेवर स्वरूप की अपेक्षा करते हैं। इस तरह की अपेक्षा को पूर्ण करने के लिए औपचारिक सहयोग और धन की आवश्यकता होती है। अपने लक्ष्य की पूर्ति न होने पर वे अनिश्चितता महसूस करने लगते हैं।

3. मातृ भाषा से लाभ

लोगों का विचार है कि हिंदी सीखकर क्या करेंगे क्योंकि वे

केवल आर्थिक दृष्टि से ही देख रहे हैं कि भाषा से क्या लाभ हो सकता है। बड़ों की राय या विचारों से बच्चों पर ठोस प्रभाव पड़ सकता है। जैसा पहले कहा गया यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारा भारतीय समुदाय यह नहीं समझ पा रहा है कि अपनी मातृ भाषा में निपुण होने से हमारा मानसिक विकास और प्रबल होता है। यद्यपि अभी इस विषय पर कोई शिक्षण प्रणाली उपलब्ध नहीं है, हमारा विद्यालय अक्सर बहुभाषी लोगों को अपने अनुभव बाँटने के लिए आमंत्रित करता है। इनमें ऐसे हिंदी-भाषी लोग हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि कैसे अपने दैनिक जीवन, व्यवसाय आदि में हिंदी का उपयोग करना चाहिए। आजकल कार्यालयों और सरकारी दफ़्तरों में कर्मचारियों के प्रोफ़ाइल में नोट किया जाता है कि वे कौन-कौन सी भाषा बोलते हैं। अनुवाद की ज़रूरत पड़ने पर उनकी मदद ली जाती है। अस्पतालों में भी गैर अंग्रेज़ी भाषी मरीज़ों के बिस्तर के पास खास शब्द (जैसे पानी, खाना आदि) नोट किए जाने लगे हैं। हमारे लिए यह गर्व की बात होनी चाहिए और हमारे बच्चों के कैरियर में अपनी भाषा को सम्मिलित करने की चाह जागृत करने से उन्हें भी अपनी भाषा पर गर्व होगा।

4. अहिंदी माता, पिता एवं रिश्तेदार

कई परिवारों में अहिंदी माता, पिता एवं रिश्तेदार होने लगे हैं तो वे दैनिक जीवन में अंग्रेज़ी का ही उपयोग करते हैं। इन परिवारों में हिंदी-भाषियों के साथ तमिल, गुजराती आदि अन्य भाषा-भाषियों का मिश्रण दिखता है। हालाँकि आज डीवीडी, फ़िल्में, इंटरनेट आदि के माध्यम से हिंदी उपलब्ध है फिर भी इन घरों में बच्चों को हिंदी सुनने और बोलने का मौका प्राप्त नहीं है। माता-पिता अपने बच्चों की मदद नहीं कर पाते हैं। हिंदी विद्यालय एक ऐसा साधन है जहाँ हिंदी सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने का अवसर मिलता है। यहाँ गीत, संगीत और अन्य क्रियाकलापों के माध्यम से हिंदी में साक्षरता बढ़ती है।

5. द्विभाषी और गैर भारतीय बच्चों और बड़ों को पढ़ाने की गतिविधियाँ

आज हमारे सामुदायिक विद्यालयों में बहुभाषी एवं बहुसांस्कृतिक छात्रों की संख्या बढ़ रही है। इनको पढ़ाने के लिए उपयुक्त सामग्री, पुस्तकों और पद्धतियों की ज़रूरत है। इनके अतिरिक्त योग्य शिक्षकों व अध्यापकों की उपलब्धता अत्यंत ज़रूरी है पर यह असंभव प्रतीत होता है क्योंकि जो अध्यापक सप्ताहांत में पढ़ाते हैं, वे या तो अवकाश प्राप्त हैं या पाँचों दिन काम करते हैं। ये स्वयंसेवी होते हैं और उपयुक्त सामग्री एवं पाठ्यक्रम बनाने के लिए कार्यशालाओं में उपस्थिति उनके लिए एक प्रतिबंध है। परिवार की भी अपेक्षा होती है कि यहाँ पढ़ाई उसी तरह हो जैसे कि स्कूलों में होती है। इसीलिए वे अपने बच्चों को स्कूल से निकालने में हिचकिचाते नहीं हैं। इससे जो कुछ सीखा गया है और जो सीखा जा सकता है, वह वहीं रुक जाता है या कम हो जाता है।

पिछले 8-10 सालों से हिंदी शिक्षण के प्रयास में भारतीय दूतावास भी शामिल हो गया है और पुस्तकें भी प्रदान कर रहा है जिनमें पाठ्यपुस्तक के साथ-साथ अन्य सामान्य पुस्तकें भी हैं। फिर भी यहाँ की स्थानीय आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए कुछ सामग्री खुद तैयार करनी पड़ती है। इसके लिए भी पर्याप्त समय, धन और निपुणता आवश्यक है। आजकल ऑनलाइन सामग्री, कहानियाँ, कविताएँ इत्यादि के निरंतर उपलब्ध रहने से मदद होती है। जो अध्यापक टेक्नोलॉजी का सहारा नहीं ले सकते हैं उन्हें सहयोग देना पड़ता है पर बच्चे टेक्नोलॉजी के माध्यम से स्वत: बहुत कुछ कर लेते हैं। इस काबिलियत का हिंदी शिक्षण में उपयोग कर अध्यापकगण बच्चों में हिंदी के प्रति रुचि जागृत कर सकते हैं।

6. पाठ्येतर गतिविधियों से मुकाबले के कारण छात्रों की अनुपस्थिति

हमारे बच्चों का जीवन भी अत्यंत व्यस्त हो गया है। स्कूल के बाद या सप्ताहांत में खेल-कूद, नृत्य, ट्यूशन आदि में भाग लेने से भाषा शिक्षण पर नकारात्मक असर पड़ा है। पाठ्येतर गतिविधियों के कारण वे बराबर कक्षाओं में उपस्थित नहीं हो पाते हैं। अगर घर में हिंदी-भाषी नहीं है तब किसी भी स्तर की प्रवीणता हासिल करना कठिन है।

7. धन की आवश्यकता

जैसे कि पहले कहा गया है कि हिंदी शिक्षा ज़्यादातर नि:शुल्क ही है तो विद्यालयों में आर्थिक समस्याएँ विद्यमान रहती हैं। विद्यालय के संचालन में धन की ज़रूरत पड़ती है। दान और अनुदान संचयन द्वारा जो धन प्राप्त होता है, वह जगह के किराए, पठन-पाठन की सामग्री तथा सफल बच्चों के पुरस्कार संबंधी खरीदारी में ही खर्च हो जाता है। ऐसी बहुत कम स्थान हैं जहाँ नि:शुल्क हिंदी की कक्षाएँ चलाई जाती हैं। स्वयंसेवियों को नित्य पाठशाला के संचालन में अपनी जेब से खर्च करना पड़ता है।

8. कक्षाओं में विविध योग्यता के विद्यार्थी

एक कक्षा में छात्रों की योग्यता में अंतर होता है जो एक अध्यापक के सामने चुनौतियाँ खड़ी कर देता हैं। उदाहरण के लिए सामान्य प्राथमिक कक्षा में जहाँ पाँच साल की उम्र के बच्चे होंगे यहाँ पाँच से दस-बारह साल के बच्चे हो सकते हैं। इस कक्षा का पाठ्यक्रम एक हो सकता है परंतु सीखने-सिखाने की गतिविधियाँ अलग-अलग हो तो उत्तम है। फिर भी अध्यापक हार नहीं मानते। आजकल सभी पाठशालाओं में शिक्षित अध्यापक (इनमें अवकाशप्राप्त अध्यापक शामिल हैं) हैं। ये अध्यापक पूरा सप्ताह नौकरी करते हैं और शनिवार व रविवार को हिंदी स्कूलों में पढ़ाते हैं। अगर इन्हें अपने विकास के लिए समय मिल पाता तो कार्यशाला आदि करने का मौका प्राप्त होता और बच्चों की आवश्यकताओं को और कुशलतापूर्वक पूर्ण कर पाते।

9. कक्षा के लिए पर्याप्त समय

कक्षा का समय सप्ताह में 1 से 3 घंटों का होता है जहाँ भाषा, इतिहास, संस्कृति, संगीत, नृत्य आदि सिखाया जाता है। निरंतरता हो तो इतना समय पर्याप्त है। जो बच्चे बराबर उपस्थित होते हैं, उनकी योग्यता दिन-ब-दिन बढ़ती दिखाई देती है और जिनके घरों में हिंदी बोली जाती है, वे और भी सक्षम हो जाते हैं।

10. कक्षा के लिए पर्याप्त जगह

पाठशालाएँ मंदिरों, मस्जिदों, सामुदायिक केंद्रों, घरों और कहीं-कहीं स्कूलों में होती हैं। कई बार एक ही कमरे में दो-तीन कक्षाओं का संचालन करना पड़ता है जहाँ विविध योग्यता और उम्र के बच्चे होते हैं। यह स्वाभाविक है कि यद्यपि युवा हिंदी सीखने की लालसा करते हैं तो भी उन्हें जगह की कमी के कारण मजबूरन कक्षा छोड़नी पड़ती है।

11. समाज में भाषा एवं संस्कृति का स्थान समान

आजकल न्यू ज़ीलैंड में अनगिनत सांस्कृतिक कार्यक्रम होते हैं, यहाँ तक कि संसद भवन में ईद, दीवाली और चीनी नव वर्ष भी मनाया जाता है। संसद सदस्यों को अपने ग्रंथ पर शपथ लेने की अनुमति प्राप्त है। सरकारी एवं प्राइवेट स्कूलों में कार्यक्रम का आयोजन होता है। दफ़्तरों में भी ऐसा होता है। सभी हिंदी विद्यालय वार्षिक समारोह आयोजित करते हैं जिसमें माता-पिता, परिवार और जनता को आमंत्रित किया जाता है। बच्चों को अपनी कला का प्रदर्शन करने का सुनहरा मौका मिलता है। उनके आत्मविश्वास और क्षमता को बढ़ाने के लिए उन्हें प्रमाण पत्र और पुरस्कार दिए जाते हैं। इससे उन्हें हिंदी समझने, बोलने, लिखने और पढ़ने की अधिक प्रेरणा मिलती है।

अनुरोध

उपयुक्त विषयों पर विचार-विमर्श की जाए ताकि अध्यापकों को प्रेरित एवं प्रोत्साहित करने की सुविधाएँ तथा भारतीयों, अहिंदी भाषियों और बहुभाषियों को हिंदी पढ़ाने के लिए उचित शिक्षण सामग्री व संसाधनों का निर्माण व उसकी उपलब्धता की योजनाएँ भूमंडलीय रूप से हो सकें जो भारत, फ़िजी, न्यू ज़ीलैंड या किसी भी देश में लागू की जा सकें।

हमारे बच्चों के हिंदी शिक्षण में रुकावटों को हटाएँ। माता-पिता को मातृ भाषा और हिंदी से लाभ पर शिक्षित करें और आनेवाली पीढ़ी को अन्य भाषा के साथ-साथ हिंदी भाषा में प्रवीणता हासिल करने के लिए प्रोत्साहित करें तथा उनमें यह भावना जागृत करें कि अहिंदी-भाषियों को भी हिंदी सीखने में प्रोत्साहन प्राप्त हो।

तभी हमारे बच्चे कल हिंदी का दीप जला पाएँगे।

न्यू ज़ीलैंड
sundev@paradise.net.nz

22 विश्व इतिहास में प्रवासी समाज की व्यथा बयान करती हिंदी

• सुश्री देविना अक्षयवर

जन्म : क्रेव केयर, मॉरीशस

शिक्षा : बी.ए.–महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस, एम.ए.–जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, पीएचडी–जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र में एक साल तक अतिथि प्राध्यापिका के रूप में हिंदी टूल्स पढ़ाया। विश्वविद्यालय के जर्मन अध्ययन केंद्र में तीन महीनों तक भाषा विशेषज्ञ के रूप में हिंदी पढ़ाई। आपने अनुवाद योजनाओं में भी काम किया है।

विश्व इतिहास में साम्राज्यवाद के तहत यूरोपीय उपनिवेशवादी व्यवस्था की स्थापना और बड़ी तादाद में मानव-प्रवास दो महत्वपूर्ण घटनाएँ रही हैं। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि सन् 1833 में, मॉरीशस में दास-प्रथा उन्मूलन के तुरंत बाद, 'फ्री लेबर' की जगह 'चीप लेबर' के रूप में ब्रिटिश उपनिवेश, भारत से भारतीयों का प्रवासन शुरू हुआ था। यह सिलसिला सन् 1834 से लेकर 20वीं शताब्दी के अंत तक जारी रहा। मॉरीशस पर शासन करनेवाली तत्कालीन ब्रिटिश उपनिवेशवादी ताकतों के तहत, फ्रांसीसी जागीरदारों को अपने गन्ने के खेतों और शक्कर कोठियों में काम करने के लिए मज़दूरों की ज़रूरत पड़ी। इंडेंचर सिस्टम (शर्तबंध-प्रथा) के तहत भारत से गरीबी, बेरोज़गारी और भुखमरी से पीड़ित लोगों को मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, टोबैगो, नीदरलैंड्स आदि अन्य उपनिवेशों में भेजा गया था। वर्तमान समय में इन्हीं देशों में बसे भारतीय वंश को इंडियन डायस्पोरा नाम से चिह्नित किया जाता है। चूँकि मॉरीशस द्वीप में भारतीय मूल के शर्तबंध मज़दूर बड़ी तादाद में प्रवास कर गए थे और सन् 1834 से 1838 तक कलकत्ता, मद्रास, मुंबई, महाराष्ट्र, गुजरात, बिहार और बनारस के कुछ ज़िलों—आरा, मिदनापुर, बर्दवान आदि से उनका प्रवासन लगातार चलता रहा था इसीलिए मॉरीशस में बसे भारतीय मूल के लोग इंडियन डायस्पोरा के रूप में अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ एक खास जनसमूह के रूप में विकसित हो रहे हैं।

गौरतलब है कि तत्कालीन समय में विदेशी शासकों की शोषण नीतियों और ज़मींदारी प्रथा से आक्रांत, भारतीय समाज के गरीब तबके को एक बेहतर जीवन और आर्थिक संकट से उबरने का प्रलोभन देकर अन्य उपनिवेशों में भेजा गया था लेकिन वहाँ पर भी उन्हें अर्धदास की स्थिति में धकेल दिया गया। भारतीय प्रवासियों के जीवन की इस नारकीय दशा का अंत तब तक नहीं हुआ जब तक उन्होंने एकजुट होकर अपनी आज़ादी के लिए आवाज़ बुलंद नहीं की। अथक प्रयासों और क्रांतिकारी आंदोलनों के बाद सन् 1968 में मॉरीशस स्वतंत्र हुआ।[1]

ज़ाहिर है कि अर्धदास की अवस्था से उठकर एक आज़ाद देश में सांस लेने में सफल होना आसान नहीं था। ऐसी कठिन परिस्थितियों में मॉरीशस में जा बसे भारतीय प्रवासियों के पास जिजीविषा के तौर पर उनकी भाषा, धर्म और सांस्कृतिक प्रेम था जो 'गीता', 'रामचरितमानस' आदि धार्मिक ग्रंथों से प्रस्फुटित होता रहा। उस समय साहित्य के रूप में भारतीय आप्रवासी समाज के पास ये ही धर्म ग्रंथ थे लेकिन उनके बीच भोजपुरी और हिंदी भाषा बोलनेवालों की एक बड़ी संख्या होने के कारण, हिंदी भाषा का प्रचार और साहित्य-लेखन हो पाया। हालाँकि भारतीय आप्रवासियों ने कथा-वाचन की शुरुआत धार्मिक ग्रंथों और दंत कथाओं से की थी पर मॉरीशस में हिंदी कथा-साहित्य मूलत: हिंदी पत्रकारिता के ज़रिए अस्तित्व में आया।[2]

भारतीय आप्रवासियों के बीच शैक्षिक और राजनीतिक जागरूकता लाने के उद्देश्य से सन् 1907 में भारत से मणिलाल डॉक्टर मॉरीशस गए थे। वहाँ की जनता तक अपने विचारों को पहुँचाने के लिए उनके पास एक ही कारगर तरीका था—पत्रकारिता की शुरुआत। सन् 1909 में उन्होंने 'हिंदुस्तानी' नामक पत्रिका का प्रारंभ किया जिससे हिंदी भाषा और साहित्य मौखिक धरातल से उठकर लिखित रूप में स्थापित हुआ। ध्यातव्य है कि पहले पहल

'हिंदुस्तानी' गुजराती और अंग्रेज़ी भाषाओं में छपती थी लेकिन हिंदी भाषियों और कम से कम समझनेवालों की बड़ी संख्या होने के कारण उसे कालांतर में हिंदी में छापने की ज़रूरत महसूस हुई। दरअसल, 'हिंदुस्तानी' मॉरीशस में हिंदी कथा-साहित्य के उद्‌भव एवं विकास के लिए मील का पत्थर साबित हुई। इसके बाद 'मॉरीशस आर्य मित्र' (1911), 'दुर्गा' (1935), 'सनातन धर्मांक' (1933-42) आदि पत्रिकाओं के आने से मॉरीशस की हिंदी कथा-यात्रा को गति मिली, साथ ही सन् 1910 में आर्य समाज, सन् 1935 में हिंदी प्रचारिणी सभा तथा अन्य सांस्कृतिक संस्थाओं के अस्तित्व में आने से मॉरीशस में हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति लोगों की रुचि बढ़ी। अब तक की हिंदी कहानियाँ किस्सागोई के रूप में नैतिक मूल्यों की रक्षा, सामाजिक जड़ताओं से मुक्ति का मार्गदर्शन, सामाजिक कुरीतियों और विसंगतियों के उद्‌घाटन के साथ ही उनके निर्मूलन के लिए प्रचलित थीं। हिंदी कहानियों को परिपक्वता प्रदान करने में वस्तुत: मॉरीशस में अभिमन्यु अनत, पूजानंद नेमा, मुनीश्वरलाल चिंतामणि, धर्मवीर घुरा, रामदेव धुरंधर, बेनीमाधव रामखेलावन, कृष्णलाल बिहारी बेखबर, हेमराज सुंदर आदि लेखकों का बहुत बड़ा योगदान रहा। साथ ही 'अनुराग', 'समाजवाद', 'काँग्रेस', 'नवजीवन' जैसी पत्रिकाओं का सहयोग, हिंदी लेखक संघ और देश की आज़ादी के बाद, हिंदी-अध्यापन का सराहनीय योगदान भी रहा।

अत: मॉरीशस में हिंदी साहित्य के उद्‌भव और विकास से संबंधित तथ्यों के आधार पर यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन औपनिवेशिक सत्ता जिसकी नींव गरीब, शिक्षा-विहीन और सत्ता-विहीन समाज के शोषण और उत्पीड़न पर टिकी हुई थी, इन सबके विरुद्ध आवाज़ बुलंद करने का एकमात्र ज़रिया हिंदी साहित्य-लेखन और पत्रकारिता ही बना था। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि हिंदी के ज़रिए एक तरफ़ जहाँ भारतीय प्रवासी समाज ने उपनिवेशवादी ताकतों के खिलाफ़ एकजुट होकर अपना संघर्ष छेड़ा था वहीं दूसरी तरफ़ हिंदी भाषा को ही वह संप्रेषण का माध्यम बनाया गया था जिसके तहत आज़ादी की मांग को लेकर बुलंद स्वर मॉरीशस द्वीप के कोने-कोने में गूंजा था। गुलामी की जंज़ीरों को तोड़ने और अपने अधिकारों की लड़ाई में सभी प्रवासी भारतीयों को एकता के सूत्र में बाँधने में हिंदी भाषा का कितना अमूल्य योगदान है इस पर विवाद की कोई गुंजाइश नहीं है। हिंदी भाषा ही वह वाहिका थी जो अलग-अलग शक्कर कोठियों में बिखरे भारतीय प्रवासी मज़दूरों के बीच आज़ादी का विचार प्रसारित कर पाई थी और उन्हें एकजुट कर पाई थी।

लेकिन मॉरीशस की स्वतंत्रता की लड़ाई में हिंदी भाषा के योगदान के साथ ही आज उसके महत्व को मॉरीशसीय हिंदी साहित्य के आईने में देखें तो भाषा के रूप में हिंदी की प्रासंगिकता एक अन्य अहम पहलू में दिखाई देती है। यहाँ उदाहरण के लिए सन् 2000 में डॉ. कमलकिशोर गोयनका द्वारा संपादित 'मॉरीशस की हिंदी कहानियाँ' कहानी-संग्रह को रखा जा सकता है। इस कहानी-संकलन में कुछ कहानियाँ मॉरीशस के कहानीकारों द्वारा रचित कहानी-संग्रहों से हैं तो कुछ आरंभिक पत्रिकाओं में छपनेवाली कहानियों का संचयन है। किताब की भूमिका में वे लिखते हैं-

मॉरीशस में प्रवासी भारतीय समाज का दर्द, उसकी व्यथा एवं संत्रास, शोषण एवं अत्याचार, संघर्ष एवं बलिदान, दास और स्वतंत्रता, अंधविश्वास एवं जड़ता, रीति-संस्कार, संकट और चुनौती तथा आशाएँ एवं संभावनाओं का अत्यंत जीवंत चित्र इन कहानियों में मिलेगा।[3]

यहाँ प्रश्न उठता है कि वर्तमान समय में अकादमिक स्तर पर भारतीय हिंदी साहित्य को आधार बनाकर ऐतिहासिक, समाजशास्त्रीय, नृशास्त्रीय आदि पद्धतियों से भारतीय समाज का अध्ययन किया जा रहा है, क्या ऐसे समय में हिंदी भाषा को केवल स्कूली दायरे में पठन-पाठन की भाषा बनाए रखना या फिर उसकी महत्ता को कम करके आंकना संगत है ? यदि मॉरीशसीय हिंदी साहित्य का ईमानदारी से आकलन किया जाए तो पता चलेगा कि वास्तव में यह भाषा सिर्फ़ लेखकों की भावाभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं बल्कि यह भाषा अपने आपमें एक खास जनसमूह के इतिहास का मार्मिक बयान करती है। अभिमन्यु अनत के उपन्यास—'और नदी बहती रही', 'लाल पसीना', 'हम प्रवासी' आदि बेनीमाधव रामखेलावन का 'और दीवार ढह गई' आदि ऐसी साहित्यिक कृतियाँ हैं जो केवल औपनिवेशिककालीन सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था में निरीह

और शोषित तबके के दुख-दर्द का चित्रण ही नहीं करतीं बल्कि कुछ ऐसे ऐतिहासिक साक्ष्यों से आनेवाली पीढ़ियों का भावनात्मक रूप में साक्षात्कार भी कराती हैं जो किसी भी इतिहास की किताब या फिर पुरातात्विक तथ्यों के ज़रिए होना संभव नहीं। भारतीय प्रवासी समाज के निर्माण में जिन ऐतिहासिक तथ्यों की खोज की जाती है, वे भले ही इतिहास के पन्नों को उलट-पलटकर मिल जाते हैं लेकिन तत्कालीन समय में इस खास जनसमूह की मनोवैज्ञानिक स्थिति में किस तरह की उथल-पुथल मची हुई थी, अपने करीबी जन-परिजन से, खेत-खलिहानों तथा जानवरों से बिछड़कर किसी अनजान जगह में जा पहुँचना, अपनी मिट्टी की सुगंध और खाद्य के स्वाद के लिए तरसना, अपनी होली-दिवाली आदि पर्वों के माहौल से दूर होना, इसकी व्यथा क्या किसी भी इतिहास की किताब में व्यक्त हो सकती है ? वस्तुत: अपनी जन्मभूमि से कटकर ऐसे अनजान परिवेश में अनिश्चित समय के लिए जा बसनेवाले समाज जिसे तथाकथित संस्कृति-विहीन कहकर हमेशा अपमानित किया जाता रहा, उसकी मनो-व्यथा का परिचय इसी समाज से आए लेखकों के साहित्य तथा लोक-गीतों में मिल सकता है।

इतिहास इस बात का गवाह है कि सामंती और औपनिवेशिक युग में मनुष्य का कोई निजी अस्तित्व नहीं रहा। ऐसी सामाजिक व्यवस्था व्यक्ति के संपूर्ण समर्पण पर टिकी रहकर एक खास तरह की संस्था या फिर व्यवस्था के रूप में मनुष्य को कठपुतली की तरह नचाती रहती है। चाहे वह हैती के तथाकथित भद्र समाज में नीग्रो समुदाय की स्थिति रही हो, चाहे दक्षिण अफ्रीका में गोरों द्वारा स्थापित रंग-भेद नीति रही हो, चाहे भारत में वर्ण व्यवस्था के तहत सवर्णों द्वारा अवर्णों को हाशिए पर रखने की कूटनीति हो या फिर पितृसत्ता का बोझ सहता स्त्री समाज रहा हो, हर जगह सामंत और प्रजा, मालिक और गुलाम, उच्च जाति और निचली जाति, पत्नी और स्वामी जैसे रिश्ते कमज़ोर और बेबस लोगों के दमन और समर्पण पर ही आधारित रहे हैं। हर जगह अधिकारों को हड़पने और उसके बलबूते पर राज करने की अनवरत साज़िशें दिखाई पड़ती हैं। जहाँ समर्पण का यह भाव विद्रोह में बदलता है वहाँ मुक्ति की माँग करनेवाली आवाज़ को ही कोड़ों, बूटों और गोलियों से दबा दिया जाता है। सदियों से दासता की इस स्थिति में विपन्न वर्ग इस तरह कंडीशंड हो जाता है कि उसी व्यवस्था में वह खुद को ढाल देता है। मॉरीशस में भारतीय आप्रवासियों की भी स्थिति कोई अपवाद नहीं थी। गोरे मालिकों की गुलामी करते भारतीय आप्रवासी समाज में पुरुषों का शोषण तो होता ही था लेकिन स्त्रियों का शोषण दोहरे रूप में किया जाता था। एक तरफ़ उन्हें पत्थर उलाटने और बैलगाड़ियों में ईख लादने जैसे कड़े श्रम के लिए पुरुष की तुलना में आधी पगार दी जाती थी, दूसरी तरफ़ जो स्त्रियाँ मालिकों के यहाँ घरेलू काम-काज करती थीं उनका शारीरिक और यौन शोषण उनकी नियति बन गई थी। इसका मार्मिक चित्रण मॉरीशस के हिंदी साहित्यकार, कृष्णलाल बिहारी 'बेखबर' द्वारा रचित कहानी, 'क्रांति का सूरज' में हुआ है जिसमें इस बात पर ध्यान आकृष्ट किया गया है कि मालिक और दास के रिश्ते के बीच दासत्व का सबसे ज़्यादा दंश स्त्री ही भुगतती है। तत्कालीन समाज की स्त्री के अस्तित्व और अस्मिता पर यह दोहरी-तिहरी मार से साक्षात्कार और उसके मनोवैज्ञानिक पक्ष को उजागर करने के लिए क्या हिंदी साहित्य एक सशक्त माध्यम नहीं ? मॉरीशसवासियों के बीच 'क्रियोल' में 'क्रापो क्रिए' नामक एक लोकगीत बहुत प्रसिद्ध है जिसमें पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में जीती एक स्त्री की व्यथा सुनाई गई है। गीत के अंतिम बोल में यह विचार व्यक्त होता है—स्त्री : गुलाम की गुलाम! प्रसिद्ध फ्रांसीसी नारीवादी विचारक सिमोन दे बोवुआर ने 'द सेकंड सेक्स' में ठीक ही लिखा है कि यदि दुनिया की चार मीनारें मनुष्य के कंधों पर हैं तो स्त्री के कंधों पर पाँच मीनारें लदी हैं। पाँचवीं मीनार है—पितृसत्ता। अत: ऐसे कई हिंदी और भोजपुरी लोकगीत भी प्रवासी समाज के मध्य पल्लवित हुए हैं जिनमें स्त्री के जीवन-संघर्ष दर्ज़ हैं। उनका आकलन करना अभी बाकी है।

प्रवासी हिंदी साहित्य तत्कालीन आप्रवासी मज़दूर समाज के एक और पहलू को उजागर करता है। अंग्रेज़ शासकों और फ्रांसीसी ज़मीनदारों के ज़ुल्मों और अन्यायों से जूझते हुए मज़दूर वर्ग ने या तो चुपचाप उसे अपनी नियति मानकर उसी व्यवस्था को अपनाया या तो उसके खिलाफ़ विद्रोह किया लेकिन शोषक और शोषित वर्ग के बीच के संघर्ष ने धीरे-धीरे एक ऐसे तबके को भी जन्म दिया जो

मज़दूर वर्ग से निकलकर मालिकों के वर्ग में सम्मिलित होना चाहता था। ये लोग गोरे मालिकों के तौर-तरीके, उनके जैसा पहनावा आदि अपनाने लगे थे। दरअसल यह प्रवृत्ति शोषित वर्ग के अंदर की हीन ग्रंथि को साबित करती है। सम्पन्न और विपन्न वर्गों के बीच की इस खाई ने आप्रवासी मज़दूर समाज के बीच एक अलगावबोध पैदा कर दिया था। ऊपर चर्चित कहानी में इस तथ्य का भी उदाहरण मिलता है जब कमला नामक स्त्री पात्र की शादी के मौके पर उसके पिता धोती पर कोट पहनते हैं। यह उसी हीनभाव की ओर संकेत करता है। वह मालिक की कोठरी का सरदार था और उसी दिन उसने अपनी बेटी को साहब के घर भेजा था। इसलिए वह उम्मीद कर बैठता है कि मालिक उस पर मेहरबान रहेगा। उसने सोचा था ऐसे मौके पर मेसिए रोबेर उससे खुश होगा और माफ़ कर देगा और दूसरे लोग उसे ऐसे कपड़ों में देखकर देखते रह जाएँगे। खूब दाद देंगे।

लेकिन गोरे मालिक की बराबरी कोई 'कुली'[4] करे यह मालिक को कैसे बर्दाश्त होता? चाबुक से अपराधी की चमड़ी उधेड़ दी गई।

औपनिवेशिक दासता की इसी व्यवस्था पर सवाल उठाते हुए मॉरीशस के इतिहासकार विजयलक्ष्मी तिलक ने यह अहम सवाल उठाया है, 'गुलामी की स्थिति के भोगी केवल गैर-यूरोपीय देशों के लोग ही क्यों होते हैं? गोरे शासकों ने दासों के रूप में कभी गोरों या फिर अपनी ही जाति के लोगों की कल्पना क्यों नहीं की? अत: गुलामी, नस्ल तथा वर्ण (colour), इन तीनों तत्वों की समन्वित कड़ी ने ही औपनिवेशिक दासत्व को मुख्यत: सबसे अधिक अमानवीय संस्था के रूप में जन्म दिया।'[5] इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यूरोपीय उपनिवेशवाद और तत्कालीन फैलते साम्राज्यवाद का सबसे शक्तिशाली पहलू हुकूमत करने के लिए दमनकारी नीतियाँ ईज़ाद करना ही नहीं था बल्कि उसके पीछे रंग-भेद और नस्लवाद जैसे अमानुषिक चलन भी उसे बराबर ऊर्जा देते रहे हैं। कहना न होगा कि औपनिवेशिक युग में गोरों के लिए सिर्फ़ नीग्रो या अफ्रीकी मूल के लोग ही ब्लैक के दायरे में नहीं आते थे बल्कि भारतीय समाज भी उसी रंग-भेद नीति के तहत गोरे मालिकों का शिकार हुआ करता था। भारतीय आप्रवासी मज़दूरों की स्थिति अफ्रीका गुलामों से ज़्यादा दूर नहीं थी। विदेशी शासकों ने बार-बार उनकी संस्कृति को हीन और अपनी संस्कृति को श्रेष्ठ जताते हुए उनके मनोबल को कुचला ही नहीं बल्कि उनको पददलित करके उनके अंदर हीनता भाव इस हद तक भर दिया कि अगर कोई हीन न भी हो तो भी खुद को वैसा महसूस करने लगे।

गुलामी की जंज़ीरों में क़ैद, भारतीय आप्रवासी समाज का अंतर्मन (psyche) जिस अलगावबोध का शिकार हुआ था उसे दूर करने के लिए उसके पास अपनी सांस्कृतिक और धार्मिक धरोहर मात्र थी। आर्थिक, शारीरिक, मानसिक, सभी रूपों में सताया गया यह निस्सहाय तबका अपनी समस्याओं का सामना करने के लिए 'रामचरितमानस' का पाठ, मंदिरों और बैठकाओं में कथा-वाचन, कीर्तन आदि करता था।

लेकिन मात्र ईश्वर-भक्ति या फिर संस्कृति-संरक्षण को ही अगर आप्रवासी समाज की मुक्ति का मार्ग मान लिया जाए तो दासत्व के कारागार से अपनी आज़ादी की राह तक पहुँचने के लिए भारतीय आप्रवासी मज़दूरों ने जो अथक संघर्ष किए थे, उस लंबे इतिहास की जटिलताओं का सरलीकरण हो जाएगा। तत्कालीन आप्रवासियों के पास कुछ खोने को नहीं था लेकिन इतना तो वे समझते थे कि एकजुटता, मेहनत और हौसले के बलबूते पर अगर शासकों के खिलाफ़ क्रांति का स्वर फूँका जाए तो वे अपना खोया हुआ आत्म-सम्मान वापस पा सकते हैं। इसीलिए 'चिल्लाहट', 'जय दुर्गे', 'क्रांति का सूरज' जैसी कहानियों के अंत तक आते-आते मज़दूर वर्ग मालिकों के खिलाफ़ क्रांतिकारी कदम उठाने लगते हैं। क्रांति की यह लहर कालांतर में राजनीतिक रूप अख़्तियार करती है जिसका नतीजा देश के साथ ही आप्रवासी समाज और उसकी भावी पीढ़ियों की आज़ादी के तौर पर सिद्ध हुआ।

हमारे पूर्वज़ों का यह ठोस मानना था कि यदि भाषा गई तो संस्कृति भी गई। अत: जब तक भाषा जिंदा है तब तक संस्कृति भी सुरक्षित है। यही कारण है कि प्रवासी समाज के रूप में विकसित जनसमूह अपने मूल देश की संस्कृति को अपने साथ लिए विश्व के कोने-कोने में एक संघर्षमय जीवन व्यतीत कर रहा है। निस्संदेह

हिंदी भाषा के विकास के ज़रिए ही भारतीय मूल के लोगों ने हर जगह अपनी संस्कृति को कायम रखने में सफलता हासिल की है। उसी भाषा के माध्यम से उन्होंने अपना साहित्य रचा, उत्पीड़ित तथा वंचित जनता के बीच जन-चेतना का बिगुल फूँका, उनमें राजनीतिक चेतना जगाई और उनको स्वतंत्रता, अधिकार, लोकतंत्र जैसी अवधारणाओं की समझ आई। हिंदी ही वह भाषा थी जिसमें उन्होंने न केवल अपने दुख-दर्द की अभिव्यक्ति की बल्कि शोषक तंत्र और अन्याय के खिलाफ़ लामबंद हुए। अत: हिंदी भाषा अपने आप में क्रांति की भाषा साबित होती है। ध्यान देने योग्य बात है कि भारतीय प्रवासियों की तत्कालीन व्यथा-कथा और संघर्ष-गाथा का स्वर प्रवासी भारतीय के वंशज लेखक-समूह द्वारा रचित हिंदी साहित्य में भली-भांति गूंजता है लेकिन इसके साथ ही दासता के शिकंजे में कैद तत्कालीन प्रवासी समाज की अपनी आनेवाली पीढ़ी को लेकर खास चिंताएँ, उनकी जिजीविषा, लोक-मान्यताएँ, बल-दुर्बलताएँ आदि भी हिंदी साहित्य-लेखन में चिन्हित की जा सकती हैं। इसी आधार पर भारतीय प्रवासी समाज का नृशास्त्रीय अध्ययन अकादमिक स्तर पर शोध का विषय बन सकता है। उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति, उनका अलगावबोध (alienation), विषम परिस्थितियों से जूझते हुए भी एक सुनहरे भविष्य की उनकी प्रतीक्षा आदि भावनात्मक तत्वों का अध्ययन करने के लिए हमें प्रवासी हिंदी साहित्य के गलियारे से होकर गुज़रना होगा इसीलिए भाषा के रूप में हिंदी का महत्व रेखांकित करने योग्य है।

इस तरह हिंदी प्रवासी साहित्य में भारतीय आप्रवासी समाज अपनी कमज़ोरियों और मज़बूतियों, दोनों के साथ खड़ा दिखाई देता है। रचनाकार केवल रचना नहीं प्रस्तुत करता बल्कि अपनी कृति में ही वह वेंटेज पॉइंट खड़ा करता है जहाँ से हम इतिहास को भी देख पाते हैं। संभव है कि कथा-साहित्य के सौंदर्यशास्त्र के बने-बनाए मापदंडों पर मॉरीशस का हिंदी साहित्य पूरी तरह खरा न उतरे पर उसकी विशेषता इसी में है कि उसकी संवेदना एवं साहित्यकारों की चेतना एकमत होकर उसके प्रतिपाद्य को मुखरता प्रदान करती हैं उसे शोध का विषय बनाती हैं जो आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। अपने पूर्वजों के समय की युगीन समस्याओं की यथार्थ और जीवंत अभिव्यक्ति ही शायद प्रवासी साहित्यकारों की कलात्मक उपलब्धि है। आज के इस उत्तर-आधुनिक युग में जहाँ इतिहासकार और रचनाकार की मौत की घोषणा हो चुकी है वहाँ इतिहास के अध्ययन के लिए साहित्य की क्या उपयोगिता हो सकती है? मॉरीशस के हिंदी साहित्य का गहरा अध्ययन करने पर पाठकों के लिए इसका उत्तर पाना कठिन नहीं रह जाएगा। यह सच है कि किसी भी राष्ट्र-राज्य के गौरव, शक्ति और सदिच्छाओं को बनाए रखने और समृद्ध करने में उस राष्ट्र-राज्य की भाषा एक दमदार ज़रिया साबित होती है लेकिन यह भी सच है कि उस भाषा में रचा गया साहित्य देश की जनता को ज़्यादा से ज़्यादा संवेदनशील भी बनाता है। विश्व भर में इंडियन डायस्पोरा को एकजुट करने और अपने पूर्वजों के इतिहास के उन अनछुए पहलुओं को उजागर करने में आज हिंदी एक सशक्त माध्यम बनती जा रही है। इस तथ्य को रेखांकित करने की ज़रूरत है।

संदर्भ एवं टिप्पणी

1. मॉरीशस के इतिहास और शर्तबंध-प्रथा से संबंधित तथ्यों के लिए देखें:
   (क) रामशरण प्रह्लाद, 2004, 'मॉरीशस का इतिहास', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
   (ख) मुनीन्द्रनाथ वर्मा, प्रथम संस्करण, 1985, 'मॉरीशस का इतिहास', हिंदी प्रचारिणी सभा, मॉरीशस

2. 'मॉरीशस के हिंदी साहित्य के उद्‌भव और विकास' के लिए देखें: चिंतामणि मुनीश्वरलाल, 2001, 'मॉरीशसीय हिंदी साहित्य' (एक परिचय), हिंदी बुक सेण्टर, नई दिल्ली

3. कमल किशोर गोयनका (सं.), प्रथम संस्करण 2000, 'मॉरीशस की हिंदी कहानियाँ', साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, (भूमिका से उद्धृत)

4. 'कुली' शब्द प्राय: भारतीय आप्रवासी मज़दूरों के लिए गोरे मालिकों द्वारा प्रयुक्त नाम होता था। यह उनकी गरीबी और वर्ण के आधार पर उन्हें अपनी हैसियत का एहसास दिलाने के लिए एक अपमानजनक शब्द था।

5.Teelock, Vijaylakshmi, 2001, 'Mauritian History – From Beginning to Modern Times', Mahatma Gandhi Institute, Mauritius, Pg. 225

"Why the state of slavery should devolve only on non-Europeans and they could not envisage the idea of 'White Slaves'? It is this linking of slavery, race and color which makes colonial slavery in particular one of the most in human institutions created."

सहायक ग्रंथ (हिंदी)

1. चिंतामणि मुनीश्वरलाल, 2001, 'मॉरीशसीय हिंदी साहित्य' (एक परिचय), हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली

2. जयनारायण रॉय, संस्करण 1970, 'मॉरीशस में हिंदी भाषा का संक्षिप्त इतिहास', सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

3. जैनेन्द्र कुमार, संस्करण 1970, 'सभ्यता और संस्कृति', जैनेन्द्र ट्रस्ट

4. थापर रोमिला, 2005, 'भारत का इतिहास', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

5. मुनीन्द्रनाथ वर्मा, प्रथम संस्करण, 1985, 'मॉरीशस का इतिहास', हिंदी प्रचारिणी सभा, मॉरीशस

6. मैनेजर पाण्डेय, प्रथम संस्करण 2006, 'आलोचना की सामाजिकता', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

7. मैनेजर पाण्डेय, संस्करण 2009 'साहित्य और इतिहास दृष्टि', वाणी प्रकाशन, दिल्ली

8. रामशरण प्रह्लाद, प्रथम संस्करण 1995, 'मॉरीशस : भारतीय संस्कृति का हरावल दस्ता', आत्माराम एंड संस, दिल्ली

10. रामशरण प्रह्लाद, 1998, 'मॉरीशस : हिंद महासागर में एक नवोदित राष्ट्र', राजपाल एंड संस,नई दिल्ली

11. रामशरण प्रह्लाद, 2004, 'मॉरीशस का इतिहास', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

12. रामयाद लक्ष्मी प्रसाद, 2002, 'मॉरीशस में खड़ी बोली हिंदी की व्यवस्था और प्रसार', अनु. अजामिल माताबदल, महात्मा गांधी संस्थान मॉरीशस

13. बिपन चंद्र, 2011, 'आधुनिक भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद', अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स

14. हजारीसिंह के, 1976, मॉरीशस में भारतीयों का इतिहास (अनु. अभिमन्यु अनत), द मैकमिलन कंपनी ऑव इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण

सहायक ग्रंथ (अंग्रेज़ी)

1. Bhabha Homi, 1997, 'The Location of Culture', London : Routledge

2. Hall Stuart, 1997, 'Subject in History Making Diaspora Identities', London: Penthouse Books.

3. Manjit Inder Singh (Ed.) 2007—Contemporary Diasporic Literature : Writing History, Culture, Self, Delhi, Pencraft International.

4. Majumdar Mousmi, (ed.) 2010, 'Kahe Gaile Bides, Why did you go Overseas?' Mango Books Allahabad, India.

5. Terry Eagleton 1967, 'Criticism and Ideology', London : NLB

6. N.Jayaram, 2011, Diversities In Indian Diaspora, Oxford University Press, New Delhi, India.

पत्र-पत्रिकाएँ

1.वर्तमान साहित्य-प्रवासी साहित्य महाविशेषांक, मई संयुक्तांक, 2006

2. साक्षात्कार- प्रवासी भारतीय हिंदी लेखन विशेषांक, मई-जुलाई, 2007

3. कथादेश-किसान जीवन का यथार्थ : एक फ़ोकस विशेषांक, मई, 2002

❐

क्रेव केयर, मॉरीशस
devinaluv@gmail.com

23 हिंदी का परिवर्तित होता स्वरूप

• डॉ. श्याम नारायण शुक्ल

हिंदी शब्द का उद्भव

हम सभी जानते हैं कि कैसे फ़ारसी पर्यटक और व्यापारी 'सिंधु' (नदी) का उच्चारण 'हिंदू' करते थे और उसी के कारण भारत का नाम हिंद या हिंदुस्तान, भारत के निवासियों का नाम हिंदू और उनकी भाषा का नाम हिंदी हो गया। जब मैं इराक के एक विश्वविद्यालय में प्राध्यापक था तब देखता था कि मेरे इराकी सहकर्मी मेरा परिचय कराते समय यह अवश्य बताते थे कि मैं 'हिंदी उस्ताद' (भारतीय प्राध्यापक) हूँ। मैंने यह भी देखा कि पश्चिम एशिया के सभी देशों में हिंद और हिंदी का अर्थ क्रमश: भारत और भारतीय होता है।

आधुनिक हिंदी का प्रचार-प्रसार

कहते हैं कि भारतवर्ष में भाषा या बोली हर दस कोस में बदलती है। भारत के जिस क्षेत्र को हम हिंदी-भाषी मानते हैं, वहाँ कई बोलियाँ आज भी प्रचलित हैं, जैसे—ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, मगधी, बुंदेलखंडी, बघेलखंडी, छत्तीसगढ़ी आदि। इनमें से कई क्षेत्र के लोग अपनी बोली को एक साहित्यिक भाषा के रूप में मान्यता देने के प्रयास में लगे हैं। इससे उनकी बोली को कितना लाभ होगा, यह कहना कठिन है पर हिंदी की प्रगति के लिए यह अवश्य ही हानिकारक है।

जन्म–भारत में छत्तीसगढ़ प्रांत के अंतर्गत तुलसी नामक ग्राम में।
शिक्षा–सिविल-स्ट्रक्चरल इंजीनियरिंग में जबलपुर विश्वविद्यालय से बी.ए. (आनर्स), यूनिवर्सिटी ऑव न्यू ब्रंसविक (कनाडा) से एम.एस.सी. (इंजी) और ओहायो स्टेट यूनिवर्सिटी (अमेरिका) से पीएचडी।
रचनाएँ–विभिन्न विषयों पर 7 पुस्तकें और अनेक अंतरराष्ट्रीय हिंदी पत्रिकाओं में धार्मिक और सामाजिक विषयों पर लगभग 100 लेख। संस्मरणात्मक पुस्तकें गंगा से मिसीसिपी तक और मिसीसिपी के पार भारत में विशेष लोकप्रियता। चार वर्षों तक हिंदी पत्रिका 'विश्व विवेक' के संयुक्त संपादक के रूप में उत्तरदायित्व संभाला।
सम्मान–हिंदी और भारत में सेवाओं के लिए, सन् 2012 में छत्तीसगढ़ शासन द्वारा भारतीय-अमेरिकी के रूप में, एक विशेष समारोह में राष्ट्रपति के कर-कमलों से छत्तीसगढ़ राज्य अलंकरण पुरस्कार प्रदत्त।
संप्रति–सेवा-निवृत्त इंजीनियर और प्राध्यापक। अमेरिका की 'विश्व हिंदी न्यास' नामक संस्था के कार्यकारी निदेशक (अध्यक्ष)।

भाषा न केवल स्थान के साथ बदलती है बल्कि समय के साथ भी बदलती है। इसका एक अच्छा उदाहरण किसी ने पंजाबी भाषा के संबंध में इस तरह दिया था—सन् 1947 के पहले, अविभाजित भारत में केवल लाहौर विश्वविद्यालय में पंजाबी विषय में एम. ए. और पीएचडी तक की डिग्री प्राप्त करने की सुविधा थी। विभाजन के बाद पंजाबी विषय पढ़ाने की व्यवस्था भारतीय पंजाब के नए विश्वविद्यालयों में भी हुई। अंतर यह रहा कि धीरे-धीरे भारतीय-पंजाबी में अधिक से अधिक संस्कृत के शब्द अपनाए गए और पाकिस्तानी-पंजाबी में अरबी और फ़ारसी के शब्दों का बाहुल्य हुआ। आज परिणाम यह हुआ है भारत और पाकिस्तान में पंजाबी समान रूप से बोली व लिखी जाती हैं। पर उनकी साहित्यिक पंजाबी अलग-अलग प्रतीत होती है। वहीं हिंदी और उर्दू सुनने और बोलने में एक-सी लगती हैं पर दोनों की लिपि अलग-अलग (क्रमश: देवनागरी और अरबी) हैं। स्वतंत्रता के बाद इन 68 वर्षों में साहित्यिक हिंदी भी संस्कृतनिष्ठ होती गई है। कुछ दिन पहले मैं टी.वी. के एक भारतीय चैनल पर एक कार्यक्रम देख रहा था। उस कार्यक्रम का विषय था 'पकिस्तानी आतंकवादियों द्वारा कश्मीर में आतंकी हमले'। कार्यक्रम के संचालक कार्यक्रम में आमंत्रित भारतीय और पाकिस्तानी विशेषज्ञों से टेलीफ़ोन के माध्यम से ही प्रश्न पूछ रहे थे। जब एक भारतीय विशेषज्ञ हिंदी में बोलने लगे तो एक पाकिस्तानी विशेषज्ञ से नहीं रहा गया। उन्होंने कहा, ''जनाब, मुझे माफ़ करें। आप किस भाषा में और क्या बोल रहे हैं, वह मेरी कुछ भी समझ में नहीं आ रही है।''

आधुनिक हिंदी को संपूर्ण भारत में सर्वमान्य बनाने का श्रेय भारतेंदु हरिश्चंद्र को जाता है। यद्यपि वे वाराणसी के थे, उन्होंने दिल्ली और मेरठ के आसपास की बोली, 'खड़ीबोली' को हिंदी के रूप में मान्यता दिलाने के लिए आजन्म प्रयत्न किया और अंतत: उसमें सफल रहे। उससे पहले हिंदी

साहित्य के रूप में विभिन्न बोलियों में अनेक काव्य ग्रंथ उपलब्ध थे जैसे अवधी में संत तुलसीदास का रामचरितमानस, ब्रजभाषा में महाकवि सूरदास का सूरसागर आदि परंतु तब तक गद्य-साहित्य का अभाव था। इसलिए भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी में अनेक नाटक, यात्रा-वर्णन और कहानियाँ लिखीं जो आज की हिंदी के 'मील के पत्थर' हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि हिंदी को संपूर्ण भारत में लोकप्रिय बनाने में हिंदी सिनेमा का प्रारंभ से ही बहुत बड़ा हाथ रहा है। इसमें कितनी सच्चाई है, यह कहना कठिन है क्योंकि प्रारंभ में हिंदी सिनेमा की भाषा हिंदी न होकर उर्दू थी जिसमें अधिकांश पटकथा और गीत लेखक उर्दू में ही लिखते थे। सिनेमा के बहुत से नाम भी उर्दू में होते थे जैसे ''शबनम'', ''दीदार'', ''शबाब'' आदि जिनके अर्थ दर्शकों में से अधिकांश लोग नहीं जानते थे पर धीरे-धीरे उसमें भी परिवर्तन आया और 1950 के दशक में कुछ फ़िल्म बनानेवाले, जैसे ऋषिकेश मुखर्जी, सत्यजित राय आदि आए जिन्होंने संवाद और गीत लेखन में हिंदी को प्रधानता दी। तब से हिंदी सिनेमा अवश्य ही हिंदी के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

हम देखते हैं कि हिंदी के स्वरूप में कुछ न कुछ अप्रिय रूप से अचानक ही परिवर्तन होता रहा है। कई चिर-परिचित, प्रतिष्ठित और शुद्ध साहित्यिक हिंदी शब्द अचानक ही लुप्त हो जाते हैं और उनके स्थान पर बिल्कुल नए शब्दों का उपयोग होने लगता है जो शायद किसी क्षेत्रीय बोली या अन्य भाषा के शब्द हों। उदहारण के लिए 'अपहरण' शब्द लीजिए। यह रामायण काल से, जबसे रावण ने पंचवटी से सीता का अपहरण किया था, भारत में सुपरिचित शब्द रहा है। आज जब किसी अपहरण का समाचार किसी समाचार-माध्यम (टी.वी., रेडियो अथवा समाचार पत्र) से दिया जाता है, तो संवाददाता यह बताता है कि अमुक व्यक्ति, अमुक जगह से कुछ बदमाशों द्वारा 'अगुआ' (अपहरण) कर लिया गया।

हिंदी को लोकप्रिय बनाने में महात्मा गांधी का भी बहुत योगदान है। उन्होंने हिंदी का, जिसे वे प्रारंभ में हिंदुस्तानी कहना पसंद करते थे, स्वतंत्रता-सेनानियों की भाषा के रूप में उपयोग किया। उनकी हिंदी में बहुत से उर्दू के शब्द भी होते थे जिनमें अब काफ़ी परिवर्तन आया है। आज के भारतीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी भी महात्मा गांधी के पदचिह्नों पर चलते हुए अपना भाषण शुद्ध हिंदी में ही देना पसंद करते हैं। वहीं ठीक इसके विपरीत, श्री राजगोपालाचारी जो महात्मा गांधी के अनुयायी और समधी थे, मद्रास प्रांत के मुख्य मंत्री बनते ही हिंदी के कट्टर विरोधी हो गए थे। उनके विरोध से पहले हिंदी का प्रचार सभी दक्षिण भारतीय प्रांतों में बड़े ज़ोर-शोर से चल रहा था। यदि उनका विरोध नहीं रहता तो शायद हिंदी आज वास्तव में संपूर्ण भारत की राष्ट्रभाषा बन गई होती।

मुग़ल शासकों के समय से उत्तर भारत में उर्दू का अधिक प्रभाव रहा। इसलिए आज भी हरियाणा, उत्तर प्रदेश और बिहार की हिंदी में राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ की हिंदी की तुलना में उर्दू के शब्दों का अधिक उपयोग होता है। शायद धीरे-धीरे यह अनुभव किया गया कि हिंदी की जननी संस्कृत है जिसमें शब्दों का अतुल भंडार है अत: हिंदी को दूसरी जगह से शब्द लेने की आवश्यकता नहीं है। (संस्कृत की इसी गरिमा के कारण कंप्यूटर साइंस के जानकार यह मानते हैं कि संसार की भाषाओं में संस्कृत ही कंप्यूटर के लिए सबसे उपयुक्त भाषा है।)

पिछली शताब्दी में हिंदी साहित्य समिति प्रयाग और काशी देवनागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ने संस्कृतनिष्ठ हिंदी को प्रोत्साहन दिया। आकाशवाणी (ऑल इंडिया रेडियो) की हिंदी में भी संस्कृत के शब्द प्रचुर मात्रा में होते थे। इस प्रसंग में मुझे 1953-54 की एक घटना याद आती है। भारत के पहले प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहीं शिकायत के शब्दों में वक्तव्य दिया कि आकाशवाणी की हिंदी इतनी क्लिष्ट है कि वह उनकी समझ में नहीं आती और इसलिए उसे अधिक सरल बनाने की आवश्यकता है। हिंदी और संस्कृत के विद्वान डॉ. संपूर्णानंद से नहीं रहा गया जो उस समय राजस्थान के राज्यपाल थे। उन्होंने तुरंत व्यंग्य किया कि यदि हमें कोई भाषा नहीं आती तो हम उसे सीखने का प्रयत्न करें। यह उचित नहीं है कि हमारे लिए अन्य भाषाएँ सरल बनाई जाएँ।

हिंदी का परिवर्तित होता स्वरूप

हम देखते हैं कि हिंदी के स्वरूप में कुछ-न-कुछ अप्रिय रूप से अचानक ही परिवर्तन होता रहा है। कई चिर-परिचित, प्रतिष्ठित और शुद्ध साहित्यिक हिंदी शब्द अचानक ही लुप्त हो जाते हैं और

उनके स्थान पर बिल्कुल नए शब्दों का उपयोग होने लगता है जो शायद किसी क्षेत्रीय बोली या अन्य भाषा के शब्द हों। उदाहरण के लिए 'अपहरण' शब्द लीजिए। यह रामायण काल से, जबसे रावण ने पंचवटी से सीता का अपहरण किया था, भारत में सुपरिचित शब्द रहा है। आज जब किसी अपहरण का समाचार किसी समाचार-माध्यम (टी.वी., रेडियो अथवा समाचार-पत्र) से दिया जाता है तो संवाददाता यह बताता है कि अमुक व्यक्ति, अमुक जगह से कुछ बदमाशों द्वारा 'अगुआ' (अपहरण) कर लिया गया। मेरे पास मुकुंदीलाल श्रीवास्तव द्वारा संपादित व ज्ञानमंडल लिमिटेड, बनारस द्वारा प्रकाशित 'ज्ञान शब्दकोश' नामक जो हिंदी शब्दकोश है, उसमें 'अगुआ' शब्द का अर्थ है 'आगे चलनेवाला'। अपहरण के बदले 'अगुआ' के रूप में यह नया शब्द देनेवाला व्यक्ति भले ही हिंदी साहित्य से कोसों दूर हो, भले ही वह हिंदी भी पास न हो पर संवाददाता के रूप में उसका वह शब्द अन्य लोगों द्वारा इतनी बार दुहराया जाता है कि समय के साथ वह हिंदी का एक सुपरिचित शब्द बन जाता है। हो सकता है कि इस नए शब्द का उपयोग चलता रहा तो कुछ वर्षों के बाद इस सुपरिचित शब्द 'अपहरण' को हिंदी-भाषी लोग समझ भी नहीं पाएँगे। इसमें किंचित भी अतिशयोक्ति नहीं है। इस संबंध में मैं अपना एक अनुभव बताना चाहूँगा। लगभग एक वर्ष से मुझे डर्बन (दक्षिण अफ्रीका) से एक सज्जन 'हिंदी खबर' नामक इलेक्ट्रॉनिक समाचार पत्र इमेल द्वारा भेजते हैं। कुछ महीने पहले मैंने उन्हें इमेल द्वारा पूछा कि वे अपनी पत्रिका का नाम 'हिंदी ख़बर' के बदले 'हिंदी समाचार' क्यों नहीं रखते क्योंकि हिंदी के साथ समाचार अधिक उपयुक्त लगता है, भले ही उर्दू के साथ खबर शब्द अधिक अच्छा लगेगा, तो उनका उत्तर था कि समाचार शब्द दक्षिण अफ्रीकी हिंदी-भाषियों के लिए बिल्कुल अपरिचित शब्द है और वहाँ के लोग उसे नहीं अपनाएँगे। शायद वे ठीक ही कह रहे हों।

वैसे ही 'झंडा', 'ध्वजा' और 'पताका' शब्दों को लीजिए जो एक-दूसरे के पर्यायवाची शब्द हैं, विशेषकर 'ध्वजा' और 'पताका' हज़ारों वर्ष पुराने संस्कृत के शब्द हैं पर शायद किसी भारत-पाकिस्तान या भारत-चीन युद्ध के समय किसी पत्रकार ने समाचार दिया होगा कि अमुक भारतीय सिपाही ने अपनी जान की परवाह किए बिना सीमा पर भारतीय 'परचम' (ध्वजा) फहरा दिया। मेरे इस उपर्युक्त शब्दकोश में 'परचम' शब्द है ही नहीं। अब इस शब्द का इतना उपयोग होने लगा है कि कहीं नई पीढ़ी के साहित्यकार 'झंडा', 'ध्वजा' और 'पताका' शब्दों को बिल्कुल भूल न जाएँ। इसी तरह कुछ और नए शब्द अचानक ही हिंदी में प्रचलित होने लगे हैं यथा- 'मुहैया' कराना जिसका अर्थ है 'प्राप्त' कराना। 'चलते' जो 'कारण' शब्द का स्थान लेता जा रहा है। जैसे 'अतिवृष्टि के 'चलते' (कारण) शहर का यातायात ठप्प हो गया है।' 'करना' क्रिया का भूतकाल 'किया' या 'की' होता है जैसे 'मैंने अपना काम किया' या 'उसने मुझपर कृपा की' परंतु भारत के कुछ विशेष क्षेत्र के हिंदी-भाषी लोग कहते हैं मैंने अपना काम 'करा' या उसने मुझपर कृपा 'करी'। बोलचाल की भाषा तक तो यह ठीक है पर साहित्यिक हिंदी में 'करा' और 'करी' का उपयोग अवांछनीय है। उसी तरह 'नामचीन' (नामवर या प्रसिद्ध), 'इज़ाफ़ा' (वृद्धि, बढ़ती) आदि नए शब्द हिंदी में घुसाए जा रहे हैं। इन नए शब्दों के प्रचलन से बहुत से हिंदी साहित्य-प्रेमी अप्रसन्न हैं। वे कहते हैं कि यह सब उन लोगों का षड्यंत्र है जो हिंदी को जानबूझकर बिगाड़ना चाहते हैं। वे फ्रेंच-भाषियों का उदाहरण देते हैं जो अपनी भाषा में अंग्रेज़ी आदि अन्य भाषाओं के शब्दों का उपयोग सहन नहीं कर सकते।

हम देखते हैं कि हिंदी व्याकरण में भी कुछ अनावश्यक प्रहार होने लगे हैं। व्याकरण के नियमों के अनुसार यदि कर्ता के साथ 'ने' लगा हो तो सकर्मक भूतकाल की क्रियाओं के लिंग कर्ता के लिंग के अनुसार न होकर कर्म के लिंग के अनुसार होते हैं। जैसे—राम ने रोटी 'खाई' या सीता ने आम 'खाया'। शायद इसी को ध्यान में रखते हुए कुछ लोग यह गलती करते हैं कि कर्म के लिंग के अनुसार क्रिया के मूल (आना, जाना, खाना) को बदल देते हैं। उदाहरण के लिए वे कहते हैं, मुझे भोजन के बाद दवाई 'खानी' है जबकि 'खानी' शब्द का अस्तित्व ही नहीं है।

कुछ हिंदी के अच्छे वक्ता लोग भी अकर्मक क्रिया के कर्ता के साथ 'ने' लगाते हैं जो नियम के विरुद्ध है। जैसे वे कहते हैं, ''मैंने वहाँ जाना है।'' इतना ही नहीं, वे सकर्मक क्रिया के कर्ता के साथ भी अनावश्यक रूप से 'ने' लगाते हैं जैसे ''उन्होंने यह कार्य करना है''। शुद्ध हिंदी है ''मुझे वहाँ जाना है'' और ''उन्हें यह कार्य करना है।''

वैसे तो परिवर्तन प्रकृति का नियम है। समय के साथ सभी में कुछ-न-कुछ परिवर्तन आता रहेगा।

❑

अमेरिका
shuklas@comcast.net

हिंदी का इ-संसार

प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी की उपस्थिति सुदृढ़ होने की श्रमसाध्य और लम्बी प्रक्रिया में तथा नए युगानुरूप संसाधनों के माध्यम से हिंदी के वैश्विक प्रचार-प्रसार में विश्व हिंदी समाज के अनेक कर्मठ व्यक्तियों तथा संस्थाओं द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं की ऐतिहासिक भूमिका को समझते हुए, सचिवालय ने इस अंक में हिंदी की इ-प्रचारक योजनाओं पर आधारित विशेष आलेखों का संकलन किया है। उद्देश्य यही है कि इन योजनाओं को साकार करने में जिन व्यक्तियों और संस्थाओं का विशेष योगदान रहा है उनकी मेहनत को विश्व हिंदी समाज का आदर प्राप्त हो और यथा संभव प्रक्रियाओं और अनुभवों के इन विवरणों से इस दिशा में भी अनुसंधान क्षेत्रों व दिशाओं का अन्वेषण हो।

इ-संसाधनों द्वारा भाषा के प्रचार का यह प्रकरण स्वाभाविक रूप से पत्रकारिता और पारंपरिक दृश्य-श्रव्य मीडिया द्वारा भाषा-प्रचार कार्य में डाली गई नींव पर ही आधारित है। इन माध्यमों के विषय में कुछ विशेष आलेख भी पत्रिका में संकलित हैं।

24 हिंदी का इ-संसार और 'अरविंद लैक्सिकन'

● श्री अरविंद कुमार

हिंदी के बढ़ते कदम उन्नीसवीं से इक्कीसवीं सदी

उन्नीसवीं सदी आधुनिक हिंदी की तैयारी की सदी थी। उसके पहले दशक में इंशा अल्लाह ख़ाँ ने 'रानी केतकी की कहानी' (1803) लिखी तो अंत तक पहुँचते-पहुँचते कुल पैंतीस वर्षों की अल्पायु में भारतेंदु हरिश्चंद्र (1950-1985) ने आधुनिक साहित्य की पुख़्ता नींव रख दी थी। बीसवीं सदी ने हिंदी का चतुर्दिक विकास देखा। महात्मा गांधी के नेतृत्व में हिंदी राजनीतिक संवाद की भाषा और जनता की पुकार बनी। पत्रकारों ने इसे माँजा, साहित्यकारों ने सँवारा। फ़िल्मों ने हिंदी को अपने देश में ही नहीं, बाहर भी फैलाया। संसार भर में भारतीयों को जोड़े रखने का काम बीसवीं सदी में सुधारकों, स्वतंत्रता सेनानियों, पत्रकारों, साहित्यकारों और फ़िल्मकारों ने बड़ी खूबी से किया।

शैशव के बाद भाषा सीखने का प्रथम माध्यम पाठ्यपुस्तकें और शब्दकोश होता था। जहाँ तक कोशों का सवाल है, उन्नीसवीं से बीसवीं सदी तक भारत में अनेक उल्लेखनीय संस्कृत-इंग्लिश, हिंदी-हिंदी, हिंदी-इंग्लिश, इंग्लिश-हिंदी कोश बने लेकिन वे सभी शब्दार्थ कोश थे। कमी थी तो एक हिंदी थिसॉरस की।

कोश और थिसॉरस के क्षेत्र अलग-अलग हैं। शब्दकोश किसी शब्द का अर्थ बताता है। थिसॉरस अर्थ के लिए शब्द देता है और उसके लिए अन्य शब्द। कोश में हर शब्द अकारादि क्रम से छपा होता है जैसे—'कक्ष', 'कक्षा', 'कगार'। थिसॉरस में शब्दों का संकलन अकारादि क्रम से न होकर कोटि क्रम से होता है, जैसे 'इंद्रिय' के बाद 'ज्ञानेंद्रिय', 'कर्मेंद्रिय' या फिर 'स्वाद' के बाद 'कड़वा स्वाद', 'कसैला स्वाद', 'खट्टा स्वाद', 'चटपटा स्वाद', 'नमकीन स्वाद' और 'मीठा स्वाद'। यह शब्दों के अर्थ तो नहीं देता लेकिन किसी एक शब्द के अनेक पर्यायवाचियों से शब्द का अर्थ समझ में आ जाता है। इस प्रकार वह प्रयोक्ता की शब्द शक्ति बढ़ाता है।

अरविंद कुमार (जन्म 17 जनवरी, 1930, मेरठ शहर, उत्तर प्रदेश, भारत)

अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए.। आज अपने कोशों के लिए जाने जाते हैं। कोशों को अपना जीवन समर्पित करने से पहले वे प्रख्यात पत्रकार (संपादक माधुरी, सर्वोत्तम रीडर्स डाइजेस्ट) रहे हैं। उनके अंग्रेज़ी से हिंदी, हिंदी से अंग्रेज़ी तथा संस्कृत से हिंदी काव्य तथा गद्य अनुवाद प्रसिद्ध हैं। उनके द्वारा कला, साहित्य और फ़िल्मों की समीक्षाएँ हिंदी तथा अंग्रेज़ी पत्रिकाओं में छपती रही हैं।

उनकी कुछ प्रकाशित पुस्तकें हैं—

(कोश ग्रंथ - प्रकाशन क्रम से)

समांतर कोश, हिंदी थिसारस, अरविंद सहज समांतर कोश, शब्देश्वरी, द पेंगुइन इंग्लिश-हिंदी/हिंदी-इंग्लिश थिसारस एंड डिक्शनरी, भोजपुरी-हिंदी-इंग्लिश लोक भाषा शब्दकोश, बृहत् समांतर कोश, अरविंद वर्ड पावर, इंग्लिश-हिंदी, अरविंद तुकांत कोश।

अन्य प्रकाशित कृतियाँ हैं—सहज गीता, विक्रम सैंधव (नाटक), जूलियस सीज़र (शेक्सपीयर) और फ़ाउस्ट एक त्रासदी (गोएथे) के काव्यानुवाद।

(अरविंद कुमार को मिले कुछ सम्मान)

- विश्व हिंदी सम्मान (दसवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन)
- परंपरा विशिष्ट ऋतुराज सम्मान (साहित्य संस्था परंपरा)
- शलाका सम्मान (हिंदी अकादेमी, दिल्ली)
- सुब्रह्मण्यम भारती अवार्ड (केंद्रीय हिंदी संस्थान आगरा)
- अखिल भारतीय हिंदी सेवा पुरस्कार (महाराष्ट्र राज्य हिंदी अकादमी)
- डॉक्टर हरदेव बाहरी सम्मान (हिंदी साहित्य सम्मेलन)

इ-संसार की सदी है इक्कीसवीं सदी

अब इक्कीसवीं सदी के इ-संसार में हिंदी दुनिया भर में पहुँचने के लिए बेचैन है।

भोपाल में दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन (सितंबर, 2015) में हिंदी के विकास और वैश्वीकरण की दिशा में सूचना प्रौद्योगिकी के योगदान पर बल देकर सही समय पर सही दिशा निर्देश दिया गया। सूचना प्रौद्योगिकी से ऊर्जित और संचालित संसार है—कंप्यूटर, इंटरनेट और यूनिकोड का संसार। इस प्रौद्योगिकी के जन्म और विकास को हम दो बड़े चरणों में देख सकते हैं।

एक—पिछली सदी के उत्तरार्द्ध में कंप्यूटर का आविर्भाव। कंप्यूटर द्वारा तरह-तरह के यंत्रोपकरणों की स्वचालित प्रक्रियाओं का प्रारंभ। कंप्यूटरों पर डेटाबेस रचना जैसी विधियों से संस्थाओं का प्रबंधन, बैंक खातों का इलेक्ट्रॉनिकरण। पुरानी छपाई में टाइपों द्वारा कंपोज़िंग के स्थान पर डी.टी.पी. (desktop publishing - फ़ोटो टाइपसेटिंग) की शुरुआत। ब्राह्मी लिपि से उद्‌भूत देवनागरी जैसी सभी लिपियाँ लिखने के लिए उच्चारण-आधारित कुंजीपटल का अन्वेषण जिसने हिंदी आदि लिपियों को सही कंप्यूटर क्षमता प्रदान की।

दो—पिछली के अंत और इस सदी के मुख पर इंटरनेट का आविर्भाव। संसार की सभी लिपियों के लिए सर्वमान्य यूनिकोड फ़ॉण्टों का आगमन। दोनों की सहायता से विश्व का आपस में इस तरह जुड़ जाना कि हम जब चाहें तब किसी भी कोने में बैठे किसी और से जुड़ सकें। इमेल, ब्लॉग, गूगल, फ़ेसबुक, लिंक्डइन, ट्विटर और स्काइप जैसे सामाजिक संपर्क माध्यमों का उद्‌भव। पूरी दुनिया का सिकुड़कर हमारे समाचार पत्रों, टी.वी. समाचारों, हमारे निजी कंप्यूटर और टेलिफ़ोन में उपस्थित हो जाना।

> हर भाषा की तरह हिंदी भी हमारी संपूर्ण संस्कृति की थाती है और हमारे समाज का दर्पण तथा मानव मूल्यों की वाहक। किसी भी विदेशी के हिंदी सीखने का मतलब है उसका हमारी संस्कृति और समाज से परिचित होना। भारत के बाहर हिंदी सीखने-सिखाने की गतिविधियों को इसी संदर्भ में देखना चाहिए। यह आकलन भी करना चाहिए कि किस तरह 'अरविंद लैक्सिकन' शब्दों के अंतर्संबंध दिखाकर हिंदी सीखनेवालों को हमारे समाज से जोड़ सकता है।

इस इ-संसार में 'अरविंद लैक्सिकन' चालीस साल से लगातार बनता-बढ़ता दस लाख से ज़्यादा हिंदी तथा इंग्लिश अभिव्यक्तियों के संसार का सबसे बड़ा द्विभाषी डेटाबेस है। इसकी विषय-सीमा में जीवन अपनी संपूर्णता में विद्यमान है—भाषा, ज्ञान-विज्ञान, तकनीक, कानून, कला, संस्कृति, समाज, राजनीति, दर्शनशास्त्र, हिसाब-किताब के साथ अन्य अनेक विषयों की शब्दावली तो इसमें है ही, पूरी दुनिया की आम बोलचाल के शब्द भी इसमें हैं। बड़ी आसानी से यह थिसॉरस और शब्दकोश की उपयोगिता तथा कारथता के बीच तालमेल बैठा पाता है। किसी भी इंग्लिश या हिंदी शब्द के अनेक अर्थ, उसके पर्याय, विपर्याय तथा उनसे संबद्ध अथवा विपरीत शब्दकोटियों के संदर्भ, परिभाषाएँ और उनके प्रयोग के उदाहरण सामने पेश करता है।

हिंदी सीखने, सिखाने और सुधारने के इस इ-उपकरण 'अरविंद लैक्सिकन' का निर्माण शुरू हुआ सूचना प्रौद्योगिकी के आगमन से पहले, पर वह पूर्णता तक पहुँचा सूचना प्रौद्योगिकी के इन दोनों चरणों में।

इसकी रचना का संकल्प बीसवीं सदी की तीसरी चौथाई के तीसरे वर्ष (1973) में लिया गया था। कार्डों पर शब्द संकलन की प्रणाली से आरंभ हुआ यह काम उस सदी के अंतिम दशक के तीसरे साल (1993) से आरंभिक कंप्यूटरों पर पहुँचा। उस ज़माने के डिस्क आपरेटिंग सिस्टम (DOS) पर फ़ॉक्सप्रो (FOXPRO) पर बने डेटाबेस से प्रजनित (generated) समांतर कोश का प्रकाशन 1996 के अंत में तब हुआ जब सदी के कुल तीन-चार साल बाकी बचे थे और 2008 से ऑनलाइन हुआ द्विभाषी हिंदी-इंग्लिश 'अरविंद लैक्सिकन' जो हमारे विशाल शब्द भंडार को वैश्विक संस्कृति और समाज से जोड़ता हुआ हिंदी की क्षमता को पूरे इ-संसार तक पहुँचा रहा है।

हर भाषा की तरह हिंदी भी हमारी संपूर्ण संस्कृति की थाती है और हमारे समाज का दर्पण तथा मानव मूल्यों की वाहक। किसी भी विदेशी के हिंदी सीखने का मतलब है उसका हमारी संस्कृति और समाज से परिचित होना। भारत के बाहर हिंदी सीखने-सिखाने की गतिविधियों को इसी संदर्भ में देखना चाहिए। यह आकलन भी करना चाहिए कि किस तरह 'अरविंद लैक्सिकन' शब्दों के अंतर्संबंध दिखाकर हिंदी सीखनेवालों को हमारे समाज से जोड़ सकता है।

अमेरिकी सरकार हिंदी सिखाने की गतिविधियों में तेज़ी ला रही है। जापान में हिंदी की पढ़ाई कई दशकों से हो रही है। रूस में हिंदी पहले से ही सिखाई जाती है। जर्मनी पिछले तीन सदी से संस्कृत और हिंदी में गहरी रुचि लेता रहा है। हॉलैंड के लेइडन विश्वविद्यालय में हिंदी की नियमित कक्षाएँ चल रही हैं। यह विश्वविद्यालय भारोपीय भाषाओं में संस्कृत के गहन अध्ययन के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ बने ऑनलाइन व्युत्पत्ति कोश (Online Etymology Dictionary) में ढेरों शब्दों का उद्‌भव संस्कृत से पाना अद्‌भुत अनुभव है। ऑस्ट्रेलिया सरकार अपने यहाँ चुने स्कूलों में हिंदी पढ़ाना चाहती है। चीन में हिंदी प्रशिक्षण में तेज़ी लाई जा रही है और ऐसा हो भी क्यों नहीं, हम और चीन इस सदी में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले हैं। दोनों को मिलकर आगे बढ़ना होगा।

लोग हिंदी सीखना क्यों चाहते हैं

हिंदी सीखनेवालों के उद्‌देश्य क्या हैं? उनकी पूर्ति में हम किस प्रकार किन उपकरणों से सहायता कर सकते हैं?

1. वॉल स्ट्रीट जरनल में सुश्री प्रतीका राणा ने लिखा—भारतीय बाज़ार तक पहुँच बनाने के लिए अनेक अभारतीय हिंदी सीख रहे हैं।
2. हिंदी सीखकर अमेरिकी युवक-युवतियों को वहाँ के विदेश विभाग तथा गुप्तचर एफ़.बी.आई. और सी.आई.ए. में प्रवेश के लिए परीक्षा में प्लस पोंइट मिल जाएँगे।
3. अमेरिकी सरकार अपने गुप्तचर विभागों की क्षमता बढ़ाने के साथ यह भी जानना चाहती है कि हिंदीवाले क्या कह-लिख-पढ़ रहे हैं।
4. इसमें रूस भी अमेरिका से पीछे नहीं है।
5. और चीन भी।
6. 'गांधी', 'स्लमडॉग मिलियनेर' या फिर 'अवतार' जैसी अंतरराष्ट्रीय फ़िल्में भी विदेशियों को भारत और हिंदी की ओर आकर्षित करती हैं।
7. भारत में बनी 'आवारा', 'श्री चार सौ बीस', 'परदेसी', या 'शोले' जैसी बड़ी हिंदी फ़िल्में भी इसमें सहायक होती हैं।
8. योगविद्या का प्रचार-प्रसार भारतीय भाषाएँ सीखने की प्रेरणा देता है।
9. विदेशों में बसे भारतीय चाहते हैं कि उनके बच्चे अपनी संस्कृति से जुड़े रहने के लिए हिंदी सीखें।

हिंदी सीखने के लिए विविध प्रविधियाँ और संसाधन

इस इ-संसार में लोग विविध प्रविधियों व संसाधनों से हिंदी सीख रहे हैं।

निजी स्तर पर हिंदी सिखाने के नए इ-माध्यम के तौर पर उभर रहा है *स्काइप* (इंटरनेट पर उपलब्ध यह एक नि:शुल्क सेवा है। इसकी सहायता से दुनिया में कहीं भी रहनेवाले लोग मानो आमने-सामने बैठकर एक-दूसरे को देख भी सकते हैं और बात भी कर सकते हैं।) अमेरिका के सीऐटल का बारह-वर्षीय रयान स्पैंसर हर इतवार पूरा एक घंटा भारत में स्थित अपने हिंदी-शिक्षक से स्काइप पर हिंदी वर्णमाला सीखता है। वह अकेला ही नहीं है।

पश्चिमी देशों में बढ़ती माँग देखकर कई लोगों ने स्काइप पर हिंदी सिखाने का व्यापार ही शुरू कर दिया। 2009 में कुछ भारतीय भाषा विशेषज्ञों ने एक अमेरिकन के साथ मिलकर स्काइप पर हिंदी सिखाने का एक संस्थान ही खड़ा कर दिया। सन् 2010 के 70 छात्र अगले साल तक 490 हो गए!

अमेरिका में बसे भारतीयों की नई पीढ़ी को हिंदी सिखाने के अभियान में सक्रिय भूमिका निभानेवाले श्री अशोक बताते हैं—प्रमुख है यूनिवर्सिटी ऑव पेन्सिलवेनिया के सेवानिवृत्त हिंदी प्राध्यापक और

भाषाविद डॉ. सुरेंद्र गंभीर के सभापतित्व में ग़ैर लाभ संस्था के रूप में स्थापित 'युवा हिंदी संस्थान' तीन सप्ताह चलनेवाले कार्यक्रमों के द्वारा 8 से 14 वर्ष के बीच के भारतीय बच्चों को सामाजिक उत्सव, त्योहार और स्वतंत्रता दिवस जैसे विषयों को आधार बनाकर भारतीय सांस्कृतिक संदर्भ में नि:शुल्क हिंदी शिक्षा प्रदान की जाती है।

लेइडन विश्वविद्यालय में विदेशी भाषा के रूप में हिंदी भाषा के शिक्षण में अभिषेक अवतंस भी फ़िल्मी गीतों का सहारा लेते हैं। एक बार उन्होंने 'मेरा जूता है जापानी' गीत पढ़ाया था। अभी हाल 'तुझमें रब दिखता है' के बहाने 'तू' शब्द और उसके रूप समझाए। विद्यार्थी इससे व्याकरण का प्रसंग आसानी से सीख जाते हैं। डच भाषा-भाषियों को हिंदी सिखाने से पहले वे शब्द सिखाते हैं जो उनकी अपनी भाषा में पहले से मौजूद हैं 'पथ', 'हंस', 'दंत', 'हाथ', 'अनानास' आदि अर्थात पाठ ज्ञात से अज्ञात पर ख़त्म होता है। विज्ञापनों की क्लिपिंग या चित्र से भी हिंदी व्याकरण का सोदाहरण शिक्षण होता है।

भाषा शिक्षण के चार कौशलों (श्रवण, मौखिक, पठन और लेखन) में अब एक और कौशल जोड़ दिया गया है— संस्कृति कौशल। किसी भाषा को सीखने के लिए उससे जुड़ी संस्कृति से परिचित होना भी बहुत ज़रूरी है। यह विभिन्न इ-संसाधनों की मदद से आसानी से किया जा सकता है। हिंदी के उपयोग में इन सब को चाहिए ऐसे इ-उपकरण जो शब्दार्थ देने मात्र तक सीमित न रह जाएँ जो किसी शब्द के पर्यायों का अंबार लगा दें और शब्द के पीछे की संस्कृति तक ले जाएँ।

भारतीय विदेश सेवा में रहे डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण के अनुसार विदेश में हिंदी सिखाने के कई मतलब होते हैं। त्रिनिदाद और टोबैगो में उद्देश्य था वहाँ के भारतवंशियों को हिंदी बोलना सिखाना। इसका सबसे आसान तरीका था किसी लोकप्रिय हिंदी फ़िल्म गीत का मतलब समझाना। जापान में हिंदी सीखनेवाले विश्वविद्यालयों के छात्र हैं। आरंभिक हिंदी से आगे बढ़ते हैं वे साहित्यिक रचनाएँ पढ़ने लगते हैं और हिंदी की विशाल शब्दावली जानने लगते हैं। इस स्तर पर उनके लिए 'अरविंद लैक्सिकन' एक अच्छा संसाधन बन सकता है—अपने निबंध आदि लिखते समय सही शब्द की तलाश का।

पाठ्यपुस्तक, कोश, इ-कोश, इ-अरविंद लैक्सिकन

कोई भी भाषा सीखने का प्रथम माध्यम होता था छपी किताब और शिक्षण में काम आनेवाली पाठ्यपुस्तकें।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय में हिंदी प्राध्यापक रिचर्ड डिलेसी (Richard Delacy) के अनुसार नियमित स्कूलों में हर साल अधिकाधिक नए कोर्सों में भारत और हिंदी विषयों पर पाठ्यपुस्तकों की कमी महसूस होती है। इसलिए स्वयं उन्होंने कई स्तर की पुस्तकें लिखी हैं। इनमें लोकप्रिय तथा उत्तम हिंदी फ़िल्मों के प्रकरण भी सम्मिलित किए जाते हैं। उदाहरण के तौर पर देखिए 'शोले' फ़िल्म पर आधारित पाठ और शब्दावली " 'शोले' prepared by Richard Delacy Harvard University."

रामगढ़ का स्टेशन। एक रेलगाड़ी स्टेशन पर रुकती है। उसमें से एक जेलर उतरता है जिसका स्वागत करने एक आदमी खड़ा है।

जेलर— ठाकुर साहब···

आदमी— आइए जेलर साहब, आइए।

घोड़े पर सवार होते हुए वे ठाकुर के यहाँ पहुँचते हैं। घोड़े से उतरकर जेलर हवेली में प्रवेश करता है। वहाँ ठाकुर बलदेव सिंह उसका इंतज़ार कर रहा है जो एक भूतपूर्व पुलिस इंस्पेक्टर है।

जेलर— (मकान में प्रवेश करते ही) ठाकुर साहब, आपका खत मिलते ही मैंने सोचा आपने मुझे याद किया है।

ऊपर है शोले के एक दृश्य का विवरण। नीचे हैं शोले वाले पाठ के कुछ शब्द:

शब्दावली

शोले — flames (m)

पात्र— character (m)

भूतपूर्व— former (adj)

बुज़ुर्ग— old (adj)

चोर— thief (m)

दृश्य— scene (m)

उतरना— to get down, descend (vi)
घोड़ा— horse (m)
सवार होना— to ride (vi)
हवेली— mansion (f)
इंतज़ार करना— to wait (vt)
प्रवेश करना— to enter (vt)
खत— letter (m)
मिलते ही— as soon as received (adv)
याद करना— to remember, summon (vt)
चला आना— to come (vi)
तकलीफ़ देना— to bother (vt)
बिल्कुल— absolutely (adv)
ज़रूरत— necessity (f)
दराज़— drawer (f)
तस्वीर— picture photograph (f)
निकालना— to take out (vt)
पहचानना— to recognize (vt)
शायद ही— it is unlikely that
किसी काम का नहीं होना— to be of no good
एक तरफ़— on the other hand (adv)
ख़राबी— fault (f)
दूसरी तरफ़— on the other hand (adv)
खूबी— virtue (f)
खोटा— defective (adj)
सिक्का— coin (m)
इंसान— human (m)
फ़र्क— difference (m)
गिरफ़्तार करना— to arrest (vt)
शाम— evening (f)
ढलना— to fall (vi)

इसके साथ चाहिए होते हैं शब्दकोश। बीसवीं सदी तक हमारे पास कई अच्छे हिंदी शब्दकोश थे। बाबू श्याम सुंदर दास ने काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना करके कोशकारिता का महान अभियान शुरू किया था और ग्यारह खंडोंवाला अनमोल 'हिंदी शब्द सागर' दिया था। यह हिंदी-हिंदी शब्दकोश था, पर इतना बड़ा कोश आम आदमी के काम का नहीं था। इसलिए छोटे-बड़े अनेक अच्छे हिंदी-हिंदी, हिंदी-इंग्लिश, इंग्लिश-हिंदी शब्दकोश थे।

इंटरनेट पर कई इंग्लिश-हिंदी या हिंदी-इंग्लिश कोश तो उपलब्ध हैं लेकिन उन्हें संपूर्ण नहीं कहा जा सकता। उनकी एक कमी है कि वे किसी एक शब्द को अन्य शब्दकोटियों से संबद्ध नहीं कर पाते। यह कमी पूरी करने के लिए उन्हें उपलब्ध है 'अरविंद लैक्सिकन' ऑनलाइन थिसॉरस, जिसमें देवनागरी टाइप न कर सकनेवालों की सहायता के हिंदी शब्दों को रोमन लिपि में भी दिखाया गया है।

अरविंद लैक्सिकन क्या करता है?

यदि दशहरे की बात चल रही हो तो 'अरविंद लैक्सिकन' की सहायता से शिक्षक 'रामायण', 'रामलीला', 'राम', 'सीता', 'रावण', 'हनुमान' आदि के शब्द भी दिखा देगा। साथ-साथ 'दुर्गा-पूजा' की भी बात हो सकती है।

अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संदर्भ लैक्सिकन की विशेषता है। मान लीजिए प्रकरण स्वतंत्रता दिवस का है तो शिक्षक 'अमेरिकी इंडिपेंडेंस डे' की बात भी कर सकता है और हमारे 'गणतंत्र दिवस' की भी।

एक और विषय लेते हैं— संस्कार (sacrament)।

'अरविंद लैक्सिकन' में संस्कार कोटि पर पहुँचकर एक क्लिक करते ही उपयोक्ता सोलह हिंदू संस्कारों तक पहुँच जाएगा, साथ ही ईसाई या इस्लामी संस्कारों से उनका मिलान भी कर पाएगा।

पेश हैं 'अरविंद लैक्सिकन' में संस्कार प्रकरण से कुछ अंश (इसमें मैं 'अरविंद लैक्सिकन' से संस्कार विषयक हिंदी रोमन लिपि में भी दे रहा हूँ, अन्य सभी उदाहरणों में ये उद्धृत नहीं किए जा रहे):

संस्कार (जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में किया जानेवाला कोई भी धार्मिक कृत्य माना जाता जिससे व्यक्ति को दैवी सहायता मिलती है।)

sacrament (a religious ceremony or ritual regarded as imparting divine grace on a person at different stages of life.)

सोलह संस्कार— (अकारादि क्रम), अंत्येष्टि, अन्नप्राशन, उपनयन, कर्णवेध, केशांत, गर्भाधान, चूड़ाकर्म, जातकर्म, नामकर्म, निष्क्रमण, पुंसवन, विद्यारंभ, विवाह, वेदारंभ, समावर्तन, सीमंतोन्नयन

sixteen sacrament (s)— (in alphabetical order), antyeshti (funeral ceremony), chooda-karma (tonsure and tuft ceremony), garbhadan (conception ceremony), jaatkarma (birth ceremony), karnavedh (earpiercing ceremony), keshant (tonsure ceremony), nam-karma (naming ceremony), nishkraman (first exposure to sun ceremony), seemantonayan (4th/6th/8th month of pregnancy ceremony), upnayan (ordainment and gurukul ceremony), vedarambh (beginning of Veda learning ceremony), vidyarambh (beginning education ceremony), vivah (marriage ceremony)

In Roman Hindi format—

solaha sanskAra(): (akArAdi krama), annaprAshana, antyeshTi, chUdAkarma, garbhAdhAna, jAtakarma, keshAnta, karNavedha, nishkramaNa, nAmakarma, punsavana, sImantonnayana, samAvartana, upanayana, vedArambha, vidyArambha, vivAha.

इस्लामी संस्कार— अक़ीक़ा, ख़तना, मकतब (शिक्षारंभ), सील का कूँड़ा।

Islamic sacrament—Aqeeqa, Khatna ceremony, Maktab (first going to school), Seel ka kunda.

ईसाई संस्कार—कनफ़ैशन, बपतिस्मा, मैट्रिमनी, यूकरिस्ट, विवाह।

Christian rites—baptism, Communion, confession to a priest, Eucharist, matrimony.

और अब देखिए—

स्वतंत्रता दिवस—(1947), (अगस्त 15), यौमे आज़ादी, स्वाधीनता दिवस, गणतंत्र दिवस, अमेरिकी स्वतंत्रता दिवस।

Independence Day—(1947), (August 15), Indian Independence Day → Republic Day → American Independence Day.

अमेरिकी स्वतंत्रता दिवस—(1776), (जुलाई 4)→ स्वतंत्रता दिवस।

American Independence Day, (1776) (July 4), Fourth of July→Independence Day.

गणतंत्र दिवस, (1950), (जनवरी 26), गणराज्य दिवस, रिपब्लिक डे, स्वतंत्रता दिवस।

Republic Day , (1950), (January 26), the day to celebrate India's becoming a republic→Independence Day.

❐

नई दिल्ली, भारत
arvind@arvindlexicon.com

25 हिंदी के इ-संसार का संचार और भारतकोश

• श्री आदित्य चौधरी

एक सर्वेक्षण के अनुसार प्रत्येक महीने एक बोली या भाषा पृथ्वी से हमेशा के लिए समाप्त हो रही है। इसके कारण क्या हैं... ? और कहीं हिंदी के साथ भी तो यह नहीं हो जाएगा... ?

आज के समय में किसी भाषा या बोली के जीवित रहने के लिए मात्र साहित्य की नहीं बल्कि उसे व्यवसाय, विज्ञान और रोज़गार की भाषा बनाने की भी ज़रूरत होती है। जो भाषा सामान्य मनुष्य को रोज़गार नहीं दे पाती, वह धीरे-धीरे एक संकुचित दायरे में सिमटती चली जाती है। अंग्रेज़ी के अंतरराष्ट्रीय भाषा होने का सबसे बड़ा कारण व्यवसाय है। वैसे किसी भाषा को सीखनेवाले बहुत ही कम लोग होते हैं, अधिकतर लोग किसी-न-किसी व्यावसायिक कारण से ही किसी अन्य भाषा को सीखते हैं।

साइबर दुनिया में हिंदी कितनी और कैसी है, यह किसी से छुपा नहीं है। इंटरनेट के सर्च इंजन स्थानीय भाषा को कितनी वरीयता दे रहे हैं और कितनी देनी चाहिए यह जानना आवश्यक है। इंटरनेट पर सर्च इंजनों की अपनी सीमाएँ हैं जिन्हें अधिक विकसित करना होगा। सामान्यत: लोग हिंदी की सामग्री खोजने में भी रोमन याने अंग्रेज़ी की लिपि का प्रयोग करते हैं। ऐसा करने से अंग्रेज़ी की वेबसाइटें ही परिणाम में दिखाई देती हैं। जबकि होना यह चाहिए कि हिंदी या भारत से संबंधित शब्द या वाक्य को खोजने पर सर्च इंजनों को परिणाम देने के साथ-साथ यह भी विकल्प दिखाना चाहिए कि प्रयोक्ता को किस भाषा में परिणाम चाहिए और इससे अच्छा यह रहेगा कि सभी भाषाओं का विकल्प भी दिया जाए। सर्च इंजन के रोबोट की काउंसलिंग में वरीयता, व्यवसाय को दी जाती है न कि विद्यार्थी अथवा शोधार्थी को। हमें सर्च इंजनों पर यह दबाव बनाना चाहिए कि रोमन लिपि में खोजे गए शब्दों के परिणाम मात्र अंग्रेज़ी में ही देने की प्रथा को समाप्त करें।

उदाहरण के लिए मान लीजिए आपने खोजा 'Bharat'... तो सर्च इंजन को परिणाम के साथ यह भी दिखाना चाहिए कि 'कहीं आप किसी अन्य भाषा की वेब-खोज तो नहीं कर रहे ?' साथ ही अन्य भाषाओं का विकल्प प्रस्तुत करना चाहिए।

इंटरनेट पर अनेक भाषाओं से संबंधित सामग्री है लेकिन हिंदी-देवनागरी में खोजने पर गिनी चुनी वेबसाइटें ही खुलती थीं। इसी को ध्यान में रखते हुए हमने 'भारतकोश' (www.bharatkosh. org) का निर्माण किया। आज 15 लाख क्लिक प्रतिमाह हो रहे हैं। डेढ़ लाख के करीब वेब पेज, 34 हज़ार से अधिक लेख और 17 करोड़ से अधिक पाठक हैं। इसके लिए कहीं से कोई आर्थिक सहायता अभी तक प्राप्त नहीं है। 'भारतकोश' के पाठक 70% से अधिक छात्र हैं जो 18-28 वर्ष की उम्र के हैं। सामान्य ज्ञान पहेली के कारण 'भारतकोश', छात्रों और रोज़गार देनेवाली प्रतियोगिताओं में भाग लेनेवाले प्रतियोगियों में सर्वाधिक लोकप्रिय है।

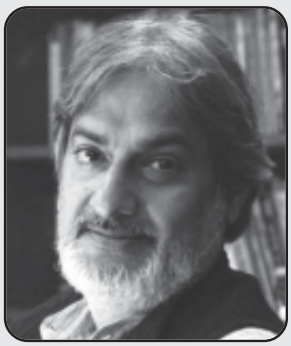

भारत सरकार द्वारा 'विश्व हिंदी सम्मान' से सम्मानित श्री आदित्य चौधरी ने स्नातक के बाद, विश्व और भारत के साहित्य, इतिहास, दर्शन, संस्कृति आदि का अध्ययन किया। ब्रज क्षेत्र के इतिहास, साहित्य, भाषा आदि का विशेष रूप से गहन अध्ययन किया तथा ब्रज का ऑनलाइन इंसाइक्लोपीडिया www.braj discovery.org तैयार किया। अत्याधुनिक तकनीक से विशेष लगाव होने के कारण भारत से संबंधित ज्ञान को कंप्यूटर पर लाने के लिए प्रयासरत रहे।

दूरदर्शन एवं अन्य चैनलों के अनेक प्रसिद्ध कार्यक्रमों और धारावाहिकों के लेखन एवं रचनात्मक सलाहकार भी रहे हैं। सन् 2000 से लगातार छात्रों को निःशुल्क कंप्यूटर, विभिन्न सॉफ़्टवेयर और हिंदी टाइपिंग की शिक्षा देने में प्रयासरत रहे हैं।

सन् 2009 से 'भारतकोश' जो भारत का एक निष्पक्ष एवं समग्र ज्ञानकोश है, के संपादन, प्रोग्रामिंग तथा संकलन कार्य में जुटे हुए हैं।

आखिर बनाया ही क्यों 'भारतकोश'

कभी-कभी ऐसा होता है कि खोजने हम कुछ और निकलते हैं और खोज कुछ और लेते हैं। जैसे मनुष्य ने 'अमृत' खोजना चाहा। 'अमृत' एक ऐसा पेय पदार्थ है जिसे कोई पी ले तो अमर हो जाए और इसकी खोज में मनुष्य ने बेहिसाब दिमाग लगाया और अथाह समय लगाया। अमृत तो नहीं मिला लेकिन पूरा चिकित्सा विज्ञान खोज लिया गया। वो चाहे आयुर्वेद हो, होम्योपैथी हो या ऐलोपैथी हो, कोई भी चिकित्सा पद्धति हो। अमृत की खोज की और मिल गया चिकित्सा विज्ञान। ज्यों का त्यों अमृत तो नहीं मिला लेकिन मनुष्य ने अपनी औसत आयु बीसों साल बढ़ा ली और धीरे-धीरे बढ़ती ही चली जा रही है। इसी तरह से मनुष्य की चाहत थी 'पारस पत्थर' खोजने की। 'पारस पत्थर' एक ऐसा पत्थर है जिससे लोहे को छू लें तो लोहा सोना बन जाता है। ऐसा पारस पत्थर बहुत खोजा गया उसे बनाने की बहुत कोशिश हुई। पारस पत्थर तो नहीं मिला और मिलने की कोई संभावना भी नहीं है लेकिन पूरा रसायन विज्ञान इसी खोज का परिणाम है। मनुष्य ने चिड़ियों को उड़ते देखा तो उसने उड़ना चाहा। इस उड़ने की खोज में तमाम तरह के उसने प्रयास किए और उसने सारा भौतिक विज्ञान और गणित खोज लिया। मनुष्य अगर खुद नहीं उड़ पाया तो उसने एक हवाई जहाज़ और रॉकेट बना दिया जिनमें उसने उड़ना शुरू कर दिया और अंतरिक्ष में चंद्रमा तक जा पहुँचा। हम खोजना तो कुछ और चाहते हैं और पहुँच कहीं और जाते हैं।

इसी तरह हमने भी भारत संबंधी जानकारी की तलाश इंटरनेट पर 'हिंदी भाषा' में की। अंग्रेज़ी में तमाम सामग्री मिली। विभिन्न देशों की इतनी सामग्री कि आपको साधारण रूप से कोई किताब टटोलने की या किसी पुस्तकालय को खंगालने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। हमने खोजना चाहा कि क्या हमारे भारत की जानकारी भी इसी तरह ही इंटरनेट पर उपलब्ध होगी? हमें वे सामग्री काफ़ी हद तक अंग्रेज़ी में ही मिली, हिंदी में नहीं मिली। हिंदी में जो भी मिली वे बड़ी खस्ता हाल, टूटी-फूटी जानकारियाँ, संदिग्ध जानकारियाँ और बिखरी हुई थीं। कहीं किसी बेवसाइट पर, कहीं किसी ब्लॉग पर, कहीं किसी इंटरनेट पर उपलब्ध पुस्तक में मिली।

एक बार वृंदावन में इसी विषय पर चर्चा करते हुए कुछ अंग्रेज़ भी इसमें शामिल हो गए। जैसा कि सभी जानते हैं वृंदावन में अंग्रेज़ और विदेशी बहुत आते हैं। एक अंग्रेज़ ने ताना देते हुए कहा कि भारत का इतिहास तो अंग्रेज़ों ने लिखा है और इंटरनेट पर हिंदी भाषा में भी अंग्रेज़ ही उपलब्ध कराएँगे। बस यही बात मुझे चुभ गई और बिना किसी साधन-सुविधा के युद्ध स्तर पर काम प्रारंभ कर दिया (यह बात सन् 2006 की है)।

सबसे पहले www.brajdiscovery.org बनाई जो 'ब्रज का समग्र ज्ञानकोश' है। इसके बाद मेरी जीवन संगिनी आशा चौधरी ने मुझे आत्मविश्वास के कई पाठ पढ़ाए और एक शाम को साथ-साथ टहलते हुए यह घोषणा कर दी कि 'भारतकोश' हर हाल में बनाया जाएगा चाहे हमारी क्षमता हो या न हो। साथ ही यह भी निश्चित किया कि आशा भी मेरे साथ 'भारतकोश' बनाने में बराबर की भागीदार रहेंगी।

सबसे पहले www.brajdiscovery.org बनाई जो 'ब्रज का समग्र ज्ञानकोश' है। इसके बाद मेरी जीवन संगिनी आशा चौधरी ने मुझे आत्मविश्वास के कई पाठ पढ़ाए और एक शाम को साथ-साथ टहलते हुए यह घोषणा कर दी कि 'भारतकोश' हर हाल में बनाया जाएगा चाहे हमारी क्षमता हो या न हो। साथ ही यह भी निश्चित किया कि आशा भी मेरे साथ 'भारतकोश' बनाने में बराबर की भागीदार रहेंगी। उन्होंने अपने शयनकक्ष को ही 'भारतकोश' कार्यालय में बदल डाला जो आज भी है... फिर तो बस जैसे हिम्मत आ गई... www.bharatkosh.org बनाने की।

मेरी बेटियाँ, दामाद और पुत्र ने भी अपना समय देकर हमारे काम को और भी आसान कर दिया। श्रीमती चंद्रकांता चौधरी (मेरी माँ) ने अपनी स्वतंत्रता सेनानी की पेंशन से आधी रकम देना शुरू कर दिया जो आज भी जारी है। धीरे-धीरे 14-15 छात्रों की एक टीम बन गई जिन्होंने कम पारिश्रमिक में भी बेहतर नतीजे दिए। हमने 12 से 14 घंटे रोज़ाना काम करके 3 वर्षों में 'भारतकोश' को

एक 'पहचान' वाली स्थिति में पहुँचा दिया। अनेकों बार तो मुझे सुबह पाँच बजे से रात बारह बजे तक काम करना पड़ता था। इस बीच मेरे कसरती शरीर ने मुझे लगातार बैठे रहने के दंड स्वरूप दो हर्निया के ऑपरेशन दे दिए।

कैसे चलता है 'भारतकोश' का कार्यालय

कुछ वर्ष पहले श्रीमती मिश्री देवी को भारत सरकार ने 'सर्वोत्तम माँ' के सम्मान से सम्मानित किया। मिश्री देवी ने अद्‌भुत करिश्मा कर दिखाया है। इनके दस बच्चे हैं, पाँच बेटियाँ और पाँच बेटे। इन्होंने बच्चों को पाला और पढ़ाया और यहाँ तक पढ़ाया कि एक बेटे को आई.ए.एस. अधिकारी बना दिया। इतने बच्चे ? खुद अपाहिज और गुज़ारे का साधन कोई नहीं... ज़रा सोचिए इनके भरण-पोषण का साधन क्या था! खेतों की कटाई के बाद बचे अनाज को चुनना और बाज़ार में बेचना। इन्होंने कोई सरकारी सहायता नहीं ली, किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया, बस जो करना था वह कर दिया। हमारी भी लगभग यही परिस्थिति है। 'भारतकोश' को कहीं से कोई वित्तीय सहायता प्राप्त नहीं है।

न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ऋग्वेद (4.33.11)

(देवता उसी के सखा बनते हैं जो परिश्रम करता है।)

आज 'भारतकोश' पर भारत का इतिहास, भूगोल, साहित्य, दर्शन, धर्म, संस्कृति, जीवनी, समाज, रहन-सहन, खान-पान, त्योहार आदि की जानकारी उपलब्ध है। 'भारतकोश' को, भारत सरकार, विश्वविद्यालयों, अन्य शिक्षण संस्थानों, हिंदी विद्वानों, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं एवं छात्राओं-छात्रों द्वारा पढ़ा और सराहा जा रहा है। प्रवासी भारतीयों के बच्चों के लिए तो 'भारतकोश' जैसे वरदान साबित हुआ है। 'भारतकोश' पर उपलब्ध जानकारी हिंदी में है। हिंदी के प्रति उनका रुझान बढ़ता जा रहा है। 'भारतकोश' की गुणवत्ता का मुख्य कारण है, भारत कोश पर काम करनेवालों की नेक नीयत। हमारी नीयत साफ़ और अच्छी है इसलिए हम यह काम कर पा रहे हैं। हमारी योग्यताओं पर, हमारी कार्यक्षमताओं पर, हमारे भाषा ज्ञान पर, हमारी विद्वत्ता पर अनेक प्रश्नचिह्न लगाए जा सकते है लेकिन हमारी निष्ठा, हमारे श्रम और हमारी नीयत पर कोई प्रश्नचिह्न लगा पाना संभव नहीं है। इसलिए हमारे काम की गुणवत्ता दिन-ब-दिन अच्छी होती जा रही है।

यह ठीक ऐसी ही स्थिति है जैसे प्रत्येक माँ अपने बच्चे को पालती है। बच्चे पालने की शिक्षा के लिए कहीं कोई कॉलेज या विश्वविद्यालय नहीं है लेकिन हर माँ अपना बच्चा पालती है। सभी माएँ अपने बच्चे को एक स्वभाविक रूप से अच्छी तरह से पालन-पोषण कर योग्य बनाने का पूरा प्रयास करती हैं और बना भी देती हैं। कारण होता है बच्चे के प्रति वात्सल्य, उसकी निष्ठा, उसकी नीयत, वो हर कीमत पर हर परिस्थिति में अपने बच्चे के साथ पूरा न्याय करने की कोशिश करती है और बच्चे को अच्छी तरह से पाल लेती है। 'भारतकोश' के लिए हमारी भावना वही है जो संतान के लिए होती है।

हमने 'भारतकोश' पर संपादन सुविधा भी दी है। पिछले कुछ वर्षों में कुछ प्रयोक्ताओं ने सामग्री योगदान दिया, नए पन्ने बनाए, चित्र भी अपलोड किए। धीरे-धीरे ऐसे लोगों की मात्रा बढ़ गई जो मात्र अपना, अपनी वेबसाइट का, अपने उत्पाद का आदि प्रचार 'भारतकोश' के माध्यम से करने लगे यानी व्यर्थ के पन्ने बनाने लगे। अब हमने यह नियम बना दिया है कि जो भी पाठक 'भारतकोश' पर गंभीरता से संपादन करना चाहें वे हमें bharatpostbox@gmail.com पर हिंदी में इ-मेल करें।

पाठक कैसे दें योगदान, कैसे करें संपादन...

हमने 'भारतकोश' पर संपादन सुविधा भी दी है। पिछले कुछ वर्षों में कुछ प्रयोक्ताओं ने सामग्री योगदान दिया, नए पन्ने बनाए, चित्र भी अपलोड किए। धीरे-धीरे ऐसे लोगों की मात्रा बढ़ गई जो मात्र अपना, अपनी वेबसाइट का, अपने उत्पाद का आदि प्रचार 'भारतकोश' के माध्यम से करने लगे यानी व्यर्थ के पन्ने बनाने लगे। अब हमने यह नियम बना दिया है कि जो भी पाठक 'भारतकोश' पर गंभीरता से संपादन करना चाहें वे हमें bharatpostbox@gmail.com पर हिंदी में इ-मेल करें। हम ऐसे पाठकों को भारतकोश-सदस्य बना कर संपादन करने की स्वीकृति दे देते हैं।

साइबर हिंदी का स्वरूप

हिंदी को इंटरनेट पर लाने का अर्थ मात्र हिंदी साहित्य को हिंदी में ला देना नहीं है। हिंदी को विभिन्न जानकारियाँ उपलब्ध कराने का माध्यम बनाने की आवश्यकता है। हिंदी के खेल, पहेलियाँ, रोज़गार प्रतियोगिता, मनोरंजन, सामान्य विज्ञान, बेसिक स्वास्थ्य शिक्षा, इ-बुक, ज्ञानकोश, बी-टू-बी पोर्टल, सरकारी जानकारियाँ, कॉमिक, कला-शिक्षा, कृषि-शिक्षा इत्यादि को हिंदी में उपलब्ध कराना ही हिंदी को इंटरनेट के द्वारा, अंतरराष्ट्रीय प्रचार-प्रसार देगा।

आज इ-शॉपिंग के सारे कामकाज का माध्यम अंग्रेज़ी है। शायद ही कोई पोर्टल ऐसा हो जिस पर हिंदी में भी खरीदारी हो सकती हो। जब भारतीय ग्राहक दुकानों पर जाकर हिंदी में ही अपनी खरीदारी करता है तो फिर नेट पर क्यों नहीं?

कंप्यूटर और इंटरनेट पर क्या-क्या हिंदी में उपलब्ध हो, यह शोध का विषय होना चाहिए। गहन शोध और विचार विमर्श के बाद ही यह निश्चित किया जा सकता है कि हमको हिंदी में क्या उपलब्ध कराना है और क्या नहीं। बहुत से ऐसे विषय और शब्द हैं जिनको हिंदी में उपलब्ध कराने से हम प्रगति और विकास के बजाय संकीर्णता को बढ़ावा दे देंगे। यह प्रयास कुछ देशों में हुआ और संस्कृति और भाषा के संरक्षण के बजाय इसका असर भूमंडलीकरण के दौर में पूर्णत: विपरीत हुआ। जैसे विज्ञान की शिक्षा में अंग्रेज़ी के बजाय किसी और भाषा में करने का प्रयास। विज्ञान कभी भी राष्ट्रीय विषय नहीं रहा। विज्ञान तो प्रारंभ से ही अंतरराष्ट्रीय विषय है। विज्ञान की खोजों की शब्दावली का निर्माण जिस देश की भाषा में हुआ, वही मानक होना चाहिए। उसका स्थानीय भाषा में अनुवाद कर इंटरनेट पर उपलब्ध कराने की कोई व्यावहारिक सार्थकता नहीं है।

देवनागरी लिपि के मानकीकरण को लेकर वर्षों से शोध और गोष्ठियाँ हो रही हैं जिनका कोई एक सर्वमान्य हल नहीं निकला है। किसी लिपि के मानकीकरण का अर्थ तो तब होगा जब लिपि को जीवित रखने का प्रयास वरीयता क्रम में सर्वोपरि हो। मुद्दा मानकीकरण का नहीं बल्कि सरलीकरण का है। यहाँ प्रश्न है उन कारणों को समझने का जिनके चलते आम जन देवनागरी लिपि के प्रयोग से बचते हैं। देवनागरी को इंटरनेट के माध्यम से पूरी तरह शुद्धता के स्तर पर पहुँचाया जा सकता है। इंटरनेट पर हिंदी सामग्री के लिए स्पेलिंग चेकर द्वारा शब्दों को परखा जा सकता है। सच बात तो यह है कि आज आधुनिक तकनीक के ज़माने में किसी भाषा के मानकीकरण की बात मात्र इतिहास ही है। यदि कोई लिपि यूनीकोड में उपलब्ध है तो मानकीकरण करने का काम पूरा क्राउलिंग रोबॉट से करवाया जा सकता है।

सिनेमाघर और फ़िल्मों के नाम अंग्रेज़ी लिपि में लिखा होना। मोटरगाड़ियों पर नंबर से लेकर दवाइयों के नाम सभी अंग्रेज़ी में पाए गए। नतीजा ये हुआ कि इन कंपनियों ने अपने व्यापारिक प्रतिष्ठान बनाकर सभी अंग्रेज़ी बोलनेवालों को नियुक्त कर दिया। इससे बात नहीं बनी क्योंकि ग्राहक सभी हिंदी बोलना और सुनना पसंद कर रहे थे। इन यूरोपीय कंपनियों ने दोबारा से हिंदी बोलने और समझनेवाले कर्मचारी नियुक्त किए जिससे सब कुछ आसान हो गया।

भूमंडलीकरण के प्रारंभ में भारत में व्यापार करने कुछ यूरोपीय कंपनियाँ आईं जिन्होंने एक संयुक्त सर्वेक्षण करवाया जिससे पता चल सके कि भारत में व्यापार की भाषा कौन-सी है। इस सर्वे का परिणाम था कि भारत की संपर्क भाषा अंग्रेज़ी है। इसका मुख्य कारण था उत्पादों के नाम अंग्रेज़ी में लिखा जाना।

सिनेमाघर और फ़िल्मों के नाम अंग्रेज़ी लिपि में लिखा होना। मोटरगाड़ियों पर नंबर से लेकर दवाइयों के नाम सभी अंग्रेज़ी में पाए गए। नतीजा यह हुआ कि इन कंपनियों ने अपने व्यापारिक प्रतिष्ठान बनाकर सभी अंग्रेज़ी बोलनेवालों को नियुक्त कर दिया। इससे बात नहीं बनी क्योंकि ग्राहक सभी हिंदी बोलना और सुनना पसंद कर रहे थे। इन यूरोपीय कंपनियों ने दोबारा से हिंदी बोलने और समझनेवाले कर्मचारी नियुक्त किए जिससे सब कुछ आसान हो गया।

असल में हुआ यह था कि फ़िल्म का नाम तो रोमन लिपि में था लेकिन पूरी फ़िल्म हिंदी में थी, गाने हिंदी में थे। टी.वी. धारावाहिक भी सब हिंदी के देखे जाते हैं। अंग्रेज़ी फ़िल्में हिंदी में डब करके प्रदर्शित होती हैं। 90% भारतीय जन 'सॉरी और थैंक्स' कहने के बाद अपनी मातृ भाषा या हिंदी में बोलना प्रारंभ कर देते हैं।

उक्त उदाहरण मात्र इसलिए दिया गया है कि जिससे यह स्पष्ट हो सके कि यदि हम इंटरनेट पर हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि में पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं करा सके तो इंटरनेट पर भी भारत संबंधी विषयों का माध्यम अंग्रेज़ी ही हो जाएगा। सन् 2006 से brajdiscovery.org और 2008 से bharatkosh.org बनाकर हमने यही प्रयास किया है।

हिंदी के इ-प्रचार-प्रसार के लिए हमारा लक्ष्य, शिक्षार्थियों के साथ-साथ एक सामान्य मज़दूर भी होना चाहिए। हमारा लक्ष्य, इंटरनेट पर लोहार, बढ़ई, माली, रिक्शा-चालक, राज-मज़दूर आदि के लिए भी उनके पेशों से संबंधी जानकारी हिंदी में उपलब्ध कराने का होना चाहिए। इसके लिए मैंने विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी में 'बोलती सहायता' का प्रस्ताव रखा था जिससे लैपटॉप स्लेट कंप्यूटर (टैबलेट) और स्मार्ट फ़ोन हिंदी में बोलकर प्रयोक्ता की सहायता कर सकें। आम जन के पास स्मार्ट फ़ोन होने की संभावना पहले से कई गुना बढ़ गई है किंतु इसका उपयोग मात्र फ़ोन पर बात करने, गाने सुनने, फोटो या वीडियो देखने आदि में हो रहा है। जिसे हमको आम जन के लिए शिक्षा और रोज़गार परक बनाना है।

इंटरनेट आज के समाज का पाँचवा स्तंभ है। गुज़रे ज़माने में समाज पर असर डालनेवाले माध्यमों में समाचार पत्रों, पुस्तकों और फ़िल्मों को ज़िम्मेदार समझा जाता रहा है लेकिन आज के समाज को प्रभावित करने में इंटरनेट की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण हो गई है। मोबाइल 'नेटवर्क' के लिए गली-मुहल्ले-देहात की भाषा में 'नटवर' वाब्द लोकप्रिय है। हमारे घर में खाना बनानेवाले के पास दो स्मार्ट फ़ोन हैं लेकिन उसका स्मार्ट फ़ोन उसके नौकरी में उसका सहायक नहीं है।

इंटरनेट आज के समाज का पाँचवा स्तंभ है। गुज़रे ज़माने में समाज पर असर डालनेवाले माध्यमों में समाचार पत्रों, पुस्तकों और फ़िल्मों को ज़िम्मेदार समझा जाता रहा है लेकिन आज के समाज को प्रभावित करने में इंटरनेट की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण हो गई है। मोबाइल 'नेटवर्क' के लिए गली-मुहल्ले-देहात की भाषा में 'नटवर' शब्द लोकप्रिय है। हमारे घर में खाना बनानेवाले के पास दो स्मार्ट फ़ोन हैं लेकिन उसका स्मार्ट फ़ोन उसकी नौकरी में उसका सहायक नहीं है। जिसका कारण है कि स्मार्ट फ़ोन को मनोरंजन को वरीयता देकर बनाया गया है। होना यह चाहिए कि कंप्यूटर और स्मार्ट फ़ोन प्रयोक्ता की ज़रूरत के हिसाब से बनाया जाए जिसमें कि वरीयता उसकी नौकरी या कामकाज हो।

ऐसे हालात में हम सभी की ज़िम्मेदारी और बढ़ जाती है। तो आइए अब हिंदी के बारे में बातें करना छोड़कर इंटरनेट की दुनिया में सब कुछ हिंदी में उपलब्ध कराने में लग जाएँ।

मथुरा, भारत
adityapost@gmail.com

26

वेबदुनिया : हिंदी ऑनलाइन पत्रकारिता का वटवृक्ष

• श्री जितेंद्र जैसवाल

15 अगस्त, 1995 का दिन भारत के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के संदर्भ में किसी पर्व से कम नहीं था, जब इंटरनेट को आम लोगों के लिए खोला गया। इस दिन भारत आभासी रूप से दुनिया के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने लगा। इंटरनेट भारत में आया तो सही लेकिन सभी के मन को भाया नहीं। इसका सीमित विस्तार तो एक समस्या थी ही लेकिन जो प्रमुख दिक्कत लोग महसूस कर रहे थे, वह यह थी कि इंटरनेट पर मौजूद अधिकतर सामग्री अंग्रेज़ी में थी। इसलिए लोग इससे जुड़ ही नहीं पा रहे थे।

पत्रकारिता में स्नातक और सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी विषय पर नियमित लेखन। वर्तमान में विश्व के प्रथम हिंदी पोर्टल वेबदुनिया डॉट कॉम के स्थानीयकरण विभाग में एजीएम के रूप में कार्यरत तथा कई प्रतिष्ठित बहुराष्ट्रीय आईटी कंपनियों के भारतीयकरण में मार्गदर्शन। कई अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में स्थानीयकरण विषय पर शोधपत्र वाचन। इसी विषय पर पीएचडी भी जारी।

तकनीक और भाषा के बीच की इस खाई को मध्य भारत के एक युवा उद्यमी श्री विनय छजलानी ने समझा और अपने परिवार के पत्रकारिता के लंबे प्रतिष्ठित अनुभव का उपयोग करते हुए इस खाई को भरने का निर्णय लिया। इस तरह 23 सितंबर, 1999 को जन-जन के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के घोष के साथ विश्व के पहले हिंदी वेब पोर्टल के रूप में 'वेबदुनिया' का जन्म हुआ जिसमें भारत के हिंदी मानस के लिए समाचार सहित विविध विषयों पर हिंदी में स्तरीय सामग्री उपलब्ध कराने के अभियान की शुरुआत हुई।

मध्य प्रदेश के प्रतिष्ठित समाचार पत्र समूह 'नई दुनिया' के एक छोटे से कमरे से शुरू हुआ यह वेब पोर्टल अब वटवृक्ष का रूप धारण कर चुका है तथा आज भी हिंदी के सबसे सफल और लोकप्रिय वेब पोर्टलों में से एक है। जिस समय इंटरनेट के क्षेत्र में भाषाई पोर्टल्स के लिए संभावनाएँ न के बराबर थीं, उस समय वेबदुनिया ने भारतीय भाषाओं को वेब पर लाने की दिशा में मील का पहला पत्थर रखा।

वेबदुनिया के हिंदी पोर्टल पर आज 35 से अधिक चैनल उपलब्ध हैं जिनके द्वारा हिंदी पाठकों की आवश्यकता की हर सामग्री प्रस्तुत की जाती है। पोर्टल के दुनिया भर में लाखों चाहनेवाले हैं तथा हर दिन इसे 10 लाख से अधिक पृष्ठ दृश्य प्राप्त होते हैं। वेबदुनिया ने अपने कारवाँ को हिंदी से आगे बढ़ाते हुए अन्य भारतीय भाषाओं में भी अपने अभियान का विस्तार किया है तथा पोर्टल को कुल सात भारतीय भाषाओं में उपलब्ध कराया है।

यह बात सर्वविदित है कि हिंदी और भारतीय भाषाओं में सूचना प्रौद्योगिकी को कारगर ढंग से विस्तार-प्रसार देने की ताकत है। यह विश्वास भी किया जाने लगा है कि हिंदी और अन्य भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं से इंटरनेट माध्यम का तादात्म्य आम भारतीय जीवन एवं जीवन पद्धति में आमूल-चूल परिवर्तन लाएगा। इसी विचार के साथ इंटरनेट पर भारतीय भाषाओं के शंखनाद स्वरूप विश्व के पहले हिंदी पोर्टल 'वेबदुनिया डॉट कॉम' का शुभारंभ हुआ।

मोटे तौर पर वेबदुनिया के क्रियाकलापों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है:

- इंटरनेट माध्यम पर हिंदी और अन्य भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं के लिए व्यावसायिक विपणन परिदृश्य का निर्माण।
- भारतीय भाषाओं पर आधारित तकनीकी अनुप्रयोगों का विकास, संवर्धन और विपणन।
- भारतीय भाषाई पोर्टलों का विकास, संचालन एवं भाषा सामग्री संबंधी सेवाएँ।
- भारतीय तथा दक्षिण एशियाई भाषाओं में अनुवाद और स्थानीयकरण सेवाएँ।

इसमें संदेह नहीं कि उपयोगिता, महत्ता एवं प्रासंगिकता की दृष्टि से वेबदुनिया की उपयोगिता लगातार बढ़ती जा रही है। केंद्र और राज्य सरकारों के लिए यह लाभप्रद सिद्ध हो रही है तो निजी क्षेत्र की भारतीय कंपनियाँ भी इसे अपनाए हुए हैं। मीडिया एवं गैर अंग्रेज़ी-भाषी भारतीय नेट उपभोक्ताओं के लिए वेबदुनिया वरदान सिद्ध हो रही है।

यद्यपि वेबदुनिया का सूत्रपात इंटरनेट माध्यम पर हिंदी के लिए एक सुदृढ़ मंच प्रदान करने के लिए हुआ था लेकिन निरंतर अथक प्रयासों से तमिल, तेलुगु, मलयालम एवं सात अन्य भाषाओं को विभिन्न प्रकार से नेट पर संवर्धित किया गया है। वेबदुनिया पर आज 35 से अधिक चैनल और सेवाएँ उपलब्ध हैं जिनके माध्यम से नेट उपभोक्ता हिंदी में सहभागिता करते हैं। देखा जाए तो वेबदुनिया हिंदी आधारित वेब सक्षम अनुप्रयोगों का ताना-बाना बनकर उभरा है। वामा, ज्योतिष, बच्चों की दुनिया, बॉलीवुड, रोमांस, क्रिकेट, साहित्य, समाचार आदि चैनल लोगों को अपनी पसंद की सामग्री उनके हाथों में उपलब्ध करा रहे हैं।

वेबदुनिया इसलिए भी खास है क्योंकि जिस ज़माने में अखबारों को तोप और तलवारों से ज़्यादा ताकतवर और धारदार माना जाता था, ऐसे समय में लोगों को खबर पढ़ने के लिए उनके हाथ में कंप्यूटर का माउस थमाना वाकई बड़ी बात थी। वेबदुनिया की यही खूबियाँ उसे औरों से अलग भी करती हैं और आज इस वेब पोर्टल की देश के प्रमुख हिंदी पोर्टल्स में गिनती होती है।

वेबदुनिया ने अपने पोर्टलों एवं बहुभाषीय विस्तृत सेवाओं द्वारा इंटरनेट के मुक्ताकाश पर भारतीय भाषाओं का ज्ञानदीप जलाया है। इससे हिंदी सहित अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के लिए इंटरनेट जैसे वैश्विक माध्यम पर सुदृढ़ आधार बनाने में सहायता मिली है। वेबदुनिया द्वारा विकसित हिंदी आधारित अनुप्रयोगों एवं अन्य भाषाओं के अनुप्रयोगों द्वारा इन भाषाओं में कार्य करना सहज एवं सरल हो गया है। आश्चर्य नहीं कि भाषा की महत्ता और तकनीकी समन्वय का सूत्रपात करके वेबदुनिया ने नेट को जन-जन तक का इंटरनेट बना दिया है।

निस्संदेह वेबदुनिया ने विश्व को अनेक ऐसी सेवाएँ दीं जिन्हें विश्व का प्रथम एवं अग्रणी होने का दर्जा प्राप्त है। इनमें हिंदी पोर्टल, बहुभाषीय इमेल सेवा, खोज इंजन, वीडियो समाचार बुलेटिन, वेब वार्ता आदि प्रमुख हैं। वेबदुनिया द्वारा विकसित ध्वन्यात्मक लिप्यंतरण तकनीक एक अनूठी तकनीक है जिसने कंप्यूटर और मोबाइल पर हिंदी की टाइपिंग को अत्यंत सरल बना दिया। इंटरनेट को भारत के आम आदमी तक पहुँचाकर वेबदुनिया ने एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसने अपने प्रयासों से नेट पर हिंदी-भाषी उपभोक्ताओं का एक विशाल समुदाय सृजित किया है जो धीरे-धीरे अंग्रेज़ी नेट उपभोक्ताओं की संख्या को पार कर रहा है। इंटरनेट का यह भाषाई स्थानीयकरण निश्चित रूप से इ-क्रांति का शुभारंभ है जिसका श्रेय वेबदुनिया को ही जाता है।

वेबदुनिया की जिस समय शुरुआत हुई वह भाषाई मीडिया के लिए चुनौती भरा समय था क्योंकि जिस देश में ज़्यादातर भाषाई समाचार पत्रों की स्थिति बहुत अच्छी न हो, ऐसे में वेब पोर्टल की शुरुआत निश्चित ही एक साहसिक काम था। दूसरे अर्थों में कहें तो यह दुस्साहस था।

मगर समय के साथ परिस्थितियाँ भी बदलीं, वेबदुनिया की मेहनत रंग लाई और पाठकों का कारवाँ बढ़ता ही गया और ये यात्रा पूरे आत्मविश्वास के साथ जारी है। आज देश ही नहीं, पूरी दुनिया में वेबदुनिया की पहचान है। वेबदुनिया विदेशों में बसे हिंदी-भाषी भारतीयों की तो खास पसंद बन गया है।

वेबदुनिया इसलिए भी खास है क्योंकि जिस ज़माने में अखबारों को तोप और तलवारों से ज़्यादा ताकतवर और धारदार माना जाता था, ऐसे समय में लोगों को खबर पढ़ने के लिए उनके हाथ में कंप्यूटर का माउस थमाना वाकई बड़ी बात थी। वेबदुनिया की यही खूबियाँ उसे औरों से अलग भी करती हैं और आज इस वेब पोर्टल की देश के प्रमुख हिंदी पोर्टल्स में गिनती होती है।

वेबदुनिया ने जब अपने नन्हे कदम इंटरनेट के मंच पर रखे थे

तब आम लोगों के लिए इंटरनेट अंतरिक्ष में चलनेवाली कोई वस्तु थी जिसके बारे में जानना अंग्रेज़ी भाषा में दक्ष लोगों का ही काम हुआ करता था लेकिन भारत में आज इंटरनेट जन-जन की ज़रूरत बनता जा रहा है। अब लोगों के लिए इंटरनेट कोई अंतरिक्ष उपग्रह नहीं है बल्कि हाथ में रखा एक जादुई उपकरण मात्र है जिसके माध्यम से अब वह अपने शहर ही नहीं, अमेरिका के शहरों से भी जुड़ गया है।

इंटरनेट के प्रारंभिक काल में इंटरनेट के संदर्भ में कई भ्रांतियाँ थीं। इसे पूरी तरह से अंग्रेज़ी भाषा का माध्यम माना जाता था। वास्तव में हिंदी में पोर्टल की शुरुआत यह सोचकर की गई कि इंटरनेट जनसंचार का अत्यंत सुगम माध्यम बनता जा रहा है और देश में इसकी पहुँच जन-जन तक बनाने के लिए हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं का सहयोग महत्वपूर्ण साबित होगा। वेबदुनिया ने न सिर्फ़ पहला हिंदी पोर्टल होने का गौरव प्राप्त किया बल्कि चार दक्षिण भारतीय भाषाओं में भी सफलतापूर्वक पोर्टल चला रहा है। ये पोर्टल्स भारत में ही नहीं विदेशों में भी अत्यंत लोकप्रिय हैं। वेबदुनिया ने पहली बहुभाषी ब्लॉगिंग साइट माय वेबदुनिया, गेम्स, क्लासीफाइड से लेकर इंटरनेट पर अन्य कई प्रयोग किए।

वेबदुनिया के कुछ प्रमुख मील के पत्थर इस प्रकार रहे—

हिंदी पोर्टल

वेबदुनिया के हिंदी पोर्टल का औपचारिक शुभारंभ 23 सितंबर, 1999 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंद्रकुमार गुजराल ने किया था। वक्त के साथ वेबदुनिया के परिवार में तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, मराठी और गुजराती के पोर्टल भी जुड़े। आज वेबदुनिया परिवार में हिंदी समेत सात पोर्टल हैं।

इ-पत्र

जिस समय किसी ने यह कल्पना भी नहीं की होगी कि इंटरनेट पर हिंदी अथवा अन्य भारतीय भाषाओं में इ-मेल भेजा जा सकता है तब वेबदुनिया ने इ-पत्र के माध्यम से 1998 में पहले हिंदी फिर 10 अन्य भारतीय भाषाओं में इ-मेल सेवा की शुरुआत की थी। इ-पत्र दुनिया का पहला ट्रांसलिटरेशन इंजन था जिसके माध्यम से व्यक्ति रोमन में टाइपकर अपनी भाषा में अपना संदेश भेज सकता था। इ-पत्र पैड के माध्यम से वेबदुनिया ने ऑफलाइन भी यह सुविधा उपलब्ध करवाई थी जिससे व्यक्ति ऑफ़लाइन भी अपनी भाषा में टाइप कर सकता था। कंप्यूटर की भाषा में कहें तो यह कॉमन इंटरनेट ऑफ़लाइन यूटिलिटी सुविधा थी।

विश्व का पहला हिंदी सर्च इंजन

इंटरनेट पर खबरें, आलेख आदि सामग्री हिंदी में भी ढूंढ़ी जा सकती है, इसकी शुरुआत का श्रेय भी वेबदुनिया के खाते में ही दर्ज है। पोर्टल की शुरुआत के मात्र दो वर्षों के भीतर विश्व का पहला हिंदी सर्च इंजन वेबदुनिया ने बनाया। आज जब हम समाचार या आलेख के साथ ज़रूरी कीवर्ड डाल देते हैं, यह तरीका बहुत आसान भी है लेकिन उस दौर में हर खबर और आलेख के लिए अलग इंटरफ़ेस के ज़रिए कीवर्ड डालना होता था। यह काफ़ी परिश्रम वाला काम था लेकिन इसी टीम की बदौलत शुरू हुआ विश्व का पहला हिंदी सर्च इंजन।

फ़ोनेटिक कीबोर्ड–वेबदुनिया की तकनीकी दक्षता

फ़ोनेटिक कीबोर्ड वेबदुनिया की तकनीकी दक्षता को ही दर्शाता है। जब किसी ने इंटरनेट पर अंग्रेज़ी के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं में टाइप करने के बारे में सोचा भी नहीं था तब वेबदुनिया ने फ़ोनेटिक कीबोर्ड के माध्यम से हिंदी समेत अन्य भारतीय भाषाओं में टाइप करने की सुविधा प्रदान की। आज के ज़माने के सभी प्रमुख फ़ोनेटिक टाइपिंग टूल इसी तकनीक पर आधारित हैं।

इ-वार्ता

इंटरनेट पर भाषाई चैटिंग की शुरुआत करने का श्रेय भी वेबदुनिया को जाता है। भारत में इंटरनेट के आरंभिक युग में इ-वार्ता के माध्यम से उसने कई भारतीय भाषाओं में चैटिंग की सुविधा उपलब्ध कराई।

इस दौर में वेबदुनिया ने कई प्रयोगों में एक नया प्रयोग किया और वह यह कि चैट के माध्यम से देश के पूर्व प्रधानमंत्री इंद्रकुमार गुजराल और जनता दल (यू) नेता और केंद्रीय मंत्री रामविलास पासवान से भारत के लोगों की सीधी बात कराई जाए। इस विचार को वेबदुनिया ने 29 सितंबर, 2000 को चैट का आयोजन कर मूर्तरूप भी दे दिया। देश भर से हज़ारों लोगों ने दोनों से सीधे सवाल पूछे। यह बहुत ही रोमांचक था। पहले सिर्फ़ पत्रकार ही सवाल पूछते थे लेकिन यह कमाल का अनुभव था कि देश की आम जनता भी सीधे नेताओं से सवाल पूछ सकती थी। उमा भारती, मुरली मनोहर जोशी से भी चैट के माध्यम से लोगों ने बात की।

तुलसीदास जी ने लिखा है, 'कर्म प्रधान विश्व करि राखा, जो जस करहिं सो तस फल चाखा।' लेकिन मानव मन जिज्ञासु है तो शंकालु भी है। ऐसे में स्वाभाविक तौर पर उसे शुभ और अशुभ की चिंता होती ही है। ऐसे में आप अपने दिन का शुभारंभकर सकते हैं वेबदुनिया एस्ट्रो चैनल के साथ जहाँ आपको दैनिक भविष्यफल तो मिलेगा ही, यहाँ आप साप्ताहिक भविष्यफल भी देख सकते हैं।

पहला इ-कॉमर्स–भाई को भेजा बहना का प्यार

आज के दौर में इ-कॉमर्स काफ़ी लोकप्रिय हो रहा है। लोगों का रुझान ऑनलाइन शॉपिंग की तरफ़ तेज़ी से बढ़ रहा है लेकिन वेबदुनिया ने इ-कॉमर्स की शुरुआत तब की थी जब इसके बारे में कोई बहुत अधिक नहीं जानता था। 21वीं सदी की शुरुआत में वेबदुनिया ने भाई-बहन के रिश्ते में और मिठास बढ़ाने का काम किया। आमतौर पर तब रक्षा बंधन के मौके पर बहनें अपनी राखियाँ डाक अथवा कुरियर से भेजती थीं लेकिन विदेशों में भेजना तो और भी दुष्कर था। ऐसे में वेबदुनिया ने विदेशों में रह रहे भाइयों के लिए न सिर्फ़ राखियाँ बल्कि मिठाई का पैकेट, हल्दी, कुमकुम और चावल भी नाममात्र के शुल्क पर पहुँचाया।

इलाहाबाद कुंभ–अध्यात्म और आई.टी. का संगम

21वीं सदी के पहले इलाहाबाद महाकुंभ में वेबदुनिया के सौजन्य से अध्यात्म और आई.टी. का अभूतपूर्व संगम देखने को मिला। उस समय वेबदुनिया ने देश-विदेश में मौजूद भारतीयों के लिए इलाहाबाद कुंभ से जुड़ी जानकारियों से अवगत कराया। इनमें समाचार, कुंभ का इतिहास, आध्यात्मिक और धार्मिक महत्व से लेकर कुंभ के बड़ा आकर्षण फोटो भी श्रद्धालुओं तक पहुँचाए। महाकुंभ में वेबदुनिया का सबसे आकर्षक था 'ऑनलाइन स्नान' अथवा 'वर्चुअल स्नान'। उस समय इसे लोगों ने काफ़ी सराहा था।

सफलता का राज़

वेबदुनिया की सफलता का एकमात्र राज़ पाठकों को परोसी जानेवाली सामग्री की विविधता और समृद्धता है। वेबदुनिया पर भारतीय भाषाई पाठक के लिए वह हर सामग्री उपलब्ध है जो वह पढ़ना चाहता है या जिसकी उसे अपनी रोज़मर्रा के जीवन में आवश्यकता होती है।

तुलसीदास जी ने लिखा है, 'कर्म प्रधान विश्व करि राखा, जो जस करहिं सो तस फल चाखा।' लेकिन मानव मन जिज्ञासु है तो शंकालु भी है। ऐसे में स्वाभाविक तौर पर उसे शुभ और अशुभ की चिंता होती ही है। ऐसे में आप अपने दिन का शुभारंभकर सकते हैं वेबदुनिया एस्ट्रो चैनल के साथ जहाँ आपको दैनिक भविष्यफल तो मिलेगा ही, यहाँ आप साप्ताहिक भविष्यफल भी देख सकते हैं।

…और जब गूँजती है आपके घर किलकारी तो उसकी कुंडली और भविष्य की भी तो चिंता आप करते ही हैं, ऐसे में वेबदुनिया देता है आपको ऑनलाइन कुंडली बनाने की सुविधा और 'आज जन्मे' यानी जिस दिन बच्चे का जन्म होता है, उसके नाम से उसका भविष्य और हाँ, आप यहाँ दशहरे के दिन ऑनलाइन रावण दहन कर सकते हैं तो संक्रांति के दिन पतंगबाज़ी और गिल्ली-डंडे का मज़ा ले सकते हैं। ऐसी कई सुविधाएँ हैं जिसका ऑनलाइन लुत्फ़ उठाया जा सकता है।

इसके साथ ही श्रीरामचरितमानस, श्रीमद्‌भागवतगीता, सत्यनारायण व्रत कथा, एकादशी व्रत कथा और तमाम तरह की

आरती/चालीसा पढ़ने के लिए आपको कहीं और जाने या खोजने की आवश्यकता नहीं। राम शलाका, टैरो काड्र्स, विवाह कुंडली मिलान आदि ऐसी कई और भी सुविधाएँ हैं जो आप इस महासागर में गोता लगाने के बाद जान सकते हैं।

यदि आपको भारत के संविधान के बारे में जानकारी हासिल करनी है तो वह भी वेबदुनिया पर ऑनलाइन उपलब्ध है। इसके लिए आपको किसी किताब या लाइब्रेरी को खंगालने की ज़रूरत नहीं है। सामयिक विषयों पर हम आपको बहस के लिए प्लेटफ़ॉर्म उपलब्ध करवाते हैं तो पोल के ज़रिए 'आपकी राय' लोगों तक पहुँचाते हैं। पर्यटन, चुटकुले, मोबाइल, ऑटोमोबाइल, खोज-खबर, फोटो फ़ीचर, फोटो गैलरी, वीडियो इंटरव्यू आदि ऐसी कई सुविधाएँ और सेवाएँ हैं जो आपकी जानकारी बढ़ाने में काफ़ी कारगर सिद्ध होंगी।

किसी धार्मिक जगह की यात्रा करने से पहले 'धर्मयात्रा' चैनल ज़रूर देखें। यहाँ आपको देश के प्रमुख धार्मिक स्थलों की जानकारी मिलेगी साथ ही वहाँ तक कैसे पहुँचा जा सकता है इसकी भी जानकारी मिलेगी। इसके अलावा दुनिया भर के धर्मों की जानकारी आपको 'धर्म दर्शन' में मिल जाएगी। 'सनातन धर्म' नामक चैनल पर आपको हिंदू धर्म से जुड़ी सभी जानकारियाँ मिल जाएँगी। जब धर्म की बात चली है तो 'योग' कैसे छूट सकता है। 'योग चैनल' में योगासनों के वीडियो के साथ सब कुछ तो है ही।

आज के समाचार का इंतज़ार कल तक क्यों? अभी क्यों नहीं? जी हाँ, आज के तकनीकी प्रधान युग में तो जब सुबह अखबार आपके हाथों में होता है तब तक खबरें बासी भी हो जाती हैं। वेबदुनिया पर कुछ ही पलों में आपके लिए खबरें हाज़िर हो जाती हैं।

बात जब खेल की हो तब भी वेबदुनिया हमेशा अग्रिम पंक्ति में ही रहता है। क्रिकेट का विश्व कप हो या भारत में खेला जानेवाला आई.पी.एल. का कोई मैच, क्रिकेट टिकर के माध्यम से हम हमेशा से ही आपका रोमांच बढ़ाते हैं।

बॉलिवुड की रंगीन दुनिया में क्या चल रहा है? वह फिर चाहे किसी सितारे के प्रेम-प्रसंग की चर्चा हो या फिर नई फ़िल्म के रिलीज़ होने का मौका, सभी कुछ आपको मिलता है। आप यहाँ पाते हैं बॉलिवुड की चटपटी खबरें, आकर्षक फोटो, नई फ़िल्म की कहानी और समीक्षा भी।

वेबदुनिया का सेहत चैनल वाकई काफ़ी समृद्ध है। यहाँ देशी-विदेशी चिकित्सा पद्धतियों की जानकारी के साथ ही आयुर्वेद, होम्योपैथ और देसी जड़ी-बूटियों के आसान और गुणकारी नुस्खे मौजूद हैं। योगासनों की विधि और वीडियो भी तो वेबदुनिया पर उपलब्ध हैं।

वेबदुनिया का खज़ाना यहीं जाकर खत्म नहीं हो जाता है। यहाँ से आप और भी कई अनमोल मोती चुन सकते हैं जो आपकी जानकारी में इज़ाफ़ा ही करते हैं। बच्चों की दुनिया में आपके नन्हे-मुन्नों के लिए रोचक कहानियाँ, प्रेरक प्रसंग, निबंध आदि मौजूद हैं तो युवाओं के लिए रोज़गार के अवसरों की जानकारी भी तो यह वेब पोर्टल आप तक पहुँचाता है। लाजवाब व्यंजन बनाने की विधि, साहित्य, सभी धर्मों के बारे में विस्तृत जानकारी, फोटो गैलरी आदि सभी कुछ वेबदुनिया पर उपलब्ध है।

संदर्भः

वेबदुनिया : ऑनलाइन पत्रकारिता के 15 वर्ष

http://goo.gl/pMa41M

कंप्यूटर प्रयोग और हिंदी, डॉ. अमरसिंह वधान, पृ. 47

❐

इंदौर, भारत
jitendra.jaiswal1777@gmail.com

27 'अभिव्यक्ति और अनुभूति' : एक यात्रा कथा

• *श्रीमती पूर्णिमा वर्मन*

1996 के अंत में जब हमने विश्वजाल पर हिंदी को ढूँढ़ने की कोशिश की, वह नन्ही सी बच्ची की तरह थी, विदेशी आवरण में लिपटी हुई, अंग्रेज़ी की भीड़ में खोई हुई। हम, कुछ मुट्ठी भर लोग बार-बार उसे ढूँढ़ने की कोशिश करते, वह दिखती और गुम हो जाती। लगा काम बनेगा नहीं। विदेशी ब्राउज़रों में हिंदी सपोर्ट नहीं थे। जालघर बनाया भी तो ठीक से पढ़े जाने में दिक्कतें थीं। पर दिल में जोश हो, भाषा में दम हो और बोलनेवालों में सामर्थ्य तो उसका घर बनने में कितना वक्त लगता है।

जन्म : 27 जून 1955।

संस्कृत में इन्हें स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त है तथा स्वातंत्रयोत्तर संस्कृत साहित्य पर इन्होंने शोध किया है। इसके साथ ही पत्रकारिता तथा वेब डिज़ाइनिंग में डिप्लोमा प्राप्त की है।

पत्रकारिता जीवन का पहला लगाव था जो आज तक साथ है। खाली समय में इनकी जलरंग, रंगमंच और स्वाध्याय से दोस्ती है।

पिछले 20-25 सालों में लेखन, संपादन, स्वतंत्र पत्रकारिता, अध्यापन, कलाकार, ग्राफ़िक डिज़ाइनिंग और जाल प्रकाशन के अनेक रास्तों से गुज़रते हुए फ़िलहाल संयुक्त अरब के शारजहा नगर में साहित्यिक जाल पत्रिकाओं 'अभिव्यक्ति' और 'अनुभूति' के संपादन और कलाकर्म में व्यस्त हैं। इनकी दो कविता संग्रह 'पूर्वा और वक्त के साथ' प्रकाशित हो चुकी हैं।

हमने एक नन्ही सी शुरुआत जियोसिटी पर की। उस समय हिंदी फ़ॉन्ट नहीं थे इसलिए हिंदी को इमेज बनाकर वेब पर अपलोड करते थे लेकिन वेब की गति भी उस समय बहुत धीमी होती थी। इमेज का रिज़ोल्यूशन बिल्कुल गिराकर कविताएँ या लघुकथाएँ ही प्रकाशित की जा सकती थीं। (गिनती की दो-चार वेबसाइटें ही थीं उन दिनों जिन्हें वेब होम कहते थे।) लेकिन हमने हिम्मत नहीं हारी, छोटी कविताओं से शुरुआत कर दी।

लोगों से बात की, चैट कार्यक्रमों का सहारा लिया और उन लोगों की एक फ़ौज तैयार की जो हिंदी को ठीक से जानते थे। हम विश्वजाल पर हिंदी के लिए घर तलाश रहे थे। एक ऐसा घर जहाँ दुनिया के किसी भी कोने से हिंदी प्रेमी आए तो उसे मनचाहा आतिथ्य (साहित्य) मिले। कोई चाहे तो पल भर ठहरकर आगे की मंज़िल तलाश सके। जहाँ उदीयमान रचनाकारों को अभ्यास का मंच मिले, सिद्धहस्तों को पंख पसारने के लिए खुला आकाश और श्रद्धा के पात्रों को एक गौरव-ग्राम।

सर्च इंजनों में लोगों की तलाश एक रोचक काम था। अनजाने लोगों को आमंत्रित करना बिना जाने हुए कि वे हैं कौन। भारत में काफ़ी खोज की लेकिन उस समय यहाँ कंप्यूटर का उपयोग इतना व्यापक नहीं था विशेष रूप से साहित्यकारों व हिंदी प्रेमियों के बीच। विदेशों में कुछ लोग मिले जो समय निकालकर अपनी भाषा और साहित्य के लिए कुछ करना चाहते थे। सबसे पहले लोगों में कनाडा से अश्विन गांधी और कुवैत से विकास जोशी मिले। अश्विन गांधी का समय, सहयोग, सौजन्य उनकी सारी व्यस्तताओं के बावजूद आज भी हमारे साथ है। विकास जोशी की पत्नी दीपिका जोशी ने अपना पूरा खाली समय हमें देने का वादा किया और हमारा सफ़र शुरू हुआ।

हमें कुछ खास चीज़ों की ज़रूरत थी—अर्थ, समय, तकनीक, कला और अनुभव। मिलकर ज़िम्मेदारी बाँटने का निर्णय लिया। अर्थ की ज़िम्मेदारी प्रवीन सक्सेना ने ली, तकनीक की अश्विन गांधी ने (वे कनाडा के एक विश्वविद्यालय में कंप्यूटर साइंस और वेब डिज़ाइनिंग विभाग में प्रोफ़ेसर थे) कला व संपादन मैंने संभाला और टाइपिंग व अन्य सहयोग दीपिका जोशी ने। अपने-अपने इंटरनेट के खर्च की ज़िम्मेदारी सबने अपने सिर ली। टीम तैयार हो गई थी। हर सदस्य अपने-अपने अनुभव को एक-दूसरे के साथ जोड़ते हुए इस जालघर (वेबसाइट) के पूर्व आयोजन में लग गया। जिसके पास जितना भी समय बचता वह आई.सी.क्यू पर बिताता, 'अभिव्यक्ति' को दिशा

देते हुए। इस बीच हमारा परिचय भारतीय रेलवे के हर्ष कुमार से हुआ जिन्होंने 'सुशा' नाम का हिंदी वेब फ़ॉन्ट बनाया था। यह फ़ॉन्ट उस समय तक मुफ़्त नहीं था लेकिन हर्ष जी के सौजन्य से यह हमें मुफ़्त में मिल गया और हमने एक व्यवस्थित पत्रिका के निर्माण का काम प्रारंभ किया।

आई.सी.क्यू वह प्रोग्राम था जिसपर हमारी टीम दुनिया भर में फैली होने के बावजूद एक खिड़की पर आ मिली थी। चैट विंडो को हमने 'बात खिड़की' का हिंदी नाम दिया, लंबे-लंबे विचार विनिमय हुए और अश्विन गांधी के निर्देशन में हमने यह तय किया कि बिना किसी बड़े निवेश के खाली समय का सदुपयोग करते हुए हम एक साधारण लेकिन सुव्यवस्थित वेब पत्रिका की रचना करेंगे। यह सब कुछ जियोसिटीज़ के ही मुफ़्त आतिथ्य पर आकार लेने लगा। पहला व्यवस्थित अंक 15 अगस्त, 2000 को प्रकाशित हुआ पर इसकी मास मेलिंग 21 तारीख को हो पाई। दरअसल मास मेलिंग का जो प्रोग्राम हम प्रयोग कर रहे थे, उसने ठीक काम नहीं किया और दूसरे को ढूँढ़ने और टेस्ट करने में समय लग गया। हमने अपने 100 परिचितों को इसे भेजा जिसमें से 65 ने इसकी यात्रा की।

15 सितंबर को इसका दूसरा अंक निकला जिसकी यात्रा के लिए 226 लोग आए और अगले महीने 338। हम धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे। तीन महीने बीतते-बीतते हमें लगा कि जिस दिशा में हम बढ़ रहे हैं उसके लिए एक बेहतर सुविधाओंवाला 'होस्ट' चाहिए। जो सामग्री हम प्रकाशित करना चाहते थे उसकी भी कमी थी। अत: तय हुआ कि क्रिसमस की छुट्टियों में अश्विन गांधी अभिव्यक्ति के लिए नए घर (होस्ट) की तलाश करेंगे और मैं इसकी साज-सज्जा यानी साहित्यिक सामग्री के लिए भारत की यात्रा कर लूँगी।

इसी साल दिसंबर में मेरी मुलाकात आई.सी.क्यू पर इलाहाबाद के प्रबुद्ध कालिया से हुई जिन्होंने बताया कि वे हिंदी लिपि को वेब पर प्रदर्शित करने के लिए कुछ प्रयोग कर रहे हैं। हम चाहें तो अपनी पत्रिका में इसका इस्तेमाल कर सकते हैं। इस तरह हमारी पत्रिका डायनेमिक फ़ॉन्ट पर आ गई जिसका मतलब था कि पढ़नेवालों को फ़ॉन्ट डाउनलोड करने और फिर इंस्टॉल करने के झंझट से मुक्ति मिल गई।

इस बीच 'अभिव्यक्ति' पर इ-मेल द्वारा हमें बहुत सी कविताएँ मिल रही थीं। इन कविताओं के रचयिता साहित्यकार नहीं थे। कंप्यूटर इस्तेमाल करनेवाले ऐसे प्रोफ़ेशनल हिंदी-भाषी थे जिन्होंने साहित्य कभी स्कूल में पढ़ा नहीं। कविताएँ इतनी सुंदर और सहज थीं कि उन्हें वापस करने का मन नहीं होता था। वेब पर कवियों की प्रचुरता देखकर हमने निश्चय किया कि कविताओं की एक अलग पत्रिका बना दी जाए। इस तरह 1 जनवरी, 2001 को 'अनुभूति' का जन्म हुआ। दोनों पत्रिकाएँ आपस में लिंक कर दी गईं। साथ ही पत्रिकाओं को मासिक के स्थान पर पाक्षिक कर दिया गया।

15 जनवरी, 2001 को जब नए घर में डायनेमिक फ़ॉन्ट के साथ 'अभिव्यक्ति' का नया अंक प्रकाशित हुआ तो विज़िट करनेवालों की संख्या 810 तक पहुँची। विश्व के कोने-कोने से हिंदी के विद्वानों, प्रोफ़ेसरों, लेखकों, विद्यार्थियों ने हमारे पास इ-मेल भेजे, अपने लेखन से पत्रिका को समृद्ध किया और दोस्त की तरह इसे हाथोंहाथ लिया। एक हिंदी पत्रिका के लिए उन दिनों यह संख्या बहुत बड़ी थी। हम अनायास मजरूह सुल्तानपुरी की यह पंक्तियाँ साकार होते हुए देख रहे थे—

मैं अकेला ही चला था जानिबे मंज़िल मगर
लोग साथ आते गए और कारवाँ बनता गया

यू.एस.ए. से कोलंबिया विश्वविद्यालय की सुषम बेदी ने अपने पाठ्यक्रम का अंग बनाकर इसे सम्मान दिया तो लंदन के कथाकार तेजेंद्र शर्मा ने अपनी पहली कहानी से ही इसे यूरोप के हिंदी जगत में अच्छी तरह परिचित करवा दिया। आज विश्व के अनेक साहित्यकार इस पत्रिका से नियमित रूप से जुड़े हुए हैं। न्यू ज़ीलैंड के रोहित कुमार 'हैप्पी', कनाडा से सुमन कुमार घई, यू.एस.ए. से लावण्या शाह, जर्मनी से अंशुमान अवस्थी और फ्रांस से राजेश वाल्टर प्रीतम विदेश से 'अभिव्यक्ति' के साथ जुड़नेवाले सबसे पहले लोगों में से थे।

एक साल की उम्र तक पहुँचते-पहुँचते हिंदी के कुछ और जाने-माने नाम इस कारवाँ में आ मिले। यू.एस.ए. से डॉ. सुरेंद्रनाथ तिवारी और सुभाष काक, कनाडा के प्रतिष्ठित साहित्यकार प्रो. हरिशंकर आदेश, यू.के. से गौतम सचदेव, तेजेंद्र शर्मा, उषा राजे, उषा वर्मा, दिव्या माथुर, मोहन राणा और अरुण अस्थाना, त्रिनिदाद से डॉ. प्रेम जनमेजय, नॉर्वे से डॉ. सुरेशचंद्र शुक्ला 'शरद आलोक', यू.ए.ई. के कृष्ण बिहारी, भारत के डॉ. दिविक रमेश, डॉ. सूर्यबाला, रवींद्र व ममता कालिया के निरंतर सहयोग से इस जालघर ने आकार ग्रहण किया है। यू.के. की शैल अग्रवाल ने ब्रिटेन की राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक गतिविधियों का जो चित्रण 'लंदन-पाती' शीर्षक से 'अभिव्यक्ति' में किया उसे विश्वव्यापी सराहना मिली। बाद में यह पुस्तक आकार में भी प्रकाशित हुआ। इसी तरह ऑस्ट्रेलिया से हरिहर झा और कनाडा से सुमन कुमार घई और भारत से ब्रजेश शुक्ल ने नियमित रूप से ऑस्ट्रेलिया, कनाडा और भारत की गतिविधियों को हमारे साथ बाँटा। कृष्ण बिहारी की आत्मकथा 'सागर के इस पार से उस पार से' तथा उषा राजे की पुस्तकें 'यू.के. में हिंदी' पहले 'अभिव्यक्ति' में प्रकाशित होकर लोकप्रिय हुईं और बाद में प्रकाशित हुईं।

2003-2004 तक भारत, जापान, फ्रांस, यू.के., नॉर्वे, कनाडा, यू.एस.ए., यू.ए.ई., मलेशिया और सारे विश्व के अनेक शौकिया और व्यावसायिक हिंदी कवि व लेखक इस जालघर के निर्माण में सहयोग करते हुए हमारे साथ आ जुड़े। यही नहीं नेपाल से नेपाल रेडियो के धीरेंद्र प्रेमर्षि ने जो लोकप्रिय संगीतज्ञ भी हैं, पत्रिका देखकर हमसे संपर्क किया। नेपाली साहित्य के हिंदी अनुवाद तथा उनकी मूल रूप से हिंदी में लिखी गई कविताओं को देखकर सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि विदेशियों में भी हिंदी के लिए कितना प्रेम और आकर्षण है। सन् 2005 में नेपाल के एक और लेखक कुमुद अधिकारी हमारे साथ जुड़े और उन्होंने 'अभिव्यक्ति' में प्रकाशित आठ लेखकों की सोलह कहानियों का नेपाली अनुवाद करके 'ज़िंदगी एक फोटोफ्रेम' नामक एक कथा-संग्रह भी बनाया। पोलैंड के क्रकाऊ नगर से उमेश नौटियाल सहित अनेक विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों और हिंदी सिखानेवाले विदेशी स्कूलों ने अभिव्यक्ति के विभिन्न अंशों को अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया।

धीरे-धीरे भारत में इन पत्रिकाओं की पहचान बननी शुरू हुई। स्वाभाविक रूप से नोएडा और बंगलौर के कंप्यूटर इंजीनियर हमारे पहले पाठक थे लेकिन हमें विदेश में रहते हुए भारत में जिस साहित्य संयोजक की ज़रूरत थी वह साहित्य की नगरी इलाहाबाद में मिला। उत्तर प्रदेश के इस छोटे से शहर में तमाम असुविधाओं के बावजूद अभिव्यक्ति के निर्माण में जो सदा हमारे साथ रहे, वे हैं— बृजेश कुमार शुक्ला। हमें ऑस्ट्रेलिया से इ-मेल मिली-कैलाश गौतम की कविता 'गाँव गया था गाँव से भागा' कहीं सुनी थी, बहुत पसंद आई थी, आज वो कविता मेरे पास नहीं है। क्या आप उसे उपलब्ध करा सकते हैं?'' बृजेश को संदेश पहुँचाया। वे व्यक्तिगत तौर पर कैलाश गौतम से मिले और अगले दिन पाठक को उसकी प्रिय कविता भेज दी गई। न जाने इस तरह कितनी रचनाओं को उन्होंने कवियों, लेखकों, पुस्तकालयों और पत्रिकाओं में से खोजकर हमारे पाठकों के लिए भेजा है। इस तरह हमें यह भी आभास हुआ कि आधुनिक पीढ़ी के बीच अज्ञेय, श्यामनारायण पांडेय, हरिवंशराय बच्चन, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' और माहेश्वर तिवारी जैसे हिंदी लेखक किस तरह लोकप्रिय हैं। भवानी प्रसाद मिश्र की 'सतपुड़ा के जंगल' और अज्ञेय की 'नाग' आज भी खूब पढ़ी जाती हैं।

हमने बहुत बड़े लक्ष्य नहीं बनाए थे। इसलिए किसी पल निराशा नहीं हुई। हर दिन नए अनुभवों से भरा हुआ था। हम व्यावसायिकता की दौड़ में नहीं पड़े। सीमित साधनों और व्यक्तिगत योग्यताओं के बेहतर इस्तेमाल पर अपना ध्यान रखा। सब कुछ शौक के साथ आकार लेता और बढ़ता रहा। लोगों से मिलनेवाले प्रशंसा-पत्र हमारा उत्साह बनाए रखते हैं। प्रशंसा-पत्रों की कमी नहीं है लेकिन दुनिया की दौड़ में समय निकालकर सहयोग करनेवालों की आवश्यकता हमेशा बनी हुई है। पुरानी पत्रिकाओं के महत्वपूर्ण अंशों की मांग के पत्र आते ही रहते हैं।

2003 में हमने यू.के. में लंदन और बर्मिंघम का दौरा किया

और अपने लेखकों को सम्मानित किया। 2003 में ही हिंदी भवन, नई दिल्ली द्वारा हमारी टीम को 'अभिव्यक्ति' व 'अनुभूति' के काम के लिए सम्मानित किया। 2006 में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, अक्षरम व साहित्य अकादमी द्वारा आयोजित प्रवासी हिंदी उत्सव में इन पत्रिकाओं को दुबारा सम्मानित किया गया। फरवरी, 2008 में सृजन सम्मान द्वारा पुन: पुरस्कृत करके हमें अपनी ज़िम्मेदारी का अहसास कराया। इस समय तक हमारे दैनिक हिटों की संख्या 35 से 50 हज़ार दैनिक तक पहुँच चुकी थी। हमारे पाठकों की संख्या निरंतर बढ़ती रही है और भारत के अनेक कवि, लेखक व विद्वान इन पत्रिकाओं से जुड़े हुए हैं।

1 मई, 2002 को दोनों पत्रिकाएँ माह में चार बार प्रकाशित होने लगीं थीं—पहली, नवीं, सोलहवीं, चौबीसवीं, तारीख को। 2008 से 2015 के अगस्त माह तक ये पत्रिकाएँ साप्ताहिक रूप से प्रकाशित होती रहीं। अगस्त के दूसरे पखवाड़े से इन्हें फिर से पाक्षिक बनाकर अन्य गतिविधियों के साथ जोड़ने का प्रयत्न किया गया है।

1 सितंबर, 2007 को हमारा पहला अंक सुशा फ़ॉन्ट को छोड़कर यूनिकोड में प्रकाशित हुआ था। यों तो यूनिकोड के हिंदी फ़ॉन्ट का जन्म 2003 में ही हो चुका था और विकिपीडिया आदि जालस्थलों पर लोग इस पर काम करने लगे थे लेकिन व्यक्तिगत रूप से इसे कैसे पाया जाए और कैसे प्रयोग किया जाए इसको समझते-समझते 2005 का समय आ गया। हमने भी इस पर प्रयोग जारी रखे और अपनी पत्रिका में लाने और टीम को शिक्षित करने में 2007 का वर्ष आ गया। इसी समय से हमने पत्रिका के पुराने अंकों को भी धीरे-धीरे यूनिकोड में बदलने का काम भी शुरू कर दिया। आज पत्रिकाओं के कुछ अप्रासंगिक या ऐतिहासिक महत्व के लिए अनावश्यक भागों को छोड़कर दोनों पत्रिकाएँ पूरी तरह यूनिकोड में परिवर्तित हो चुकी हैं।

'अभिव्यक्ति' और 'अनुभूति' केवल पत्रिकाएँ नहीं हैं, यह एक ऐसा पुस्तकालय है जिसमें हमने साहित्यिक रुचि के लोगों की प्रिय रचनाओं और उनके प्रयत्नों को सहेजा है। अनेक रचनाकारों का जन्म यहाँ पर हुआ है और अनेक उदीयमान रचनाकार यहाँ से प्रसिद्धि के पथ पर आगे बढ़े हैं। एक महीने में इन्हें पढ़नेवालों की संख्या आज लाखों में है। इन पर मॉरीशस के दो छात्रों ने शोध निबंध भी प्रस्तुत किए हैं। प्रवासी साहित्य के अध्ययन में इनका महत्वपूर्ण योगदान है, आज ये हिंदी की पहली वेब पत्रिकाओं के नाम से जानी जाती हैं ऐसी पत्रिकाएँ जिनका न तो कोई अंक देर से प्रकाशित हुआ है और न ही कोई अंक निरस्त या अप्रकाशित रहा है। इन पत्रिकाओं के संपादक के रूप में मुझे जयजयवंती पुरस्कार और राष्ट्रपति द्वारा डॉ. मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार से भी सम्मानित किया जा चुका है।

इसके साथ ही पत्रिकाओं से जुड़े कुछ विशेष कार्य आगे बढ़े हैं। नवगीत की पाठशाला के नाम से हमने नियमित रूप से अंतरराष्ट्रीय रचनाकारों में नवगीत की लोकप्रियता बढ़ाने के सफल प्रयोग किए हैं। इनसे जुड़ा एक महोत्सव हर वर्ष भारत के लखनऊ नगर में होता है जिसमें वरिष्ठ नवगीतकारों के साथ नवोदित रचनाकारों को मिलने और उनसे कुछ सीखने का अवसर मिलता है। यहाँ पढ़े जानेवाले शोध निबंधों का प्रकाशन होता है। इसके साथ ही प्रतिवर्ष एक ऐसे नवगीतकार को पुरस्कृत भी किया जाता है जिसने नवगीत की पाठशाला से जुड़कर नवगीत के वैश्विक विकास के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया हो।

जहाँ हम पहुँचे हैं, उसका संतोष है और आगे बढ़ने की उमंग भी लेकिन वेब की दुनिया में पंद्रह-बीस साल कोई लंबा समय नहीं है। लोग पत्रिका और इससे जुड़े कामों को यों ही पसंद करते रहे, हिंदी के साहित्यकार और प्रेमी साथ निभाते रहे तो साहित्य का यह तीर्थ उनकी रौशनी से निरंतर जगमगाना जारी रखेगा।

❑

संयुक्त अरब अमीरात
purnima.varman@gmail.com
teamabhi@abhivyakti-hindi.org

28 'कविता कोश' व 'गद्य कोश'

• श्री ललित कुमार

तकनीकी युग में हिंदी साहित्य का प्रचार-प्रसार

वर्ष 2006 से पहले इंटरनेट पर ऐसा कोई एक स्थान नहीं था जहाँ भारतीय काव्य का यूनिकोड मानक से बना विशाल संकलन उपलब्ध हो। वैसे तो बहुत-सा हिंदी काव्य वेब पर उपलब्ध था लेकिन सारी सामग्री सैकड़ों-हज़ारों वेबसाइट्स पर बिखरी पड़ी थी। अधिकांश सामग्री रोमनाइज़्ड हिंदी (यानी अंग्रेज़ी अक्षरों का प्रयोग करके लिखी गई हिंदी) में थी। जो सामग्री देवनागरी लिपि में उपलब्ध थी उसमें से अधिकांश सामग्री यूनिकोडित नहीं थी। इन सब बातों के कारण इंटरनेट पर हिंदी काव्य को ढूँढ़ना और पढ़ना कोई सरल काम नहीं था। गूगल जैसी खोज सुविधाएँ भी दक्षतापूर्वक हिंदी सामग्री को नहीं खोज पाती थीं। इसी वर्ष 'कविता कोश' नामक एक बिल्कुल नए प्रयोग की शुरुआत हुई और उसके बाद से इंटरनेट पर हिंदी काव्य की स्थिति और उपस्थिति लगातार बेहतर होती चली गई।

वेब एप्लिकेशन्स, वेब समुदायों के निर्माण, हिंदी साहित्य और गद्य-लेखन में श्री ललित कुमार की गहरी रुचि है। आप हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में नियमित रूप से लिखते हैं। भाषाओं और साहित्य से लगाव ने उन्हें इंटरनेट पर हिंदी को आगे बढ़ाने हेतु कई परियोजनाओं को शुरु करने के लिए प्रोत्साहित किया। 'कविता कोश' और 'गद्य कोश' नामक परियोजनाओं के संस्थापक व संचालक श्री ललित कुमार ने सूचना प्रौद्योगिकी, जीव विज्ञान और बायोइंफ़ॉर्मेटिक्स विषयों में उपाधियाँ प्राप्त की हैं। आजकल आप सोशल मीडिया, वेब डेवलपमेंट और वेब एक्सेसेबिलिटी विशेषज्ञ के तौर पर कार्य कर रहे हैं। श्री ललित कुमार से india.lalit@ gmail.com पर संपर्क किया जा सकता है।

पिछले नौ वर्ष से चल रही 'कविता कोश' नामक परियोजना (www.kavitakosh.org) अब हिंदी साहित्य के इतिहास में एक मील का पत्थर साबित हो चुकी है। 'कविता कोश' का महत्व केवल इस बात में नहीं है कि यह हिंदी काव्य का सबसे बड़ा ऑनलाइन विश्वकोश है बल्कि इससे भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण बहुत-सी अन्य बातें हैं जिन्होंने हिंदी साहित्य को पिछले नौ वर्षों के दौरान एक नया आयाम प्रदान किया है। इन्हीं बातों की चर्चा मैं आगे इस लेख में करूँगा।

'कविता कोश' की शुरुआत मैंने 5 जुलाई, 2006 को की थी। उस समय मेरे मन में इस परियोजना की परिकल्पना और इसे अस्तित्व में लाने का संकल्प तो था लेकिन इसके क्रियान्वयन को लेकर मैं कई वर्षों तक विचार मग्न रहा। इस परियोजना पर मैंने लगातार तकनीकी व गैर-तकनीकी प्रयोग किए और हर नया प्रयोग इसे कुंदन की तरह निखारता चला गया। प्रयोगों का यह सिलसिला आज भी बदस्तूर जारी है और भविष्य में भी जारी रहेगा। 'कविता कोश' से प्रेरणा लेकर इन प्रयोगों को इंटरनेट पर कई दूसरी परियोजनाओं ने भी अपनाया है।

इन प्रयोगों में शायद सबसे महत्वपूर्ण प्रयोग तब हुआ जब इस कविता कोश को एक खुली परियोजना का रूप दिया गया। खुली परियोजना का तात्पर्य यह था कि इसमें कोई भी व्यक्ति आकर अपना योगदान दे सकता था। खुले रूप में लाने से पहले कुछ महीने तक 'कविता कोश' को मैंने एक ऐसे रूप में विकसित किया था जिसमें केवल मैं ही इसमें उपलब्ध सामग्री को घटा, बढ़ा या संपादित कर सकता था। प्रबंधन के लिहाज़ से यह 'कविता कोश' का एक अपेक्षाकृत सरल रूप था लेकिन शीघ्र ही मुझे लगने लगा कि अपने निजी जीवन की व्यस्तताओं के चलते मैं अकेले इस परियोजना को उतना विशाल स्वरूप नहीं दे सकता जिसकी मैंने कल्पना की थी। परिणामस्वरूप मैंने 'कविता कोश' का ढाँचा बदल दिया और इसे एक खुला रूप दे दिया गया।

धीरे-धीरे हिंदी-प्रेमियों ने इस परियोजना के महत्व को समझा और स्वयंसेवक इसके साथ जुड़ने लगे। उस समय हिंदी यूनिकोड

में टाइपिंग कर सकनेवाले व्यक्तियों की संख्या बहुत कम थी। अधिकांश लोग जो परियोजना में सहयोग करना चाहते थे, उन्हें हिंदी यूनिकोड में टाइपिंग नहीं आती थी। इन व्यक्तियों को टाइपिंग सिखाई गई और 'कविता कोश' में योगदान देने की प्रक्रिया का प्रशिक्षण भी दिया गया। इस तरह धीरे-धीरे योगदानकर्ता जुटने लगे और 'कविता कोश' परियोजना आगे बढ़ने लगी। गत वर्षों में सर्वश्री अनिल जनविजय, शारदा सुमन, प्रतिष्ठा शर्मा, अशोक शुक्ल, धर्मेंद्र कुमार सिंह, आशिष पुरोहित, द्विजेंद्र द्विज, नीरज दइया, प्रकाश बादल, श्रद्धा जैन, अनुपमा पाठक, मणि गुप्ता, उषा उपाध्याय, सुधीर गंडोत्रा, चंद्र मौलेश्वर, विभा झलानी, प्रदीप जिलवाने, हिमांशु पांडे, अजय यादव, राजीव रंजन प्रसाद, मुकेश मानस इत्यादि ने 'कविता कोश' में प्रमुख योगदान दिया है।

एक बार जब कविता कोश का मूलभूत ढाँचा बन गया और स्वयंसेवी योगदानकर्ताओं ने कार्य करना आरंभ कर दिया तब मैंने पाया कि योगदान की प्रक्रिया को और बेहतर बनाए जाने की आवश्यकता है। चूंकि हमारे पास एक अतिविशाल लक्ष्य था और लक्ष्य को हासिल करने के लिए संसाधन बहुत कम थे इसलिए यह ज़रूरी था कि हम अपने पास उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग दक्षतापूर्वक करें। इसके लिए मैंने 'कविता कोश टीम' नामक एक समूह का निर्माण किया। इस समूह के सदस्यों को योगदानकर्ताओं में से ही चुना जाता है और हर सदस्य की 'कविता कोश' में एक परिभाषित भूमिका होती थी। उदाहरण के लिए श्रीमती प्रतिष्ठा शर्मा ने तीन वर्ष तक टीम-प्रशासक का कार्यभार संभाला और श्री अनिल जनविजय ने करीब इतने ही समय तक 'कविता कोश' के संपादन का कार्य किया। इस तरह व्यवस्थित-रूप से कार्य करने के कारण 'कविता कोश' के विकास में और भी तेज़ी आई।

'कविता कोश' में चूंकि काव्य रचनाओं का संकलन है इसलिए कॉपीराइट भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा था जिस पर हमें ध्यान देने की ज़रूरत थी। कॉपीराइट के विषय में 'कविता कोश' की नीति हमेशा से ही स्पष्ट रही है। 'कविता कोश' एक खुला विश्व कोश है जिसे बहुत से हिंदी प्रेमी व्यक्तियों ने योगदान देकर निर्मित किया है। यदि किसी वैध कॉपीराइट धारक को कोश में अपनी रचनाओं के संकलित होने पर आपत्ति है तो वे कोश को सूचित कर सकते हैं। जिन रचनाओं पर कॉपीराइट धारक को आपत्ति होती हैं उन रचनाओं को कोश से हटा दिया जाता है। 'कविता कोश' का उद्देश्य भारतीय काव्य को इंटरनेट पर एक जगह स्थापित करना है। किसी के आर्थिक या अन्य उद्देश्यों को हानि पहुँचाना 'कविता कोश' का लक्ष्य नहीं है। कोश की शुरुआत में हमें संकलन हेतु सामग्री जुटाने में कुछ परेशानी ज़रूर हुई लेकिन वर्तमान में रचनाकार स्वयं ही इस कोश में सम्मिलित होना चाहते हैं और स्वयं ही संकलन के लिए अपनी रचनाएँ प्रसन्नतापूर्वक कोश को उपलब्ध कराते हैं। 'कविता कोश' में संकलित होना अब एक सम्मान का विषय बन चुका है। किसी भी रचनाकार का 'कविता कोश' में संकलन आरंभ हो जाने के बाद उस रचनाकार की रचनाएँ आसानी से विश्व भर में पढ़ी जा सकती हैं। बहुत से रचनाकार तो अब अपनी नई रचनाओं को भी सीधे 'कविता कोश' में संकलित कर देते हैं।

पिछले नौ वर्षों के दौरान 'कविता कोश' ने दिन दूनी और रात चौगुनी प्रगति की है। वर्तमान में यह कोश 88,000 से भी अधिक काव्य रचनाओं का संकलन बन चुका है। कोश में उपलब्ध रचनाओं और रचनाकारों के बारे में कुछ आंकड़े इस प्रकार हैं—

हिंदी-उर्दू विभाग

- 2,500 से अधिक रचनाकार
- 36,000 से अधिक हिंदी कविताएँ
- 14,000 से अधिक ग़ज़लें
- 1,400 से अधिक नज़्में
- 2,800 से अधिक गीत
- 2,100 से अधिक नवगीत
- 1,800 से अधिक पद

अन्य भाषाओं के विभाग

- 1,300 से अधिक भोजपुरी रचनाएँ
- 2,500 से अधिक राजस्थानी रचनाएँ
- 2,500 से अधिक मैथिली रचनाएँ
- 1,000 से अधिक हरियाणवी रचनाएँ

इसके अलावा गुजराती, नेपाली, बुन्देली, अवधी, छत्तीसगढ़ी, संस्कृत आदि भाषाओं के विभाग भी हैं।

लोकगीत विभाग—

- 3,200 से अधिक लोकगीत
- 30 भाषाओं, क्षेत्रों और जनजातियों के लोकगीत संकलित हैं

बाल कविता विभाग—

- 1,600 रचनाएँ
- 300 रचनाकार

अनूदित काव्य विभाग—

- करीब 50 विदेशी भाषाओं से हिंदी में अनूदित काव्य रचनाएँ
- करीब 25 भारतीय भाषाओं से हिंदी में अनूदित काव्य रचनाएँ

'कविता कोश' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके विकास हेतु करदाताओं का एक भी पैसा प्रयोग नहीं किया गया। शुरुआत के पाँच वर्षों में इसे जितने भी धन की आवश्यकता पड़ी उसे 'कविता कोश' टीम के सदस्यों ने मिलकर वहन किया। सरकारी संस्थाओं से सहायता नहीं मिलने पर भी जैसे-तैसे इस परियोजना को मुट्ठी-भर लोगों ने परवान चढ़ाया है। अब इस परियोजना के भावी विकास में तेज़ी लाने, इसे एक संस्था का रूप देने और धन की माँग करनेवाले कई कार्यों को अमली जामा पहनाने के लिए मैंने हाल ही में 'लालित्य इंटरनेशनल सेंटर फ़ॉर आर्ट्स एंड कल्चर' (www.lalitya.in) **नामक एक गैर-सरकारी संस्था की स्थापना की है।**

सभी ओर से लगातार माँग किए जाने पर 'कविता कोश' में प्रादेशिक अनुभाग भी बनाए गए। इस समय राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा, बिहार, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड इत्यादि राज्यों के अलग-अलग अनुभाग हैं। हालांकि शुरुआत में 'कविता कोश' का लक्ष्य हिंदी काव्य को संकलित करना था लेकिन हमने कोश में हिंदी और उर्दू में फ़र्क नहीं किया। हिंदी के कवियों के साथ-साथ उर्दू के शायर भी शुरुआत से ही इस विश्वकोश की शोभा बढ़ाते रहे हैं।

हिंदी-उर्दू के अलावा अन्य भाषाओं के काव्य को भी 'कविता कोश' में संकलित किया जा रहा है। इस समय कोश में मैथिली, राजस्थानी, भोजपुरी, नेपाली, गुजराती, ब्रज, बुंदेली और हरियाणवी जैसी भाषाओं के विभाग उपलब्ध हैं। ये सभी विभाग इन भाषाओं के विशालतम ऑनलाइन काव्य संग्रह हैं।

'कविता कोश' में काव्य रचनाओं के विषय-आधारित संकलन भी बनाए गए हैं। इससे उन पाठकों को सुविधा होती है जो किसी विषय-विशेष के बारे में रचनाएँ पढ़ना चाहते हैं। ऐसे संकलनों में प्रेम कविता, प्रेरणात्मक कविता, दलित कविता, देश भक्ति कविता, बाल कविता जैसे अनेक विषय शामिल हैं।

भारत के बाहर जिन देशों में स्थानीय लोग हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं व साहित्य रचना करते हैं उन देशों के लिए भी अलग से विभाग बनाए जा रहे हैं। मॉरीशस के हिंदी काव्य हेतु बना विभाग इस योजना का एक उत्तम उदाहरण है। मॉरीशस के हिंदी कवियों को 'कविता कोश' में संकलित करने के लिए 'कविता कोश' और विश्व हिंदी सचिवालय सामूहिक रूप से प्रयासरत हैं।

'कविता कोश' की लोकप्रियता का अंदाज़ा निम्नलिखित आंकड़ों से लगाया जा सकता है:

- 'कविता कोश' को करीब 3,00,000 पाठक प्रति माह पढ़ते हैं
- प्रति माह करीब 20,00,000 काव्य रचनाएँ पढ़ी जाती हैं
- फ़ेसबुक पर कोश के 85,000 से अधिक फ़ॉलोवर हैं
- करीब 30,000 लोग कोश का मोबाइल एप्प प्रयोग करते हैं

'कविता कोश' शोधार्थियों के लिए एक बहुत लाभकारी स्रोत है। इस कोश में सारी जानकारी को व्यवस्थित ढंग से संजोया गया है। इस कारण पाठक रचनाओं और रचनाकारों को आसानी से ढूँढ़ सकते हैं। कोश में कीवर्ड आधारित खोज व्यवस्था तो है ही इसके अलावा रचनाकारों को उनके जन्मदिन, जन्मस्थान, जन्म के दशक, राज्य, भाषा, लेखन विधा, साहित्यिक आंदोलन इत्यादि के आधार पर भी वर्गीकृत किया गया है। इसी प्रकार रचनाओं का वर्गीकरण भी कविताओं, ग़ज़लों, नज़्मों, गीतों, नवगीतों, चौपाई, दोहा, क़ता इत्यादि विधाओं के आधार पर किया गया है। महिला रचनाकार, शायर, दलित रचनाकार जैसे विशिष्ट वर्गीकरण भी शोधार्थियों की

सुविधा हेतु उपलब्ध हैं। इस तरह के नित नए वर्ग 'कविता कोश' में जुड़ते रहते हैं जिससे सारी सामग्री व्यवस्थित, वर्गीकृत और सुगम बनी रहती है।

'कविता कोश' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके विकास हेतु करदाताओं का एक भी पैसा प्रयोग नहीं किया गया। शुरुआत के पाँच वर्षों में इसे जितने भी धन की आवश्यकता पड़ी उसे 'कविता कोश' टीम के सदस्यों ने मिलकर वहन किया। सरकारी संस्थाओं से सहायता नहीं मिलने पर भी जैसे-तैसे इस परियोजना को मुठ्ठी-भर लोगों ने परवान चढ़ाया है। अब इस परियोजना के भावी विकास में तेज़ी लाने, इसे एक संस्था का रूप देने और धन की माँग करनेवाले कई कार्यों को अमली जामा पहनाने के लिए मैंने हाल ही में 'लालित्य इंटरनेशनल सेंटर फ़ॉर आर्ट्स एंड कल्चर' (www.lalitya.in) नामक एक गैर-सरकारी संस्था की स्थापना की है। इस संस्था का व्यापक उद्देश्य भारतीय कला व संस्कृति को प्रसारित करना है। 'कविता कोश' के विकास हेतु ज़रूरी आर्थिक सहायता जुटाना भी इस संस्था के कार्यों में शामिल है। हम साहित्य-प्रेमी व्यक्तियों, सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं, कंपनियों इत्यादि के ज़रिए इस परियोजना के विकास हेतु धन जुटाने के प्रयास कर रहे हैं।

गद्य कोश

'कविता कोश' की अपार सफलता और लोकप्रियता के साथ ही पाठकों और रचनाकारों ने कहानियों के लिए भी 'कविता कोश' जैसे ही एक कोश की माँग शुरू कर दी। मुझे अक्सर लोग कहा करते थे कि यदि 'कविता कोश' जैसी परियोजना कहानियों के लिए भी शुरू हो जाए तो इंटरनेट पर हिंदी साहित्य की उपस्थिति में पूर्णता आ जाएगी। काव्य साहित्य का केवल आधा अंग है। 'कविता कोश' के होने से कवियों को तो एक वैश्विक मंच मिल चुका था, लेकिन कहानीकारों को ऐसे ही एक मंच की कमी महसूस हो रही थी।

जनता की माँग को पूरा करने के लिए मैंने 2008 में 'गद्य कोश' नामक एक नई परियोजना (www.gadyakosh.org) की शुरुआत कर दी। इस परियोजना को मैं केवल कहानियों तक सीमित नहीं रखना चाहता था, इसलिए सुझाए गए नाम 'कहानी कोश' की जगह 'गद्य कोश' नाम को वरीयता दी गई। जिस तरह 'कविता कोश' हर काव्य विधा को अपने में समाहित करता है उसी तरह 'गद्य कोश' की परिकल्पना भी एक ऐसे विश्व कोश के रूप में की गई, जिसमें सभी गद्यात्मक विधाएँ संकलित हो सकें।

'गद्य कोश' की शुरुआत धीमी रही। इसका एक प्रमुख कारण था कि मैं 'कविता कोश' को लगातार विकसित करने में व्यस्त था। अपना सारा खाली समय मैं 'कविता कोश' को ही दे देता था और इस वजह से 'गद्य कोश' के लिए समय नहीं निकाल पाता था। एक अन्य कारण यह था कि गद्यात्मक रचनाओं का डिजिटाइज़ेशन, कविताओं के डिजिटाइज़ेशन से कहीं अधिक मुश्किल था। कविता के मुकाबले कहानी या लेख को टाइप करना मुश्किल और कहीं अधिक समय लेनेवाला काम है। इसके अलावा मेरी कुछ दुविधाएँ इस बात को लेकर भी थीं कि गद्य साहित्य के इस विश्व कोश में सारी सामग्री को किस तरह से व्यवस्थित किया जाए जिससे यह सामग्री सभी पाठकों को सुविधाजनक तरीके से उपलब्ध हो सके।

यहाँ पर मैं विकिपीडिया के बंधु प्रकल्प विकिसोर्स का ज़िक्र भी करना चाहूँगा। विकिपीडिया की तरह विकिसोर्स भी एक ऐसी परियोजना है जिसे विश्व भर के लोग स्वयंसेवा करते हुए मिलकर विकसित करते हैं। विकिसोर्स में कॉपीराइट मुक्त सामग्री संकलित की जाती है। यह परियोजना विकिपीडिया जितनी सफल नहीं हो सकी लेकिन अंग्रेज़ी विकिसोर्स में फिर भी काफ़ी सामग्री संकलित हुई है। 'कविता कोश' की शुरुआत में कुछ लोगों ने मुझे सुझाव दिया था कि 'कविता कोश' को विकिसोर्स पर स्थापित करना चाहिए। मैंने ऐसा करने का प्रयत्न किया भी था लेकिन विकिसोर्स को संभालनेवाले लोगों ने मुझे वो ज़रूरी अधिकार देने से इंकार कर दिया जिनकी मुझे 'कविता कोश' की कल्पना को साकार रूप देने हेतु ज़रूरत थी। इसलिए मैंने 'कविता कोश' को विकिसोर्स पर स्थापित न करके 'विकिया' नामक एक नि:शुल्क सर्वर पर स्थापित किया। यहाँ मुझे कुछ ज़रूरी अधिकार मिले और इसके चलते कार्य आगे बढ़ सका लेकिन जल्द ही कोश के विकास हेतु कंप्यूटर प्रोग्राम में बदलावों की ज़रूरत भी आ पड़ी। इन बदलावों को विकिया के सर्वर पर करना संभव नहीं था इसलिए 'कविता कोश' को अंतत: अपने अलग सर्वर पर स्थानांतरित कर दिया गया। एक

अलग सर्वर पर 'गद्य कोश' भी स्थापित किया गया। हिंदी विकिसोर्स 'कविता कोश' के पहले से ही अस्तित्व में है लेकिन हिंदी-भाषियों ने इस परियोजना की ओर ध्यान नहीं दिया और इसे ठीक से विकसित नहीं किया। जो थोड़ी-बहुत सामग्री आज हिंदी विकिसोर्स पर उपलब्ध है वह बहुत अव्यवस्थित है।

'गद्य कोश' की शुरुआत ज़रूर धीमी रही लेकिन वर्ष 2012 के आरंभ से मैंने 'गद्य कोश' परियोजना को गंभीरतापूर्वक लेना शुरू कर दिया। नतीजा यह हुआ कि 'गद्य कोश' भी अब एक सुगढ़ साहित्यिक विश्व कोश का रूप ले चुका है। इसमें इस समय तकरीबन 15,000 गद्य रचनाएँ संकलित की जा चुकी हैं। इनमें कहानी, लघुकथा, संस्मरण, नाटक, चिट्ठी, लेख, उपन्यास, जीवन-वृत्त, आलोचना, आत्मकथा, व्यंग्य, निबंध जैसी सभी गद्यात्मक विधाओं की रचनाएँ हैं। अपनी रचनाओं को वैश्विक पहुँच दिलाने, विश्व कोश का हिस्सा बनाने और रचनाओं को व्यवस्थित रूप से सुरक्षित करने के लिए बहुत से नवोदित व स्थापित रचनाकार अपनी रचनाएँ 'गद्य कोश' को लगातार भेज रहे हैं।

'गद्य कोश' में भी 'कविता कोश' की ही तरह रचनाओं व रचनाकारों को विभिन्न तरीकों से वर्गीकृत किया गया है ताकि पाठक इच्छित सामग्री तक आसानी से पहुँच सकें।

करीब पंद्रह-बीस वर्ष पूर्व इंटरनेट-क्रांति आई थी लेकिन आज मोबाइल-क्रांति का दौर है। अधिकांश लोगों के पास आज मोबाइल फ़ोन है और इस उपकरण के ज़रिए अधिकाधिक लोग इंटरनेट का प्रयोग कर रहे हैं। समय के साथ चलते हुए हमने 'कविता कोश' का एक मोबाइल एप्प भी उपलब्ध कराया है जिसे इस समय हज़ारों पाठक प्रयोग कर रहे हैं। इस एप्प के ज़रिए आप सीधे अपने मोबाइल फ़ोन पर कोश में उपलब्ध कोई भी रचना पढ़ सकते हैं। 'गद्य कोश' के लिए भी इसी तरह का मोबाइल एप्प बनाने पर कार्य चल रहा है।

'कविता कोश' और 'गद्य कोश' इंटरनेट पर हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य के सर्वाधिक उज्ज्वल रत्न हैं। प्रत्येक माह विश्व भर से लाखों पाठक इन दोनों वेबसाइट्स पर आते हैं और साहित्य पढ़ने की अपनी प्यास को शांत करते हैं।

ये परियोजनाएँ इस बात का सशक्त उदाहरण है कि यदि साथ मिलकर काम किया जाए तो बड़े-से-बड़े लक्ष्य हासिल किए जा सकते हैं। इन परियोजनाओं को इनके वर्तमान भव्य स्वरूप तक पहुँचाने के लिए अलग-अलग क्षेत्रों में काम करनेवाले लोगों ने नि:स्वार्थ स्वयंसेवा की है। इन भाषा-साहित्य प्रेमियों ने बिना कोई वेतन लिए दिन-रात काम किया है। ये लोग विश्व के विभिन्न भागों में रहते हैं और अधिकांश कभी एक-दूसरे से नहीं मिले। बिना किसी औपचारिक संगठन के ये दोनों परियोजनाएँ यहाँ तक आ पहुँची हैं इसलिए ये परियोजनाएँ हिंदी भाषा से जुड़े संगठनों के लिए भी एक आदर्श उदाहरण हैं। केवल संसाधन उपलब्ध होने से ही बड़े लक्ष्य नहीं पाए जा सकते। संसाधनों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है मेहनत, योजना और योजनाओं का सटीक व तीव्र क्रियान्वयन। केवल योजनाएँ होना काफ़ी नहीं होता, योजनाओं को वास्तविकता में बदलने के लिए सही और सक्षम लोगों को इनसे जोड़ना अति आवश्यक होता है।

'कविता कोश' और 'गद्य कोश' तेज़ी से आगे बढ़ रहे हैं और इन परियोजनाओं को पाठकों व रचनाकारों का लगातार बढ़ता हुआ सहयोग समान रूप से प्राप्त हो रहा है। इसके लिए मैं इन दोनों परियोजनाओं की ओर से विश्व भर के हिंदी भाषियों को धन्यवाद देता हूँ और हिंदी भाषा व साहित्य को विश्व मंच पर समुचित स्थान दिलाने में सहयोग देने का भरोसा दिलाता हूँ।

❑

नई दिल्ली, भारत
india.lalit@gmail.com

29 भौगोलिक दूरियों को लांघती 'इ-कविता'

• श्री अनूप भार्गव

अपने प्रारंभिक चरण में विज्ञान और तकनीकी प्रगति ने सामाजिक गतिविधियों के क्षेत्र का विस्तार किया। एक-दो शताब्दी पहले तक व्यक्ति का संसार अपने गाँव या शहर तक ही सीमित होता था। जैसे-जैसे विज्ञान और तकनीकी ने प्रगति की, यातायात और संचार के साधन बढ़े, यह संसार फैलने लगा। नौकरी या व्यवसाय की खोज में अपने गाँव से शहर, फिर अपने शहर की सीमाओं से परे, देश के विभिन्न भागों में बसते हुए, लोग देश की सीमाओं को भी लांघने लगे। दूरियाँ बढ़ती गईं लेकिन फिर एक परिवर्तन पिछले कुछ ही दशकों में आया है। अपने इस दूसरे चरण में विज्ञान और तकनीकी की प्रगति के साथ, यह बढ़ती दूरियाँ कम दिखने लगी हैं। अंतरजाल ने इस दिशा में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भौगोलिक दूरियाँ गौण हो गई हैं। अब आप दुनिया के चाहे किसी भी कोने में हों, भांति-भांति के उपकरणों व संसाधनों की सहायता से अपनी रुचि और पसंद के लोगों के संपर्क में रहना सहज हो गया है। ''इ-कविता'' याहू समूह इसी दिशा में एक प्रयास है।

आप पूछेंगे याहू समूह क्या है? याहू कंपनी द्वारा उपभोक्ताओं को दी गई इस नि:शुल्क सुविधा के अंतर्गत ये अंतर्जालीय समूह बनाए जाते हैं। समूह के सदस्य अपने पंजीकृत इ-पते से जो भी संदेश (जैसे अपनी रचना)सिर्फ़ एक पते पर भेजते हैं, वह समूह के सब सदस्यों को तुरंत उपलब्ध हो जाता है और समूह के जालस्थल पर संजो भी लिया जाता है। इसी प्रकार किसी संदेश का उत्तर देने पर भी संदेश सब सदस्यों के पास पहुँचता है। इससे सदस्यों का इच्छानुसार चर्चा में भाग लेना संभव होता है। इ-कविता ऐसा ही एक याहू समूह है जिसकी स्थापना सन् 2003 में हुई थी जब अंतरजाल अपने शैशवकाल में ही था। इसका उद्देश्य विश्व के अलग-अलग कोनों में बैठे कवियों और कविता प्रेमियों को जोड़ना है। इ-कविता में इ-मेल के माध्यम से कविताओं का आदान-प्रदान होता है। फिर उन कविताओं पर

जन्म : राजस्थान के गंगानगर ज़िले में।

शिक्षा : स्नातक की उपाधि-बिरला तकनीकी और विज्ञान संस्थान (B.I.T.S.), पिलानी।

स्नातकोत्तर उपाधि–भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT), दिल्ली।

अपनी पढ़ाई समाप्त करने के बाद आप का चयन एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में हुआ और उसी के माध्यम से आप1983 में अमेरिका गए। अमेरिका जाने के बाद भी आपका हिंदी के प्रति प्रेम बना रहा और आपने अनेक संस्थाओं के माध्यम से हिंदी के प्रचार-प्रसार और शिक्षण में सहयोग दिया। आपके संयोजन में श्री गोपाल दास नीरज, अशोक चक्रधर, सोम ठाकुर, उदय प्रताप सिंह, कुंवर बेचैन जैसे कवियों का अमेरिका में आगमन हुआ और कई शहरों में अनेक सफल कवि सम्मलेन आयोजित किए गए।

2007 में न्यू यॉर्क में आयोजित 8वें विश्व हिंदी सम्मेलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 2013 में 'न्यू यॉर्क विश्वविद्यालय' और 2014 में 'रटगर्स विश्वविद्यालय' न्यू जर्सी में हुए 'क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन' से जुड़े और इन दोनों सम्मेलनों का 'सजीव प्रसारण' करने में सफल रहे।

तकनीकी से जुड़े रहने और हिंदी से प्रेम के कारण भार्गव जी ने हिंदी के प्रचार और प्रसार में कंप्यूटर और इंटरनेट के महत्व को बहुत पहले पहचाना और 1993 में इ-कविता व इ-चिंतन समूहों की स्थापना कीं।

2008 से 2011 तक आप 'कविता कोश' (www.kavitakosh.org) से जुड़े रहे और उसके प्रचार-प्रसार में सहयोग दिया।

सम्मान : 2007 में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा 'विदेश प्रसार सम्मान', भोपाल में संपन्न 'दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन' में भारत सरकार द्वारा 'विश्व हिंदी सम्मान'।

हृदय से कवि और व्यवसाय से कंप्यूटर सलाहकार। आपकी रुचि बचपन से ही हिंदी साहित्य और विशेषकर कविता में रही।

टिप्पणी और चर्चा कर सदस्य एक-दूसरे से सीखते और लाभान्वित होते हैं। कविता पर केंद्रित यह पहला समूह था और लगभग 800 से अधिक सदस्यों के साथ शायद आज यह अपने प्रकार का सबसे सक्रिय समूह है। पिछले दस वर्षों में इस समूह पर कविताओं और उन पर की गई टिप्पणियों को मिलाकर लगभग 100,000 से अधिक संदेश भेजे जा चुके हैं। इ-कविता समूह के विषय में कुछ और जानकारी और समूह से जुड़ने की सहज प्रक्रिया इस लेख के अंत में दी गई है।

जब इस समूह की स्थापना की गई तब प्रारंभ में ही यह निर्णय लिया गया था कि समूह में कविता और सिर्फ़ कविता की ही बात होगी। ऐसा नहीं कि धर्म, राजनीति या अन्य विषय महत्वपूर्ण नहीं हैं लेकिन उन विषयों के लिए अन्य मंच हैं और इन विषयों पर शुरू की हुई चर्चा अंतहीन भी हो सकती है। शायद इस निर्णय या नीति के पालन ने ही समूह को अन्य दिशाओं में भटकने से बचाया। यह निर्णय भी लिया गया था कि समूह को यथासंभव अनियंत्रित रखा जाए अर्थात सदस्यों द्वारा समूह को भेजे गए संदेशों को बिना संपादन या अवलोकन के प्रस्तुत किया जाए। सदस्यों की प्रतिक्रियाएँ ही एक प्रकार से नियंत्रण का कार्य करती हैं। संचालक सामग्री का चयन नहीं करते। समूह को इस प्रकार ढीले नियंत्रण में रखने की अपनी चुनौतियाँ हैं। पिछले 12 वर्षों में यदा-कदा कुछ अप्रिय स्थितियों का सामना भी करना पड़ा जिन्हें संचालक मंडल ने समय पर हस्तक्षेप व उचित कार्रवाई का सहारा लेकर स्थिति को पुन: सामान्य बना लिया। कुल मिलाकर मंच का वातावरण पारिवारिक व परस्पर मैत्रीपूर्ण व्यवहार का ही रहता है।

इ-कविता का उद्देश्य न केवल कुशल व प्रतिष्ठित कवियों की कविताओं को उपलब्ध करवाना है बल्कि नए व उभरते हुए कवियों को भी इस आशा के साथ प्रोत्साहित करना है कि वे अनुभवी और वरिष्ठ कवियों की टिप्पणियों और सुझावों से सीखकर अपने लेखन में सुधार करेंगे। अनेक सदस्यों का अनुभव है कि इ-कविता से उन्हें अपने शिल्प एवं शैली को परिष्कृत करने में सहायता मिली है। यह इ-कविता के लिए गर्व और खुशी का विषय है कि इस गुट से जुड़े कई ऐसे कवि/कवयित्री भी हैं जिन्होंने अपने लेखन का प्रारंभ इ-कविता से ही किया था और अब उनकी एकाधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

मेरी आजीविका व व्यवसाय कंप्यूटर से संबंधित है लेकिन पहला प्रेम हिंदी और विशेषकर हिंदी कविता से रहा। ऐसे और भी कई सदस्य हैं जो शिक्षा व अध्यवसाय से इंजीनियर, डॉक्टर, वकील, वैज्ञानिक, अध्यापक, प्राध्यापक, संगणक विशेषज्ञ आदि हैं पर जिनकी साहित्य में गहरी रुचि ही नहीं अपितु खास पहुँच भी है। इ-कविता यूँ तो मूलतः हिंदी भाषा की कविताओं के लिए है पर यदा-कदा उर्दू, पंजाबी, अंग्रेज़ी की कविताओं को सम्मिलित किया जाना व उन पर चर्चा भी स्वीकार्य है।

मेरी आजीविका व व्यवसाय कंप्यूटर से संबंधित है लेकिन पहला प्रेम हिंदी और विशेषकर हिंदी कविता से रहा। ऐसे और भी कई सदस्य हैं जो शिक्षा व अध्यवसाय से इंजीनियर, डॉक्टर, वकील, वैज्ञानिक, अध्यापक, प्राध्यापक, संगणक विशेषज्ञ आदि हैं पर जिनकी साहित्य में गहरी रुचि ही नहीं अपितु खास पहुँच भी है। इ-कविता यूँ तो मूलत: हिंदी भाषा की कविताओं के लिए है पर यदा-कदा उर्दू, पंजाबी, अंग्रेज़ी की कविताओं का सम्मिलित किया जाना व उन पर चर्चा भी स्वीकार्य है। इसी प्रकार स्वरचित काव्य को प्राथमिकता देते हुए सदस्य अपनी पसंद की किसी और की कविता भी प्रेषित कर सकते हैं। काव्य की कई विधाओं—ग़ज़ल, दोहा, माहिया, हाइकु, गीत, नवगीत पर गंभीर सोदाहरण आलेख, छंद-शास्त्र पर श्रृंखलाबद्ध चर्चा, व्याकरण, शब्दावली, वर्तनी, भाषा आदि पर विमर्श इ-कविता पर निरंतर दृष्टिगोचर होते हैं।

इ-कविता के संचालक मंडल में इस समय चार व्यक्ति हैं जो निरंतर संपर्क में रहते हुए संचालन की सामान्य प्रक्रिया की देखरेख भी करते हैं और नई योजनाओं को भी क्रियान्वित करते हैं। श्री राकेश खंडेलवाल के निर्देशन में प्रतिमाह दो बार वाक्यांश-पूर्ति के अंतर्गत कविताएँ आमंत्रित की जाती हैं। एक वाक्यांश बहुधा इ-

कविता के ही किसी सदस्य की कविता से या कोई और मंच पर दिया जाता है जिसका अपनी रचना में समावेश करते हुए सदस्य निश्चित तिथि तक प्रविष्टियाँ भेजते हैं। बाद में इन सबको मंच के जाल-स्थल पर भी संकलित कर दिया जाता है। सदस्यों में बहुत लोकप्रिय इस परियोजना में किसी प्रकार की प्रतियोगिता की भावना या पुरस्कार या सम्मान का उद्देश्य नहीं रहता अपितु रचनाकारों की क्रियाशीलता व ऊर्जा को प्रोत्साहन मिलता है।

जब 2003 में इ-कविता की शुरुआत हुई, उस समय 'फ़ेसबुक' व अन्य 'सोशल मीडिया' का जन्म नहीं हुआ था। आज के समय में अधिकांश लोगों के लिए फ़ेसबुक संवाद का प्रमुख माध्यम बन गया है। इसे जानते हुए, फ़ेसबुक पर भी इ-कविता समूह की स्थापना की गई है। इस समय इ-कविता याहू समूह और इ-कविता फ़ेसबुक समूह स्वतंत्र रूप से काम करते हैं लेकिन निकट भविष्य में इनके समन्वय की योजना है। हमारा मानना है कि कविता का आदान-प्रदान इ-संदेशों के माध्यम से हो या फ़ेसबुक के माध्यम से; दोनों की अपनी महत्ता है और आप किस माध्यम का प्रयोग करते हैं, यह आप की निजी पसंद पर निर्भर करता है। हम सभी उपयुक्त माध्यमों को उपलब्ध करवाने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

जब 2003 में इ-कविता की शुरुआत हुई, उस समय 'फ़ेसबुक' व अन्य 'सोशल मीडिया' का जन्म नहीं हुआ था। आज के समय में अधिकांश लोगों के लिए फ़ेसबुक संवाद का प्रमुख माध्यम बन गया है। इसे जानते हुए, फ़ेसबुक पर भी इ-कविता समूह की स्थापना की गई है। इस समय इ-कविता याहू समूह और इ-कविता फ़ेसबुक समूह स्वतंत्र रूप से काम करते हैं लेकिन निकट भविष्य में इनके समन्वय की योजना है। हमारा मानना है कि कविता का आदान-प्रदान इ-संदेशों के माध्यम से हो या फ़ेसबुक के माध्यम से; दोनों की अपनी महत्ता है और आप किस माध्यम का प्रयोग करते हैं, यह आप की निजी पसंद पर निर्भर करता है।

इ-कविता की सफलता से प्रेरित होकर हमने इस दिशा में कुछ और प्रयोग भी किए। ऑनलाइन कवि सम्मेलन उनमें से एक है। समय-समय पर हमने कुछ ऐसे कवि सम्मेलन आयोजित किए जिनमें कवि और श्रोतागण विश्व के अलग-अलग कोनों में बैठे हुए भी 'स्काइप' और 'गूगल हैंगआउट' के माध्यम से एक-दूसरे का सान्निध्य अनुभव कर सके। कुछ इसी तरह का प्रयास न्यू यॉर्क में हुए अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन में भी हुआ जिसका सजीव प्रसारण यू ट्यूब पर किया गया। हमारे पास तकनीकी विशेषज्ञों की कमी नहीं है और न ही उनसे सीखने की इच्छा रखनेवालों की। समस्या यह है कि वे अलग-अलग स्थानों पर बैठे हैं। अंतरजाल और अन्य तकनीकी साधन हमें इस दूरी को मिटाने में मदद कर सकते हैं और मज़े की बात यह है कि यह सब बिल्कुल मुफ़्त है।

एक परिकल्पना इ-चौपाल की भी है। इ-चौपाल ठीक गाँव की चौपाल की तरह होगी जिसमें विभिन्न विषयों पर चर्चा होगी। फ़र्क सिर्फ़ इतना है कि भाग लेनेवाले अंतरजाल के माध्यम से विश्व के किसी भी कोने से इस चर्चा में सम्मिलित हो पाएँगे। इस तरह की चर्चा हमारी सोच को बढ़ाएगी। हिंदी के विकास के लिए कई समस्याएँ जिनका हल किसी व्यक्ति या छोटे स्थानीय समूह द्वारा संभव नहीं है, वैश्विक स्तर पर सामूहिक प्रयास से अधिक सरलता से हल हो सकती है। विश्व के अलग-अलग भागों में कई समस्याओं पर सराहनीय काम हो रहे हैं लेकिन उनमें कुछ हद तक दोहराव है, आपसी सामंजस्य की भी कमी है। आज ज़रूरत है हमें आपस में जुड़ने की, एक-दूसरे के साथ सहयोग करने की जिससे कि हम अपनी सुसंगठित ऊर्जा, शक्ति और साधनों से अधिकाधिक लाभ उठा सकें। अंतरजाल और संचार के सरल और सुलभ साधन हमें ऐसा कर पाने का सुनहरा अवसर दे रहे हैं।

हमने जहाँ एक ओर अंतरजाल और तकनीकी का सहारा लेते हुए दूरियों को कम करने की कोशिश की है, वहीं इस तथ्य को भी नहीं नकारा जा सकता कि प्रत्यक्ष आमने-सामने बैठकर कविता सुनने का आनंद कुछ और ही है। इस दिशा में इ-कविता के सौजन्य से स्थानीय और भारत से आमंत्रित कवियों के 'काव्य पाठ' और 'कवि सम्मेलन' भी आयोजित किए जाते रहे हैं। जब हिंदी और

उर्दू भाषाओं को बोला जाता है तब उनमें बहुत अंतर नहीं रह जाता और कविता प्रेमी दोनों ही भाषाओं का समान रूप से आनंद ले सकते हैं। इसी धारणा के अंतर्गत कुछ हिंदी-उर्दू मुशायरों और कवि सम्मेलनों का भी सफल आयोजन किया गया। इन प्रयासों में हमें प्रिंस्टन विश्वविद्यालय और भारतीय विद्या भवन, न्यू यॉर्क का भरपूर सहयोग मिला जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

काव्येतर साहित्य से भी इतर विषयों पर, राजनीति, विज्ञान, दर्शन, आध्यात्म, सच पूछिए तो किसी भी विषय पर विचार-विमर्श करने की सुविधा के लिए इ-कविता का साथी मंच इ-चिंतन स्थापित किया गया है। इसमें अभी लगभग एक सौ सदस्य हैं। कतिपय कारणों से इसकी सक्रियता में उतार-चढ़ाव आते रहे हैं। इ-चिंतन समूह की लोकप्रियता और सक्रियता को बढ़ाने के लिए कई दिशाओं में प्रयत्न किए जा रहे हैं।

इन समूहों और अन्य प्रयासों की सफलता सदस्यों और उनके द्वारा भेजे गए संदेशों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। हम चाहते हैं कि अधिक से अधिक संख्या में लोग इनसे जुड़ें और हमारे प्रयासों को सार्थक बनाएँ। जुड़ना बहुत आसान है और सहायता सिर्फ़ एक इ-मेल की दूरी पर है।

इ-कविता से संबंधित अन्य जानकारी

संस्थापक : अनूप भार्गव, न्यू जर्सी, अमेरिका

संचालक मंडल के सदस्य

1. अनूप भार्गव, न्यू जर्सी, अमेरिका
2. राकेश खंडेलवाल, वाशिंगटन डी.सी., अमेरिका
3. घनश्याम गुप्ता, फ़िलाडेल्फ़िया, अमेरिका
4. अमिताभ त्रिपाठी, इलाहाबाद, भारत

इ-कविता के कुछ सक्रिय सदस्यों के नाम हैं— सीताराम चंदावरकर, अचल कुमार वर्मा, संजीव वर्मा 'सलिल', महेश चंद्र गुप्त 'ख़लिश', प्रणव भारती, आनंद कुमार पाठक 'आनन', आर.सी. शर्मा 'आरसी', महेश चंद्र द्विवेदी, श्रीप्रकाश शुक्ल, शशि पाधा, अभिनव शुक्ल, वीणा विज, कुसुम वीर, शार्दूला नोगजा, मानोशी चटर्जी, अमिता शर्मा, महिपाल सिंह तोमर, सुरेंद्र भूटानी, विजय निकोर, ममता शर्मा, संतोष भाउवाला, श्यामल सुमन, राहुल उपाध्याय।

इन सदस्यों के अतिरिक्त अन्य बहुत हैं जो उल्लेखनीय हैं।

स्व. सत्य नारायण शर्मा 'कमल' और स्व. ललित अहलुवालिया 'आतिश' भी इ-कविता के सक्रिय सदस्य रहे।

मुखपृष्ठ: https://groups.yahoo.com/neo/groups/ekavita/info

इ-कविता से जुड़ने के लिए सीधे इस पते पर लिख सकते हैं: ekavita-subscribe@yahoogroups.com

कुछ कठिनाई पड़ने पर या वैकल्पिक रूप से ekavita-owner@yahoogroups.com पर इ-पत्र लिखकर संचालक मंडल से संपर्क स्थापित किया जा सकता है। संचालक की ओर से समूह की सदस्यता के लिए निमंत्रण भेजा जाएगा। इसी प्रकार मित्रों अथवा सदस्यता प्राप्त करने के इच्छुक लोगों का इ-पता हमें भेजा जा सकता है।

इ-चिंतन की सदस्यता भी उपरोक्त प्रक्रिया की तरह है, ekavita के स्थान पर echintan लिखना होगा।

❐

न्यू जर्सी
anoop_bhargava@yahoo.com

30 न्यू ज़ीलैंड, हिंदी और 'भारत दर्शन'

• श्री रोहित कुमार 'हैप्पी'

अंग्रेज़ी और माओरी न्यू ज़ीलैंड की आधिकारिक भाषाएँ हैं। यद्यपि सामान्यत: अंग्रेज़ी का उपयोग किया जाता है, न्यू ज़ीलैंड की लगभग 46 लाख की जनसंख्या में फ़िजी भारतीयों सहित भारतीयों की कुल संख्या डेढ़ लाख से अधिक है। 2013 की जनगणना के अनुसार हिंदी न्यू ज़ीलैंड में सर्वाधिक बोले जानेवाली भाषाओं में चौथे नंबर पर है। अंग्रेज़ी, माओरी व सामोअन के बाद हिंदी सर्वाधिक बोली-समझी जानेवाली भाषा है। 2013 की जनगणना के अनुसार 66,309 लोग हिंदी का उपयोग करते हैं।

	Language	Number of Speakers	Percentage of Total Population, %
1	English	3,819,969	90%
2	Māori	148,395	3%
3	Samoan	86,403	2%
4	Hindi	66,309	2%
5	Northern Chinese	52,263	1%
6	French	49,125	1%
7	Yue	44,625	1%
8	Sinitic	42,753	1%
9	German	36,642	1%
10	Tongan	31,839	1%

न्यू ज़ीलैंड जनगणना 2013 में सर्वाधिक बोली जानेवाली शीर्षस्थ 10 भाषाएँ

90 के दशक में न्यू ज़ीलैंड में हिंदी पढ़नेवाले लोग तो थे लेकिन कोई हिंदी का प्रकाशन नहीं था। भारतीय संस्कृति, भाषा व साहित्य को प्रचारित-प्रसारित करने का कोई सुदृढ़ माध्यम नहीं था। इसी को देखते हुए एक हिंदी पत्रिका के प्रकाशन की योजना अंकुरित हुई। विदेश में हिंदी का प्रकाशन लगभग असंभव था। नब्बे के दशक के आरंभिक दौर में कई स्थानीय प्रिंटर ऐसे प्रकाशनों के लिए अपनी असमर्थता जता चुके थे। हाँ, हस्तलिखित ऑफसेट प्रिंटिंग में प्रकाशन संभव था लेकिन बहुत सरल न था। खोज व प्रयास जारी था।

इधर कंप्यूटर पर काम करना लोकप्रिय होने लगा था फिर कंप्यूटर पर हिंदी टंकण की संभावनाएँ तलाशी गईं। भारत से कुछ हिंदी फ़ॉण्ट लाए गए जिनमें न्यू देहली, सूर्या, नारद इत्यादि सम्मिलित थे। ये फ़ॉण्ट आजकल के सरल-सुलभ फ़ॉण्ट न होकर 'पोस्टस्क्रिप्ट फ़ॉण्ट' थे जिसके लिए एक विशेष फ़ॉण्ट मैनेजर की आवश्यकता होती थी और फ़ॉण्ट को स्थापित/प्रतिष्ठित (इंस्टॉल) करना भी एक काम था। सो हिंदी फ़ॉण्ट की बड़ी समस्या रहती थी। अब **विंडोज़ 3.1 ऑपरेटिंग सिस्टम** पर फ़ॉण्ट इंस्टॉल हो गए और टंकण पर हाथ भी आजमा लिए गए। पत्रिका हेतु न्यू ज़ीलैंड की नेशनल लाइब्रेरी से आई.एस.एस.एन. ले लिया गया। डिजिटल प्रिंटिंग आरंभ होने से प्रिंटिंग की समस्या किसी हद तक हल हो गई।

रोहित कुमार 'हैप्पी' न्यू ज़ीलैंड में 'हिंदी न्यू मीडिया' के माध्यम से हिंदी भाषा, लेखन व साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु प्रयासरत हैं। रोहित मैस्सी यूनिवर्सिटी, न्यू ज़ीलैंड से पत्रकारिता में प्रशिक्षित हैं व इसके अतिरिक्त वे न्यू ज़ीलैंड में इंवेस्टिगेटिव सर्विसेज़, ग्राफ़िक्स व वेब डिवेलपमेंट में भी प्रशिक्षित हैं।

आप मूलतः कैथल (हरियाणा) से संबंध रखते हैं और आप कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर हैं। हिंदी में कविता, ग़ज़ल, कहानी और लघु-कथा विधाओं पर लेखन करते हैं। आपकी रचनाएँ 'ऑउटलुक', 'नई दुनिया', 'पाञ्चजन्य', 'ज़ी न्यूज़', 'वेब दुनिया', 'पंजाब केसरी', 'वीर प्रताप', 'हरिगंधा', 'शांति दूत', 'सृजन-गाथा', 'प्रभा साक्षी', 'अभिव्यक्ति' के अतिरिक्त न्यू ज़ीलैंड की 'स्कूप', 'वायकाटो टाइम्स', 'संडे स्टार', 'इंडियन टाइम्स', 'एशियन मैग्ज़ीन' में प्रकाशित हुई हैं। रोहित कुमार 'वॉयस ऑव अमेरिका', 'डायचे वेले' पर वार्ताओं में सक्रिय रहे हैं और 90 के दशक में न्यू ज़ीलैंड में 'कम्युनिटी' रेडियो (सर्वश्रेष्ठ कार्यक्रम से सम्मानित), 'रेडियो देस-प्रदेस, 'रेडियो तराना' पर समाचार वाचक रहे हैं।

रोहित न्यू ज़ीलैंड से प्रकाशित इंटरनेट पर विश्व की पहली हिंदी पत्रिका, 'भारत-दर्शन' का संपादन व प्रकाशन करते हैं व निरंतर हिंदी-कर्म में अग्रसर हैं। यह पत्रिका 1996-97 से इंटरनेट पर प्रकाशित हो रही है।

पत्रिका को कंप्यूटर पर तैयार कर मुद्रण हेतु भेज दी गई। 1996 में 'भारत–दर्शन' का प्रथम मुद्रित संस्करण प्रकाशित होकर आया और इसके पहले अंक से ही **आई.एस.एस.एन. 1173–9843** पत्रिका के मुखपृष्ठ पर प्रकाशित कर दिया गया। 'भारत–दर्शन' का मुद्रण भी पारंपरिक ऑफ़सेट प्रिंटिंग न होकर डिजिटल था। पहला अंक ए 5 के आकार का, 'श्वेत–श्याम' (Black or White) व 8 पृष्ठों का था।

भारत-दर्शन

भारत भारत BHARAT

अच्छी पत्रिका सच्ची पत्रिका

द्वितीय संस्करण

अंक-१ वर्ष-१ अक्टूबर-नवम्बर १९९६ Oct-Nov 1996 ISSN 1173-9843

संपादकीय

न्यूज़ीलैंड की भारतीय पत्रकारिता

यूं तो न्यूज़ीलैंड में अनेक पत्र-पत्रिकाएं समय-समय पर प्रकाशित होती रही है, सबसे पहला प्रकाशित पत्र था, 'आर्योदय' जिसके संपादक थे श्री जे. के. नातली, उप संपादक थे श्री पी. वी. पटेल व प्रकाशक थे श्री रणछोड़ के. पटेल। भारतीयों का ये पहला पत्र १९२१ में प्रकाशित हुआ था परंतु ये जल्दी ही बंद हो गया।

एक बार फिर १९३५ में 'उदय' नामक पत्रिका श्री प्रभु पटेल के संपादन में शुरू हुई जिसका सह-संपादन किया था कुशल प्रभु ने। परंतु पहली पत्रिका की तरह इस पत्रिका को भी भारतीय समाज का अधिक सहयोग न मिला और पत्रिका को बंद कर देना पड़ा।

फिर लंबे समय तक किसी पत्र-पत्रिका का प्रकाशन नहीं हुआ। ९० के दशक में पुन: संदेश नामक पत्र प्रकाशित हुआ व कुछ अंकों के प्रकाशन के बाद बंद हो गया। इसके बाद क्रमश: द इंडियन टाईम्स, इंडियन पोस्ट, पेसिफिक स्टार व द ईस्टएंडर प्रकाशित हुए, इसके बाद अंतिम पत्र आया द कीवी-इंडिया एक्सप्रेस जिसका संपादन कर रहे हैं श्री खान।

९० के दशक में आई इन पत्रिकाओं में से अधिकतर बंद हो गई व कुछ अभी भी प्रकाशित हो रही है। १९२१ से लेकर अब तक का न्यूज़ीलैंड की भारतीय पत्रकारिता का इतिहास पढ़ने व समझने के बाद पुन: एक लेखक व पत्रकार का प्रयास 'भारत-दर्शन' आपके समक्ष है। हिंदी भाषा के प्रेम व भारतीय समाज की ज़रूरत को समझते हुए मेरी नन्ही सी कामना का ये प्रयास 'भारत-दर्शन' आप सब पाठकों को समर्पित!

इस अंक में

लघु-कथाएं

ग़ज़लें

नारी संसार

व

समाचार

मद्रास शहर का नया नाम

मद्रास का नाम चेन्नई रखने का विधेयक तमिलनाडु विधानसभा ने पारित कर दिया है। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री श्री करुणानिधि ने कहा कि अभी ऐसे कई शहर है जिनके नाम बदलने की ज़रूरत है।

बम्बई का नाम मुम्बई किए जाने के बाद मद्रास दूसरा महानगर है जिसका नाम बदला गया है।

किताबों की सबसे बड़ी दुकान

भारतीय नेशनल बुक ट्रस्ट के प्रबंधक के अनुसार दिल्ली में दुनिया की सबसे बड़ी किताबों की दुकान जल्दी ही खुलने जा रही है। इस दुकान में विभिन्न प्रकार की पचास हज़ार किताबें बिक्री के लिए उपलब्ध होंगी।

आठ हज़ार वर्ग फीट क्षेत्र में फैली ये दुकान पहली ऐसी दुकान होगी जहां सभी भारतीय भाषाओं की किताबें उपलब्ध होंगी। इस अनोखी दुकान में एक बुक क्लब भी होगा, जिसके सदस्य विदेशी भी बन सकेंगे।

न्यूज़ीलैंड की पहली हिन्दी साहित्यिक पत्रिका

'भारत-दर्शन' न्यूज़ीलैंड से प्रकाशित होने वाली पहली साहित्यिक-पत्रिका है। पत्रिका भारतीय साहित्य, दर्शन व संस्कृति का प्रचार करने का भरसक प्रयास करेगी। संसार भर में बसे हिंदी-प्रेमियों, लेखकों व साहित्यकारों को एक मंच प्रदान करना पत्रिका का ध्येय है।

FREE ISSUE

Inside: English Pages
News
Literature

1996 में प्रकाशित 'भारत–दर्शन' का पहला अंक

"HARE RAMA, HARE KRISHNA TEMPLE - DIWALI CELEBRATION"

by Rohit Kumar

Hare Rama, Hare Krishna Temple celebrated Diwali at New Vrindaban, Highway 18, Riverhead, Kumeu on 24th and 25th October. The schedule for celebration were Bhajan, Aarati, Dance, Bharatnatyam and talk by Atmanand, Bon-fire, etc.

On Saturday evening the programme started at 6.30 p.m. with Bhajan followed Aarati of Lord Krishna. All people and devotee have been singing, 'Hare Rama, Hare Rama, Rama-Rama, Hare-Hare, Hare Krishna, Hare Krishna, Krishna-Krishna, Hare Hare.' Temple was fully packed up and some people were watching the programme from outside the programmes were very attractive.

After Aarti Dance performed by Gurukula Shishya, it was a really good performance by some very young kids. And later, 'Upali' did classical Dance 'Odissi.' Upali also performed 'Odissi' at Bharatiya Mandir Concert.

Last month she performed 'Odissi' on TV New Zealand. This young girl belongs to Orissa State of India and she lives and studies in Delhi. She is here for six months visa, and returns to India on 24th November.

Guru Maya Dhar Raut of Delhi taught 'Odissi' to Upali. While she is here she is studying at Auckland Grammar School in 6th form.

After the performance Atmanand did Gita Updesh and Krishna stories. Then again a Dance was performed. The last item for Saturday night was Bon-fire Ravana.

Everybody was pleased to see Ravana setting on fire. After this, people took Prasadam and returned to their homes chanting, 'Hare Rama, Hare Rama.'

On Sunday, programme started at 12.30 p.m. with Bahajan, Aarti.

Krishna Bhog celebration at Hare Rama Hare Krishna Temple.

Then a devotee told stories about Krishna and Goverdhan Puja's stories.

A religious Drama performed by kids followed and everybody chanting Hare Rama, Hare Krishna....

Then Temple's people invited public to Gau Shala where they celebrated Goverdhan Puja. Some cows were clothed nicely. People were chanting and dancing with joy in a circle around the cows. Sweet meat was given to cows and people did Goverdhan Pujan there.

After this Krishna Bhog was celebrated. Everybody then offered Bhog to Krishna in a circle chanting, 'Hare Krishna, Hare Krishna, Krishna-Krishna, Hare-Hare.' After this celebration people had a big feed in temple, and with this occasion successfully finished.

'हरे राम-कृष्ण मंदिर द्वारा दीवाली समारोह सम्पन्न'

ऑकलैंड अक्टूबर २४-२५: हरे राम कृष्ण मंदिर द्वारा हाईवे 18, रीवरहैड जहां मंदिर स्थित है 'दीवाली' समारोह आयोजित किया गया। [illegible]

—रोहित कुमार 'हैप्पी'

1992 में 'द इंडियन टाइम्स' में रोहित कुमार 'हैप्पी' की हस्तलिखित हिंदी रिपोर्ट

पत्रिका तैयार होकर आने पर वितरण करना था। पत्रिका को सभी मुख्य भारतीय दुकानों व संस्थाओं के माध्यम से वितरित किया गया। इसके अतिरिक्त समारोहों व साप्ताहिक मंडियों में जाकर इसे व्यक्तिगत रूप से बाँटी गई। पत्रिका नि:शुल्क थी। यह भी ध्यान रखा गया कि पत्रिका अधिक से अधिक पाठकों तक पहुँच सके और इसके लिए एक रोचक युक्ति का उपयोग किया गया। पत्रिका के अंतिम पृष्ठ पर बड़े शब्दों में प्रकाशित किया गया था—**कृपया इस पत्रिका को पढ़ने के बाद फेंके नहीं बल्कि किसी और हिंदी प्रेमी को पढ़ने को दे दें। पत्रिका के प्रसार में आपके योगदान के लिए आभार!**

न्यू ज़ीलैंड भारतीय पत्रकारिता में हिंदी प्रकाशन का अध्याय यद्यपि 'द इंडियन टाइम्स' में 1992 में हस्तलिखित हिंदी रिर्पोटों के प्रकाशन से आरंभ होता है तथापि वास्तविक हिंदी प्रकाशन का श्रेय 'भारत-दर्शन' पत्रिका को जाता है चूंकि यही पत्रिका पूर्ण रूप से न्यू ज़ीलैंड का **पहला हिंदी प्रकाशन** कही जा सकती है। 'द इंडियन टाइम्स' में हस्तलिखित हिंदी का आरंभ भी इन्हीं पंक्तियों के लेखकों ने ही किया था और बाद में 'भारत-दर्शन' का संपादन-प्रकाशन भी।

यूँ तो न्यू ज़ीलैंड की भारतीय पत्रकारिता का इतिहास पुराना है। भारतीय पत्रकारिता की बात करें तो सबसे पहला प्रकाशित पत्र था 'आर्योदय', जिसके संपादक थे 'श्री जे.के. नातली', उप संपादक थे 'श्री पी.वी. पटेल' व प्रकाशक थे 'श्री रणछोड़ के. पटेल'। भारतीयों का यह पहला पत्र 1921 में प्रकाशित हुआ था परंतु यह जल्द ही बंद हो गया। यह पत्र गुजराती में था। एक बार फिर 1935 में 'उदय' नामक पत्रिका श्री प्रभु पटेल के संपादन में आरंभ हुई जिसका सह-संपादन किया था कुशल मधु ने। पहले पत्र की भांति इस पत्रिका को भी भारतीय समाज का अधिक सहयोग नहीं मिला और पत्रिका को बंद कर देना पड़ा।

उपरोक्त दो प्रकाशनों के पश्चात लंबे अंतराल तक किसी पत्र-पत्रिका का प्रकाशन नहीं हुआ। 90 के दशक में पुन: 'संदेश' नामक पत्र प्रकाशित हुआ व कुछ अंकों के प्रकाशन के बाद बंद हो गया। इसके बाद 'द इंडियन टाइम्स', 'इंडियन पोस्ट', 'पैसिफ़िक स्टार', 'इस्टएंडर' और 'द फ़िजी-इंडिया एक्सप्रेस' का प्रकाशन हुआ किंतु एक के बाद एक बंद हो गया। ये सभी पत्र अंग्रेज़ी में थे। वर्तमान में 'इंडियन न्यूज़लिंक' व 'इंडियन वीकएंड' अंग्रेज़ी में प्रकाशित हो रहे हैं।

न्यू ज़ीलैंड की हिंदी पत्रकारिता का अध्याय 1996 में 'भारत-दर्शन' पत्रिका के प्रकाशन से आरंभ हुआ। 1921 से 90 तक के दशक की न्यू ज़ीलैंड भारतीय पत्रकारिता के इतिहास का गहन अध्ययन करने के पश्चात पुन: एक हिंदी लेखक व पत्रकार ने 'भारत-दर्शन' पत्रिका के प्रकाशन व संपादन का बीड़ा उठाया। हिंदी भाषा का प्रेम व भारतीय समाज की आवश्यकताओं हेतु एक नन्ही सी पत्रिका का जन्म हुआ जो शीघ्र ही विश्व-पटल पर 'हिंदी पत्रकारिता' का नया इतिहास रचनेवाली थी। बिना किसी सरकारी या गैर-सरकारी आर्थिक सहायता के पत्रिका का प्रकाशन यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है लेकिन हिंदी प्रेमियों के स्नेह ने हर दिन नई ऊर्जा प्रदान की।

दूसरा अंक आते-आते पत्रिका अत्यंत लोकप्रिय हो चुकी थी। पाठक निरंतर और अधिक सामग्रियों का अनुरोध करने लगे थे। अत: पत्रिका में 4 और पृष्ठ जोड़े गए। अब पत्रिका का तीसरा अंक 12 पृष्ठों का था।

सभी भारतीयों को एक मंच पर लाया 'भारत-दर्शन'

अगस्त 97 आते-आते पत्रिका अत्यधिक लोकप्रिय हो गई थी। 'भारत-दर्शन' की गतिविधियाँ भी बढ़ गई थीं। अभी तक यहाँ भारतीय समुदाय बँटा हुआ था। भारत का स्वतंत्रता-दिवस व गणतंत्र-दिवस भी मिलजुलकर आयोजित नहीं होता था। 1997 में भारत-दर्शन ने पहली बार सभी भारतीयों को भारतीय स्वतंत्रता दिवस के 'स्वर्ण जयंती समारोह' में एक मंच प्रदान किया। इससे पहले केवल गुजराती समुदाय ही स्वतंत्रता-दिवस मनाता था और सारा कार्यक्रम गुजराती में ही होता था। 1997 में न्यू ज़ीलैंड में रह रहे सभी समुदाय एक मंच पर आए और समारोह हिंदी में हुआ। इसमें मुख्य अतिथि भारतीय उच्चायुक्त व विशिष्ट अतिथि न्यू ज़ीलैंड के रेस रिलेशंस कौंसिलिएटर थे।

इस अवसर पर 'भारत-दर्शन' का 'स्वतंत्रता-विशेषांक' प्रकाशित किया गया। भारत-दर्शन का यह अंक श्वेत-श्याम न होकर रंगीन था व इसके 16 पृष्ठ थे।

इस अवसर पर हिंदी सेवियों व समाज-सेवियों का सम्मान किया गया। इस अवसर पर चित्र-कला की प्रदर्शनी लगाई गई, जिसे भारतीयों के अतिरिक्त स्थानीय लोगों ने भी सराहा।

इंटरनेट की दुनिया में हिंदी साहित्यिक पत्रकारिता का उदय

'भारत-दर्शन' की यहाँ तक की यात्रा करते-करते अब 'भारत-दर्शन' का इंटरनेट संस्करण भी निकल चुका था। दिसंबर-जनवरी (1996-97) से 'भारत-दर्शन' का इंटरनेट संस्करण उपलब्ध करवाया गया। इसके साथ ही पत्रिका को 'इंटरनेट पर विश्व की पहली हिंदी साहित्यिक पत्रिका' होने का गौरव प्राप्त हुआ और विश्व भर में फैले भारतीयों ने 'भारत-दर्शन' की हिंदी सेवा की सराहना की। इंटरनेट की दुनिया में हिंदी साहित्यिक पत्रकारिता का उदय 'भारत-दर्शन' के रूप में हो चुका था। वर्तमान में 'भारत-दर्शन' हिंदी न्यू मीडिया में अग्रणी है और इस समय इंटरनेट पर सर्वाधिक पढ़ी जानेवाली ऑनलाइन हिंदी पत्रिका है।

न्यू ज़ीलैंड रेस रिलेशंस कौंसिलिएटर डॉ राजेन्द्र प्रसाद और भारत के उच्चायुक्त श्री के. एम. मीणा अगस्त, 1997 में भारत की स्वतंत्रता की स्वर्ण-जयंती व 'भारत-दर्शन' की पहली वर्षगांठ पर

अगस्त 1997 में भारत की स्वतंत्रता की स्वर्ण-जयंती व 'भारत-दर्शन' की पहली वर्षगांठ पर 'भारत-दर्शन' के संपादक रोहित कुमार 'हैप्पी' व एशिया डायनामिक टी.वी. कार्यक्रम के 'भारत जमनादास' भारत-दर्शन का स्वतंत्रता-दिवस विशेषांक प्रदर्शित करते हुए।

न्यू ज़ीलैंड का दीवाली मेला और 'भारत-दर्शन'

पहली बार न्यू ज़ीलैंड में 'दीवाली मेले' का आयोजन 1998 में महात्मा गांधी सेंटर में 'भारत-दर्शन' व एक गैर-भारतीय न्यू ज़ीलैंडर के सह-आयोजन से आरंभ हुआ जो बाद में इतना प्रसिद्ध हुआ कि ऑकलैंड सिटी कौंसिल ने इसके प्रबंधन की ज़िम्मेदारी स्वयं उठा ली। 'भारत-दर्शन' के इस मेले के आयोजन का ध्येय हिंदी व अन्य भाषाओं का प्रचार करना था। सांस्कृतिक कार्यक्रम, दीवाली पूजन व स्टॉल एक साथ, यह अपनी तरह का अनोखा आयोजन था और इसकी ख़ूब सराहना हुई। हिंदी में बैनर लगाए गए, पोस्टरों में भी हिंदी व अंग्रेज़ी का उपयोग किया गया। अगले वर्ष पुन: 1999 में इसका आयोजन महात्मा गांधी सेंटर में हुआ व अगले कुछ वर्षों तक इसका आयोजन महात्मा गांधी सेंटर में होने के पश्चात अन्य एशियन संस्था व सिटी कौंसिल ने इसके प्रबंधन की ज़िम्मेदारी ले ली।

'भारत-दर्शन' का ऑनलाइन हिंदी शिक्षक

न्यू ज़ीलैंड में 1996-97 में सबसे पहले हिंदी पत्रिका 'भारत-दर्शन' के प्रयास से एक वेब आधारित 'हिंदी-टीचर' का आरंभ किया गया। यह प्रयास पूर्णतया निजी था। इस प्रोजेक्ट को विश्व-स्तर पर सराहना मिली लेकिन कोई ठोस साथ नहीं मिला। इंटरनेट पर हिंदी सिखाने की पहल 'भारत-दर्शन' ने की। एक ऑनलाइन 'हिंदी टीचर' विकसित किया गया जिसके माध्यम से जिनकी भाषा हिंदी नहीं वे हिंदी सीख सकें। इसके शिक्षण का माध्यम अंग्रेज़ी रखा गया ताकि विदेशों में जन्मे बच्चे व विदेशी इसका लाभ उठा सकें। 90 के दशक में यह तकनीक व प्रौद्योगिकी उपलब्ध करवाना अपने आपमें एक उपलब्धि थी।

इंटरनेट आधारित हिंदी-टीचर विकसित करके 'भारत-दर्शन' ने हिंदी जगत में एक नया अध्याय जोड़ा। हमारे लिए बड़े गर्व की बात है कि आज 'भारत-दर्शन' विश्व के अग्रणी हिंदी अंतरजालों (इंटरनेट साइट) में से एक है। विश्व हिंदी मानचित्र पर न्यू ज़ीलैंड का नाम 'भारत-दर्शन' ने अंकित किया है।

आज न्यू ज़ीलैंड में 'भारत-दर्शन' जैसी हिंदी पत्रिका के अतिरिक्त हिंदी रेडियो और टी.वी. भी हैं जिनमें 'रेडियो तराना' और 'अपना एफ.एम.' अग्रणी हैं। हिंदी रेडियो और टी.वी. अधिकतर मनोरंजन के क्षेत्र तक ही सीमित हैं किंतु मनोरंजन के इन माध्यमों को आवश्यकतानुसार हिंदी अध्यापन का एक सशक्त माध्यम बनाया जा सकता है। न्यू ज़ीलैंड में हर सप्ताह कोई न कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम होता है। हर सप्ताह हिंदी फ़िल्में प्रदर्शित होती हैं।

औपचारिक रुप से हिंदी शिक्षण की कोई विशेष व्यवस्था न्यू ज़ीलैंड में नहीं है लेकिन पिछले कुछ वर्षों से ऑकलैंड विश्वविद्यालय में 'आरंभिक व मध्यम' स्तर की हिंदी 'कन्टीन्यू एज्युकेशन' के अंतर्गत पढ़ाई जा रही है। हिंदी पठन-पाठन का स्तर व माध्यम अव्यावसायिक और स्वैच्छिक रहा है। कुछ संस्थाओं द्वारा अपने स्तर पर हिंदी पढ़ाई जाती है। वेलिंग्टन के हिंदी स्कूल की सुनीता नारायण कई वर्षों से आंशिक रुप से हिंदी पढ़ा रही हैं। वायटाकरे हिंदी स्कूल हैंडरसन व रूपा सचदेव अपने स्तर पर हिंदी पढ़ाती हैं। प्रवीणा प्रसाद 'हिंदी लैंगुएज एंड कल्चर' में हिंदी की कक्षाएँ लेती हैं। ऑकलैंड का 'पापाटोएटोए हाई स्कूल' एकमात्र मुख्यधारा का स्कूल है जहाँ हिंदी पढ़ाई जाती है, अनिता बिदेसी यहाँ हिंदी पढ़ाती हैं। इसके अतिरिक्त सुशीला शर्मा भी कई वर्ष तक ऑकलैंड यूनिवर्सिटी की कंटिन्यूइंग एजुकेशन में हिंदी पढ़ाती रही हैं। 'भारत-दर्शन' का 'ऑनलाइन हिंदी टीचर' 1996-97 से उपलब्ध है।

भारत-दर्शन का 'ऑनलाइन हिंदी-टीचर'

इंटरनेट के माध्यम से हिंदी प्रचार-प्रसार में 'भारत-दर्शन' का **ऑनलाइन हिंदी टीचर** विशेष योगदान दे सकता है। 'भारत-दर्शन' का प्रयास है कि वह तकनीकी व प्रोद्यौगिकी का उपयोग करके हिंदी शिक्षण में भी यथासंभव योगदान दे। विदेशों में सक्रिय भारतीय मीडिया भी इस संदर्भ में बी.बी.सी व वॉयस ऑव अमेरिका से सीख लेकर उन्हीं की तरह हिंदी के पाठ विकसित करके उन्हें अपनी वेबसाइट व प्रसारण में जोड़ सकते हैं। बी.बी.सी और वॉयस ऑव अमेरिका अंग्रेज़ी के पाठ अपनी वेबसाइट पर उपलब्ध करवाने के अतिरिक्त इनका प्रसारण भी करते हैं। इसके साथ ही सभी हिंदी विद्वान/विदुषियों, शिक्षक-प्रशिक्षकों को चाहिए कि वे आगे आएँ और हिंदी के लिए काम करनेवालों की केवल आलोचना करके या त्रुटियाँ निकालकर ही अपनी भूमिका पूर्ण न समझें बल्कि हिंदी प्रचार के लिए काम करनेवालों को अपना सकारात्मक योगदान भी दें। हिंदी को केवल भाषणबाज़ी और नारेबाज़ी की नहीं, सिपाहियों की आवश्यकता है।

'भारत-दर्शन' की भावी योजनाएँ

'भारत-दर्शन' का प्रयास है कि उच्च-स्तरीय लेखन व दुर्लभ हिंदी साहित्य को ऑनलाइन उपलब्ध करवाया जाए। इसके लिए 'भारत-दर्शन' पिछले 2 वर्षों से अन्य दो वेबसाइटों पर कार्य कर रहा है जिनमें 'कहत-कबीर' व 'साहित्य-दर्शन' सम्मिलित हैं।

'भारत-दर्शन' की कबीर पर नई विकसित हो रही साइट - http://www.kahatkabir.com/

कहत-कबीर पर कबीर का समग्र साहित्य प्रकाशित करने की योजना है। इसमें मुद्रित सामग्री, चित्र व वीडियो सम्मिलित होंगे। कबीर की जीवनी, उनके दोहे, भजन व प्रचलित किंवदंतियाँ प्रकाशित हुए। हम निरंतर इसमें और सामग्री सम्मिलित कर रहे हैं।

साहित्य-दर्शन में प्रवासी भारतीयों के साहित्य को विशेष रूप से सम्मिलित करने का प्रयास किया जाएगा। अभी तक फ़िजी, मॉरीशस, सूरीनाम इत्यादि देशों का समुचित साहित्य प्रकाश में नहीं आया है। हमारा प्रयास रहेगा कि हम इन्हें समुचित स्थान दें ताकि इन देशों का साहित्य भी पाठकों तक पहुँचे।

'भारत-दर्शन' द्वारा विकसित की जा रही साहित्य-दर्शन http://www.sahityadarshan.com/

पिछले कुछ वर्षों से 'भारत-दर्शन' केवल ऑनलाइन पत्रिका के रूप में प्रतिष्ठित है। इसका मुद्रित संस्करण बंद कर दिया गया है। हमारी योजना है 'भारत-दर्शन' में प्रकाशित सामग्री में से श्रेष्ठ चयनित सामग्री का वार्षिक प्रकाशन किया जाए यथासंभव इस पर कार्य किया जाएगा।

ऑनलाइन हिंदी टंकण अब भी सरल-सुलभ नहीं है। बहुत से लोग अभी भी प्रश्न करते हैं कि हिंदी में कैसे टाइप करें? कई बार रचनाएँ दूसरे 'फ़ॉण्ट' में भेज दी जाती हैं। हमारा प्रयास है कि सभी प्रचलित हिंदी फ़ॉण्ट्स का ऑनलाइन परिवर्तक उपलब्ध करवाएँ और ऑनलाइन हिंदी टंकण सुविधा दे सकें ताकि पाठक तुरंत टाइप करके ऑनलाइन सामग्री भेज सकें।

'भारत दर्शन' ने इंटरनेट के आरंभिक दिनों में 'भारत-दर्शन' फ़ॉण्ट विकसित किया था और इसे नि:शुल्क न्यू ज़ीलैंड में वितरित किया था। अब समय की माँग है कि 'यूनिकोड हिंदी टंकण' भी जनसाधारण की पहुँच में हो और वह इतना सरल हो कि बच्चे भी उसका उपयोग कर सकें। इस पर काम चल रहा है और आगामी वर्ष तक हम यह सुविधा उपलब्ध करवा पाएँगे।

ऑनलाइन पुस्तक भंडार— विश्व भर में बसे हिंदी प्रेमियों को सस्ती दरों पर पुस्तकें व इ-पुस्तकें उपलब्ध करवाने की योजना पर काम किया जा रहा है जिससे हिंदी का प्रचार और तेज़ी से हो सके। यदि कोई साहित्यकार अपनी पुस्तकें 'भारत-दर्शन' के माध्यम से पाठकों को नि:शुल्क उपलब्ध करवाना चाहते हैं तो यह सुविधा भी उपलब्ध करवाई जाएगी।

ऑनलाइन हिंदी साहित्यकार चित्र-दीर्घा— डिजिटल चित्र, पारंपरिक चित्र व छायाचित्रों की एक दीर्घा का विकास जिसमें सभी हिंदी साहित्यकारों के चित्र देखे जा सकें, हमारी भावी योजनाओं में सम्मिलित है।

'भारत दर्शन' की भावी योजनाओं के माध्यम से हिंदी प्रचार-प्रसार में यदि आप हमारे साथ जुड़ना चाहें तो आपका स्वागत है। अब आवश्यकता है कि हम निजी प्रयासों को एक नया रूप देते हुए संयुक्त प्रयास आरंभ करें। वैश्विक-ग्राम (Global Village) के इस समय में यह सब संभव है। हम सबके संयुक्त प्रयासों से ही हिंदी आगे बढ़ेगी।

❑

ऑकलैंड, न्यू ज़ीलैंड
editor@bharatdarshan.co.nz

31 प्रवासी भारतीय और हिंदी पत्रकारिता

• डॉ. जवाहर कर्नावट

जन्म : 12 अगस्त, 1959

शिक्षा : एम.ए, एम.कॉम, पत्रकारिता एवं अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा, पी.एच.डी. (हिंदी पत्रकारिता) डिप्लोमा इन कंप्यूटराइज्ड बैंकिंग।

सम्मान : मध्यप्रदेश अभिनव कला परिषद द्वारा शब्द शिल्पी सम्मान, राष्ट्रभाषा विकास संगठन गाजियाबाद द्वारा निराला सम्मान, आशीर्वाद संस्थान, मुंबई से राजभाषा कार्यान्वयन में श्रेष्ठ योगदान हेतु तथा यू.एस.ए हिंदी संस्था द्वारा न्यूजर्सी में आयोजित समारोह में सम्मानित।

विश्व भर में फैले हुए भारतवंशियों ने शिक्षा व्यवसाय, उद्योग, राजनीति आदि क्षेत्रों में अपनी एक विशिष्ट पहचान स्थापित कर ली है। पिछले 175 वर्षों में मॉरीशस, फिजी, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका, गयाना, सूरीनाम आदि देशों में गिरमिटिया के रूप में पहुँचे इन आप्रवासी भारतीयों ने प्रारंभिक वर्षों में अनेक अत्याचार सहन किए किंतु इन्होंने अपने परिश्रम, लगन तथा ईमानदारी से इन देशों में सुशिक्षित, प्रतिष्ठित तथा सम्मानित नागरिक का स्थान प्राप्त कर लिया। उन्हें अपना गरिमामय स्थान प्राप्त करने के लिए अत्यंत संघर्ष भी करना पड़ा। इस संघर्ष में हिंदी पत्रकारिता की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

इन देशों में भारतवंशियों के लिए अपनी भाषा, संस्कृति, धर्म और जीवन शैली अत्यंत महत्वपूर्ण थी। इनकी दूसरी या तीसरी पीढ़ी तक इनके घरों में निज भाषा को छोड़कर कोई दूसरी भाषा नहीं बोली जाती थी। हिंदी इनके लिए तुलसी, मीरा, सूर, कबीर और अन्य संतों की पावन वाणी की वाहिका थी। शनैः-शनैः इन देशों में हिंदी, दैनिक जन-जीवन के साथ शिक्षण संस्थानों में भी स्थापित हो गई। यही कारण था कि इन देशों में हिंदी के संचार-माध्यम विकसित हो गए। भारतवंशियों को अपने संघर्ष हेतु एकजुट करने एवं प्रतिष्ठित स्थान दिलाने में भी हिंदी पत्र-पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इसके अलावा 20वीं शताब्दी में अमेरिका और यूरोप के देशों में जाकर निवास करनेवाले भारतवंशी हिंदी प्रेमियों ने भी अपने-अपने देशों में हिंदी भाषा और साहित्य को जीवित रखने तथा भारतीय समाज को एक सूत्र में जोड़े रखने के लिए हिंदी पत्र-पत्रिकाओं की शुरुआत की।

विश्व के जिन प्रमुख देशों में प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रकारिता में अपना विशिष्ट स्थान बनाया, उनमें मॉरीशस और फिजी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। फिजी में हिंदी पत्रकारिता की यात्रा को 100 से अधिक वर्ष हो चुके हैं। मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत गांधी जी की प्रेरणा से मणिलाल डॉक्टर ने की थी। उन्होंने 15 मार्च, 1909 को 'हिंदुस्तानी' पत्रिका का प्रकाशन कर प्रवासी भारतीयों को जागृत किया। इसकी शुरुआत अंग्रेज़ी और गुजराती से की गई किंतु बाद में इसे अंग्रेज़ी और हिंदी; दो भाषाओं में छापा जाने लगा। सन् 2009 में मुझे मॉरीशस के पोर्ट लुई स्थित राष्ट्रीय अभिलेखागार में मॉरीशस की हिंदी पत्रकारिता के इतिहास के साक्षात दर्शन हुए।

'हिंदुस्तानी' के पश्चात मॉरीशस में चालीस से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि के रूप में प्रकाशित हुईं। साधनाभाव के बावजूद मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता को प्रवासी भारतीयों ने समृद्ध किया। 1935 से 1938 के बीच हस्तलिखित 'दुर्गा' पत्रिका का प्रकाशन विशेष उल्लेखनीय है। डॉ. मणिलाल के अलावा पं. काशीनाथ किष्टो, नृसिंह दास, सूर्यप्रसाद मंगर भगत, पं. राजेंद्र अरुण, जयनारायण रॉय, रामसेवक तिवारी, पं. दौलत शर्मा, मुनीश्वरलाल चिंतामणि, धर्मवीर घूरा, विष्णुदत्त मधु, रामदेव धुरंधर, अजामिल माताबदल, अभिमन्यु अनत, सत्यदेव

टेंगर, डॉ. बीरसेन जागासिंह, पूजानंद नेमा, प्रह्लाद रामशरण आदि ने मॉरीशस की हिंदी साहित्यिक पत्रकारिता में उल्लेखनीय योगदान दिया है। श्री अभिमन्यु अनत के संपादन में प्रकाशित 'वसंत' पत्रिका का हिंदी पत्रकारिता के विकास में विशेष योगदान रहा है। आज भी मॉरीशस में 'वंसत', 'रिमझिम', 'आक्रोश', 'इंद्रधनुष', 'पंकज' और 'आर्योदय' हिंदी पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं। इन पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रवासी भारतीयों ने अपनी संस्कृति, परंपराओं और रचनात्मकता को जीवित रखा। प्रवासी भारतीयों के नैतिक उत्थान एवं साहित्य तथा रचनाकर्म के प्रति रुचि जागृत करने में भी इन पत्र-पत्रिकाओं की सार्थक भूमिका रही।

सन् 1964 में आर्य समाज ने 'आर्य दिवाकर' नाम से पत्रिका प्रकाशित की। इसके पश्चात पं. शिवरत्न शास्त्री, महातम सिंह आदि के प्रयासों से अनेक पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। सूरीनाम हिंदी परिषद ने सन् 1984 में 'सूरीनाम दर्पण' का प्रकाशन आरंभ किया जो प्रवासी भारतीयों की अस्मिता, स्वाभिमान एवं गौरवमयी प्रतिष्ठा की रक्षा और इनके विकास का प्रतीक था। गयाना और त्रिनिदाद एवं टोबैगो में भी हिंदी पत्रकारिता के माध्यम से प्रवासी भारतीयों में अपनी भाषा और साहित्य के प्रति जागृत करने के अनेक प्रयास हुए।

मॉरीशस के समान फिजी में भी प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत कर इसे नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया। यहाँ सन् 1913 में डॉ. मणिलाल के संपादन में 'सेटलर' का हिंदी अनुवाद साइक्लोस्टाइल रूप में प्रकाशित हुआ। इसके बाद 'फिजी समाचार' (1923-37) साप्ताहिक निकला जो काफ़ी लोकप्रिय हुआ। 1937 से 1950 के मध्य अनेक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं किंतु कुछ अंकों के बाद ही अदृश्य हो गए। फिजी की हिंदी पत्रकारिता में पं. कमला प्रसाद मिश्र और पं. विवेकानंद शर्मा का भी विशेष योगदान है। पं. मिश्र द्वारा प्रकाशित पत्र 'फिजी संस्कृति' अत्यंत लोकप्रिय हुआ। 'फिजी संस्कृति' ने हिंदी महापरिषद की मासिक पत्रिका के रूप में प्रवासी भारतीयों को अपनी संस्कृति एवं भाषा से जोड़े रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इस पत्रिका के एक संपादकीय में वे लिखते हैं:-

''हमारे लोग निहत्थे आए खाली हाथ आए लेकिन अपने साथ लाए अपनी भाषा, सभ्यता, संस्कृति तथा धर्म और इसी के आधार पर बचा लाए अपनी अस्मिता, अपनी पहचान, हमें जमीनें मिलीं, छीन ली गईं, नौकरी मिलीं चली गईं लेकिन हमारी पहचान कोशिशों के बावजूद कोई भी छीन न सका। हम भारतीय होकर आए थे, भारतीय होकर रहे और भारतीय होकर रहेंगे और इस स्थिरता के पीछे इसकी शक्ति का राज है—हमारी भाषा।''

इस प्रकार अपनी भाषा में अभिव्यक्ति तथा उसके व्यापक प्रचार-प्रसार की इच्छा ने विदेशी हिंदी प्रेमियों को हिंदी पत्रकारिता की ओर उन्मुख किया। फिजी से प्रकाशित 'शांतिदूत' एक ऐसा पत्र है जो 75 से अधिक वर्षों से निरंतर प्रकाशित हो रहा है। आज भी यह पत्र प्रवासी भारतीयों और विदेशी हिंदी पत्रकारिता का ज्वलंत उदाहरण बना हुआ है।

विश्व के कुछ अन्य देशों में भी जहाँ भारतीय मजदूर बनकर गए, हिंदी पत्रकारिता का दीप प्रज्ज्वलित हुआ। इन देशों में सूरीनाम गयाना तथा त्रिनिदाद एवं टोबैगो प्रमुख हैं। सूरीनाम में प्रारंभिक दौर में कुछ हिंदी प्रेमियों, आर्य समाज, सनातन धर्म, महासभा आदि संस्थानों ने अपनी कर्मठता और लगन से हिंदी पत्र-पत्रिकाओं को शुरू किया। सन् 1964 में आर्य समाज ने 'आर्य दिवाकर' नाम से पत्रिका प्रकाशित की। इसके पश्चात पं. शिवरत्न शास्त्री, महातम सिंह आदि के प्रयासों से अनेक पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। सूरीनाम हिंदी परिषद ने सन् 1984 में 'सूरीनाम दर्पण' का प्रकाशन आरंभ किया जो प्रवासी भारतीयों की अस्मिता, स्वाभिमान एवं गौरवमयी प्रतिष्ठा की रक्षा और इनके विकास का प्रतीक था। गयाना और त्रिनिदाद एवं टोबैगो में भी हिंदी पत्रकारिता के माध्यम से प्रवासी भारतीयों में अपनी भाषा और साहित्य के प्रति जागृत करने के अनेक प्रयास हुए। इस क्षेत्र में प्रो. हरिशंकर आदेश का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

दक्षिण अफ्रीका में भी हिंदी समाचार पत्रों ने प्रवासी भारतीयों को एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। सन्

1904 में श्री वी. मदनजीत ने डरबन शहर में 'इंडियन ओपिनियन' नामक साप्ताहिक अखबार हिंदी, अंग्रेज़ी, गुजराती और तमिल में निकाला। मदनजीत जी को इसमें भारी घाटा हुआ और उन्होंने अखबार गांधी जी के हवाले कर दिया। गांधी जी इस अखबार को डरबन से फिनिक्स स्थान पर ले गए और वहीं उनके आश्रम से अखबार भी निकलने लगा। बाद में हिंदी और तमिल ग्राहकों का अभाव बताकर दोनों भाषाएँ 'इंडियन ओपिनियन' से निकाल दी गईं। 1913 में 'सत्याग्रह संग्राम' के समय स्वामी भवानीदयाल संन्यासी को इसके संपादन का भार सौंपा गया तथा हिंदी अंश भी जोड़ा गया किंतु यह अधिक समय तक नहीं चल पाया।

स्वमी जी ने उस समय हिंदी और अंग्रेज़ी में साप्ताहिक 'धर्मवीर' निकाला। सन् 1922 के प्रारंभ में स्वामी भवानीदयाल ने 'हिंदी' नाम से साप्ताहिक अखबार हिंदी-अंग्रेज़ी में निकाला। जेकब्स से प्रति शुक्रवार को प्रकाशित यह अखबार अत्यंत लोकप्रिय हुआ। यह अखबार मॉरीशस, फिजी, त्रिनिदाद, डेमरारा, सूरीनाम, रोडेसिया, केन्या, यूगांडा, ज़ांज़ीबार, टेगेनिक्य आदि उपनिवेश और भारत में भी भेजा जाता था। 1925 के अंतिम मास में प्रवासी भारतीयों पर आई विपत्ति के कारण स्वामी जी को भारत लौटना पड़ा और हिंदी अखबार भी बंद हो गया। इसके पश्चात प्रवासी भारतीयों ने हिंदी अखबार प्रकाशन के छिटपुट प्रयास किए किंतु वे सफल नहीं रहे तथापि हिंदी के इन अखबारों ने प्रवासी भारतीयों के आत्मसम्मान को जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। सन् 2003 में अपनी दक्षिण अफ्रीका यात्रा के दौरान मुझे डरबन विश्वविद्यालय के डॉक्यूमेंटेशन सेंटर में इन समाचार पत्रों की पुरानी फाइलों को देखना अत्यंत सुखद लगा।

अमेरिका और यूरोप के देशों में भी 20वीं शताब्दी के आंरभ में ही प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत कर दी थी। अमेरिका में भारतीय स्वतंत्रता हेतु संघर्षरत गदर पार्टी ने 1917 में लाला हरदयाल के नेतृत्व में 'गदर' नामक पत्र हिंदी में भी प्रकाशित किया था। कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले में हिंदी के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो. वेद प्रकाश बटुक के अनुसार—'गदर' एक क्रांतिकारी पत्र था जिसका उद्देश्य भारतीयों में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध मोर्चा तैयार करना था। राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत यह पत्र लगभग पाँच वर्षों तक प्रकाशित होता रहा। 'गदर' आंदोलन को बढ़ाने में इनका बड़ा हाथ रहा। चार-पाँच साल में ही 'गदर' ने प्रवासी हिंदी पत्रकारिता पर एक ज़बरदस्त छाप छोड़ी। भारत के स्वतंत्र होने के बाद अमेरिका में भारतीयों का जाना बढ़ता ही गया। अमेरिका में विधिवत हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन की शुरुआत नौवें दशक के आरंभ में हुई जब स्व. डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश की प्रेरणा से अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति की स्थापना हुई। इस समिति की ओर से 'विश्वा' नाम की पत्रिका निकलनी शुरू हुई। प्रारंभ में यह पत्रिका हस्तलिखित थी किंतु बाद में इसका प्रकाशन भी शुरू हुआ। डॉ. कुँवर चंद्रप्रकाश के अलावा रामेश्वर अशांत, गुलाब कोठारी, सुरेंद्रनाथ तिवारी, कथाकार सुषम बेदी और राम चौधरी लंबे समय तक इसके संपादक मंडल में रहे। 1984 में ही प्रो. वेद प्रकाश बटुक के संपादन में 'सीमांतिका' नामक साहित्यिक पत्रिका प्रकाशित हुई किंतु यह अधिक समय तक नहीं निकल सकी। अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति के नॉर्थ कारोलाइना चेप्टर से जुड़ी सुधा ओम ढींगरा ने बच्चों के लिए 'उमंग' नाम की एक पत्रिका प्रारंभ की जो आज भी प्रकाशित हो रही है। 1991 में 'सौरभ' नाम की एक और पत्रिका शुरू हुई। यह पत्रिका नवगठित विश्व हिंदी समिति की ओर से ब्रुकलिन, न्यू यॉर्क से निकलना प्रारंभ हुई। इस समिति के अध्यक्ष डॉ. विजय मेहता पेशे से हृदय

अमेरिका में हिंदी पत्रकारिता को फैलाने में विश्व हिंदी न्यास का भी विशेष योगदान है। इस न्यास की ओर से तीन पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं—'हिंदी जगत', 'विज्ञान प्रकाश' और 'बाल हिंदी जगत'। यह न्यास हिंदी में 'न्यास समाचार' बुलटिन भी प्रकाशित करता है। डॉ. राम चौधरी जो पहले अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति के अध्यक्ष एवं 'विश्वा' के प्रबंध संपादक थे, न्यास के कार्यपालक निदेशक हैं और हिंदी जगत का संपादन भी करते हैं।

रोग चिकित्सक हैं लेकिन उनकी अनेक हिंदी पुस्तकें छप चुकी हैं।

अमेरिका में हिंदी पत्रकारिता को फैलाने में विश्व हिंदी न्यास का भी विशेष योगदान है। इस न्यास की ओर से तीन पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं—'हिंदी जगत', 'विज्ञान प्रकाश' और 'बाल हिंदी जगत'। यह न्यास हिंदी में 'न्यास समाचार' बुलटिन भी प्रकाशित करता है। डॉ. राम चौधरी जो पहले अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति के अध्यक्ष एवं 'विश्वा' के प्रबंध संपादक थे, न्यास के कार्यपालक निदेशक हैं और हिंदी जगत का संपादन भी करते हैं। 'विज्ञान प्रकाश' में कई ऐसे लेख भी छपे हैं, जो शीर्षस्थ वैज्ञानिकों ने लिखे हैं। विज्ञान के क्रमिक विकास पर स्वयं राम चौधरी की लेखमाला इस पत्रिका की विशेषता रही। सन् 1992 से प्रो. भूदेव शर्मा के संपादन में 'विश्व विवेक' पत्रिका की भी शुरुआत हुई। यह पत्रिका हिंदी एज्यूकेशनल एंड रिलीजियस सोसायटी ऑव अमेरिका की तरफ़ से प्रकाशित की जा रही है। इसमें साहित्य-संस्कृति के अलावा भारत व भारतवंशियों के मसलों पर सामग्री छपती रहती है। इस पत्रिका ने अमेरिका में हिंदू धर्म-संस्कृति, मूल्यवान परंपराओं को जीवित रखने तथा भारतीयों को संगठित रखकर भारतीयता एवं हिंदी से जोड़े रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। हिंदी यू.एस.ए. संस्था भी अपनी तिमाही पत्रिका के माध्यम से हिंदी शिक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

अमेरिका के पड़ोसी देश कनाडा में भी प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी भाषा, साहित्य और संस्कृति को संजोए रखा है। हिंदी प्रचारिणी सभा कनाडा त्रैमासिक अंतरराष्ट्रीय साहित्य पत्रिका 'हिंदी चेतना' का प्रकाशन पिछले 15 वर्षों से निरंतर कर रही है। श्री श्याम त्रिपाठी के संपादन में इस पत्रिका के अनेक विशेषांक भी प्रकाशित हो चुके हैं। अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, भारत, नॉर्वे, फ्रांस, मॉरीशस आदि अनेक देशों के लेखक इस पत्रिका से जुड़े हुए हैं। इसी प्रकार 10 वर्षों से टोरंटो, कनाडा में 'वसुधा' पत्रिका का प्रकाशन लगातार हो रहा है। स्नेह ठाकुर के संपादन में निजी प्रयासों से इस पत्रिका का प्रकाशन उनके हिंदी के प्रति प्रेम और समर्पण का परिचायक है।

यूरोप के देशों में भी भारत की स्वतंत्रता के पश्चात गए प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रकारिता का अलख जगाया। यूरोप के देशों में इंग्लैंड का भारत के संदर्भ में विशेष महत्व है। इंग्लैंड में हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत सन् 1883 में हो गई थी। उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जनपद की एक देशी रियासत कालाकाँकर के राजा रामपालसिंह ने 'हिंदोस्थान' का त्रैमासिक प्रकाशन अंग्रेज़ी-हिंदी में लंदन से सन् 1883 में किया था। इंग्लैंड में इस त्रैमासिक का प्रकाशन दो वर्ष यानी सन् 1883 से 1885 तक हुआ। इस पत्र के द्वारा राजा रामपालसिंह ने ब्रिटिश संसद में भारतीयों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने की पुरजोर वकालत की, परिणामस्वरूप सन् 1886 में ब्रिटिश संसद में सर सैयद अहमद को सदस्यता प्राप्त हुई। सन् 2006 में अपनी लंदन यात्रा के दौरान मुझे ब्रिटिश लाइब्रेरी के एशियन सेक्शन में यू.के. एवं अन्य कई देशों के पुराने हिंदी समाचार पत्रों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई।

सन् 1917 में लंदन से प्रकाशित 'तस्वीरी' अखबार अपने विवरण हिंदी में प्रकाशित करता था। इसके पश्चात यू.के. के आर्य समाज ने 'वैदिक पब्लिकेशन' का प्रकाशन आरंभ किया। फिर 'अमरदीप साप्ताहिक' का प्रकाशन श्री जे.एस. कौशल के संपादकत्व में शुरू हुआ। सन् 1964 में धर्मेंद्र गौतम के संपादन में हिंदी प्रचार परिषद ने 'प्रवासिनी' त्रैमासिक पत्रिका की शुरुआत की। प्रारंभ में यह पत्रिका हस्तलिखित रूप में प्रसारित हुई और बाद में यह मुद्रित स्वरुप में सामने आई। इसके अलावा यू.के. से 'चेतक', 'मिलाप', 'नवीन वीकली', 'जगतवाणी' पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित हुए किंतु ये पत्रिकाएँ समय के अंतराल के साथ काल कवलित हो गए। इंग्लैंड में हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में उस समय क्रांतिकारी बदलाव आया जब डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी इग्लैंड में भारतीय उच्चायुक्त बने। उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति समर्पित प्रवासी भारतीयों को संगठित किया और यू.के. हिंदी समिति की स्थापना करवाई। इसी समिति के तत्वावधान में श्री पद्मेश गुप्त के संपादन में सन् 1997 में 'पुरवाई' त्रैमासिक हिंदी पत्रिका की शुरुआत हुई। इस पत्रिका में इग्लैंड, भारत एवं अन्य प्रमुख देशों के हिंदी

लेखकों के लेख, कविताएँ, कहानियाँ, संस्करण आदि प्रकाशित होते हैं। इग्लैंड के प्रमुख हिंदी रचनाकारों में गौतम सचदेव, दिव्या माथुर, उषा राजे सक्सेना, मोहन राणा, सत्येंद्र श्रीवास्तव, उषा वर्मा, सिहन राही, कृष्णा अनुराधा, राकेश माथुर, के.जी. खंडेलवाल, प्राण शर्मा, देवी नागरानी की रचनाएँ प्रकाशित होती रहती हैं।

'पुरवाई' पत्रिका ने पिछले 15 वर्षों में विदेश की हिंदी पत्रकारिता में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। 7 नवंबर, 2010 को नेहरू केंद्र लंदन में यू.के. हिंदी समिति की बीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर यू.के. में हिंदी पत्रकारिता पर सेमिनार आयोजित हुआ था। इस अवसर पर 'पुरवाई' के संपादक श्री पद्मेश गुप्त ने 'पुरवाई' के पिछले 13 सालों की उपलब्धियों और कार्यों का उल्लेख करते हुए ठीक ही कहा कि 'पुरवाई' पत्रिका एक अंतरराष्ट्रीय अभियान है, यह अभियान है नए रचनाकारों के मंच का प्रवासी भावनाओं की अभिव्यक्ति का और अभियान विश्व के हिंदी लेखकों को जोड़ने का। इस प्रकार आज 'पुरवाई' पत्रिका विश्व जगत में महत्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है।

नॉर्वे में हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत 1979-80 के दौरान 'परिचय' हिंदी मासिक से हुई जिसमें पंजाबी और अंग्रेज़ी भाषा के भी कुछ पृष्ठ होते थे। सन् 1981 में इस पत्रिका के संपादन का दायित्व भारत से नॉर्वे आए श्री सुरेशचंद्र शुक्ल को सौंप दिया गया। उन्होंने पाँच वर्षों तक इस पत्रिका का संपादन किया। इसके अलावा नॉर्वे से 'पहचान', 'सनातन मंच' एवं 'त्रिवेणी' पत्रिकाओं का भी प्रकाशन हुआ। 1998 से 'स्पाइल दर्पण' का संपादन श्री सुरेशचंद्र शुक्ल ही कर रहे हैं। यह पत्रिका हिंदी और नॉर्वेजीयन भाषा में प्रकाशित होती है। श्री अमित जोशी के संपादन में प्रकाशित हुई 'शांतिदूत' पत्रिका ने भी यहाँ हिंदी पत्रकारिता को आगे बढ़ाया। नॉर्वे से एक द्विभाषिक पत्र 'आप्रवासी टाइम्स' की शुरुआत भी श्री सिद्धार्थ जोशी के संपादन में हुई है। मुझे इसके वर्ष 2004 के कुछ अंकों को देखने का अवसर प्राप्त हुआ।

पिछले एक दशक में जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया, न्यू ज़ीलैंड में भी प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी भारतीयता को जीवित रखने का प्रयास किया है। विश्व हिंदी समाचार के जून, 2012 अंक में जर्मनी से प्रकाशित 'बसेरा' पत्रिका का ज़िक्र मिलता है। यह पत्रिका म्यूनिख में रहनेवाले हिंदी प्रेमी युवा श्री रजनीश मंगला पिछले कई वर्षों से हिंदी और जर्मनी भाषा में निकाल रहे हैं। न्यू ज़ीलैंड से हिंदी गतिविधियों की रिपोर्ट करते हुए रोहित कुमार 'हैप्पी' ने बताया कि न्यू ज़ीलैंड में 1996 में हिंदी पत्रिका 'भारत दर्शन' के प्रयास से एक वेब आधारित 'हिंदी टीचर' का आरंभ किया गया। 'भारत दर्शन' इंटरनेट पर विश्व की पहली हिंदी साहित्यिक पत्रिका है। ऑस्ट्रेलिया में हिंदी पत्रकारिता शनैः शनैः अपने पैर जमा रही है। 2 अक्टूबर, 2010 को 'हिंदी गौरव' ऑनलाइन समाचार पत्र का मुद्रित संस्करण प्रारंभ किया गया। इससे पूर्व विक्टोरिया से प्रकाशित 'साउथ एशिया टाइम्स' में 'हिंदी पुष्प' शीर्षक से दो पृष्ठ नियमित रूप से प्रकाशित होते हैं। ऑस्ट्रेलिया से ही प्रकाशित 'द इंडियन डाउन अंडर' में भी हिंदी का एक पृष्ठ प्रकाशित होता है। 1990 से फिजी के परसराय महाराज 'समाचार पत्रिका' का प्रकाशन हिंदी में कर रहे है। ऑस्ट्रेलिया में प्रवासी भारतीय रेखा राजवंशी जी ने यह जानकारी देते हुए समाचार पत्र भी उपलब्ध करवाए।

इधर खाड़ी के देशों में भी हिंदी के प्रचार-प्रसार के साथ हिंदी पत्रकारिता आकार ले रही है। अबू धाबी से श्री कृष्ण बिहारी 'निकट' नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन कर रहे हैं। शारजाह से पूर्णिमा वर्मन की अगुआई में वेब पत्रिकाओं-'अभिव्यक्ति व अनुभूति' का साप्ताहिक प्रकाशन प्रति सोमवार किया जाता है। इन अंकों को पुरालेखों में इस प्रकार व्यवस्थित किया गया है कि वे आज वेब पर हिंदी के सबसे बड़े साहित्य कोश हैं।

इस प्रकार प्रवासी भारतीयों ने विश्व के कोने-कोने में हिंदी पत्रकारिता और संचार माध्यमों की शुरुआत कर अपनी भाषा और संस्कृति से जुड़े रहने का भरसक प्रयास किया है।

❐

मुंबई, भारत
jkarnavat@gmail.com

32 लंदन से हिंदी प्रसारण का महात्म्य

• श्री कैलाश बुधवार

बीसवीं सदी के जिस चमत्कार ने बेतार के तार से दुनिया के दूर-दूर कोनों को जोड़ दिया, वह है रेडियो प्रसारण। चाहे कोई बियाबान में हो, निर्धन या निरक्षर हो, बटन घुमाते ही धरती के किसी भी छोर से अपना नाता जोड़ सकता है। जो जादू अपनी भाषा में तत्काल अपनों का हाल ला सके, उसे सुनने को किसके कान उत्सुक नहीं होंगे।

आप बी.बी.सी. विश्व हिंदी सेवा लंदन के संपादक, निर्माता तथा प्रसारक होने के साथ-साथ अनेक हिंदी संस्थाओं से जुड़े रहे। आपने 150 से अधिक रेडियो कार्यक्रमों का लेखन और प्रसारण किया है कथा हिंदुस्तान में युवाओं की एक पूरी पीढ़ी रेडियो पर आपको सुनकर बड़ी हुई है। आप लंदन की संस्था कथा यू.के. से भी जुड़े रहे हैं। आप पत्रकारिता से संबंधित अनेक पुस्तकों के रचयिता हैं। समर्पित सेवा के लिए आपको 2015 में विश्व हिंदी सम्मान से विभूषित किया गया है।

चाहे बंगलादेश के युद्ध का समाचार हो या भोपाल के गैसकांड की त्रासदी, खबर की सच्चाई जानने के लिए स्वदेश में जिस रेडियो की ओर सबके कान लगे रहते थे, वह था बी.बी.सी. का हिंदी प्रसारण। कहीं की भी, जब भी कोई नई खबर कौंधती थी तो हर किसी की पहली कोशिश यही होती थी कि यह पता चले कि बी.बी.सी. पर इस बारे में क्या सुनने को मिला।

जहाँ इतिहास के पन्ने युद्धों की मारकाट, राजवंशों की कलह और जातियों के खून-खराबे से रंगे पड़े हैं, वहीं कहीं ऐसी तारीखें भी दिख जाती हैं जिनकी महत्ता पर उस वक्त किसी का ध्यान नहीं जा पाता पर बाद में जिनकी पहुँच देर तक यादगार बन जाती है। सन् 1940 की 11 मई को हुई एक साधारण सी शुरुआत थी, एक ऐसा ही संयोग था, जिस घड़ी लंदन से हिंदुस्तानी में रेडियो प्रसारण शुरू हुआ। भारत में अभी ब्रिटिश राज खत्म नहीं हुआ था, दुनिया दूसरे विश्व युद्ध की लपटों में घिरी हुई थी, लाखों भारतीय सैनिक अपनी भूमि से दूर नाज़ी सेनाओं से जूझ रहे थे। ऐसे में स्वदेश में अपनों से उनका संपर्क जोड़ने के लिए और उन्हें अपनी भाषा में खबरों की जानकारी से अवगत कराने के लिए बी.बी.सी. ने दस मिनट के हिंदुस्तानी प्रसारण की शुरुआत की।

बी.बी.सी. विश्व सेवा का यही प्रसारण कुछ दशकों में एक से बढ़ते-बढ़ते चार सभाओं में हर रोज होने लगा और 1980 में हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार बी.बी.सी. के हिंदी श्रोताओं की नियमित संख्या साढ़े तीन करोड़ से ऊपर पहुँच चुकी थी। हज़ारों मील दूर से आते प्रसारण पर हिंदी के श्रोताओं की निष्ठा का एकमात्र रहस्य यह था कि उन्हें घर बैठे अपनी भाषा में दुनिया भर का हाल मिलता रहता था जिसपर सभी को भरोसा रहता था कि उसमें लाग-लपेट की गुंजाइश न के बराबर होगी।

वह क्या तिलिस्म था जिससे देश-देश के अलग-अलग इतने श्रोता अपनी भाषा में बी.बी.सी. के प्रसारण की प्रतीक्षा में रहते थे। हिंदी में हो या किसी भाषा में, बी.बी.सी. की विश्व सेवा की लोकप्रियता का एक ही रहस्य था कि सच्चाई छिप नहीं सकती, चाहे कोई यत्न कर लिया जाए। फिर कौन ऐसा होगा जिसे सही जानकारी की तलाश न हो। सही जानकारी पाने की उत्सुकता हर मनुष्य में, वह कहीं का हो, जन्मजात है। एक शब्द में बी.बी.सी. की विश्वसनीयता का आधार यही सिद्धांत था कि बिना लाग-लपेट के सही-सही जानकारी जहाँ तक संभव हो, तत्काल प्रसारित की जाए। सच्चाई कभी-न-कभी बाहर आकर रहती है।

इस मंच पर काम करनेवालों को भरोसा था कि किसी निहित स्वार्थ के हस्तक्षेप के आगे किसी को अपनी गर्दन नहीं झुकानी पड़ी। बी.बी.सी. विश्व सेवा की एक ही नीति थी : उसकी कोई नीति नहीं थी। हर प्रसंग के बारे में चेष्टा ऐसी हो कि हर पक्ष का दृष्टिकोण सामने आ सके ताकि श्रोता स्वयं हर तर्क को नाप-

तौलकर अपनी राय बनाए। इस सिद्धांत के चलते और बी.बी.सी. के सारे संसाधनों तक अपनी पहुँच पर हिंदी के इस छोटे से एकांश ने लाखों-करोड़ों का विश्वास जीत लिया था।

इसे सुननेवाले केवल विद्वान वर्ग के लोग ही नहीं थे, दूरदराज़ गाँवों में रहनेवाले ऐसे निरक्षर भी दुनिया भर से मिली जानकारी पर वैसा ही दावा कर सकते थे जो विश्वविद्यालय के किसी स्नातक को नसीब होती।

हिंदी का यह एक संपूर्ण रेडियो स्टेशन था जिसमें समाचारों के साथ-साथ उनकी समीक्षा, व्यापार का आर्थिक उतार-चढ़ाव, विज्ञान की उपलब्धियाँ, खेलकूद-संगीत, मनोरंजन की सारी सामग्री घर बैठे हर रोज़ मिलते थे।

यह स्वाभाविक है कि चाहे राजनेता हो, विचारक हो या जन साधारण का मामूली मज़दूर, अपने चारों ओर क्या हो रहा है, यह जानकारी पक्की करना ज़रूरी समझता है। वह जानकारी जो दुनिया के हर महाद्वीप से खबरों में या विवेचना में एकत्र होती थी, हिंदी श्रोताओं को घर बैठे सुबह-शाम मिलती रहती थी; अपनी भाषा में, अपने प्रसारकों के स्वर में।

बुश-हाउस की पाँचवी मंज़िल पर यह एकांश एक कक्ष में था जहाँ हिंदी के सारे कार्यक्रम तैयार होते थे। स्वदेश से आनेवाले अतिथियों में कोई नेता, कोई लेखक, कोई संगीतज्ञ, कोई कलाकार ऐसा नहीं हो सकता था जिससे वहाँ ये वार्ता न हुई हो। हिंदी के प्रसारक अपनी-अपनी विधा में पारंगत थे, जिस क्षेत्र में भी उन्होंने महारथ हासिल की हो, वहाँ की ज़िम्मेदारी में शामिल होने के साथ, हर कार्यक्रम के लिए उनका सक्षम होना अनिवार्य था। हर प्रसारक को यह आभास था कि किसी विचारक को, किसी लेखक को, किसी नेता को, किसी अभिनेता को वह सुलभ नहीं है, जो उन्हें है। किसी की भी अभिव्यक्ति, विचारों की या कला की पहुँच उतनी दूर तक नहीं हो पाती, जो प्रसारक के शब्दों की तत्काल करोड़ों तक हो जाती है पर साथ ही हर प्रसारक को यह भी मालूम था कि माइक्रोफ़ोन पर हुई एक गलती लाखों कानों तक पहुँचकर लाखों गुना हो जाती है।

हिंदी अनुष्ठान से जुड़े नामों में ऐसी अनेक हस्तियाँ वहाँ अपने काम की छाप की याद दिलाती हैं जिन्होंने देश में अपना नाम कमाया। दूरदर्शन के महानिदेशक श्री हरिश्चंद्र खन्ना, आकाशवाणी के संचालक श्री नारायण मेनन, प्रसिद्ध अभिनेता श्री बलराज साहनी कभी अपने प्रारंभिक कार्यकाल में यहाँ काम करने आए थे। अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध लेखक जॉर्ज ओरवेल कभी इस विभाग में प्रसारण के लिए लिखते थे।

लंदन के बुश हाउस में स्थित हिंदी अनुष्ठान चाहे छोटा रहा हो पर हिंदी की ही तरह वहाँ से विश्व की चालीस भाषाओं में प्रसारण होता था। चाहे जहाँ का समाचार हो, उसकी मीमांसा के लिए उस विषय के, उस क्षेत्र के प्रसारक तत्पर मिलते थे। दुनिया भर के अलग-अलग प्रदेशों से आए विशेषज्ञों की जानकारी हर विभाग के लिए सुलभ थी।

वहाँ की कैंटीन में, वहाँ के क्लब में, वहाँ के गलियों में, हर रंग के, हर जाति के, हर प्रदेश के, हर महाद्वीप के प्रसारक एक-दूसरे के साथ उठते-बैठते, साथ-साथ काम करते दिखते थे। वहाँ काले-गोरे का भेद नहीं था। धर्म, जाति, भाषा, राजनीति का भेद नहीं था। अमीर-गरीब देश से आए, छोटे-बड़े देश से आए; सभी अपनी-अपनी भाषा के प्रसारण की तैयारी में जुटे रहते थे। वहाँ साथ-साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलनेवाले यह साबित करते थे कि एक मंच पर बिना खींचातानी के अलग-अलग देशों के लोगों का साथ जीना, जीवन का आनंद लेना संभव है।

मैं अपने आप को सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे एक ऐसे मंच पर काम करने का अवसर मिला जहाँ से अपने देश की, अपने प्रदेश की सही पहचान, सही जानकारी, दुनिया भर की भाषाओं में होनेवाले प्रसारणों में पहुँचा सका। जहाँ मुझे यह प्रतिष्ठा मिली कि रिटायर होने के इतने वर्षों बाद भी अपने प्रदेश के हर प्रसंग पर आज भी मेरी राय, मेरी समीक्षा सही मानी जाती है। मेरा सुझाया-समझाया निर्णय सही शुमार किया जाता है।

❑

साभार : प्रवासी संसार, वर्ष 10,
अंक 5, जनवरी-मार्च 2014

33 आकाशवाणी में हिंदी की लोकप्रियता

• प्रो. सूर्यकांत विश्वनात आमलपूरे

भारत में आकाशवाणी जनसंचार के माध्यम में अत्यंत लोकप्रिय एवं प्रभावी माध्यम रहा है। लोगों को शिक्षित करने तथा सूचना देने में आकाशवाणी की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आज से 115 वर्ष पहले मारकोनी ने आकाशवाणी की खोज की। 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर राष्ट्र भाषा हिंदी में मनोरंजन, शिक्षा, सूचना, समाचार, विज्ञापन, ज्ञान-ध्यान, गीत, संगीत सब कुछ उपलब्ध होता है।

जनसंचार के एक प्रभावी माध्यम के रूप में आकाशवाणी ने भारतीय जनमानस को गहरे रूप से प्रभावित किया है। आज दूरदर्शन में अनेक बदलाव आने से आकाशवाणी शायद संग्रहालय की वस्तु बन गई है। फिर भी आकाशवाणी का महत्व-कम नहीं है। आकाशवाणी के 200 से अधिक केंद्र हैं इसका प्रसारण 95 प्रतिशत भूभाग पर है। यह सच है कि आकाशवाणी से प्रसारित विभिन्न कार्यक्रमों के श्रोताओं का सबसे अधिक समय मनोरंजन कार्यक्रमों को सुनने में व्यतीत होता है परंतु भारत में समाचार-पत्र पढ़नेवालों के अनुपात में आकाशवाणी के समाचार सुननेवालों की संख्या अनेक गुना ज़्यादा है।

आकाशवाणी इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के अंतर्गत आता है, भारत में अगस्त, 1921 को मुंबई में रेडियो पर संगीत कार्यक्रम का प्रसारण किया गया। 1 जनवरी, 1936 में पहला प्रसारण केंद्र दिल्ली में स्थापित हुआ, तब से लेकर आज तक और आनेवाले दिनों तक हिंदी की लोकप्रियता बढ़ाने का काम आकाशवाणी कर रही है और आगे भी करेगी।

1947 के बाद हिंदी पर संकट के बादल छाए हुए थे। अंग्रेज़ चले गए थे पर अंग्रेज़ी छोड़ गए थे इसलिए एक ओर जहाँ हिंदी को अंग्रेज़ी से खतरा था, वहीं क्षेत्रीय भाषाएँ हिंदी के लिए भी मुश्किलें खड़ी कर रही थीं। ऐसे संक्रमण काल में आकाशवाणी ने आगे बढ़कर हिंदी की बागडोर सँभाली और कृष्ण की तरह सारथी बनकर हिंदी के रथ को भारतवर्ष की दसों दिशाओं में फैलाया। हिंदी के प्रचार-प्रसार में आकाशवाणी ने अहम भूमिका निभाई वही जन-जन की भाषा बन गई। चाय के बागानों में, पान की दुकानों में, सड़क पर, चौराहे पर, गली-कूचे में, कॉफ़ी की चुस्कियों के बीच आकाशवाणी के ज़रिए हिंदी लोगों के दिलों में उतरती चली गई। अभिजात्य वर्ग के सुरुचिपूर्ण सुसंस्कृत विचारों को परिपूर्णता आकाशवाणी ने दी है। निस्संदेह 'रामचरितमानस' हिंदुस्तान के घर-घर पढ़ा जानेवाला महाकाव्य था और कपिलवस्तु के राजकुमार सिद्धार्थ को लोगों ने भगवान बुद्ध मान लिया था पर उर्मिला की करुणा और यशोधरा की वेदना से आम लोगों को परिचित कराया आकाशवाणी ने ही।

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने आकाशवाणी से हुँकार भरी तो हिंदी ध्वजा कोणार्क के मंदिर पर लहराई। हिंदी गूँज हिमालय की तराइयों से उठी, बंगाल की खाड़ी में हिंदी गरजी और समुद्र की लहरों के साथ हिंदी अठखेलियाँ करने लगी। निराला की 'राम की शक्ति पूजा' का रेडियो पर पाठ किया गया तो मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम के दुख से लोग द्रवित हो उठे। कहने का तात्पर्य यह है कि हिंदी के प्रचार-प्रसार में आकाशवाणी ने जो काम किया, वह अन्य किसी माध्यम से संभव ही नहीं था।

हिंदी फ़िल्मी गाने लोगों के दिलों की धड़कन बने; ऑल इंडिया रेडियो के कारण ही। लोगों की सुबह और शाम हिंदी फ़िल्मी गानों की तर्ज पर थिरकने लगी। 'बरसात' फ़िल्म में गाने की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ती है—'हमसे मिले तुम, जिया बेकरार है, फिर छाई बहार है', ऐसे प्रसिद्ध गाने आकाशवाणी पर सुनाई देते हैं। आज भी हिंदी गाने लोगों की ज़ुबान पर चढ़े हुए हैं तो सिर्फ़ आकाशवाणी की वजह से यह करिश्मा रेडियो ही कर सकता था, दूसरे किसी माध्यम के वश की बात नहीं थी।

आकाशवाणी ने हिंदी को आम जनता की भाषा बनाई। भारतवर्ष की विभिन्न भाषा-भाषियों की कठिनाइयों को ध्यान में रखकर आकाशवाणी से एक नए और अत्यंत सरल स्वरूप में

कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाने लगे। इसलिए हिंदी जन-मन की प्यारी भाषा बन गई, चाहे वह अफ़सर, मालिक हो या पत्थर ढोनेवाला सामान्य मज़दूर हो या अचार-पापड़ बेलनेवाली गृहिणियाँ या घर में काम करनेवाली नौकरानी हो। आकाशवाणी की हिंदी इन्हें बिल्कुल ऐसी लगती थी जैसे वे खुद बोल रही हैं। रेडियो के समाचार इतने सूचनापरक होते हैं कि किसी घटना विशेष की पूरी तस्वीर खिंच जाती है। रेडियो के नाटक इतने सजीव लगते हैं जितने शायद वे रंगमंच पर देखने पर भी न लगते होंगे। यह कमाल केवल आकाशवाणी ही कर सकती थी।

ऑल इंडिया रेडियो बंबई के लिए बंबइया हिंदी बोली गई तो बंगाल के लिए बंगाली हिंदी की मिष्ठी परोसी गई। इसलिए अनजाने में अहिंदी-भाषी भी हिंदी को ग्रहण करते चले गए। दरअसल रेडियो ज़िंदा आवाज़ है, इसलिए उसका प्रभाव भी ज़िंदगी पर भरपूर होता है। रेडियो हर आयु और वर्ग के लिए अलग-अलग भाषा में बात करता है। असहाय, दुखियों, गरीबों के लिए आकाशवाणी मदर टेरेसा की भाषा बोलती है तो सैनिकों के घाव पर मरहम लगाती है, फ़्लोरेंस नाइटिंगेल बनकर। आकाशवाणी की हिंदी दिलों की भाषा है, हृदय के उद्‌गार हैं आत्मा की आवाज़ है।

आज जबकि कोई भी मीडिया अंग्रेज़ी की घुसपैठ से महफ़ूज़ नहीं है, आकाशवाणी आज भी पूरे सिद्धांत के साथ हिंदी भाषा की गरिमा और सम्मान बनाए हुए ऊँचाइयों तक ले जाने के लिए कृत संकल्प है।

❑

साभार: राष्ट्रभाषा अंक 9, सितंबर 2014
rashtrabhasha@bsnl.in

34 बी.बी.सी. लंदन और हिंदी

• डॉ. विनय कुमार शर्मा

बी.बी.सी. हिंदी की शुरुआत 11 मई, 1940 को बी.बी.सी. हिंदुस्तानी के रूप में हुई। इसी दिन विंस्टन चर्चिल ब्रिटेन के प्रधान मंत्री बने थे। उस समय उर्दू और हिंदी अलग-अलग विभाग नहीं थे। बी.बी.सी.हिंदुस्तानी सर्विस के नाम से शुरु किए गए प्रसारण का उद्देश्य द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारतीय उपमहाद्वीप के ब्रितानी सैनिकों तक समाचार पहुँचाना था।

भारत की आज़ादी और विभाजन के बाद हिंदुस्तानी सर्विस का भी विभाजन हो गया और 1949 में जनवरी महीने में 'इंडियन सेक्शन' की शुरुआत हुई। उस समय इससे कई जाने-माने नाम जुड़े जिनमें प्रसिद्ध अभिनेता बलराज साहनी और विख्यात प्रसारक ज़ुल्फ़िकार बुखारी के नाम प्रमुख हैं।

बाद के वर्षों में ओंकार नाथ श्रीवास्तव, रत्नाकर भारतीय, महेंद्र कौल, हिमांशु कुमार भादुड़ी, कैलाश बुधवार, भगवान प्रकाश, विश्वदीपक त्रिपाठी और सुभाष वोहरा भी बी.बी.सी. हिंदी सेवा का हिस्सा बने। बी.बी.सी. हिंदी सेवा ने वर्ष 1994 में दिल्ली में अपना दफ़्तर खोला। रिपोर्टरों की एक टीम ने दिल्ली से समाचार मुहैया कराने का सिलसिला शुरू किया। बी.बी.सी. हिंदी पहले अंग्रेज़ी में आनेवाले समाचारों के हिंदी अनुवाद पर निर्भर थी किंतु धीरे-धीरे भारत के कई नगरों में संवाददाताओं की नियुक्ति हुई जो हिंदी में अपनी रिपोर्टें भेजने लगे। इनमें लखनऊ में रामदत्त त्रिपाठी, पटना में मणिकांत ठाकुर, राँची में सलमान रावी आदि के नाम प्रमुख हैं।

जन्म : 01 जुलाई, 1972
शिक्षा : डी.लिट. हिंदी, पीएचडी हिंदी, एम.ए. हिंदी व संस्कृत तथा पत्रकारिता व जनसंचार में लखनऊ परास्नातक डिप्लोमा।
प्रकाशन : बी.बी.सी. लंदन और हिंदी, हिंदी का वैश्विक परिदृश्य, उच्च शिक्षा : दशा और दिशा, हिंदी साहित्य में विकलांग विमर्श प्रकाशित हैं तथा जनसंचार माध्यम और हिंदी प्रकाशनाधीन है।
सम्मान : पं. अंबिका प्रसाद बाजपेयी 'स्वर्ण पदक' सम्मान, हिंदी प्रतिभा सम्मान, 'उपभोक्ता श्री' सम्मान 2014, प्रो. हरिकृष्ण अवस्थी सम्मान, 'साहित्य श्री' सम्मान तथा गणेश शंकर विद्यार्थी अलंकरण से सम्मानित।

वह प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी की उनके ही अंगरक्षकों के हाथों हत्या की घटना हो या राजीव गांधी की एक बम विस्फोट में मृत्यु, वह सुनामी हो या कोई बड़ा भूकंप, अंतरराष्ट्रीय घटना हो या भारत से संबद्ध, रेडियो श्रोता बी.बी.सी. हिंदी की प्रामाणिकता और सच्चाई पर हमेशा विश्वास करते रहे। सटीक, विश्वसनीय और सामयिक-यह बी.बी.सी. की पहचान है जिस पर बी.बी.सी. हिंदी सेवा भी हमेशा खरी उतरी।

बी.बी.सी. ने समय के साथ भाषा और शैली में बदलाव किया। यह समय की माँग थी कि भाषा सहज बनाई जाए ताकि आम श्रोता उससे जुड़ाव महसूस कर सकें। बी.बी.सी. ने हिंदीवाले शब्दों को समाहित किया। कल की भाषा में बोले जानेवाले शब्दों को समाहित किया।

कई बार इस तरह की आपत्तियाँ की गईं कि बी.बी.सी. हिंदी के प्रसारणों में उर्दू के शब्दों का इस्तेमाल होता है लेकिन धीरे-धीरे श्रोताओं ने भाषा की इस सरलता, सहजता को स्वीकार किया और उन्हें यह अहसास हुआ कि भाषा की समृद्धि के लिए उसे व्यापक बनाया जाना ज़रूरी है। इस समय बी.बी.सी. की हिंदी सेवा लंदन और दिल्ली में संचालित होती है। दिल्ली की छोटी सी टीम में धीरे-धीरे विस्तार होता गया और आज बी.बी.सी. हिंदी के अधिकतर पत्रकार भारत में रहकर काम कर रहे हैं।

बी.बी.सी. हिंदी के चार प्रसारण हुआ करते थे—'विश्व भारती', 'अब तक', 'आजकल' और 'घटना चक्र'। समय के साथ इनके

नाम बदले और इन्हें क्रमश: 'नमस्कार भारत', 'तीस मिनट', 'दिन भर' और 'इस वक़्त' कहा जाने लगे।

वर्ष 2011 में कुछ वित्तीय परेशानियों के कारण बी.बी.सी. ने कई भाषाओं में प्रसारण बंद किए जिनमें हिंदी सेवा के प्रसारण भी थे। हिंदी सेवा ने अब पूरी तरह वेबसाइट पर निर्भर रहने का फैसला किया। इस निर्णय को इतने बड़े पैमाने पर श्रोताओं के विरोध का सामना करना पड़ा कि ब्रिटेन की संसद भी इसकी आवाज़ से गूँज उठी। अरुंधति रॉय, विक्रम सेठ और मार्क टली जैसे भारत के कुछ बुद्धिजीवियों ने भी इस निर्णय के विरुद्ध अभियान शुरू किया। अंतत: बी.बी.सी. वर्ल्ड सर्विस ने हिंदी सेवा को कुछ धन मुहैया कराया और बी.बी.सी. हिंदी ने अपना सुबह का प्रसारण फिर शुरू किया। कुछ समय बाद शाम के प्रसारण की भी दोबारा शुरुआत हो गई।

भारत में हाल की राजनीतिक घटनाओं और लोकतांत्रिक स्वतंत्रता की अपेक्षाओं के बीच, दूसरे शब्दों में, इन संकेतों के बीच की स्वतंत्र भारत की सत्ता बहुसंख्यकों के हाथ में होगी, हिंदुओं ने अपनी भाषा से अरबी और फ़ारसी के उन तमाम शब्दों को निकालना शुरू कर दिया है जो मुसलमानों की देन थे, दूसरी तरफ़ मुसलमानों ने उर्दू में भारी भरकम अरबी-फ़ारसी शब्दों को भरना शुरू कर दिया है।

विश्व युद्ध का ज़माना था, ब्रितानी फ़ौज में हिंदू भी थे और मुसलमान भी, उनकी बोलचाल की भाषा एक ही थी—हिंदुस्तानी। हालाँकि हिंदुस्तानी सर्विस नाम के जन्म की कहानी का एक राजनीतिक पहलू भी है।

मार्च, 1940 में बुखारी साहब ने एक नोट लिखा जिसका विषय था 'हमारे कार्यक्रमों में किस तरह की हिंदी का इस्तेमाल होगा' इस नोट में एक जगह उन्होंने लिखा—

''भारत में हाल की राजनीतिक घटनाओं और लोकतांत्रिक स्वतंत्रता की अपेक्षाओं के बीच, दूसरे शब्दों में, इन संकेतों के बीच की स्वतंत्र भारत की सत्ता बहुसंख्यकों के हाथ में होगी, हिंदुओं ने अपनी भाषा से अरबी और फ़ारसी के उन तमाम शब्दों को निकालना शुरू कर दिया है जो मुसलमानों की देन थे, दूसरी तरफ़ मुसलमानों ने उर्दू में भारी भरकम अरबी-फ़ारसी शब्दों को भरना शुरू कर दिया है।''

''पहले की उर्दू में हम कहते थे—मौसम खराब है लेकिन कांग्रेस की आधुनिक भाषा में या मुस्लिम लीग की आज की ज़बान में यूँ कहा जाएगा—मौसमी दशाएँ प्रतिकूल है या मौसमी सूरतेहाल तशवीनाक है... हम बी.बी.सी. प्रसारणों को दो वर्गों में रख सकते हैं।''

''पहला-अतिथि प्रसारक जिनकी भाषा पर हमारा कोई बस नहीं क्योंकि आप बर्नाड शॉ की शैली नहीं बदल सकते, दूसरे वर्ग में बी.बी.सी. के प्रसारक आते हैं जिनकी भाषा में मौसम खराब हो सकता है, मौसमी दशाएँ प्रतिकूल नहीं होंगी, कांग्रेस ने हिंदुस्तानी नाम उस भाषा को दिया था जिसमें हम कहते हैं—मौसम खराब है।''

आम जन की नज़र में 'हिंदुस्तानी' हिंदी और उर्दू की सुगंध लिए मिली-जुली सादा ज़बान का नाम था जो भारत की गंगा-जमुनी सभ्यता का प्रतीक थी। गंगा-जमुना भाषा, बी.बी.सी. की आज की हिंदी का आधार बनी।

चालीस के दशक से शुरू हुई इस परंपरा को कई जाने-माने प्रसारकों ने मज़बूत किया जिनमें बलराज साहनी, आले हसन, पुरूषोत्तमलाल पाहवा, महेंद्र कौल, रत्नाकर भारती, गौरीशंकर जोशी, हिमांशु भादुड़ी, नीलाभ, परवेज़ आलम, जसविंदर समेत बहुत से नाम शामिल हैं।

आले हसन देवनागरी लिपि नहीं जानते थे, उर्दू में लिखते थे मगर बी.बी.सी. हिंदी के पुराने श्रोता उनकी खूबसूरत आवाज़ और मीठी भाषा कैसे भूल सकते हैं।

80 के दशक के शुरू में ऐसे ही एक और प्रसारक बी.बी.सी. हिंदी के आकाश पर उदित हुए नाम हैं—शफ़ी नक़ी जामई। उनमें भाषा सीखने का जज़्बा इतना प्रबल था कि शुरू-शुरू में बात-बेबात कठिन से कठिन शब्दों का प्रयोग करने लगे।

जहाँ 'बहुत ज़रूरी' से बात बनती हो वहाँ वे 'अत्यावश्यक' कहते जहाँ 'बिजली' से काम चलता हो, वहाँ 'विद्युत' कहते,

उनका यह हाल देखकर उर्दू सेवा के सहयोगी यावर अब्बास से रहा न गया और उन्होंने एक शेर फ़र्माया—

शफ़ी, छोड़ दो अंदाज़ हिंदी वालों के
उठोगे हश्र में वरना तथा-तथा करते

यह वह समय था जब हिंदी और उर्दू भाषाओं में दूरियाँ बढ़ने लगी थीं, कुछ सुननेवालों को लगने लगा था कि उर्दू फ़ारसी के नज़दीक जा रही है और उसकी देखा-देखी हिंदी संस्कृतनिष्ठ हो रही है।

मुहावरेदार भाषा

लेकिन खास बात है कि अपने हिंदी जज़्बातों को साबित करने के इस प्रयास में शफ़ी यह कभी नहीं भूले कि उनकी सबसे बड़ी ताक़त उनकी मुहावरेदार भाषा है, मुहावरेदार भाषा बी.बी.सी. की हिंदी की एक और पहचान है जिसे कुछ लोगों ने जीवित रखा।

बी.बी.सी. की हिंदी के इतिहास और परंपरा की बात करने के साथ-साथ उसके श्रोताओं की बात करना ज़रूरी है क्योंकि बी.बी.सी. की हिंदी की एक अलग पहचान बनाए रखने में उसके श्रोताओं का बहुत बड़ा रोल रहा है।

80 के दशक के अंतिम वर्षों तक भारत में मीडिया आज की 'मीडिया इंडस्ट्री' जैसा नहीं था, श्रोताओं के पास विकल्प सीमित थे। बी.बी.सी. हिंदी ग्रामीण क्षेत्रों के साथ-साथ नगरों-महानगरों में भी सुनी जाती थी।

सुननेवालों में नेता-अभिनेता, शीर्ष पत्रकार, साहित्यकार, भाषाविद सभी शामिल थे, आपातकाल के दौरान तो घरों में ही नहीं, जेलों की कोठरियों में भी बी.बी.सी. हिंदी की आवाज़ गूँजती थी। नब्बे के दशक के आरंभ में परिदृश्य तेज़ी से बदलना शुरू हुआ। टेक्नोलॉजी ने बहुत कुछ संभव कर दिया, सैटेलाइट और केबल टेलीविज़न चैनलों ने ढेरों विकल्प पैदा किए, देखते-देखते कई समाचार चैनल शुरू हुए और अब एफ.एम. रेडियो।

लेकिन टेलीविज़न और एफ.एम. चैनलों की इस भीड़ में भी आज भारत के लगभग पौने दो करोड़ लोग बी.बी.सी. के श्रोता हैं, वे बी.बी.सी. हिंदी इसलिए सुनते हैं ताकि खुद को दुनिया से जुड़ा हुआ महसूस कर सकें, अपने मन के आकाश को विस्तृत कर सकें।

हिंदी माध्यम भर है। इन श्रोताओं की सबसे बड़ी संख्या बिहार, झारखंड और उत्तर प्रदेश में है। बाकी मध्य प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, उत्तरांचल, महाराष्ट्र और गुजरात में बिखरे हैं। हर प्रांत में हिंदी के अलग-अलग रूप हैं, अलग-अलग रंग हैं।

बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम

समय बदला और अन्य संचार माध्यमों की तरह बी.बी.सी. ने वेबसाइट की अहमियत को भी पहचाना और वर्ष 2001 में बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम की शुरुआत हुई। इसका उद्देश्य भारत और दुनिया भर के हिंदी-भाषी पाठकों तक समाचार और विश्लेषण पहुँचाना था। यह एक 24×7 वेबसाइट है और पत्रकारों की एक टीम सप्ताह के सातों दिन, 24 घंटे दुनिया भर के पाठकों के लिए सामग्री उपलब्ध कराती है।

बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम के पहले पन्ने पर सभी प्रमुख समाचारों को जगह दी जाती है और इसके अलावा विश्लेषण, जनरुचि की खबरों और फीचरों का प्रकाशन किया जाता है। वेबसाइट के अन्य इंडेक्स हैं—भारत, पाकिस्तान, चीन, खेल, मनोरंजन, विज्ञान, कारोबार, मल्टीमीडिया, ब्लॉग/फ़ोरम, बी.बी.सी. विशेष और लर्निंग इंगलिश। दो पूर्व प्रधान मंत्री, इंद्र कुमार गुजराल और विश्वनाथ प्रताप सिंह बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम के स्तंभकार रह चुके हैं।

बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम के पहले पन्ने पर सभी प्रमुख समाचारों को जगह दी जाती है और इसके अलावा विश्लेषण, जनरुचि की खबरों और फीचरों का प्रकाशन किया जाता है। वेबसाइट के अन्य इंडेक्स हैं—भारत, पाकिस्तान, चीन, खेल, मनोरंजन, विज्ञान, कारोबार, मल्टीमीडिया, ब्लॉग/फ़ोरम, बी.बी.सी. विशेष और लर्निंग इंगलिश। दो पूर्व प्रधान मंत्री, इंद्र कुमार गुजराल और विश्वनाथ प्रताप सिंह बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम के स्तंभकार रह चुके हैं।

इसके अलावा फ़िल्मकार देवानंद और मनोज बाजपेयी, कवि और लेखक निदा फाजली, साहित्यकार असगर वजाहत, फ़िल्म स्तंभकार कोमल नाहटा और भावना सोमैया और खेल पत्रकार प्रदीप मैगज़ीन समय-समय पर वेबसाइट से जुड़े रहे हैं।

इस लंबी-चौड़ी दुनिया की दूरियों को कम करने में रेडियो और दूरसंचार के साधनों ने जो महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, वह स्वयं बी.बी.सी. हिंदी सर्विस के विगत सात दशकों के अपने इतिहास द्वारा भी प्रमाणित होती है। दायित्व की दृष्टि से बी.बी.सी. ने रेडियो पत्रकारिता को ही संपन्न किया है लेकिन समसामयिकता से पत्रकारवाला सरोकार रखते हुए भी उसने समसामयिक घटनाचक्र के संवाद और विश्लेषण द्वारा केवल वही सामग्री नहीं दी है जो तात्कालिक महत्व की होती है। यह ठीक है कि तात्कालिक दृष्टि से आज समाचारों में जो प्रमुख और शीर्षस्थ स्थान का अधिकारी है, वह कल किसी दूसरे समाचार द्वारा अपदस्थ होता रहेगा लेकिन जैसे कुछ घटनाएँ और उनके परिणाम कालजयी सिद्ध हुए हैं, ऐसे ही बी.बी.सी. और उसकी हिंदी सर्विस द्वारा किए गए अनेक प्रसारण भी कालजयी बने हैं। इस अर्थ में विगत सात दशकों के इतिहास के लिए बी.बी.सी. कोई कम महत्वपूर्ण स्रोत नहीं है। बी.बी.सी. की हिंदी सर्विस विगत सात दशकों के कालप्रवाह की साक्षी है, इसलिए उसकी प्रामाणिकता का विशिष्ट स्थान है।

काल की इस चिरंतन रंगशाला में विश्व के मंच पर हर समय घटनाएँ होती रहती हैं और उनके कर्ता या भोक्ता पात्र हमारे सामने आते-जाते रहते हैं। बी.बी.सी. इस नाना घटनात्मक जगत के संवाद देते समय और उनकी कारण-कार्य शृंखला का विश्लेषण करते समय जिस दर्पण का काम करता है, उसे मैं मुखर दर्पण कहना चाहता हूँ। इस बोलनेवाले दर्पण में दुनिया अपना जो वाचिक प्रतिबिंब देखती है, वह उसे पसंद है या नापसंद, इसकी परवाह दर्पण को नहीं होनी चाहिए। यह मुखर दर्पण चूँकि जागरूक द्रष्टा का काम भी करता है और सक्रिय बौद्धिक का भी इसलिए जगत के यथार्थ की चर्चा करके विचारोत्तेजन करता है। कहाँ क्या हो रहा है, श्रोताओं की इस जिज्ञासा का शमन तो उसका पहला कर्तव्य है लेकिन अवगति को विचारोत्तेजन में बदलकर वह जो संवाद करता है, वह वाद-विवाद की भूमिका भी बनता है और मैं समझता हूँ कि स्वस्थ वाद-विवाद अन्योन्याश्रित होते हैं।

बी.बी.सी. हिंदी सर्विस ने विगत सात दशकों में अपने सामने बहुत कुछ होते और गुज़रते देखा है। बी.बी.सी. संवाददाता की भूमिका रचनाकार की नहीं, निष्पक्ष समीक्षक की रही है; सनसनी फैलाने या सनसनी खोजने की नहीं, स्थितियों-परिस्थितियों की प्रासंगिकता और मानवीय सरोकार की रही है।

संदर्भ

1. http://www.bbc.co.uk/hindi/
2. http://www.bbc.co.uk
3. http://www.bbc.co.uk/info/
4. http://www.bbc.co.uk/guidelines/editorialguidelines/
5. बी.बी.सी. लंदन से हिंदी प्रसारण के पचास वर्ष-बी.बी.सी.-बुश हाउस।
6. गगनांचल, अंक 4, वर्ष 2002।
7. गगनांचल, अंक 1, वर्ष 2003।
8. 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ़ इंडिया'—डॉ. जार्ज ग्रियर्सन-सेंट्रल लाइब्रेरी- स्कॉटलैंड।
9. नए जन-संचार माध्यम और हिंदी, संपादक : सुधीश पचौरी, अचला शर्मा, बी.बी.सी. वर्ल्ड, सर्विसेज।
10. पुरवाई पत्रिका, पृष्ठ 22, जनवरी-मार्च, 2007, लंदन से प्रकाशित
11. सौरभ पत्रिका, पृष्ठ 34, अक्टूबर-दिसंबर, 2004, अमेरिका से प्रकाशित।

❐

लखनऊ, भारत

dr.vinaysharma123@gmail.com

35 रेडियो रंगीला के कार्यक्रम और उनके द्वारा हिंदी भाषा का प्रचार

● *सुश्री शुभ्रा ठाकुर*

'सूचना, शिक्षा और मनोरंजन,
उन्नत भाषा, उन्नत ज्ञान
सामाजिक दायित्वों का निर्वहन,
रेडियो रंगीला का यही आह्वान'

भारत विविधताओं का देश है।

जन्म – 31 दिसंबर, 1970, छत्तीसगढ़
शिक्षा – हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर, बी.एड., पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्नातकोत्तर अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर शास्त्रीय संगीत में विद सुगम संगीत में गीतांजलि सीन्यर
सम्मान – विश्व नारी दिवस 2013 के अवसर पर 'आउटस्टैंडिंग मीडिया प्रोफ़ेशनल' सम्मान (माता कौशल्या देवी फाउंडेशन की ओर से)
अनुभव – आकाशवाणी एवं दूरदर्शन में कम्पेरिंग, उद्घोषणा, साक्षात्कार, रूपक, नाटक, कविता लिखने और भाग लेने का 20 वर्षों का अनुभव, पत्र-पत्रिकाओं में कविता एवं लेख का प्रकाशन, शैक्षणिक एफ़.एम. चैनल में असिस्टेंट स्टेशन मैनेजर, रेडियो रंगीला में सीन्यर मैनेजर, प्रोग्रामिंग और रेडियो जॉकी
संप्रति – रेडियो रंगीला 104.8 एफ.एम. में सी.ई.ओ/स्टेशन हेड

उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम, विविध धर्म, जाति, वेश-भूषा और संस्कृति, समूचा देश जैसे पूरे विश्व में सतरंगी छटा बिखेर रहा हो। यहाँ की संस्कृति और परंपराएँ अद्भुत हैं। ऐसे देश के हृदय-स्थल में है—छत्तीसगढ़। छत्तीसगढ़ राज्य का गठन सन् 2000 में हुआ। घनी आबादी, विशाल वन-क्षेत्र और खनिज संपदा, स्वादिष्ट व्यंजन, सुंदर आभूषण, लोक कला, गीत, संगीत और लोक वाद्य परंपरा, इन सभी से मिलकर बना है छत्तीसगढ़। छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर राजधानी होने के साथ ही एक मेट्रो सिटी का रूप लेती जा रही है। शहीद वीर नारायण सिंह अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट स्टेडियम, स्वामी विवेकानंद टर्मिनल, गुरु घासीदास संग्रहालय, विवेकानंद सरोवर, दूधाधारी मठ, महामाया मंदिर, गौरव पथ और तेज़ी से विकसित होता 'नया रायपुर', कितना कुछ है रायपुर में।

नए उद्योग, नए कारखाने, गगनचुंबी इमारतें, अंतरराष्ट्रीय स्तर के होटल और भी बहुत कुछ है यहाँ। आई.आई.एम, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, एन.आई.टी. और भी संस्थाओं के साथ यह शिक्षा का केंद्र भी बनता जा रहा है। मनोरंजन के लिए राजीव गांधी ऊर्जा पार्क, साइंस पार्क, नंदन वन, मैत्रेयी बाग, तेलीबांधा मरीन ड्राइव हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन केंद्र के अलावा यहाँ एक शैक्षिक एफ.एम. चैनल 'ज्ञानवाणी' और चार प्राइवेट एफ.एम. चैनल हैं। इनमें से एक है—'रेडियो रंगीला 104.8 एफ.एम'। सूचना, शिक्षा और मनोरंजन के साथ ही सामाजिक दायित्वों के निर्वहन को सर्वोच्च प्राथमिकता देने के उद्देश्य से सन् 2008 में 'रेडियो रंगीला' की शुरुआत हुई। विशुद्ध व्यावसायिक चैनल होते हुए भी रेडियो रंगीला में सामाजिक मुद्दों को प्राथमिकता देकर उठाया जाता है। खिचड़ी भाषा प्रयोग के दौर में भी अपने कार्यक्रमों में हिंदी भाषा को पूर्ण सम्मान दिया जाता है। इस बात का विशेष खयाल रखा जाता है कि रेडियो-भाषा के रूप में मानक हिंदी भाषा का प्रयोग ज़्यादा से ज़्यादा हो।

रेडियो रंगीला की पहचान, उसका जिंगल, जो हर घंटे रेडियो पर सुनाई देता है वह हिंदी में ही है—

''गम यहाँ खुशियाँ यहाँ, रंगों से रोशन जहाँ हर लम्हे का ले मज़ा, गुज़रा पल लौटे कहाँ, हार है, कभी जीत है, ज़िंदगी इक गीत है सुर सजे जिसमें सभी, सच्चा ये संगीत है रंगीला, रंगीला ये है ये रंगीला रंगीला, रंगीला ये है ये रंगीला''

इस जिंगल को अपनी आवाज़ दी है मशहूर पार्श्व गायक शान ने। इसमें 'रंगीला' का पूरा 'दर्शन' समाहित है।

'रेडियो रंगीला' के कार्यक्रमों की बात की जाए तो हर सुबह

इसमें 'भक्ति-संगीत' का प्रसारण होता है जिसका नाम है—'बिहनियाँ'। इसमें अलग-अलग दिनों के अनुसार भजन सुनाए जाते हैं। जैसे सोमवार को शिव जी के भजन, मंगलवार को हनुमान चालीसा और इसी तरह हर दिन के लिए भजन होते हैं, साथ ही 'गुरुबानी' और अन्य धर्मों की भी अच्छी और सार्थक बातें की जाती हैं। रेडियो रंगीला की शुरुआत के कुछ चर्चित कार्यक्रमों में सुबह का कार्यक्रम 'शुभ-मॉर्निंग', दोपहर का कार्यक्रम 'चुगली', रात का कार्यक्रम 'यारा सिली सिली' और 'रात बाकी बात बाकी' चर्चित रहे हैं।

विभिन्न क्षेत्रों में ऊँचा मुकाम हासिल करनेवाले या क्षेत्र-विशेष में विशिष्ट उपलब्धियाँ हासिल करनेवाले विशिष्ट लोगों की ज़िंदगी से जुड़े कुछ अनछुए पहलुओं को सामने लाने के उद्देश्य से आरंभ किए गए कार्यक्रम 'पहुना' की लोकप्रियता बुलंदियों पर रही है। साक्षात्कार पर आधारित इस कार्यक्रम का प्रसारण हर शनिवार रात 9 से 11 तक किया जाता है। यह कार्यक्रम भी हिंदी में ही होता है। इसमें हिंदी के साहित्यकारों के साक्षात्कार भी प्रमुखता से लिए गए हैं जिसमें सुप्रसिद्ध कवि पद्मश्री डॉ. सुरेंद्र दुबे, सुप्रसिद्ध कथाकार मालती जोशी, 'नैशनल बुक ट्रस्ट ऑव इंडिया' के संपादक (हिंदी) डॉ. ललित किशोर मंडोरा के नाम शामिल हैं। यही नहीं; सुप्रसिद्ध पंडवानी गायिका पद्मभूषण तीजन बाई, 'दाऊ मंदरा जी सम्मान' से सम्मानित और इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय से मानद डीलिट की उपाधि प्राप्त सुप्रसिद्ध लोक गायिका विदुषी ममता कंद्राकर, ब्राज़ीलियन गायिका कार्लिटा मोहिनी, पंजाबी गायक जसबीर जस्सी, पद्मश्री डॉ. ए.टी. दाबके और अन्य महत्वपूर्ण हस्तियों ने अपना साक्षात्कार हिंदी में ही दिया है। कुशाभाऊ ठाकरे, पत्रकारिता विश्वविद्यालय के कुलपति सच्चिदानंद जोशी और इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. एस. के. पाटिल एवं अन्य विशिष्ट जनों के साक्षात्कार हिंदी में ही हैं।

हर शाम ईश्वर के स्मरण के साथ ही अपने जीवन में आस्था का आलोक जगाने 'दीया-बाती' की जाती है। शाम 7 बजे 'दीया-बाती' के साथ लोग अपने घर, दफ़्तर या दुकानों में भजनों को सुनकर रेडियो रंगीला के साथ ईश्वर की आराधना करते हैं। हर शाम 'तुलसी चौरा' में 'दीया' जलाकर 'दीया-बाती' करना यहाँ की परंपरा है। इसका पूरा ध्यान रखता है—'रेडियो-रंगीला' इसीलिए यह सबकी पहली पसंद है।

रेडियो-रंगीला का पूरा प्रयास होता है कि हमारे कार्यक्रमों के प्रोमो हिंदी में ही बनें। ज़्यादातर कार्यक्रमों के नाम या सामाजिक उद्देश्य को लेकर चलाए जा रहे अभियान या गतिविधियों के नाम भी हिंदी में ही रखने का पूरा प्रयास किया जाता है। उदाहरण के तौर पर विश्व नारी दिवस के अवसर पर नारी-सशक्तिकरण को साकार करनेवाली विभिन्न क्षेत्र की नारियों के सम्मान कार्यक्रम का नाम 'प्रेरणा' है। 'बाल दिवस' के अवसर पर 'रंगीला बच्चा पार्टी', शिक्षक-दिवस के अवसर पर ज्ञान के प्रकाश से जीवन को रौशन करनेवाले गुरुजनों के सम्मान के लिए 'तस्मै श्री गुरवे नमः', पंद्रह अगस्त में 'सद्भावना के पंख—राष्ट्र के नाम एक संदेश' के तहत लोगों में देशभक्ति का जज़्बा पैदा करना, होली में 'हास्य कवि गोष्ठी' और 'महामूर्ख सम्मेलन' ये सब रेडियो-रंगीला के विविध रंग, विविध आयाम हैं।

गरमी के दिनों में पानी बचाने के संकल्प को लेकर शुरू किए गए अभियान का नाम 'जीवन अमृत—बूँद-बूँद में ज़िंदगी' है जिसके तहत जहाँ कहीं भी व्यर्थ पानी बहता दिखता है, नलों को टोंटियाँ नहीं होतीं श्रोता बताते हैं और रेडियो-रंगीला का प्रयास होता है उस बहते हुए पानी को रोकने का उपाय करना और बिना टोंटीवाले सार्वजनिक नलों में टोंटियाँ लगवाना। इस अभियान को भी काफ़ी सराहना मिलती है। 'मातृ-दिवस' पर श्रोताओं से 'माँ' शीर्षक पर कविता, कहानी या चित्र मँगाए जाते हैं। श्रोता भी बढ़-चढ़कर इसमें हिस्सा लेते हैं और अच्छी कविता, कहानी और चित्र को पुरस्कृत भी किया जाता है।

विभिन्न पर्व-त्योहारों पर भी रेडियो-रंगीला अपनी अलग ही शैली में लोगों को सामाजिक मुद्दों से जोड़ता है और कुछ सार्थक करने के लिए प्रेरित करता है। इस वर्ष दीप-पर्व दीपावली में 'तमसो

मा ज्योतिर्गमय' के तहत 'वृद्धाश्रम' में रहनेवाले बुजुर्गों, माँ-बाप के प्यार से वंचित 'अनाथालय' में रहनेवाले बच्चों के लिए थोड़ा वक्त निकालकर रेडियो रंगीला ने उनके साथ खुशियाँ बाँटीं, दुख-सुख बाँटे। यकीनन उनके चेहरे पर अब मुसकुराहट बनी रहेगी। यातायात-व्यवस्था बनाए रखने के लिए तैनात, सरदी, गरमी या बारिश या किसी त्योहार में भी अपनी 'ड्यूटी' निभानेवाले सिपाहियों का मुँह मीठा कराया और 'दीपावली' की खुशियाँ बाँटी। उनकी ज़िंदगी को अपनेपन से रौशन किया।

बात 'निर्भया कांड' की हो या रूढ़िवादी मानसिकता की या फिर किसी भी सामाजिक मुद्दे की रेडियो रंगीला समाज को जाग्रत् करने का प्रयास करता रहा है। प्राकृतिक रंगों से होली खेलने के लिए प्रेरित करने, पॉलीथीन के खिलाफ़ जंग या कभी पटाखे न फोड़ने की अपील रेडियो-रंगीला हमेशा से करता रहा है, पर्यावरण प्रदूषण दूर करने, हरियाली को बढ़ावा देने के लिए अतिथियों को एक पौधा उपहार देने की परंपरा कायम रखने की वजह से ही वाय.आर.एम. फाउंडेशन द्वारा इसे 'इको फ्रेंडली' (पर्यावरण हितैषी) रेडियो स्टेशन का सम्मान भी मिल चुका है।

स्थानीय बोली 'छत्तीसगढ़ी' और हिंदी भाषा के बीच एक सेतु स्थापित करने के उद्देश्य से सुबह के कार्यक्रम के अंतर्गत 'शुद्ध देसी छत्तीसगढ़ी' कार्यक्रम का प्रसारण किया जाता है जिसमें हिंदी के किसी वाक्य का अनुवाद छत्तीसगढ़ी में करने के लिए एक वाक्य दिया जाता है और श्रोता सीधे स्टूडियो में कॉल करके जवाब देते हैं।

जैसे— हिंदी - अब आप क्या करोगे ?
छत्तीसगढ़ी - अब आपमन का करहू।
हिंदी - कौन सी सब्ज़ी खाए ?
छत्तीसगढ़ी - का साग खाएस ?

दोपहर के कार्यक्रम में विविध व्यंजन बनाने की विधि के साथ छत्तीसगढ़ के खास व्यंजन बनाने की विधि बताई जाती है। बदलते फ़ैशन की बात, सौंदर्य और स्वास्थ्य से जुड़ी बातें भी होती हैं। शाम के शो में नई-नई तकनीकों, मोबाइल, गाड़ियों, घड़ियों, कंप्यूटर, फेसबुक, ट्विटर की बातें होती हैं।

फ़िल्म जगत की बातें हो या टेलीविज़न की, सब कुछ हिंदी में बड़ी खूबसूरती के साथ प्रस्तुत किया जाता है। अपने शहर, राज्य या देश से जुड़े सवाल भी हिंदी में होते हैं, साथ ही छत्तीसगढ़ की कला, संस्कृति, तीज-त्योहार की बातें भी होती हैं।

रात के कार्यक्रम 'रात बाकी बात बाकी' में रिश्तों के ताने-बाने से जुड़ी कहानी सुनाई जाती है। श्रोताओं से आमंत्रित कहानियों का प्रसारण भी किया जाता है। इसी कार्यक्रम में अगर आप अपने मन की बात किसी से कहना चाहते हैं, किसी को धन्यवाद देना चाहते हैं या अपनी किसी गलती के लिए किसी से माफ़ी माँगना चाहते हैं तो संदेश के माध्यम से या कॉल करके अपनी बात कह सकते हैं। यह कार्यक्रम काफ़ी लोकप्रिय है।

हिंदी को लेकर भी कुछ मनोरंजक सवाल श्रोताओं से पूछे जाते हैं। जैसे—हिंदी गानों में लोकोक्ति और मुहावरों के प्रयोग को लेकर सवाल, ऐसे कई गाने हैं—

जैसे—

1. झूठ बोले कौआ काटे
2. टके सेर भाजी टके सेर खाजा
3. आजकल पाँव ज़मीन पर नहीं पड़ते मेरे (पाँव ज़मीन पर न पड़ना)
4. जंगल में मोर नाचा, किसी ने न देखा

ऐसे कई गाने हैं जिनमें लोकोक्तियों, मुहावरों का प्रयोग बड़ी खूबसूरती से किया गया है।

हिंदी की पहेलियों को लेकर भी एक कार्यक्रम बनाया गया जिसमें रेडियो पर ही श्रोताओं से पहेलियाँ पूछी जाती थीं जिनका उत्तर श्रोताओं को देना होता था और फिर जो जवाब आता, उस शब्द से एक गाना भी लोगों को गाना होता था। यह खेल भी श्रोताओं द्वारा काफ़ी पसंद किया गया।

स्वास्थ्य से जुड़ी बातों को लेकर डॉक्टर से भेंटवार्ता का कार्यक्रम 'हैलो जिंदगी' का प्रसारण प्रत्येक रविवार को सुबह 9 बजे किया जाता है। इसमें श्रोता अपने स्वास्थ्य से जुड़े सवाल भी कर सकते हैं। सेहत की बातें इसमें होती हैं, ये भी श्रोता काफ़ी पसंद करते हैं।

आज के दौर में जब रेडियो जॉकी 'हिंग्लिश' में बात करते हैं, यह मेरा अपना अनुभव रहा है कि हिंदी में प्रस्तुत किए जानेवाले कार्यक्रम 'चुगली' के कुछ श्रोता कहते थे, ''आपकी हिंदी सुनकर हम हिंदी सीख रहे हैं।'' यह मेरे लिए उत्साहवर्धक रहा।

अभी हाल ही में 12 से 14 दिसंबर तक यहाँ 'रायपुर साहित्य सम्मेलन' का आयोजन किया गया जिसमें पूरे देश से आए साहित्यकारों को देखने-सुनने का अवसर मिला। हिंदी साहित्य की गंगोत्री में साहित्यकारों, बुद्धिजीवियों और कलाकारों का समागम मन को असीम शांति दे गया और स्वयं को ज्ञान की गंगा में समाहित करने के लिए प्रेरित कर गया। रेडियो रंगीला ने इस पूरे कार्यक्रम के विषय में, विभिन्न मंडपों के विषय में और साहित्यकारों के विषय में अपने श्रोताओं को लगातार जानकारी दी। भविष्य में भी ऐसे कार्यक्रमों को प्रमुखता दी जाएगी।

'रेडियो रंगीला' रायपुर का अपना 24 घंटे सेवा देनेवाला स्थानीय एफ़.एम. चैनल है जो अभी केवल रायपुर में ही है। एम.डी. श्री आफ़ताब सिद्धिकी, डाइरेक्टर श्री उदय शंकर कुमार एवं पंकज चोपड़ा जी की प्रेरणा, निर्देशन एवं सहयोग से रेडियो रंगीला नित नए आयाम स्थापित कर रहा है। यहाँ के सदस्य छत्तीसगढ़, बिहार, बंगाल, पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, गुजरात और अन्य प्रदेशों का प्रतिनिधित्व करते हैं; विभिन्न जाति-धर्म का प्रतिनिधित्व करते हैं, यूँ समझ लीजिए एक छोटा-सा भारत ही बसता है 'रेडियो-रंगीला' में।

इसके कार्यक्रम, इसके प्रस्तोता, इसके अभियान और सुमधुर गीत विविध रंगों को अपने भीतर समेटे सुख-दुख से परिचय कराते हैं और सबको अपना बना लेते हैं। यही रेडियो-रंगीला का दर्शन है। भविष्य में छत्तीसगढ़ समेत देश के अन्य स्थानों पर इसके विस्तार की संभावना है, प्रयास जारी है।

अपने नाम के अनुरूप रेडियो-रंगीला 104.8 एफ.एम. रायपुर और उसके आसपास के क्षेत्रों में अपने विविध रंग बिखेर रहा है और सुमधुर गीतों की सौगात दे रहा है।

❑

रायपुर, भारत
shubra@rangilfm.com

36 हिंदी-कंप्यूटिंग अनुवाद-तकनीक व संसाधन

• डॉ. कविता वाचक्नवी

यह दोहराने की आवश्यकता नहीं कि अनुवाद दो भाषा-समाजों के वाङ्मय, साहित्य, ज्ञान-विज्ञान, भाषिक-व्यवहारों आदि-आदि को भाषा की सीमा व बंधन से मुक्त कर परस्पर एक दूसरे के निकट लाने/ले जाने का कार्य करता है। आज जब समूचा विश्व एक विश्व-ग्राम (ग्लोबल विलेज) में परिणित हो चुका है, बाज़ार की शक्तियों ने भौगोलिक सीमाएँ पार कर ली हैं, आवागमन तीव्रतर, सुगम व अत्यधिक हो चुके हैं, कार्य-व्यापार आदि की नियुक्तियों के लिए देश की सीमाओं का बंधन नहीं रहा, बहुभाषिकता अनिवार्यता बन चुकी है, सांस्कृतिक आदान-प्रदान कई गुना अधिक बढ़ चुका है और इंटरनेट व सोशल नेटवर्किंग के कारण घर बैठे भी यह संभव हो चुका है। पत्रकारिता का लगभग 40 प्रतिशत हिस्सा इ-पत्रकारिता ने ले लिया है और शेष प्रिंट पत्रकारिता भी अधिकांश सामग्री के लिए लगभग पूरी तरह तुरत अनुवादों और उसके चलते नेट पर ही निर्भर है। ज्ञान-विज्ञान तो भूगोल, भाषा, रंग, नस्ल, आयु, क्षेत्र, लिंग, समाज आदि सभी सीमाओं से परे पहुँचकर सार्वजनीन हो गया है और अपरिहार्य भी, ऐसे में सारा विश्व कंप्यूटर व तकनीक (मोबाइल आदि भी) से जुड़े सभी अनुप्रयोगों को अधिकाधिक भाषा समाजों के लिए सुबोध और सुगम्य बनाने के लिए तत्पर है और तकनीक पर विश्वमानव की निर्भरता निरंतर तीव्र गति से बढ़ती जा रही है।

जन्म - अमृतसर (भारत)।

पंजाबी, हिंदी, संस्कृत, मराठी और अंग्रेजी भाषा की जानकार तथा संस्कृत में शास्त्री व हिंदी के एम.ए. के अतिरिक्त, समाज-भाषा विज्ञान तथा काव्यालोचना पर क्रमशः एमफ़िल और पीएचडी।

पत्र-पत्रिकाओं, संकलनों, अंतर्जाल पर संकलित और प्रकाशित रचनाओं के अलावा प्रकाशित पुस्तकें हैं, 'महर्षि दयानंद और उनकी योग निष्ठा' [शोध,1984], 'मैं चल तो दूँ' [कविता, 2005], 'समाज भाषाविज्ञान : रंग शब्दावली : निराला काव्य' [शोध-समीक्षा, 2009] 'तथोकविता की जातीयता' [शोध-समीक्षा, 2009]। कहानी, कविता, साक्षात्कार, स्त्री-विमर्श आदि के अतिरिक्त भाषा प्रौद्योगिकी विषयक पुस्तकें प्रकाशनाधीन हैं। आपके द्वारा संपादित ग्रंथ 'स्त्री सशक्तीकरण के विविध आयाम' [2004] बहुचर्चित रहा है।

गत लगभग 6-7 वर्षों से कंप्यूटर पर हिंदी व देवनागरी के प्रयोग से जुड़े तकनीकी व प्रायौगिक पक्षों पर केंद्रित अनेकानेक उल्लेखनीय व महत्वपूर्ण योजनाओं को साकार करने के अभियान में रत। अनेक सारस्वत सम्मानों और पुरस्कारों से सम्मानित।

तकनीक पर बढ़ी यह निर्भरता तकनीक से जुड़े प्रयोगों के सुगमतम होने के मूलमंत्र को केंद्र में रखकर चलती है। कार्यों व जीवन आदि को सुगम बनाना तकनीक का मुख्य उद्देश्य होता है, अतः सुगमता तकनीक का मुख्य कारण भी होती है, उद्देश्य भी व साथ ही आधार भी। तकनीक को क्लिष्ट बनाकर सुगमता की बात नहीं की जा सकती। इस सुगमता को साधने के लिए प्रत्येक व्यक्ति की अपनी भाषा में इसका उपलब्ध होना तकनीक की अनिवार्यता हो जाती है। सूचना क्रांति, तकनीक और वैज्ञानिक युग की माँग के अनुरूप तकनीक के उद्योग में लगे लोग भी विविध भाषा-समुदायों के हैं। अतः विज्ञान व तकनीक पर जहाँ विश्व-समाज की निर्भरता बढ़ना तकनीक के बहुभाषिकतापूर्ण होने का कारण है, वहीं तकनीक के माध्यम से अधिकाधिक कार्य-व्यवहारों को संपन्न कर लेने के लिए तकनीक का बहुभाषिकतापूर्ण होना भी अनिवार्य है और तकनीक निर्माण के कारण निकट आए विश्व-समाज की बहुभाषिकता को आड़े न आने देना भी उसकी अनिवार्यता है।

कंप्यूटर अनुप्रयोगों से जुड़े लोग तकनीक के माध्यम से तकनीक व शेष सभी सामाजिक आदान-प्रदान व कार्य-व्यापारों को

साधने के उपायों में लगे हैं। अनुवाद उनमें सबसे बड़ा माध्यम व प्रयोग है। इस पद्धति से होनेवाले अनुवादों को तकनीकी, मशीनी या कंप्यूटर अनुवाद कहा जाता है। इसका एक पक्ष बहुत सुखद है कि तकनीकी अनुवाद की अधिकांश अड़चनों को लगभग पूरा कर लिया गया है और पारिभाषिक, वैज्ञानिक, कार्यालयीय, तकनीकी आदि क्षेत्रों का अनुवाद कंप्यूटर द्वारा करना एक अत्यंत सहज, सरल व लगभग बहुत बड़े प्रतिशत तक शुद्ध रूप से संभव हो चुका है। इसका मूल कारण यह है कि अनुवाद के लिए बने कंप्यूटर प्रोग्राम शब्दानुवाद की विधि से कार्य करते आए हैं, अत: शब्द-शब्द अनुवाद तो लगभग एकदम शत-प्रतिशत शुद्ध कर लिया जा सकता है किंतु पाठानुवाद के क्षेत्र में वाक्य संरचनाओं में अंतर आदि कई कारणों से ये अनुवाद कंप्यूटर प्रोग्राम द्वारा करना सरल नहीं होता। इसलिए इनमें त्रुटियाँ होती हैं। जिस पाठ में जितनी तकनीकी अथवा पारिभाषिक शब्दावली होती है, कंप्यूटर के लिए वह पाठ अनूदित करना उतना अधिक सरल होता है।

जो पाठ जितना अधिक साधारण व लोक की भाषा के निकट होता है उसका अनुवाद उतना कठिन। यद्यपि इनमें सुधार के लिए बड़ी-बड़ी सॉफ़्टवेयर कंपनियाँ उक्त भाषासमाज के प्रयोक्ताओं के भाषा-व्यवहारों का अध्ययन कर तदनुसार संचालित होनेवाले संसाधनों के विकास और निर्माण में निरंतर जुटी हैं; साथ ही ऐसे संसाधनों के विकास का ज़िम्मा तत् तत् भाषा के संसाधन-विशेषज्ञों को ही सौंपा जाता है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर विविध भाषा-समाजों के भाषा व्यवहारों के नमूने एकत्र किए जाते हैं किंतु भारत जैसे बहुभाषी देश (जिसके अंतर्गत अनेकानेक बोली समुदाय व उनकी विविधतापूर्ण शब्दावली का प्रयोग भी है) के व्यवहार व अभिव्यक्ति की भाषा को मशीनी अनुवाद के माध्यम से पूरी तरह साध पाना बहुत दुष्कर कार्य है। यों भी भारतीय भाषाओं की वाक्य संरचना में व्याकरणिक ईकाइयों की अंग्रेज़ी से स्थानभिन्नता को भी इसका बड़ा कारक मानी जाती है; यद्यपि एक और बड़ा कारण भारतीय भाषाओं की शब्दावली में उन शब्दों की बहुलता भी है जो अनेकार्थी व अनेकार्थस्तरी होते हैं। शब्दों के अर्थ उनके पारस्परिक सहसंबंधों आदि से भी बदल जाते हैं। ऐसे में कंप्यूटर के लिए यह पता लगाना बहुत दुष्कर होता है कि लेखक अथवा वक्ता ने किस शब्द का किस निहितार्थ के लिए प्रयोग किया है। इसलिए साहित्यिक व बोलचाल के अनुवादों में तकनीक व कंप्यूटर द्वारा किए गए अनुवादों की सफलता/शुद्धता का प्रतिशत भारतीय भाषाओं के संदर्भ में कुछ कम रह जाता है।

कंप्यूटर अनुवादों की दिशा में यद्यपि अभूतपूर्व क्रांति हुई है, अनुवादों को साध्य बनानेवाले संसाधनों एवं सामग्री की इंटरनेट पर दिनों-दिन बढ़ती प्रचुरता के चलते हिंदी के अनुवादक इंटरनेट के माध्यम से इन दिनों वास्तव में घर बैठे-बैठे आठ-दस दिन में 15 से 25 हज़ार तक कमा लेने में समर्थ हैं, सक्षम हैं, सफल हैं। 1947 में प्रिंस्टन विश्वविद्यालय, न्यू जर्सी, अमेरिका में कंप्यूटर द्वारा कोश के अनुवाद के लिए विकसित कोड से प्रारंभ इस तकनीक द्वारा यह अजूबा कैसे संभव हुआ, इसे लिखने की अपेक्षा यहाँ यह बताना अनिवार्य है कि कंप्यूटर अनुवाद की श्रेणी में आज कौन-कौन से सहायक उपकरण (टूल्ज़ व संसाधन) कार्य करते हैं।

सर्वप्रथम यह जान लेना अनिवार्य है कि भारतीय लिपियों के लिए भी कंप्यूटर पर यूनिकोड आने, इस्की कोडिंग प्रणाली के लागू होने से लिपि को समझने की मशीन की क्षमता बढ़ गई और इसी कारण भाषा को पहचानकर बिना स्रोतभाषा की कमांड दिए भी वह उसे पाठक की मनोवांछित भाषा में अनूदित करने की दक्षता पा गया। भारतीय भाषाओं में परस्पर मशीनी अनुवाद के लिए बरसों पहले 'अनुसारक' आने से एक भाषा से दूसरी भाषा के मध्य यद्यपि अनुवाद के क्षेत्र में क्रांति हुई किंतु उसका क्षेत्र बहुत सीमित था क्योंकि प्रथम तो वह भारतीय भाषाओं की संरचना को केंद्र में रखकर बना था और दूसरे वह केवल तकनीकी विषयों के अनुवाद का उपकरण था। पश्चात भारत सरकार के सहयोग से सीडैक का मंत्र उपकरण आया। यद्यपि यह उतने समुन्नत भले ही नहीं थे, किंतु भारतीय भाषाओं को मशीनी अनुवादों पर साधने की दिशा में होनेवाले राष्ट्रीय प्रयासों में इनकी भूमिका असंदिग्ध है।

एक सर्वाधिक महत्व की बात यहाँ यह जोड़ना अनिवार्य है

कि कुछ समय पूर्व तक अन्य भाषा के रूप में हिंदी का अध्ययन करनेवाले विद्यार्थी के कार्यक्षेत्र अध्यापक, अनुवादक (बहुधा साहित्यिक अथवा पाठ्य-सामग्री से लेकर दस्तावेज़ों के) आदि बनने तक के लक्ष्यों तक सीमित थे किंतु आधुनिक परिदृश्य व नवीनतम आवश्यकताओं के समय एक ही भौगोलिक व संवैधानिक क्षेत्र में विविध भाषा समुदायों की उपस्थिति व उनसे जुड़े अनेकानेक घटनाक्रमों के चलते विविध देशों में अन्य-भाषा समुदायों से जुड़ी भाषाई आवश्यकताओं व संबंधित अध्ययन क्षेत्रों का विस्तार हुआ है। अत: वस्तु के रूप में भाषा के अध्ययन की माँग बढ़ने के साथ-साथ विविध भाषा समुदायों से जुड़ी विविध क्षेत्रों की अभिव्यक्तियों के अनुवाद की माँग भी बढ़ी है। अन्य भाषा के अध्येता के लिए वर्तमान वैश्वीकरण में संकुचित हुए विश्व-ग्राम की व्यावसायिक, संवैधानिक, सामाजिक व संरक्षण संबंधी अपरिहार्यताएँ उक्त तथ्य का कारण बनी हैं। ये ही उसके भाषा-शिक्षण की विधि व इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की अपरिहार्यता का भी निर्धारण करती हैं।

अन्य भाषा के रूप में हिंदी के अध्ययन के पक्ष में विकसित हुई सामाजिक-वैश्विक स्थितियों का एक पक्ष यह भी है कि बाज़ार का हित भाषाओं की संख्या कम होने में होता है। कम होना ही नहीं अपितु उन भाषाओं के शब्दों के कम से कम विकल्प और पर्यायवाची उसके हित में होते हैं। इन्हीं शक्तियों के प्रभाव में भाषा के अनेकानेक शब्द विलुप्त होते चले जा रहे हैं व आधुनिक समाज का शब्द-भंडार कम होता चला जा रहा है। दूसरी ओर, नए संसाधनों व कार्यक्षेत्रों से जुड़े नए शब्द शब्दावली में आ रहे हैं। कह सकते हैं कि व्यावसायिकता भाषा के सामाजिक व सांस्कृतिक पक्ष को संकुचित कर रही है। भाषाओं की विलुप्ति का संकट इसी का परिणाम है। ऐसे में युक्ति के रूप में इन आधुनिक संसाधनों को बाज़ार व संसाधनों से जुड़ी शब्दावली से इतर अन्य क्षेत्रों की भाषा व प्रयुक्तियों को बचाने के काम में प्रयोग करना ही संभवत: इस क्षरण-प्रक्रिया का तोड़ है। भले ही यह कोई विश्वसनीय वैज्ञानिक निष्कर्ष नहीं माना जाता होगा किंतु डिजिटल संसाधनों, संचार माध्यमों, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया व इन सबके द्वारा भाषा व लिपियों के अधिकाधिक पक्षों का बहुतायत संयोजन व प्रयोग एक बड़ी आशा जगाता है। अत: भाषा व उससे जुड़े क्षेत्रों को बाज़ार की निर्भरता व अपेक्षाओं की अनुकूलता के साथ ही विकसित करना होगा। इस अनुकूलन के लिए भी कंप्यूटर की तकनीकों का प्रयोग भाषा-प्रौद्योगिकी का वह अस्त्र बन रहा है जो सामाजिक व सांस्कृतिक भाषा-रूपों को बचाए रखने की युक्ति हो सकती है। रोज़गार की अपार संभावनाओंवाले इस क्षेत्र में हिंदी के लिए अभी भी लंबा मार्ग तय करना शेष है।

भाषा समाजों के पारस्परिक आदान-प्रदान के अतिरिक्त इन अनुवादों का उद्देश्य व्यापार और समुन्नत संसाधनों के विश्व बाज़ार में उपभोक्ता की अपनी भाषा में उसके अधिकतम निकट जाना भी है और आनेवाली पीढ़ियों को बहुभाषी बनाना भी। बहुभाषी बनाने का यह क्रम सामाजिकता की अनिवार्य शर्त बनता जा रहा है । एक उदाहरण से स्पष्ट होगा। कुछ वर्ष पूर्व तक (जब ब्रिटेन के स्कूलों में प्रारंभिक स्तर पर हिंदी व ब्रिटेन से इतर दूसरे देशों की शेष भाषाएँ नहीं पढ़ाई जाती थीं) भारत अथवा अन्य अंग्रेज़ीतर देशों से व्यापार या सेवाकार्यों के लिए ब्रिटेन आए परिवारों के ब्रिटेन में जन्मे बच्चे भी अंग्रेज़ी न तो जानते थे न समझते थे क्योंकि घरों में अंग्रेज़ी का वातावरण था ही नहीं। वे बच्चे भाषा की बाधा के कारण विद्यालयों में भी चुप व अलग-थलग रहते रहे व इस कारण उपेक्षित भी। इस उपेक्षा व संवादहीनता ने उनमें आक्रोश व वैमनस्य भरना शुरू कर दिया जिनके परिणामस्वरूप उनके परिवारों व शिक्षा-संस्थाओं में उनकी व्यवहार-संबंधी समस्याओं का उठ खड़ा होना स्वाभाविक था। देश में अपराधों के आँकड़े बनानेवाली संस्थाओं ने अपराधियों व समस्याग्रस्त व्यक्तित्वों के आँकड़ों का विश्लेषण किया तो अपराध आदि के क्षेत्र में ऐसी पीढ़ी की भागीदारी की भूमिका स्पष्ट दिखाई दी। समाज-व्यवहार, मनोविज्ञान आदि की निगरानी करनेवालों ने स्थिति की भयावहता को पकड़ा तो मातृभाषा की शिक्षा की अनिवार्यता को रेखांकित करना पड़ा। अत: इस प्रकार ब्रिटेन के स्कूलों में मातृभाषा को भी एक विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा। इसे बच्चों

के मौलिक मानवाधिकारों के रूप में मान्यता दी गई। पाठ्यसामग्री का निर्माण कई बरस चलता रहा। आज भी इसीलिए यहाँ स्कूलों के पाठ्यक्रमों में अधिकांश भाषा समुदायों के बच्चों के लिए उनकी भाषा के अध्ययन का प्रावधान भी किया गया है।

पुस्तकों को अनूदित करवाकर पाठ्यसामग्री तैयार होती है। देश की आंतरिक सुरक्षा व शांति के लिए यहाँ बसे विविध भाषा समुदायों की समस्याओं व क्रियाव्यवहारों को समझा व उसकी निगरानी भी की जाती है, देश में आने व रहनेवाले प्रत्येक नागरिक तक उसके नागरिक अधिकारों से जुड़े व जीवन के अन्य दूसरे कार्यव्यवहार आदि की जानकारी तत्-तत् भाषा में दी जाने की अनिवार्यता भी देश के आंतरिक विकास की अनिवार्यता बन गई है। अत: जानकारियों व सूचनाओं के बहुभाषी होने के कारण देश में बहुभाषिकता मूलत: अब अनिवार्यता है। इन सारे कार्यकलापों के लिए अनुवाद ही एक उपाय है जो पूरे देश के नागरिकों को एक सूत्र में एक समान जोड़े रखने का काम करता है। व्यावसायिक व तकनीकी उद्देश्यों से इतर उद्देश्यों के लिए किया जानेवाला यह सारा अनुवाद-कार्य बहुधा कंप्यूटर द्वारा ही संपन्न होता है। अनुवादक भी रखे जाते हैं किंतु मूलत: वे अनुवाद-कार्यों की निगरानी का काम करते हैं और भाषा-संरचनाओं में भेद के चलते सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों के अनुवादों की शुद्धता में हो जानेवाली त्रुटियों के निवारण का प्रबंध भी। यह एक छोटा-सा उदाहरण है जो किसी एक देश की एक व्यवस्था के लिए अनुवादों की अनिवार्यता दिखाता है। इस व ऐसी अनेक अनिवार्यताओं को सिद्ध करने का कार्य करती है : अनुवादों की तकनीक व उससे जुड़े संसाधन।

कंप्यूटर-अनुवाद के संसाधन

• हिंदी से पंजाबी अनुवाद एवं लिप्यन्तरण (http://h2p.learnpunjabi.org/default.aspx)—यह हिंदी से पंजाबी के मध्य सभी प्रकार के अनुवादों का ऐसा समुन्नत उपकरण है कि यदि किसी हिंदी वेबसाइट का पता इसमें दे दिया जाए तो यह उस पूरी वेबसाइट को एक झटके में पंजाबी में रूपान्तरित करके प्रस्तुत कर देता है। यदि किसी के पास कोई हिंदी फाइल है तो उसे यहाँ अपलोड करके पूरा का पूरा पंजाबी में बदला जा सकता है और यदि पाठ को अनूदित करना है तो वह पाठ यहाँ दिए गए स्थान पर भर देने से तुरंत पंजाबी में अनूदित होकर मिल जाता है।

• गूगल अनुवाद (ऑनलाइन)—इसमें हिंदी <=> अंग्रेज़ी अनुवाद सहित हिंदी<=> अनेक विदेशी व भारतीय भाषाओं की भी सुविधा उपलब्ध हो गई है। अब तक सर्वोत्तम साधन था (http://translate.google.com/)

• बेबीलोन—इसमें हिंदी एवं अन्य भाषाओं के बीच अनुवाद की सुविधा उपलब्ध है। (http://translation.babylon.com/)

• वर्ल्डलिंगो (ऑनलाइन अनुवाद सुविधा)
(http://www.wordlingo.com/hi/products_services/worldlingo_translator.html)

• Language weaver
(http://www.sdl.com/products/automated-translation/)

• आई.आई.टी. कानपुर की आंग्ल-हिंदी (online)—अंग्रेज़ी से हिंदी अनुवाद सहाय्य सिस्टम (काम नहीं कर रहा) (http://translate.ildc.in:8080/jsp-examples/work/tsswNew.do)

• शक्ति हिंदी (online, experimental, from IIT Hydera-bad) काम नहीं कर रहा (http://shakti.iiit.ac.in)

• मंत्र MANTRA : Machine Assisted Translation (कुछ समस्या में है)

• Matra यह केवल अंग्रेज़ी से कार्यालयीय हिंदी (http://202.141.152.9/matra/index.jsp)

• पंजाबी से हिंदी अनुवाद एवं लिप्यंतरण (http://www.jgmatrix.com/)

• StarDict Free Online Translation (http://www.stardict.org/)

• Phonetic Translation Library, Open source

Platform-compatible Transliteration - भारतीय भाषाओं के लिए ध्वन्यात्मक अनुवाद लाइब्रेरी (http://phtranslator.source forge.net/)

• बिंग Bing (माइक्रोसॉफ़्ट का) (http://www.bing.com/translator) गूगल के पश्चात सर्वाधिक शक्तिशाली व समर्थ अनुवाद इंजिन

• माइक्रोसाफ़्ट ट्रांस्लेटर (https://datamarket.azure.com/dataset/1899a118-d202-492c-aa16-ba21c33c06cb) माइक्रोसॉफ़्ट के नवीनतम ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज़-8 ने विंडोज़ स्टोर में अभी-अभी माइक्रोसॉफ़्ट ट्रांस्लेटर++ नाम से एक ऐसा अनुवाद इंजिन नि:शुल्क डाउनलोड के लिए उपलब्ध करवाया है जिसकी क्षमता प्रयोक्ताओं द्वारा अब तक के सर्वाधिक शक्तिशाली गूगल अनुवाद इंजिन से भी अधिक पाई गई है। यह Microsoft Translator की API पर आधारित है जो विभिन्न सॉफ़्टवेयरों/वेबसाइटों पर उपयोग के लिए Cloud पर भी उपलब्ध है। प्रति माह 20,00,000 (बीस लाख वर्णों या बाइट्स) तक नि:शुल्क है। इससे ज़्यादा उपयोग पर प्रभार लगता है जो $40 से लेकर $6000 तक है। इसमें पाठ की पूरी फाइल अपलोड करने की सुविधा भी है।

ध्यान देने की बात है कि कंप्यूटर अनुवाद के लिए आवश्यक सहयोगी संसाधनों की उपलब्धता पर ही अनुवाद का क्षेत्र, रूप, गति और स्तर निर्भर करता है। कंप्यूटर-अनुवाद का वस्तुत: आशय बहुत सारे संसाधन-समुच्चय से होता है जो निम्नवत हो सकते हैं/होते हैं—

• वर्तनी शोधक (Spell checkers) word processing software अथवा add-on programs के रूप में

• व्याकरण शोधक (Grammar checkers)

• पारिभाषिक शब्दों अथवा पाठ के डेटाबेस से जुड़कर स्वचालित खोज परिणाम देनेवाली व्यवस्था का प्रबंधन (Terminology managers)

• इ-शब्दकोश (Electronic Dictionaries)

• विविध विषयों की पारिभाषिक शब्दावलियों का समवेत डेटाबेस (Terminology databases) (कंप्यूटर में अथवा इंटरनेट द्वारा प्रयोग के लिए उपलब्ध)

• प्रयोक्ता को पूर्व अनूदित पाठ या संबंधित पाठ खोजकर उपलब्ध करवा सकनेवाला उपकरण (full text search tools)

• अनुवाद करने पर भी जब अर्थसंप्रेषण अबाध व स्पष्ट न हो तो संबंधित पाठ के विविध संदर्भों सहित पाठ के विविध उदाहरणों का तुरंत साथ ही उल्लेख करनेवाला उपकरण (Concordancers)

• पाठ की स्रोत भाषाओं व लक्ष्य भाषाओं की विविध भाषिक संरचनात्मक इकाइयों का युद्धस्तर पर एक साथ वर्गीकरण करने की क्षमता से युक्त उपकरण जो विविध इकाइयों के प्रयोग को समझकर नियम स्मरण रख सके व अनुवाद में उन इकाइयों का तदनुकूल नियोजन कर सके ताकि प्रत्येक अनुवाद लक्ष्य भाषा के मुहावरे के अनुकूल हो सके। संरचनात्मक भाषिक इकाइयों के सहसंबंधों के व्याकरणिक रूप, पाठचयन की न्यूनतम बारंबारता व अभ्यास से स्वत: उसी प्रकृति में लक्ष्य भाषा में लाए । (Bitext)

• एक अथवा एकाधिक स्रोत भाषाओं के विशाल पाठ को भिन्न-भिन्न लक्ष्य-भाषाओं में अलग-अलग क्षेत्रों अथवा एक ही क्षेत्र में विविध लक्ष्य-भाषाओं के प्रयोक्ता-संसाधनों पर एक साथ अनूदित कर सकने की क्षमता व उनका समानांतर समेकित संचालन, संयोजन व मिलान करते रहनेवाला उपकरण (Management Software)

• संबंधित पाठ के भिन्न-भिन्न लक्ष्य-भाषाओं में हुए पूर्वानुवादों को साथ लेकर चलनेवाला व कृत्रिम स्मृति में सहेज रखनेवाला उपकरण जो आगामी प्रत्येक अनुवाद के समय स्मृति से स्वचालित रूप से उन्हें निकाल सुझाव के रूप में मानव अनुवादक के समक्ष प्रस्तुत कर सके (Translation Memory Tools)

• क्षेत्र, काल, उद्‌गम आदि विविध श्रेणियों में छाँटकर मनोवांछित अलग-अलग विभाजित या संयोजित परिणाम उपलब्ध करवा देनेवाला उपकरण।

• लक्ष्य-भाषा में अनूदित होने पर मिले पाठ का प्रत्येक शब्द

किन-किन स्रोत-भाषाओं के किन-किन शब्दों के अर्थ का वाचक है, इसका समेकित संग्रह रखनेवाला कोई डेटाबेस।

ऊपर बताए गए उपकरणों व संसाधनों के सफल प्रयोग द्वारा कंप्यूटर अनुवाद को सुगमता से बहुधा शुद्ध रूप में प्रयोक्ताओं को उपलब्ध करवानेवाली विश्व की चार प्रमुखतम इंटरनेट सेवाओं गूगल, फ़ेसबुक, माइक्रोसॉफ़्ट व याहू द्वारा कंप्यूटर की एक क्लिक से पाठ बदलकर आ जाने के कुछ उदाहरण अभी-अभी एकत्र किए है। उन्हें एक-एक कर नीचे देखा जा सकता है।

सर्वप्रथम सबसे बड़ी सोशल नेटवर्किंग साइट 'फ़ेसबुक' पर माइक्रोसॉफ़्ट की 'बिंग' सेवा द्वारा किए गए अनुवाद के तीन उदाहरण देखें। पहले चित्र में प्रभात प्रकाशन ने हिंदी में लिखा है— 'प्रस्तुत है हमारी एक महत्वपूर्ण पुस्तक'। इस पाठ के साथ वहीं पर उसके नीचे 'See Translation' (अनुवाद देखें) लिखा है। कंप्यूटर को यह स्वत: पता रहता है कि अमुक मशीन का प्रयोक्ता किस भाषा-समाज का प्रतिनिधि है या किस भाषा में पाठ देखने के लिए यहाँ पहुँचा है, अत: वह 'See Translation' पर क्लिक करते ही वह देवनागरी में लिखे उक्त हिंदी पाठ को क्षण-भर में ही उसकी भाषा में अनूदित कर देता है। दूसरे चित्र में हिंदी पाठ का अंग्रेज़ी अनुवाद देख सकते हैं। यद्यपि अनुवाद एकदम अंग्रेज़ी की प्रकृति के अनुकूल नहीं है फिर भी लगभग उसके निकट है व अर्थ स्पष्ट है। ऐसे में मानव अनुवादक की भूमिका भी असंदिग्ध रूप में आवश्यक हो जाती है जो लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप अनुवादों का संपादन कर सके।

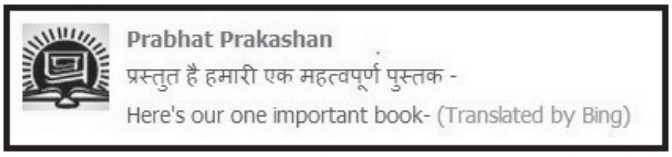

नीचे यह दूसरा उदाहरण भी स्रोत भाषा हिंदी व लक्ष्य-भाषा अंग्रेज़ी के कंप्यूटर साधित अनुवाद का ही है जो संपर्क भाषा व संवादों की भाषा के अनुवाद के लिए एक मानव अनुवादक के किंचित संपादन की आवश्यकता दिखाता है।

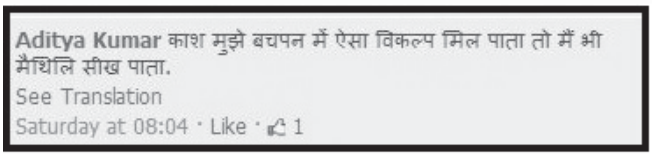

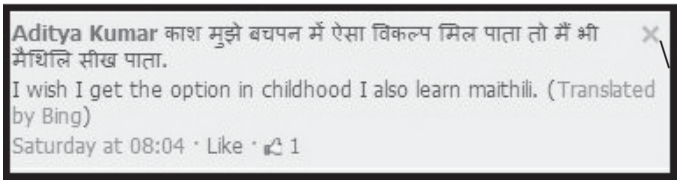

नीचे के चित्र का यह तीसरा उदाहरण विश्व की किसी अन्य भाषा जिसका यद्यपि पाठक को नाम भी न पता हो, को पाठक/अनुवादक की वांछित लक्ष्य-भाषा में अनूदित करने का है। भाषा की बाधा को पारकर कंप्यूटर तकनीक से तत्क्षण प्रयोक्ता विश्व के किसी भी भाषा-भाषी की बात का अभिप्राय समझ सकता है व उससे संवाद स्थापित कर सकता है—

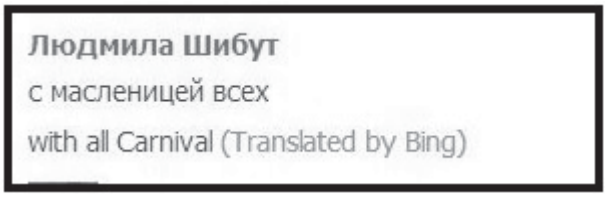

अब कुछ उदाहरण 'याहू' की सेवाओं को हिंदी में उपलब्ध करवाने का आदेश देने पर प्राप्त कुछ परिणामों के—

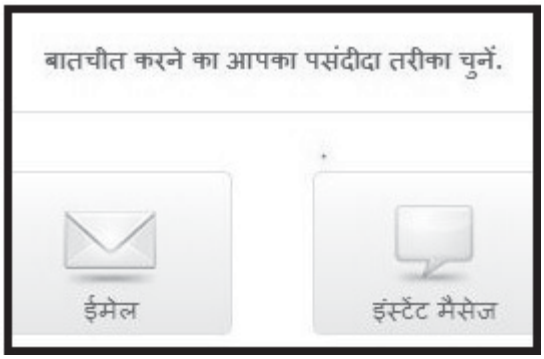

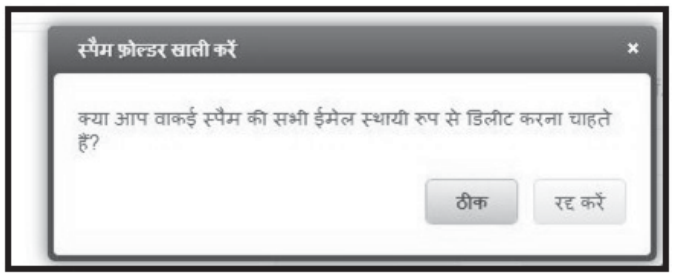

याहू द्वारा इमेल सेवा में उपलब्ध करवाए गए Emoticons (जिन्हें बोलचाल में 'स्माइली' भी कहते हैं) तक को उनपर कर्सर ले जाने पर हिंदी में अनूदित अर्थ के साथ देखा जा सकता है—

अब अनुवाद के क्षेत्र में सर्वाधिक समुन्नत व विविधपक्षीय विकल्पों को उपलब्ध करवानेवाली सेवा 'गूगल' के कुछ उदाहरण देखें। चित्र को ध्यान से देखने पर पता चलता है कि लेखिका ने स्रोत भाषा हिंदी के एक छोटे पाठ (आपका नाम क्या है) को देवनागरी लिपि में लिखकर उसे लक्ष्य भाषा जर्मन में अनूदित करना चाहा है जिसे एक क्लिक करते ही कंप्यूटर अनुप्रयोग द्वारा जर्मन भाषा व उस भाषा की लिपि में लिप्यन्तरित व अनूदित कर दिया गया है। थोड़ा अधिक ध्यान देंगे तो पाएँगे कि बाईं ओर के पाठ से थोड़ा ऊपर व पाठ के चौकोर डिब्बे से बाहर From Hindi Detected भी लिखा गया है। यह इस बात का वाचक है कि अनुवाद के समय कंप्यूटर को स्रोत भाषा और उसकी लिपि की जानकारी नहीं देनी पड़ती, वह अपने डेटाबेस में निर्माण के समय सुरक्षित कर दी गई लिपि व भाषा के अनुसार उसकी पहचान स्वत: करता है और प्रयोक्ता को उस भाषा का नाम भी बता देने में समर्थ है कि उक्त पाठ की स्रोत भाषा हिंदी (अथवा जो भी पाठ वहाँ डाला जाए) है। तब वह प्रयोक्ता को वांछित भाषाओं की एक सूची में से चयन का अधिकार देता है, इसमें से चुनकर प्रयोक्ता निर्धारित कर सकता है कि उसे किस लक्ष्य भाषा में पाठ अनूदित करना है। इस चित्र में तीर के निशान से जिन चिह्नों को दाहिने निचले किनारे पर इंगित किया है वे चिह्न उन उपकरणों को दर्शाते हैं जिनका उल्लेख ऊपर अनुवाद के लिए आवश्यक उपकरणों की सूची में किया गया है। मध्यवाला चिह्न चटकाने (क्लिक करने) से अनूदित होकर मिले पाठ के जर्मन भाषा के इंटरनेट पर उपलब्ध सभी उदाहरणों में से खोज-इंजन द्वारा खोजकर इस पाठ के कुछ उपलब्ध उदाहरण प्रयोक्ता के लिए प्रस्तुत करने का आदेश देता है।

व उसकी बाईं ओर बना स्पीकर का चिह्न चटकाने से अनूदित पाठ का उच्चारण कैसे किया जाएगा, इसे कंप्यूटर के स्पीकर में बोलकर बताने का आदेश दिया जाता है जो कंप्यूटर तुरंत पूरा करता है अर्थात अनूदित पाठ लिखित रूप व उच्चरित रूप में भी कंप्यूटर

संसाधनों द्वारा अब उपलब्ध हो सकता है। नीचे के चित्र में अनूदित पाठ के उच्चरित रूप को पाने के लिए दिए गए चिह्न पर तीर के चिह्न से इंगित कर दिया है—

गूगल की यह सेवा जिन-जिन भाषाओं में परस्पर अनुवाद की सुविधा देती है उनकी सूची भी वहीं दाहिनी ओर के चौकोर डिब्बे के ऊपर बने चिह्न को चटकाने से समक्ष प्रस्तुत हो जाती है। ध्यातव्य है कि मध्य में बना दुतरफा चिह्न सूची की किन्हीं भी दो भाषाओं में परस्पर अनुवाद की दुतरफा सुविधा का वाचक है।

नीचे के इस चित्र से आप दो भारतीय भाषाओं के मध्य कंप्यूटर-अनुवाद की स्थिति का अनुमान लगा सकते हैं। हिंदी से बांगला में अनूदित पाठ की विशेषता को दर्शाने के लिए लेखिका ने नीचे एक तीर का चिह्न लगाया है जो यह दर्शा रहा है कि लक्ष्य भाषा में प्राप्त पाठ के विविध प्रयोगों के विभिन्न संदर्भ व उदाहरण इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। वस्तुत: भारतीय भाषाओं की वाक्य संरचना आदि एक समान होने के कारण लक्ष्य भाषा का पाठ उस भाषा की प्रकृति के पूर्णत: अनुकूल है। अत: उक्त पाठ विविध बांगला साहित्य की सामग्री में इंटरनेट पर भी उपलब्ध हैं। उसका रोमन पाठ भी कंप्यूटर ने वहीं दिखा दिया है। ऊपर के चित्रों में लक्ष्य भाषा विदेशी होने के कारण अनूदित होकर मिले पाठ की व्याकरणिक संरचना उस भाषा की प्रकृति के पूर्णत: अनुकूल न होने के कारण उस भाषा के साहित्य व पुस्तकों आदि में उसके उदाहरण नहीं मिल सकते।

इस प्रकार एक चटका लगाने पर क्षण-भर में कंप्यूटर ने दो भाषाओं के मध्य कितना कुछ जाँच-परखकर लक्षित पाठ भी प्रयोक्ता के सम्मुख तुरंत रख दिया।

गूगल की अनुवाद संबंधी टूलकिट का नेट से लिया प्रायोगिक चित्र देखें—

ऊपर सबसे पहले सचित्र उदाहरण 'फ़ेसबुक' का था। 'फ़ेसबुक' पर अनुवाद की यह स्वचालित सुविधा Bing (माइक्रोसॉफ़्ट) की है। Bing भारतीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद की सुविधा नहीं देता। इसमें भी अनूदित पाठ के उच्चारण, अनूदित पाठ के प्रयोग से संबंधित विविध उदाहरणों के साथ-साथ पाठ को इमेल करने की सुविधा है। Bing अनुवादक द्वारा जिन भाषाओं में परस्पर अनुवाद की सुविधा है उनका एक मेन्यू भी क्लिक करने पर खुलता है। अनूदित पाठ की स्रोत भाषा की पहचान की स्वचालित सुविधा भी विद्यमान है। इसके अतिरिक्त अनुवाद से तैयार हुए पाठ के मूल्यांकन का विकल्प भी दिया गया है। कोई भी प्रयोक्ता यदि अनुवाद से मिले पाठ से किसी भी प्रकार सहमत नहीं है और वह कोई बेहतर अनुवाद सुझाना चाहता है तो इसका विकल्प भी है और त्रुटियों को इंगित करने का भी। यह विश्व की 37 भाषाओं में पाठ और वेब पृष्ठों का अनुवाद करने की सुविधा देता है। Bing की इस सुविधा को यहाँ देखा जा सकता है—

इसके अतिरिक्त विंडोज़ और माइक्रोसॉफ़्ट ऑफ़िस के स्थानीय भाषा संस्करण भी 37 भाषाओं में उपलब्ध हैं। भाषा इंटरफ़ेस पैक (http://office.microsoft.com/en-us/downloads/office-language-interface-pack-lip-downloads-HA001113350.aspx) द्वारा नि:शुल्क डाउनलोड से विंडोज़, ऑफ़िस और विज़ुअल स्टूडियो के लिए लगभग 100 भाषाओं का समर्थन प्राप्त है। माइक्रोसॉफ़्ट शब्दावली-संग्रह (http://www.microsoft.com/language/en-US/Terminology.aspx) आई.टी. शब्दों का स्थानीय भाषा में अनुवाद कर शब्दों के अर्थ को एकरूपता प्रदान करता है। रोज़मर्रा के कार्यों की सरलता के लिए माइक्रोसॉफ़्ट 'टेल मी' नाम से अभिज्ञान सेवा (http://www.microsoft.com/en-us/tellme) भी उपलब्ध है।

व्यापार, वाणिज्य, तकनीक आदि से जुड़े विषयों के अनुवाद के लिए गूगल व माइक्रोसॉफ़्ट अनुवाद सेवा की शुद्धता लगभग 95 प्रतिशत पाई जाती है। इसी सहारे हज़ारों भारतीय भाषा-भाषी अनुवादक भी घर बैठे देश-विदेश की कंपनियों के अनुवाद कार्यों को आय का माध्यम बनाए हुए हैं।

कंप्यूटर अनुवाद का यह क्षेत्र संभावनाओं व चुनौतियों से भरा हुआ तो है ही, अत्यंत रोमांचकारी भी है। वैश्विक स्तर के कंप्यूटर अनुवाद की कार्यप्रणाली को संक्षेप में समझने के लिए माइक्रोसॉफ़्ट व गूगल के उदाहरणों से बात स्पष्ट हो सकती है। ये दोनों सर्वाधिक शक्तिशाली अनुवाद-सुविधा से संपन्न हैं। इनके पास वैश्विक सर्च इंजन हैं। प्रतिक्षण विश्व-भर से अनेक भाषाओं के लाखों प्रयोक्ता इनका प्रयोग करके जिन शब्दों का 'इनपुट' देकर इच्छित वेबसाइट-सामग्री खोजते हैं वे शब्द इनके सर्वर में स्वचालित रूप से संकलित हो जाते हैं और वर्णक्रमानुसार (सॉर्टिंग) होकर नए शब्द इनके डेटाबेस में जुड़ जाते हैं। क्षण-क्षण शब्द, पद, पाठ आदि की विविध सूचियाँ स्वत: निर्मित /पुनर्निर्मित होती रहती हैं। इनके सर्वर के 'प्रोग्राम' विभिन्न इ-मेल से, विभिन्न ब्लॉग-पृष्ठों से तथा विभिन्न वेबसाइटों से भी शब्द/पद/वाक्य/पाठ संग्रह कर लेते हैं और इनका शब्द/पद/वाक्यांश/वाक्य-भंडार बिना अतिरिक्त कुछ भी किए स्वत: निरंतर बढ़ता जाता है। केवल कुछ द्विभाषियों आदि की अस्थाई सेवा लेकर समय-समय पर भाषा-जोड़ी के शब्द/पद/वाक्यांश/वाक्यों का परस्पर मेल बिठा देने भर से द्विभाषी डेटाबेस सुधरता चला जाता है।

नेट पर उपलब्ध दो विशेषज्ञ ग्राफ़ इस तकनीक की आंतरिक संरचना व कार्य प्रणाली का खुलासा करने में किंचित समर्थ होंगे।

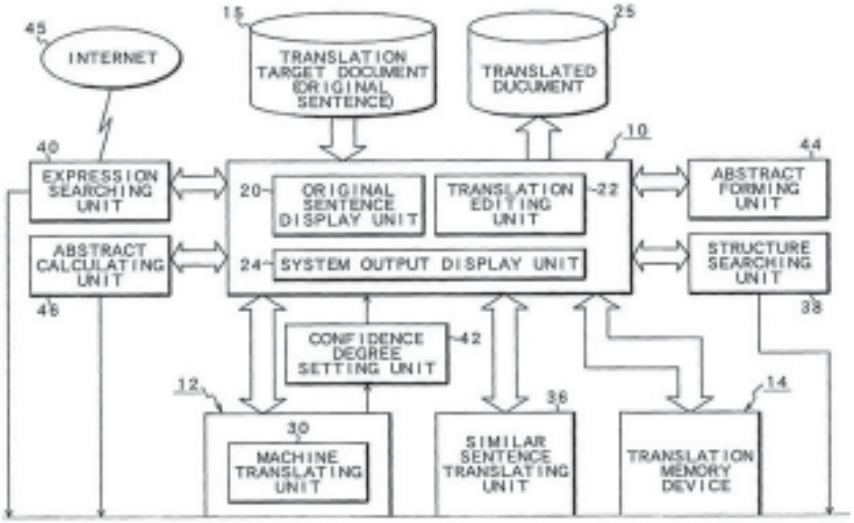

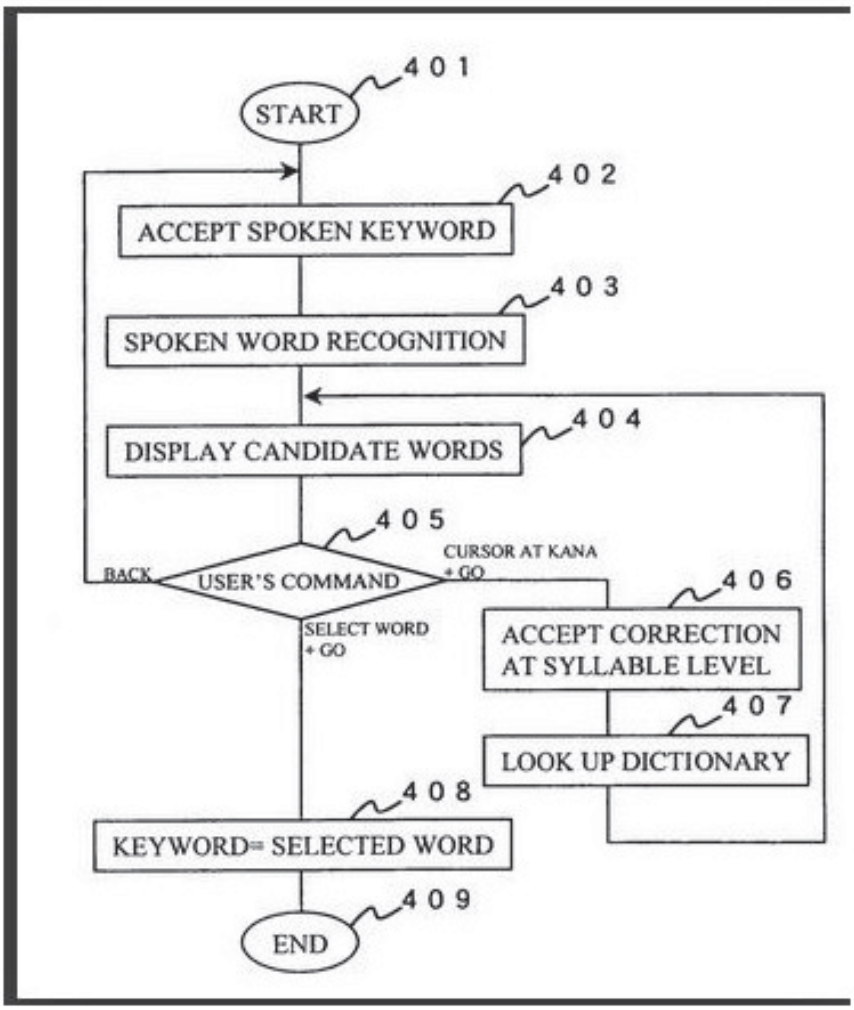

देखें—

विश्व-ग्राम हो चुके विश्व का भविष्य अधिकाधिक भाषा समाजों के मध्य अनुवादों की शुद्धता व सर्व-स्वीकार्यता से उपजी पारस्परिकता के गर्भ में है। यद्यपि यह आनेवाला समय तय करेगा कि सैंकड़ों भाषा-समाजों की सरल-संभव निकटता से बननेवाली सभ्यता का विकास कैसा होगा किंतु इतना सुनिश्चित है कि आनेवाले समय में विश्व मानव के स्वरूप निर्धारण का सर्वाधिक भार अनुवाद के ही कंधों पर है।

❑

यू.के., लंदन
kavita.vachaknavee@gmail.com

37 इंटरनेट की दुनिया में बढ़ती हिंदी

• श्री उमेश चतुर्वेदी

सन् 2003 में भारत के तत्कालीन प्रधान मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने जब भारत में संचार क्रांति (सेल्यूलर फ़ोन क्रांति) के एक बड़े वाहक, भारत की सरकारी संचार सेवा, भारत संचार निगम लिमिटेड (बीएसएनएल) की मोबाइल सेवा का लखनऊ में उद्घाटन करते वक्त मोबाइल फ़ोन को पंडोरा (जादुई बक्सा) कहा था। उनके शब्द थे— ''किसने सोचा था कि एक दिन हमारी मुट्ठी में पंडोरा बॉक्स होगा।'' तब दुनिया ने उनके शब्दों को महज़ जादुई इस्तेमाल के तौर पर ही देखा था। तब दरअसल वे फ़ोन के ज़रिए आनेवाली क्रांति की कल्पना का ही खाका खींच रहे थे। हकीकत तो यही है कि इस जादुई बक्से, लैपटॉप और कंप्यूटरों के ज़रिए भारत ही नहीं, पूरी दुनिया में इंटरनेट का बोलबाला बढ़ा है। अगस्त 2013 में आई एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत में 14 करोड़ 32 लाख इंटरनेट कनेक्शन हो गए थे। यह संख्या बहुत बड़ी है। इंटरनेट का बढ़ता यह चलन ही है कि भारत में यह माननेवाले भी बहुत ज़्यादा हो गए हैं कि इंटरनेट के ज़रिए हिंदी का विस्तार हो रहा है। अपने रसूख और कारसाज़ी के दम पर दुनिया के कोनों को छाननेवाले कुछ लोग इस बात से ही खुश हैं कि उन्हें दुनिया के हर कोने में एक-दो हिंदी-भाषी ज़रूर मिल जाते हैं। अव्वल तो होना यह चाहिए था कि इंटरनेटी विस्तार के दौर में हिंदी का भी विस्तार होता क्योंकि चीन के बाद अगर सबसे ज़्यादा इंटरनेट उपभोक्ता कहीं हैं तो वह भारत में ही हैं। इस हिसाब से तो हिंदी और मंदारिन का इंटरनेट पर विस्तार होना चाहिए था।

श्री उमेश चतुर्वेदी टेलीविज़न पत्रकार हैं। वे 'ज़ी न्यूज़', 'महुआ न्यूज़', 'दैनिक भास्कर' आदि में महत्त्वपूर्ण पद पर कार्यरत हैं, पर फिलहाल स्वतंत्र लेखन में रत हैं। उन्होंने हिंदी में एम.ए. तथा पत्रकारिता में एम.एम.सी. किया है। उनके अब तक लगभग तीन हज़ार से अधिक आलेख प्रकाशित हैं। मशहूर पत्रिका 'दिनमान' पर मोनोग्राफ भी प्रकाशित है। वे वागीश्वरी प्रसाद 'छात्र कहानी पुरस्कार' तथा 'महामना मालवीय पत्रकारिता पुरस्कार' से सम्मानित हैं।

लेकिन हकीकत इससे कोसों दूर है। 2013 में ही 'डब्ल्यूथ्री टेक्स' (W3Techs) नामक अनुसंधान एजेंसी ने इंटरनेट पर हिंदी को लेकर जो आँकड़े दिए थे, वे कुछ और ही कहानी कर रहे थे। 'डब्ल्यूथ्री टेक्स्ट' की रिपोर्ट के मुताबिक इंटरनेट में अंग्रेज़ी का सबसे ज़्यादा इस्तेमाल किया जाता है। इस रिपोर्ट के अनुसार इंटरनेट पर लिखी जानेवाली कुल इबारतों का 54.7 प्रतिशत अंग्रेज़ी में ही है। दूसरे नंबर पर रूसी है जबकि तीसरे नंबर पर जर्मन है। इसी रिपोर्ट के मुताबिक इंटरनेट पर उपयोग की जाने वाली 10 भाषाओं में हिंदी नहीं है। और तो और सबसे ज़्यादा इस्तेमाल होनेवाली दस भाषाओं में किसी भी भारतीय भाषा का नाम नहीं है। इस रिपोर्ट के मुताबिक इंटरनेट पर सबसे ज़्यादा अंग्रेज़ी का इस्तेमाल होता है। सवा अरब लोगों के साथ लोकप्रिय चीनी भाषा इंटरनेट पर उपयोग में लाई जानेवाली दूसरी सबसे बड़ी भाषा है। इसका स्थान अंग्रेज़ी भाषा के बाद आता है। इस आंकड़े के मुताबिक इंटरनेट पर काम करनेवाले यूज़रों में अंग्रेज़ी का इस्तेमाल 53.66 करोड़ लोग करते हैं, संख्या के हिसाब से चीनी प्रयोक्ताओं का नंबर दूसरा है। इस रिपोर्ट के मुताबिक 44.49 करोड़ लोग मंदारिन का इस्तेमाल करते हैं जबकि दुनिया के सबसे ज़्यादा हिस्से में बोली जानेवाली स्पेनिश का इस्तेमाल 15.33 करोड़ लोग, जापानी का 9.91 करोड़ लोग, पुर्तगाली का 8.25 करोड़ लोग, जर्मन का 7.52 करोड़ लोग, अरबी का 6.54 करोड़ लोग, फ्रेंच का 5.98 करोड़ लोग, रूसी का 5.97 करोड़ लोग और कोरियाई भाषा का इस्तेमाल 3.94 करोड़ लोग करते हैं। ज़ाहिर है कि दुनिया की तीसरी बड़ी भाषा होने के बावजूद हिंदी का स्थान अगर इस सूची में नहीं है तो इसका मतलब साफ़ है कि इंटरनेट पर हिंदी-भाषी भी अंग्रेज़ी के ही प्रयोक्ता हैं। इस लिस्ट में अरबी, कोरिया, जापानी जैसी भाषाओं का स्थान बना लेना मामूली बात नहीं है। आखिर रूसी दूसरे नंबर पर क्यों है? इसका जवाब विश्लेषकों ने दिया है। उनका कहना है कि सोवियत संघ के विघटन के बाद भी सोवियत संघ से अलग हुए कुछ देशों में रूसी भाषा प्रमुख भाषा बनी हुई है। उक्रेन, बेलारूस, कज़ाख़िस्तान, उज़्बेकिस्तान और किर्गिज़स्तान के डोमेन क्षेत्रों में भी रूसी भाषा ही प्रमुख है। जानकारों का कहना है कि अभी कई बरस तक इंटरनेट में रूसी भाषा दूसरे नंबर पर बनी रहेगी।

चाइनीज़ अकादमी ऑव सोशल साइंसज़ के इंस्टीटयूट ऑव मीडिया रिसर्च के शोधार्थी लियू रुईशेंग के मुताबिक वर्ष 2000 में चीन में करीब 2.25 करोड़ लोग इंटरनेट का उपयोग किया करते थे। उस समय इंटरनेट का उपयोग करनेवाले प्रति 100 लोगों में चीनी लोगों की संख्या विकासशील देशों के औसत से भी कम थी। साल 2010 में चीन में इंटरनेट का उपयोग करनेवाले लोगों की संख्या 34 फ़ीसदी तक पहुंच गई। ये संख्या विकासशील देशों में इंटरनेट का उपयोग करनेवाले लोगों के औसत से डेढ़ गुना ज़्यादा है। जिस तरह चीन में मोबाइल फ़ोन का उपयोग करनेवाले लोगों की संख्या दूसरे विकासशील देशों की तुलना में काफ़ी तेज़ी से बढ़ रही है उसी तरह यहाँ इंटरनेट का उपयोग करनेवाले लोगों की संख्या में भी तेज़ी से इज़ाफ़ा हो रहा है। चीन में फ़िलहाल 90 करोड़ लोग मोबाइल फ़ोन का उपयोग करते हैं।

हिंदी के मशहूर पत्रकार बनारसीदास चतुर्वेदी हिंदी में जनपदीय आंदोलन की बात करते थे। जनपदीय आंदोलन दरअसल हिंदी-भाषी इलाके के स्थानीय प्रभाव को बढ़ावा देने और इसके ज़रिए हिंदी के विस्तार की बात करता था। हिंदी-भाषी इलाके में स्थानीयता का अभी खासा बोलबाला है। यह बोलबाला ही है कि अब हिंदी में सर्च करनेवालों की संख्या बढ़ती नज़र आ रही है। इसी का असर है कि गूगल के मुताबिक अब 20 फ़ीसदी भारतीय उपभोक्ता हिंदी में इंटरनेट सर्फ़िंग को पसंद करने लगे हैं। इसके साथ ही इंटरनेट पर हिंदी में सामग्री की उपलब्धता 94 फ़ीसदी की दर से पिछले कुछ सालों में बढ़ी है जबकि इस मुकाबले हिंदी की विषय-वस्तु की उपलब्धता सिर्फ 19 प्रतिशत ही बढ़ी है। इसी तरह इंटरनेट पर हिंदी ब्लॉगर की संख्या एक लाख से ज़्यादा हो गई है। दिलचस्प बात यह है कि इनमें से लगभग 10 हज़ार ब्लॉगर जहाँ अत्यधिक सक्रिय हैं, वहीं करीब 20 हज़ार ब्लॉगर सक्रिय की श्रेणी में आते हैं। इंटरनेट पर हिंदी के विस्तार में केंद्र और राज्य सरकारों का भी बड़ा योगदान है। 2015 के जून तक के उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक लगभग केंद्र और राज्यों की सरकारों के तमाम विभागों की हिंदी में 9 हज़ार वेबसाइटें उपलब्ध हैं। इसके साथ ही आज इंटरनेट पर 70 इ-पत्रिकाएँ देवनागरी लिपि में उपलब्ध हैं। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय (वर्धा) की वेबसाइट डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू डॉट हिंदीसमय डॉट कॉम पर अब तक हिंदी के 1000 रचनाकारों की रचनाओं का अध्ययन किया जा सकता है। इसके साथ ही हिंदी के कई इ-बुक प्रकाशक भी आ गए हैं। इसमें प्रतिलिपि का नाम सबसे आगे है। इसके साथ ही हिंदी के अपने सर्च इंजनों की संख्या 15 से ज़्यादा हो गई है जिनके ज़रिए हिंदी के शब्दों पर आधारित सर्च चंद मिनटों में उपलब्ध हो जाते हैं। इसके साथ ही वे किसी भी वेबसाइट का चंद मिनटों में हिंदी अनुवाद करके पाठकों को परोस देते हैं। यह हिंदी का बढ़ता बाज़ार और उसकी ताकत ही है कि दुनिया की बड़ी इंटरनेट कंपनियाँ याहू, गूगल और फ़ेसबुक भी हिंदी में उपलब्ध हो गई हैं। भारत में हिंदी बोलनेवालों की संख्या गूगल के मुताबिक 50 करोड़ है जबकि विकिपीडिया पर करीब एक लाख लेख मौजूद हैं।

अव्वल तो इस पर गर्व होना चाहिए। अंग्रेज़ी पहले से ही इस देश में सत्ता और नीतिगत विमर्श की भाषा रही है। उदारीकरण के दौर में अंग्रेज़ी का महारानीवाला यह रुतबा और बढ़ा ही है। बीस साल पहले तक तो अंग्रेज़ी को अपने सामाजिक और राजनीतिक विकास में बाधक माननेवाले लोग मिलते भी थे लेकिन 1991 में आर्थिक उदारीकरण ने ऐसी पीढ़ी का विकास किया है जिसे विकास, समृद्धि और विमर्श की चाबी सिर्फ़ और सिर्फ़ अंग्रेज़ी में ही नज़र आती है। उसे हिंदी पिछड़ेपन की भाषा भी नज़र आने लगी है लेकिन भारतीय समाज में जिस तरह अब भी अंग्रेज़ी का बोलबाला है, रोज़गार के साधनों पर अंग्रेज़ी की ताकत बढ़-चढ़कर बोल रही है, उसके चलते आम हिंदीवाला अब भी कहीं न कहीं हीनता बोध से ग्रस्त है। यही वजह है कि अपनी हिंदी का इस्तेमाल करने के बजाय लोगों को अंग्रेज़ी में ही काम करने और इंटरनेट पर इस्तेमाल करने की ललक ज़्यादा है। इसके पीछे कहीं न कहीं भारतीय समाज में अब भी हावी औपनिवेशिक मानसिकता का असर है। हिंदीवालों को अपनी भाषा को मानने और उसके इस्तेमाल में अब भी हेठी ही नज़र आती है। आम हिंदीवाला इस बात से खुश होता है कि उसे हिंदी कम आती है और उसके बच्चों की हिंदी तो और भी कमज़ोर है। वह इस बात से ही राहत महसूस करता है कि उसकी अंग्रेज़ी बेहतर हो रही है। आखिर ऐसा क्यों है ? इस सवाल के जवाब में हज़ारों पेज अब तक रंगे जा चुके हैं। 1953 से राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा ने 14 सितंबर को हिंदी दिवस मनाना शुरू किया था। तब से लेकर हर साल हिंदी को बचाने और उसे आगे लाने को लेकर सरकारी और गैर-सरकारी स्तर पर हिंदी को स्थापित करने के लिए संकल्प किए जाते रहे लेकिन हिंदी की हालत देखिए। मोबाइल और कंप्यूटर के बादशाह देश भारत में राजकाज और विमर्श के मोर्चे पर हिंदी अब भी कोने में पड़ी है। अगर हम हिंदी-भाषियों को अपनी हिंदी पर गर्व है तो हमें चाहिए कि इंटरनेट-फेसबुक पर हिंदी में ही लिखें और पढ़ें तब ही हिंदी को विश्व भाषाओं का सिरमौर बना पाएँगे।

नई दिल्ली, भारत
uchaturvedi@gmail.com

हिंदी के विविध आयाम :
कुछ टिप्पणियाँ व विचार-बिंदु

आप जो पत्रिका का यह अंक पढ़ रहे हैं, निश्चित ही विश्व हिंदी के प्रति सचेत हैं। इस चेतना की धारा आपको भाषा संबंधी किसी भी विचार और रुझान के किसी भी पक्ष में खड़ा करे, हर पक्ष की जानकारी रखना हर हालत में एक अनिवार्यता होती है।

यह विश्व हिंदी सचिवालय की पत्रिका है। इसका अपना कोई झुकाव होना अनिवार्य नहीं है। इसका पक्ष वही है जो विश्व हिंदी समाज का है। इसलिए आपको दोनों या अनेक पक्षों की वही जानकारी देते रहना इस पत्रिका का प्रमुख उद्देश्य है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए विश्व हिंदी पत्रिका आपके लिए पिछले अंक से समकालीन हिंदी मीमांसा के कुछ ऐसे मुद्दे उठा लाती है जिनपर बीते एक वर्ष में चर्चा हुई, विवाद हुआ, नोंक-झोंक हुई। इनकी भावी परिणति जो भी हो, आवश्यक यह है कि ये मुद्दे आज की तारीख में हिंदी के प्रति सचेत हर व्यक्ति को विचार-मंथन के लिए बाध्य करते हैं।

इस वर्ष दो ऐसे प्रमुख मुद्दे रहे। एक चेतन भगत का उछाला हुआ मुद्दा कि हिंदी के लिए देवनागरी अथवा रोमन लिपि उपयुक्त है। दूसरा विश्व हिंदी सम्मेलन के गुरुत्वाकर्षण का केंद्र साहित्य से हटाकर हिंदी संबंधी अन्य क्षेत्रों पर ले जाना। इन्हीं पर कुछ वाद, कुछ विवाद इस अंश में प्रस्तुत है। साथ में कुछ अन्य विचार बिंदुएँ भी हैं।

दुहराने की आवश्यकता नहीं है फिर भी लिख रहे हैं कि ये विचार लेखकों के अपने हैं। सचिवालय का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

❐

38 हिंदी शिक्षण का विचार - रूस के विशेष संदर्भ में

• डॉ. इंदिरा गाज़िएवा

रूसी राजकीय मानविकी विश्वविद्यालय में हिंदी तीन विभागों में सिखाई जाती है—पूर्वी संस्कृति भाषा विज्ञान विभाग, पुरातनता विभाग तथा अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग में। अधिकतम छात्रों ने इस विश्वविद्यालय में हिंदी सीखी और इनमें से कई भारतीय कंपनियों में नौकरी मिलने पर हिंदी का प्रयोग करते हैं। आजकल दक्षिण एशिया के क्षेत्र के अंतरराष्ट्रीय संबंधों के सवालों में रूसी विद्यार्थियों को बहुत दिलचस्पी है। सबसे पहले वे भाषा, इतिहास, नीति, अर्थ-व्यवस्था और संस्कृति सभी विषय सीखने के इच्छुक हैं। हमारे विश्वविद्यालय में भारत के राजदूत अपने भाषण देने आते हैं और समकालीन वैश्विक तथा भारतीय राजनीतिक परिस्थिति, ब्रिक्स (BRICS) के विकास के बारे में बताया करते हैं। रूसी राजकीय मानविकी विश्वविद्यालय तथा भारतीय दूतावास के साथ जो संगोष्ठियाँ संयुक्त रूप से आयोजित हुई हैं, वे छात्रों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि आज के छात्रगण भविष्य में भारत और रूस के सांस्कृतिक, सैन्य, आर्थिक और व्यापारिक संबंधों के क्षेत्रों में नौकरी पाना चाहते हैं।

हिंदी भाषा, व्याकरण, कविताओं तथा हिंदी शिक्षण प्रणाली में इनकी विशेष रुचि रही है।

इन्होंने दाग़िस्तान और मास्को में हिंदी अध्ययन तथा हिंदी प्रचार-प्रसार के लिए उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

प्रकाशन : 1. Read and Speak Hindi (Textbook)
2. Elementary Grammar of Hindi Language (Textbook)
3. Linguistic Game Plays for Hindi Lessons

सम्मान : 10वाँ विश्व हिंदी सम्मान, भोपाल में विश्व हिंदी सम्मान (2015)।

संप्रति : एसोशिएट प्रोफ़ेसर, रशियन स्टेट यूनिवर्सिटी फॉर द ह्यूमनिटिज़, मास्को, रूस। एसोसिएशन ऑव साउथ एशियन स्टडीज़ तथा यूरोपियन एसोसिएशन ऑव साउथ एशियन स्टडीज़ की सदस्या भी हैं।

रूसी सरकारी मानविकी विश्वविद्यालय का हिंदी शिक्षण

मैं रूसी सरकारी मानविकी विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान संस्थान की प्राध्यापिका हूँ। मेरी छात्र-छात्राएँ विदेशी भाषाओं से मोहित हुए हैं। उनके ख्याल में लोग अन्य भाषाएँ सीखते समय विश्व से परिचित होते जाते हैं एवं दूसरे देशों और जनता की संस्कृति को अपनाते हैं। रूसी सरकारी मानविकी विश्वविद्यालय में हिंदी के पाठ्यक्रमों में हिंदी व्याकरण, हिंदी साहित्य, संस्कृत भाषा, भारतीय संस्कृति, गद्य एवं पद्य, हिंदी शिक्षण के सिद्धांत तथा अनुवाद के सिद्धांत हिंदी का उद्‌भव और विकास आदि विषय पढ़ाए जाते हैं। 'मौलिक और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान', 'इंडोलॉजी', 'भाषाविज्ञान और अंतर सांस्कृतिक संचार' के स्नातक कार्यक्रम का शिक्षण हिंदी में किया जाता है। प्राथमिक कक्षा के छात्रगण हिंदी व्याकरण एवं लिपि-सरल कविताएँ, कहानियाँ, सरल बातचीत, सरल वाक्य का अनुवाद सीखते हैं। छात्रों को सक्रिय शिक्षा-ग्रहण में प्रोत्साहित करने के लिए प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता या उत्साहपूर्ण क्रीड़ाओं का आयोजन किया जाता है।

द्वितीय कक्षा के विद्यार्थियों को हिंदी साहित्य एवं भाषा, कठिन कविताएँ, कहानियाँ, बातचीत, संवाद-अनुवाद, लेख, भूगोल, फ़िल्म के दृश्य आदि के माध्यम से पढ़ाया जाता है। तृतीय कक्षा को पढ़ाते समय हिंदी समाचार पत्र से परिचित होना पड़ता है। चतुर्थ कक्षा के विद्यार्थीगण को भारत की अर्थव्यवस्था और राजनीति के टेक्स्ट, कठिन कविताओं का अनुवाद, सरकारी पत्र, फ़िल्म, व्यावसायिक पत्र, मोहन राकेश का 'अंडे के छिलके' एकांकी पढ़ाए जाते हैं। प्रगतिवाद युग की कुछ कहानियाँ

भी पढ़ाई जाती हैं जैसे यशपाल की कहानी, 'तूफान का दैत्य'। यह कहानी रूसी लेखक-कवि मैक्सिम गोर्की की कविता से मिलती-जुलती है जिसे कवि गोर्की ने सन् 1901 में लिखी थी। उस समय रूस में ज़ार का शासन था। इस कविता में एक पक्षी के बारे में बताया जाता है। सागर में तूफ़ान के दौरान 'मैलमक' सफ़ेद तथा लंबे पंखोंवाला एक समुद्री पक्षी उड़ रहा था। कवि गोर्की पक्षी को साहसी मानते थे क्योंकि यह पक्षी तूफ़ान से अकेला लड़ रहा था और अन्य सभी पक्षियों को तूफ़ान से डर लग रहा था। 'मैलमक' पक्षी चिल्ला रहा था 'तूफ़ान आनेवाला है!' एक बात कहना ज़रूरी है कि उस ज़माने में रूसी मज़दूर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थे। प्रथम रूसी क्रांति आनेवाली थी। 'तूफ़ान आनेवाला!' इस पक्षी के नारे से ज़ार सरकार को उलाटने के लिए प्रेरित कर रहा था। मोहन राकेश का 'अंडे के छिलके' एकांकी पढ़ते समय रूस के उन्नीसवीं सदी के प्रसिद्ध एकांकीकार अंतोन चेखव की रचनाओं की याद आती है। कथन की सरलता एकांकी की विशेषता है।

हिंदी शिक्षण की समस्याएँ

हिंदी शिक्षण में आनेवाली कुछ समस्याएँ इस प्रकार है—स्त्रियों की सामाजिक परिस्थिति, समय सारणी; हिंदी में मानकता की समस्या; मान्यता की दृष्टि से अंग्रेज़ी की तुलना में कमी; संपर्क और अनुप्रयोग; हिंग्रेज़ी का दुष्प्रभाव; प्रिंटिंग या छपाई में गलतियाँ; उच्चारण की समस्याएँ—'आ', 'ई', 'ऊ', 'ऐ', 'औ' जैसे दीर्घ स्वरों की समस्या, 'ट' वर्ग, 'ज' व्यंजन उच्चारण एवं संयुक्ताक्षरों की समस्या; सामान्य भूतकाल में 'ने' के प्रयोग की समस्या, सस्ते विदेशी शब्दकोश का अभाव; अच्छे ऑनलाइन शब्दकोश का अभाव, सॉफ़्टवेयर की समस्या बातचीत में हिंदी प्रयोग की कमी।

हिंदी शिक्षण में आनेवाली कुछ समस्याएँ इस प्रकार है—स्त्रियों की सामाजिक परिस्थिति, समय सारणी; हिंदी में मानकता की समस्या; मान्यता की दृष्टि से अंग्रेज़ी की तुलना में कमी; संपर्क और अनुप्रयोग; हिंग्रेज़ी का दुष्प्रभाव; प्रिंटिंग या छपाई में गलतियाँ; उच्चारण की समस्याएँ—'आ', 'ई', 'ऊ', 'ऐ', 'औ' जैसे दीर्घ स्वरों की समस्या, 'ट' वर्ग, 'ज' व्यंजन उच्चारण एवं संयुक्ताक्षरों की समस्या; सामान्य भूतकाल में 'ने' के प्रयोग की समस्या, सस्ते विदेशी शब्दकोश का अभाव; अच्छे ऑनलाइन शब्दकोश का अभाव, सॉफ़्टवेयर की समस्या बातचीत में हिंदी प्रयोग की कमी।

अनुवाद की समस्या

हिंदी सीखने में छात्रगण कुछ रूसी लोक कथाएँ, रूसी से हिंदी में अनुवाद करते रहते हैं। इतने में कई मुश्किलें भी आती हैं। वे शब्द जो रूसी संस्कृति से संबंधित हैं, उनका अनुवाद कठिन होता है। उदाहरण के लिए एक रूसी लोक कथा में 'कोलोबोक' नाम का गुब्बारा जैसे हिरो था। इसमें कहा जाता है कि एक दिन एक बूढ़ी ने अपनी पोती के लिए आटे से एक गेंद सेंक ली। आटे से सेंका गया गोल जीवित होकर उसकी पोती का घर छोड़कर बाहर चला गया। रास्ते में उसको अनेक जानवर मिलते रहते और उसे खाना चाहते मगर वह आटे का गोल सभी का मित्र बन जाता है। विद्यार्थी की कठिनाइयाँ हैं कि रूसी के इन स्थानीय सांस्कृतिक तत्वों का अनुवाद कैसे करें : 'कोलोबोक' को अंग्रेजी शब्द 'ब्रेडबोल' या हिंदी में 'आटा से बना हुआ गोल' का नाम दें?

रूसी छात्र-छात्राओं को पुश्किन मायाकोव्स्कीय के काव्य तथा रजत आयु 'लेरमोंतोव', की कवयित्रियाँ (Silver Age's poetesses) जैसे मरीना त्सवेतायेवा, अन्ना अख्मातोवा के काव्य का हिंदी अनुवाद करना पसंद है। सभी के पसंदीदा लेखक प्रेमचंद हैं। हिंदी पाठ्यक्रम में 'ठाकुर का कुँआ', 'शतरंज के खिलाड़ी' और 'बड़े भाई साहब' कहानियाँ पढ़ाई जाती हैं। महात्मा गांधी के बारे में बहुत से लेख भी पढ़े जाते हैं। रूस के प्रसिद्ध लेखक वसीली शुक्शीन की कहानी 'शरद का' हिंदी अनुवाद भी पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। वसीली शुक्शीन ने ग्रामीण जनता के बारे में बहुत खूब लिखा। यह एक फेरीवाले के जीवन की कहानी थी। द्वितीय विश्व युद्ध में लड़ते-लड़ते उसका सिर घायल हो गया। बढ़ई का काम वह नहीं कर पाया इसलिए उसे फेरीवाले की नौकरी

मिली। उसे युवाकाल की याद आई कि गाँव में एक लड़की रहती थी। उसका नाम मरिया था। अतिसुंदर, गोल चेहरेवाली, हँसमुख युवती थी। फेरीवाला उसे बहुत प्रेम करता था और मरिया भी उससे प्यार करती थी। उनकी शादी होनेवाली थी। उस ज़माने में फेरीवाला कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों के साथ काम करने लगा। कम्युनिस्ट लोगों का समर्थन करके फेरीवाला गाँववाली परंपराओं के विरुद्ध लड़ाई किया करता था। उसकी प्यारी मरिया बड़े ज़मीनदार के परिवार से थी इसीलिए उसने अपनी प्रेमिका के खिलाफ़ लड़ना नहीं चाहा। फेरीवाले को मरिया से विदा लेनी पड़ी। मरिया की शादी एक अमीर परिवार के युवक से हुई थी। एक दिन अंडरटेकर (अंतिम संस्कार का प्रबंध करने वाला) की गाड़ी बाज़ार की गली में पहुँच गई। उसकी मरिया के मृत शरीर का ताबूत गाड़ी पर रखा गया था। उसने नहीं सोचा कि उसकी प्रेमिका ऐसे अचानक मर जाएगी। वह उसकी मृत्यु के लिए तैयार नहीं था। उसे मारिया की भेटों की याद आई। उसने मरिया को अंतिम बार देखना चाहा। फेरीवाले की आँखें आँसुओं से भर गईं। वह अंडरटेकर की गाड़ी का पीछा करने लगा। असंभव है कि उसका प्यार उसके जीवन से इस तरह गायब हो जाएगा। उसने गाड़ी रोक दी मगर मरिया के पति ने फेरीवाले को अपनी प्रेमिका से विदा लेने नहीं दिया, उसका हाल बुरा था। सोचने लगा कि अब कैसे रहे बिना मरिया? बिना प्रेम जीना असंभव है।

हिंदी का प्रसार

रूसी सरकारी मानविकी विश्वविद्यालय में हर साल हिंदी महोत्सव आयोजित किया जाता है जिसका प्रोग्राम बहुत विविधतापूर्ण है। 6 सत्र इस प्रकार हैं 'हिंदी भाषा एवं भाषा वैज्ञानिक अनुसंधान', 'हिंदी साहित्य', 'हिंदी अनुवाद की समस्याएँ', 'हिंदी और तकनीक प्रगति', 'हिंदी और समकालीन दुनिया', 'हिंदी सिनेमा'। प्रसिद्ध विद्वान छात्र-छात्राओं को अपने अनुसंधानों से परिचित कराते हैं तथा अपने भाषण में संस्कृति के मानव विज्ञान अनुसंधान या धर्म व भारतीय राजनीतिक जीवन के विवरण देते हैं।

❐

मास्को, रूस
indiragazi@gmail.com

39 भाषा बनाम साहित्य : हिंदी के संदर्भ में उलझा एक प्रश्न

● प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी

हिंदी भाषा के संदर्भ में एक प्रश्न उठ खड़ा हुआ कि इसका साहित्यिक रूप और भाषायी रूप अलग-अलग है या हिंदी एक साहित्य है और भाषा-रूप उसका एक अंग है। हिंदी का लेखक या साहित्यकार अपने-आपको साहित्य सर्जक तो मानता ही है, साथ ही वह अन्य भाषायी प्रयोजनों या प्रकार्यों में भी अपने को सिद्धहस्त मानता है। अन्य भाषाओं में ऐसी स्थिति हो सकती है किंतु वह इतनी अधिक नहीं है जितनी हिंदी में है। इसमें भाषायी रूप को भी साहित्य के अधीन माना जाता है। अभी तक विद्वान भाषा और साहित्य में अंतर नहीं कर पा रहे। अगर कोई साहित्यकार भाषा संबंधी एक-आध टिप्पणी या लेख लिखता है तो वह स्वत: भाषाविद या भाषा विज्ञानी भी हो जाता है क्योंकि वे भाषा को साहित्य का एक छोटा-सा अंश मानते हैं। अगर कोई भाषा विज्ञानी या भाषा विशेषज्ञ साहित्य संबंधी लेख लिखता है तो उसे साहित्यकार की श्रेणी में नहीं रखा जाता जैसे कि वह साहित्य के लिए अछूत हों। वे यह नहीं जानते कि भाषा ही साहित्य का सशक्त और प्राणवान उपादान है। उन्हें यह नहीं मालूम या वे जानना नहीं चाहते कि भाषा के गर्भ से ही साहित्य का जन्म होता है। वस्तुत: साहित्य एक भाषिक कला है जिसमें भाषा ही सौंदर्य को साकार रूप प्रदान करती है और फिर साहित्य का सृजन होता है। भाषा के सिवाय अन्य कोई माध्यम भी तो नहीं है जिससे साहित्य की रचना हो सके। भाषा ऐसा सशक्त माध्यम है जिसमें उसका अपना समाज, संस्कृति, परंपरा, जीवन-शैली आदि समाहित हैं। यह तो संगीत का नाद है जो उसे आस्वाद योग्य बनाता है।

भाषा के दो मुख्य पक्ष हैं—एक का संबंध मानव की सौंदर्यपरक अनुभूतियों के आलंबन से होता है और दूसरे पक्ष का संबंध भाषा के प्रयोजनपरक आयामों से जुड़ा है। भाषा के सौंदर्यपरक आयाम में भाषा सर्जनात्मक होती है जिसका विकास साहित्य की भाषा के रूप में होता है। यह भाषा-रूप कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, आलोचना आदि विभिन्न साहित्यिक विधाओं में निखरकर आता है। इसके साथ-साथ यह भाषा देश-विशेष या क्षेत्र-विशेष के सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक मूल्यों को अपने भीतर समेटे होती है। भाषा के दूसरे पक्ष का संबंध हमारी सामाजिक आवश्यकताओं और जीवन की उस व्यवस्था से होता है जो व्यक्तिपरक होकर समाजपरक भी होता है। यह भाषा का प्रकार्यात्मक आयाम है जिसका प्रयोग किसी प्रयोजन-विशेष या कार्य-विशेष के संदर्भ में होता है। यह भाषा प्रशासन व्यवस्था, मानविकी तथा तकनीकी एवं

शिक्षा : एम.ए., एमलिट, पीएचडी
विशेषता : भाषा विज्ञान, अनुवाद सिद्धांत व अनुप्रयोग, शैली-विज्ञान, कोश-कारिता, भाषा प्रौद्योगिकी, समाज भाषा विज्ञान, आधिकारिक हिंदी-राज भाषा, भाषा शिक्षण, हिंदी भाषा, हिंदी साहित्य।
संप्रति: प्राफ़ेसर व सलाहकार, सी-डैक (Centre for development of Advanced Computing, C-DAC), नोएडा
प्रकाशन: Pedagogical Grammar (1981), Poetics (1971), प्रयोजनमूलक भाषा और कार्यालयी हिंदी (1992 × 1995), व्यावहारिक हिंदी और रचना (1992), Sociolinguistics (Code Switching) (1994), Stylistics and Language of Acharya Ramchandra Shukla (1996), अनुप्रायोगिक हिंदी(2001),हिंदी के विविध रूप और अनुवाद(2005),आधुनिक हिंदी : विविध आयाम (2007),अनुवाद विज्ञान की भूमिका (2008), हिंदी का भाषिक और सामाजिक परिदृश्य (2009) तथा अनेक पुस्तकों का संपादन, सह-संपादन किया है। कई कोशों का संकलन-संपादन भी किया है। विभिन्न अनुवाद कार्य भी किए हैं।
सम्मान:
➢ विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी के विकास के लिए मानस संगम, कानपुर द्वारा सम्मानित
➢ दक्षिण अफ्रीका में हिंदी के प्रचार व विकास के लिए आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी द्वारा सम्मानित।
➢ अमेरिकन बायोग्राफ़िकल इंस्टीट्यूट द्वारा 'मैन ऑव द ईयर 1997' सम्मान।
➢ सेंट्रल वर्ल्ड हिंदी कॉवेंशन; फिजी हिंदी साहित्य समिति, युवा; हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद इत्यादि संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

वैज्ञानिक क्षेत्रों में आविष्कारोन्मुखी होकर देश या राष्ट्र के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सामान्य प्रयोजन के लिए यह भाषा हमारे रोज़मर्रा के जीवन में सामान्य बोलचाल के रूप में प्रयुक्त होती है और विशिष्ट प्रयोजनों साहित्य, विज्ञान, चिकित्सा, वाणिज्य, इंजीनियरी, प्रौद्योगिकी, विधि, बैंकिंग, प्रशासन आदि में विशिष्ट वर्ग द्वारा और विशिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उपयोग की जानेवाली भाषा (रूप) विशिष्ट भाषा होती है। इस दृष्टि से भाषा विविधरूपा और अनेकधर्मी होती है। इसकी अपनी शब्दावली और अपनी संरचना होती है। यही बात हिंदी भाषा पर भी पूरी तरह लागू होती है। हिंदी के अधिकतर साहित्यकार अपने-आपको भाषाविद और भाषा-विशेषज्ञ भी मानते हैं चाहे उनका भाषा संबंधी कोई योगदान न हो लेकिन कोई भाषा-विशेषज्ञ साहित्य में अगर कोई कार्य करता भी हो, उसे साहित्य जगत में स्थान नहीं मिलता।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि अब हिंदी भाषा के कार्यक्षेत्र में विस्तारीकरण हो रहा है। आज के आधुनिकीकरण और भूमंडलीकरण के युग में हिंदी भाषा का भी आधुनिकीकरण तथा भूमंडलीकरण हो रहा है। हमें इसका पूरा लाभ उठाना चाहिए। यदि हम लोगों ने इस तरफ़ ध्यान नहीं दिया तो यह न केवल हिंदी के लिए घातक होगा बल्कि भारतीय भाषाओं के लिए भी हानिकारक होगा। केवल मंच पर हास्य कविताएँ या चुटकुले देने पर काम नहीं होगा। आजकल अधिकतर साहित्य स्तरीय नहीं है। बहुत कम साहित्यकार हैं जिनके साहित्य में गांभीर्य है। कविता तो मृतप्राय होती जा रही है। अब प्रकाशक भी साहित्यिक रचनाएँ प्रकाशित करने में हिचकिचा रहे हैं। वे इसकी जगह प्रयोजनपरक, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी संबंधी साहित्य प्रकाशित करने में रुचि लेने लगे हैं। सत्तर के दशक में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने भाषा के प्रयोजनपरक और संप्रेषणपरक आयामों के पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया था जिसमें प्रयोजनमूलक हिंदी पाठ्यक्रम बड़े ज़ोर-शोर से चले थे जो अब निस्तेज और ढीले हो गए हैं क्योंकि साहित्य के लोग इसके पक्ष में नहीं थे। वे नहीं जानते कि हिंदी अब साहित्य तक सीमित नहीं रह गई है। आज के परिप्रेक्ष्य में उसे अनेक भूमिकाएँ निभानी पड़ती हैं। दैनिक जीवन में हिंदी का प्रयोग विभिन्न संदर्भों और स्थितियों में होता है और इसी प्रकार वाणिज्य, विज्ञान, साहित्य, विधि, प्रशासन में इसके अनेक रूप दिखाई देते हैं। इन्हीं में साहित्यिक हिंदी भी अपनी भूमिका निभाती है। इसी संदर्भ में यह बताना असमीचीन न होगा कि वर्ष 2006 में प्रगत संगणक विकास केंद्र (C-DAC), नोएडा ने एम.टेक (भाषा प्रौद्योगिकी) पाठ्यक्रम महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के संयुक्त तत्वावधान में चलाने का प्रयास किया था। यह पाठ्यक्रम दो वर्ष तक अच्छी तरह चला भी जिसमें हिंदी शिक्षा तथा परीक्षा का मुख्य माध्यम थी। प्रारंभ में हिंदी के कुछ विद्वानों और कुछ वैज्ञानिकों ने इस बात का विरोध किया कि हिंदी इंजीनियरिंग तथा प्रौद्योगिकी के शिक्षा माध्यम की भूमिका निभाने में सक्षम नहीं है। विश्वविद्यालय से केवल दो वर्ष यह पाठ्यक्रम चलाने की अनुमति मिली। यह पाठ्यक्रम सफलतापूर्वक चला लेकिन दो वर्ष के बाद इसे बंद करना पड़ा क्योंकि न तो सरकार से कोई सहयोग मिला और न ही विश्वविद्यालय तथा सी-डैक से। सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी साहित्य के ग्रंथ हिंदी में लिखने-लिखाने के प्रयास भी किए गए, उसकी एक परियोजना भी बनाई गई किंतु अधिकारियों की उदासीनता के कारण उसे ठंडे बस्ते में रख दिया गया। इस प्रकार भारत की राज भाषा हिंदी के विकास और प्रसार में ऐसी बाधाएँ आती रहती हैं, अन्य भारतीय भाषाओं के बारे में क्या कहा जा सकता है?

हिंदी को जब तक साहित्य के अतिरिक्त अन्य विषयों के साथ नहीं जोड़ा जाएगा तब तक हिंदी कभी विश्व के मंच पर नहीं आ सकेगी। भूमंडलीकरण में अंग्रेज़ी का वर्चस्व बढ़ता जाएगा और हिंदी पिछड़ती जाएगी। यदि हिंदी को वाणिज्य-व्यापार, उद्योग, सूचना प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में स्थान नहीं मिलेगा और उसे रोज़गारपरक नहीं बनाया जाएगा तो हिंदी कभी विश्व में अपना महत्वपूर्ण स्थान नहीं बना पाएगी। इसलिए पहले भारत में राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के विकास के लिए काम करना होगा। भारत एक बहुभाषी देश है इसमें अन्य भारतीय भाषाओं के सहयोग की अपेक्षा है। विदेश में हिंदी के प्रति कहीं कोई दुर्भावना दिखाई नहीं दी,

सद्भावना ही मिली है। हिंदी में काम करते हुए लोग प्रसन्न होते हैं। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी वहाँ वैज्ञानिक काम कर रहे हैं। डेनमार्क में कोपनहेगन के एक शैक्षिक संस्थान के कंप्यूटर विज्ञान विभाग में मशीनी अनुवाद पर जो काम हो रहा है, उसमें यूरोपीय भाषाओं के साथ हिंदी में भी काम हो रहा है। इसके अतिरिक्त जापान में एक संस्था ने ए-स्टार परियोजना प्रारंभ की है जिसमें अंग्रेज़ी और जापानी भाषाओं के अतिरिक्त छः एशियाई भाषाएँ भी शामिल हैं जिनमें एक भाषा हिंदी भी है। इस परियोजना के अंतर्गत मशीनी अनुवाद लिखित और मौखिक दोनों रूपों पर काम हो रहा है। अमेरिका में टेक्सास विश्वविद्यालय में हिंदी-उर्दू फ़्लैगशिप परियोजना चल रही है। इसमें विभिन्न विषयों से संबद्ध शिक्षार्थी हिंदी का अध्ययन कर रहे हैं ताकि उन्हें विश्व में अपने-अपने व्यवसायों को हिंदी में करने में सुविधा मिल सके।

इस संदर्भ में यह बताना असमीचीन न होगा कि भारत के कुछेक विश्वविद्यालयों में एम.ए. हिंदी साहित्य में उत्तीर्ण व्यक्ति भाषा या भाषाविज्ञान, पत्रकारिता एवं जनसंचार का अध्ययन-अध्यापन करता है और उसे इन विषयों का कोई औपचारिक प्रशिक्षण नहीं मिला होता है। यहाँ तक कि हिंदी साहित्य शिक्षा प्राप्त कई अध्यापक कंप्यूटेशनल भाषा विज्ञान में अनुसंधान कराते हैं चाहे उन्हें कंप्यूटर चलाना न आता हो। साहित्य में एम.ए. किया व्यक्ति स्वयंभू अनुवादक या अनुवादशास्त्री हो जाता है चाहे उसे दूसरी भाषा का ज्ञान न हो या उसे अनुवाद का कौशल प्राप्त न हुआ हो। इसीलिए शिक्षा का स्तर गिरता जा रहा है। अतः आज शिक्षा के संदर्भ में गंभीरता से विचार करने की नितांत आवश्यकता है।

भारत में हिंदी के प्रयोजनमूलक स्वरूप के अध्ययन का विकास होने लगा है। इसमें कुछ विश्वविद्यालय रुचि ले रहे हैं जिनमें महाराष्ट्र के वर्धा में स्थित महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय और मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में स्थित अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय प्रमुख हैं। इन विश्वविद्यालयों में साहित्य और परंपरागत पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त सूचना प्रौद्योगिकी, प्रबंधन, पत्रकारिता और जनसंचार आदि अनेक प्रयोजनमूलक विषयों पर स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं। अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय में तो लगभग ढाई सौ विषयों के पाठ्यक्रम तैयार भी कर लिए गए हैं जिनमें अर्थशास्त्र, लोक प्रशासन, पुस्तकालय विज्ञान, गणित, सांख्यिकी, भौतिकी, वनस्पतिविज्ञान, रासायनिकी, जैवविज्ञान, सैन्यविज्ञान आदि का अध्ययन-अध्यापन हिंदी माध्यम से होने लगा है। यह विश्वविद्यालय इंजीनियरिंग तथा चिकित्सा के साहित्य को विशेषज्ञों द्वारा हिंदी में लाने का प्रयास कर रहा है। इसके साथ-साथ आज यह भी आवश्यक हो गया है कि साहित्य अकादमियों की तरह भाषा अकादमी का गठन किया जाए जो हिंदी में कार्य करनेवालों को प्रोत्साहन दे तथा उसे रोज़गारपरक बनाने का प्रयास करे। जब तक हिंदी को अन्य कार्यक्षेत्रों में रोज़गारपरक नहीं बनाया जाता तब तक हिंदी का विकास नहीं होगा। यह आज की माँग है।

इस प्रकार आज के फैलते विश्व में हिंदी को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने के लिए इसकी अनेक भूमिकाओं को आगे लाना होगा। इसके विविध रूपों का विकास करना होगा। इसका सृजनात्मक और साहित्यिक रूप कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि विधाओं से मानव में सौंदर्यपरक भाव पैदा करता है और मानवीय चेतना का विकास करता है तो ज्ञान साहित्य विज्ञान, वाणिज्य, प्रौद्योगिकी, प्रशासन आदि से इस प्रगतिशील संसार में मानव की सामाजिक और भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। दोनों का अपना-अपना संसार है। दोनों की अपनी-अपनी मर्यादाएँ हैं। इन दोनों की सीमाएँ एक हद तक लांघी जाएँ तो दोनों अपने-अपने क्षेत्र में विकसित होंगे। भाषा के प्रयोजनमूलक स्वरूप के विकास से भाषा का साहित्यिक स्वरूप पुष्पित और पल्लवित होगा। दोनों की अपनी-अपनी विशिष्टताएँ हैं। दोनों भाषा-रूपों को स्वतंत्र रूप से अगर फलने-फूलने दिया जाता है तो दोनों की समृद्धि होगी।

❐

दिल्ली, भारत
kkgoswami1942@gmail.com

40 सीमाओं के बावजूद अत्यंत सक्षम है देवनागरी लिपि व हिंदी भाषा

• श्री सीताराम गुप्ता

पिछले दिनों 'नवभारत टाइम्स' में (14 जनवरी, 2015 के अंक में) एक लेख प्रकाशित हुआ जिसमें हिंदी भाषा को लुप्त होने से बचाने के लिए देवनागरी लिपि के प्रयोग के बदले रोमन लिपि अपनाने की सलाह दी गई। वैसे इससे पूर्व भी कई विद्वान हिंदी भाषा के लिए रोमन लिपि की वकालत कर अपनी विशेषज्ञता के साथ-साथ अपनी अल्पज्ञता व अज्ञानता तथा अव्यावहारिक व संकुचित दृष्टिकोण का परिचय दे चुके हैं। बाद में 'न.भा.टा.' में (14 जनवरी को) प्रकाशित लेख पर प्रतिक्रिया स्वरूप अनेक विद्वानों व पाठकों के अनेक लेख व पत्र 'न.भा.टा.' में प्रकाशित हुए जिनमें उपरोक्त सलाह या सुझाव को न केवल सिरे से ख़ारिज कर दिया गया अपितु इसे अत्यंत हास्यास्पद व आधारहीन भी बतलाया गया। उपरोक्त चर्चित प्रतिक्रियात्मक सभी लेखों व पत्रों में प्राय: सभी ने हिंदी को एक सशक्त व समृद्ध भाषा के रूप में ही प्रस्तुत किया जो बिल्कुल ठीक है लेकिन लिपि की बात अपेक्षाकृत कम की गई। बात लिपि से प्रारंभ होकर हिंदी के महिमामंडन तक सीमित रही।

जन्म–1954 ई., दिल्ली।

शिक्षा–स्कूली शिक्षा गाँव के विद्यालय से तथा शेष दिल्ली विश्वविद्यालय से। हिंदी के अतिरिक्त रूसी, उर्दू, फ़ारसी व अरबी भाषाओं का अध्ययन। टी.वी. प्रेज़ेंटेशन में डिप्लोमा।

प्रकाशन–कविता संग्रह 'मेटामॉर-फ़ोसिस' तथा 'मन द्वारा उपचार' पुस्तक प्रकाशित। दैनिक 'नवभारत टाइम्स' (नई दिल्ली) में 'द स्पीकिंग ट्री' /'आनंद योग' / 'कल्पवृक्ष' में निरंतर स्तंभ लेखन तथा अन्य कई पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य तथा भाषा विषयक लेख, व्यंग्य, कथा-साहित्य, निबंध व कविताएँ सहित आध्यात्मिक उपचार, व्यक्तित्व विकास व मनुष्य के संपूर्ण रूपांतरण पर नियमित रूप से रचनाएँ प्रकाशित।

कुछ आलेखों में देवनागरी लिपि को विश्व की सबसे वैज्ञानिक लिपि बतलाया गया जबकि रोमन लिपि को अपूर्ण व अवैज्ञानिक लिपि सिद्ध करने के प्रयास किए गए। इसमें संदेह नहीं कि हिंदी भाषा एक अत्यंत सशक्त व समृद्ध भाषा है और हमारे लिए हिंदी भाषा व देवनागरी लिपि दोनों अत्यंत महत्वपूर्ण हैं लेकिन इसका यह अर्थ तो नहीं कि अन्य सभी भाषाएँ और लिपियाँ अपूर्ण व अवैज्ञानिक ही हैं। वास्तव में कोई भी लिपि पूर्णत: वैज्ञानिक या अवैज्ञानिक अथवा पूर्ण या अपूर्ण नहीं होती। कोई भी लिपि कितनी ही वैज्ञानिक अथवा पूर्ण क्यों न हो, दूसरी भाषाओं के लिए वह पूर्णत: सक्षम हो ही नहीं सकती। देवनागरी ही नहीं, रोमन भी इसका अपवाद नहीं हो सकता। वैसे दुनिया में ऐसी भाषाएँ भी हैं जो दो अलग-अलग लिपियों में बराबर लिखी जा रही हैं। यूगोस्लाविया की भाषा सर्बोक्रोशिन रोमन व सिरिलिक; दोनों ही लिपियों में लिखी जाती है और बराबर लिखी जाती है लेकिन मात्र रोमन लिपि जानने से सर्बोक्रोशिन भाषा नहीं आ जाती।

हिंदी के बारे में प्राय: हम एक ज़ोरदार तर्क यह देते हैं कि हम जैसे बोलते हैं वैसे ही लिखते हैं अर्थात हिंदी जैसे लिखी जाती है वैसे ही बोली भी जाती है। यह तथ्य पूर्णत: सत्य नहीं है। हाँ, अंग्रेज़ी के 'बट' व 'पुट' की तरह अत्यंत असंगत उच्चारण हिंदी में नहीं है। कुछ लोगों का आक्षेप है कि हिंदी के 'ट' वर्ग व 'त' वर्ग के लिए अंग्रेज़ी में अलग-अलग ध्वनियाँ नहीं हैं। 'ट' और 'त' दोनों के लिए 'T' तथा 'ड' और 'द' दोनों के लिए 'D' का प्रयोग किया जाता है। वास्तव में अंग्रेज़ी का उच्चारण दोनों से ही भिन्न है। 'ट' वर्ग में जहाँ मूर्धन्य ध्वनियाँ हैं और 'त' वर्ग में दंत्य ध्वनियाँ हैं वहीं अंग्रेज़ी में 'T' और 'D' वर्त्स्य ध्वनियाँ हैं लेकिन इससे अंग्रेज़ी भाषा तथा रोमन लिपि अयोग्य थोड़े ही हो जाती हैं। रूसी भाषा में 'ट' वर्ग की ध्वनियाँ हैं ही नहीं फ़िर भी हम हिंदीवाले प्राय: रूसी

लेखक 'लेव ताल्सतोय' को 'लियो टॉल्स्टॉय' और रूसी समाचार पत्र 'प्रावदा' को 'प्रावडा' ही लिखते हैं। मराठी और हिंदी की एक ही लिपि है, देवनागरी लेकिन हम लोकमान्य 'बालगंगाधर टिलक' को लोकमान्य 'बालगंगाधर तिलक' ही लिखते और बोलते हैं।

रोमन के समर्थकों का कहना है कि रोमन में लिखना सरल है क्योंकि इसमें कम वर्ण हैं जिससे उन्हें सीखना सरल है। हिंदीवालों का कहना है कि रोमन लिपि में बेशक 26 अक्षर ही हैं लेकिन उसमें कैपिटल और स्मॉल दो तरह के अक्षर होने से अक्षर दोगुने हो जाते हैं और प्रिंटिंग और राइटिंग के अलग-अलग अक्षर होने से चार गुना अर्थात कुल 104 अक्षर सीखने पड़ते हैं। कहाँ कैपिटल लैटर्स का इस्तेमाल करना है और कहाँ स्मॉल लैटर्स का, यह जानना भी किसी सिरदर्द से कम नहीं। वैसे जब हिंदीवाले रोमन में लिखते हैं तो ये सब चीज़ें गौण हो जाती हैं। वे मनमाने ढंग से रोमन का इस्तेमाल करते हैं। ज़्यादातर लोगों को सही लिप्यंतरण करना आता ही नहीं। जिसे हिंदी भाषा को सही-सही देवनागरी में लिखना आता हो उसे रोमन में लिखने की ज़रूरत ही क्या है ? नैन नशीले हों अगर तो सुरमे दी की लोड़ ? इससे भाषा और लिपि दोनों विकृत होती हैं। वास्तव में देखें तो लिपि भाषा नहीं है। भाषा सीखना मुश्किल है, लिपि सीखना नहीं। सामान्यत: किसी भी भाषा की लिपि को कुछ घंटों में आसानी से सीखा जा सकता है और पर्याप्त अभ्यास द्वारा लिखने व पढ़ने में निपुणता पाई जा सकती है।

वैसे जब हिंदीवाले रोमन में लिखते हैं तो ये सब चीज़ें गौण हो जाती हैं। वे मनमाने ढंग से रोमन का इस्तेमाल करते हैं। ज़्यादातर लोगों को सही लिप्यंतरण करना आता ही नहीं। जिसे हिंदी भाषा को सही-सही रोमन में लिखना आता हो उसे रोमन में लिखने की ज़रूरत ही क्या है? नैन नशीले हों अगर तो सुरमे दी की लोड़? इससे भाषा और लिपि दोनों विकृत होते हैं। वास्तव में देखें तो लिपि भाषा नहीं है। भाषा सीखना मुश्किल है, लिपि सीखना नहीं।

यदि हम रोमन से देवनागरी की तुलना करें तो रोमन के मुक़ाबले में देवनागरी सीखना अपेक्षाकृत कठिन है। स्वरों को छोड़ दें तो भी देवनागरी में 33 व्यंजन व 3 संयुक्त व्यंजन हैं और पुराने क़ायदों के अनुसार प्रत्येक की बारह-बारह मात्राएँ भी। इस तरह हिंदी की प्रसिद्ध छत्तीसखड़ी में कुल अक्षर हुए 36 गुना बारह अर्थात 432 अक्षर। जहाँ तक 'क्ष', 'त्र', 'ज' के अतिरिक्त 'द्व', 'द्ध', 'ह्न', 'ह्म' आदि अन्य संयुक्त वर्णों का प्रश्न है इनकी संख्या भी चार सौ से ऊपर ही है अत: इन सबको सीखना भी कम श्रमसाध्य नहीं। 'द' के मेल से बने संयुक्त वर्ण 'द्ध' में कई बार साफ़ पता भी नहीं चलता कि 'ध' है या 'घ' है। इन सब संयुक्त वर्णों या अक्षरों के बिना भी हिंदी लिखी जा सकती है लेकिन संयुक्त वर्णों या अक्षरों में जो कलात्मकता अथवा सौंदर्य है, वह अद्वितीय है।

बनावट के लिहाज़ से लिपि सरल हो या कठिन, किसी भाषा की वर्णमाला में कम अक्षर हों या अधिक, मात्र लिपि पढ़ना-लिखना आ जाने से वह भाषा नहीं आती। वैसे तो भाषा व लिपि दोनों की मूल इकाई वर्ण है लेकिन वर्णमाला सिखाने के लिए आजकल वर्णों से नहीं शब्दों से शुरुआत की जाती है। अरबी-फ़ारसी लिपि तो ऐसी है कि वर्णमाला सीखने के बाद भी शब्द लिखने नहीं पड़ते। अरबी-फ़ारसी लिपि में वर्णों को जोड़ना सिखाना भी अपेक्षाकृत कठिन है। लेकिन यदि हमें कोई भाषा बोलनी आती है तो उसे लिखना-पढ़ना सीखना बाएँ हाथ का खेल है। भाषा तो उम्र भर सीखने की चीज़ है लेकिन लिपि के साथ ऐसा नहीं है। हिंदी भाषा जिसे करोड़ों लोग व्यवहार में लाते हैं जो विश्व में दूसरी सबसे ज़्यादा लोगों द्वारा बोली जानेवाली भाषा है उसके अस्तित्व को बचाने के लिए उसकी लिपि देवनागरी को छोड़कर रोमन लिपि अपनाने की वकालत करना अल्पज्ञता ही नहीं पूर्णत: अज्ञानता का परिचायक है।

भाषाओं और लिपियों का विकास स्वाभाविक रूप से होता है जैसा कि कुछ भाषाओं व लिपियों के विषय में कह दिया जाता है न तो कोई भाषा अथवा लिपि ईश्वरीय उपहार है और न किसी भाषा अथवा लिपि को किसी प्रयोगशाला में विकसित किया जा सकता है। यदि कृत्रिम रूप से किसी भाषा अथवा लिपि को बनाकर उसका

प्रयोग करना संभव होता तो आज 'एस्पेरेंतो' नामक भाषा पूरे विश्व में बोली जा रही होती। 'एस्पेरेंतो' एक अत्यंत सरल भाषा के रूप में कृत्रिम रूप से तैयार की गई थी जिसका पूरा व्याकरण एक पोस्टकार्ड पर लिखा जा सकता था। इसे सीखना अत्यंत सरल था लेकिन तब भी किसी ने इसे नहीं अपनाया। एक आम के पेड़ की अलग-अलग शाखाओं पर कलमें बाँधकर अलग-अलग किस्म के आम तो पैदा किए जा सकते हैं लेकिन आम के पेड़ पर दूसरे फलों सेब, संतरे अथवा केले आदि की कलमें बाँधकर सेब, संतरे अथवा केले नहीं पैदा किए जा सकते। इसी प्रकार से किसी भी भाषा को किसी दूसरी भाषा की लिपि में लिखकर उसको जीवित रखना अथवा उसका स्वाभाविक विकास असंभव है।

भाषा अथवा लिपि सरल हो अथवा कठिन वह हमें अपने परिवेश व संस्कृति से मिलती है और हम उसे आसानी से सीख लेते हैं। किसी भी क्षेत्र की भाषा अथवा किसी भी भाषा के लिए प्रयुक्त प्रचलित लोकप्रिय लिपि को बदलना अव्यावहारिक ही नहीं, असंभव भी है। फिर भी दुनिया में कई भाषाओं ने अपनी परंपरागत लिपि को छोड़कर प्रचलित किसी अन्य लोकप्रिय लिपि को अपना लिया लेकिन इसका कारण है उस भाषा का विलुप्ति के कगार पर होना। जिन भाषाओं के बोलनेवालों की संख्या बहुत कम रह जाए अथवा जिन भाषाओं का कोई लिखित रूप न हो अथवा उनकी परंपरागत लिपि का व्यवहार अत्यंत सीमित हो जाए तो ऐसी अवस्था में उन भाषाओं अथवा बोलियों को विलुप्त होने से बचाने के लिए अपने परिवेश की किसी अत्यंत लोकप्रिय लिपि को अपना लेना व्यावहारिक ही नहीं श्रेयस्कर भी है। डोगरी, मैथिली व बोडो आदि कुछ ऐसी ही भाषाएँ हैं जिन्होंने परंपरागत लिपियों को छोड़कर देवनागरी अपना ली है। फ़िर इन भाषाओं का मिज़ाज भी ऐसा है कि इन्हें देवनागरी में अधिकतम शुद्ध रूप से लिखा-पढ़ा जा सकता है लेकिन हिंदी के साथ ऐसी कोई भी विवशता नहीं है। न तो हिंदी विलुप्ति के कगार पर है और न ही इसके बोलनेवालों अथवा व्यवहार में लानेवालों की ही कमी है।

हिंदी भाषा के लिए प्रयुक्त लिपि देवनागरी के बारे में हम जो ज़ोरदार तर्क देते हैं वह यह है कि देवनागरी दुनिया की एकमात्र लिपि है जो आक्षरिक है अर्थात इसमें व्यंजनों के साथ 'अ' स्वर जुड़ा रहता है। भाषा विज्ञान के अनुसार यह गुण नहीं दोष है। एक वैज्ञानिक लिपि को वर्णात्मक होना चाहिए, आक्षरिक नहीं अर्थात उसके लिपिचिह्न भाषा में प्रयुक्त हर व्यंजन व हर स्वर के लिए अलग-अलग होने चाहिए। वैसे भी भाषाएँ और लिपियाँ स्थान सापेक्ष या स्थानीय रूप से विकसित व स्वीकृत व्यवस्थाएँ हैं अन्यथा पूरे विश्व में एक ही भाषा व एक ही लिपि न होती? हर भाषा व लिपि की कुछ विशेषताएँ व सीमाएँ स्वाभाविक हैं। हिंदी की लिपि के आक्षरिक होने का कोई विशेष लाभ नज़र नहीं आता। लेखन के स्तर पर 'अ' को छोड़ दें तो अन्य सभी स्वरों के लिए निर्धारित चिह्न लगाने ही पड़ते हैं। वैसे 'क' में 'ई' जोड़कर 'की' बनाने के बजाय अंग्रेज़ी में 'K' में 'I' या 'EE' जोड़कर 'की' बनाना ज़्यादा वैज्ञानिक है।

हिंदी में 'क' में 'ई' जोड़कर 'की' बनाने के क्रम में 'क' में जो 'अ' समाहित है उसे तो निकाला ही नहीं गया इसलिए इसका सही उच्चारण 'क्अई' अर्थात 'कई' होना चाहिए क्योंकि हमने 'क' और 'ई' को 'की' मान लिया है और 'की' ही बोलते हैं। हिंदी में भी कई दोष हैं जो स्वाभाविक हैं। हिंदी देश के इतने बड़े भूभाग पर बोली जाती है कि उसमें एकरूपता का अभाव होना स्वाभाविक ही है। कहा गया है कि कोस-कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी। देश के अलग-अलग हिस्सों में पैदा होनेवाले किसी भी फल-फूल और वनस्पतियों के रंग-रूप व स्वाद में अंतर मिलता है और संस्कृति में भी। भाषा भी संस्कृति का ही एक अंग है। हिंदी में हम 'कमल' लिखते हैं लेकिन 'कमल्' बोलते हैं और 'कमला' लिखते हैं लेकिन 'कम्ला' बोलते हैं। प्राय: अंतिम या बीच का कोई एक अकारांत वर्ण या अक्षर स्वररहित या हलंत हो जाता है।

हिंदी के विषय में हम प्राय: ये भी कहते हैं कि हिंदी में जो ध्वनियाँ हैं वे पूर्ण हैं अर्थात हिंदी की लिपि देवनागरी में न केवल हिंदी की अपितु दुनिया की सभी भाषाओं की ध्वनियों को लिखा या उनकी लिपियों को लिप्यंतरित किया जा सकता है। यह एक बड़ी

ग़लतफ़हमी है। दुनिया की सभी भाषाओं में कुछ ध्वनियाँ कॉमन हैं तो कुछ अन्य भाषाओं से एकदम अलग हैं। दुनिया की सभी भाषाओं को छोड़िए हिंदी की अपनी व हिंदी की सभी बोलियों व उपबोलियों की सारी ध्वनियों तक को (जो हिंदी ही है) देवनागरी में सही-सही नहीं लिखा जा सकता। हरियाणवी बोली को ही लीजिए। उसे देवनागरी में लिखने का प्रयास तो किया जा सकता है लेकिन उसे कोई हरियाणवी बोलने-समझनेवाला ही पढ़ सकेगा अन्य कोई नहीं। कोई अन्य पढ़ेगा तो ग़लत ही पढ़ेगा और उच्चारण भी हास्यास्पद ही होगा। हरियाणा के एक विद्यालय में एक अध्यापक बच्चों को पढ़ा रहे थे। उन्होंने ब्लैक बोर्ड पर गाय लिखा और बच्चों से कहा, ''बोलो गा+य गाय।'' बार-बार समझाने के बावजूद एक बच्चा बोल रहा था, ''गा+य गावड़ी।'' वहाँ 'गाय' को 'गावड़ी' कहा जाता है। इससे क्या पता चलता है?

हाँ, हिंदी की सबसे बड़ी विशेषता है इसकी सर्वग्राह्यता। हिंदी ने न केवल अनेक विदेशी व भारतीय भाषाओं के शब्दों को आत्मसात कर लिया है अपितु उनके सही उच्चारण की भी व्यवस्था की है। Coffee, Doctor जैसे अंग्रेज़ी शब्दों में प्रयुक्त स्वर 'ऑ' को पूरी तरह से अपना लिया है। लेखन के स्तर पर ही (कॉफ़ी, डॉक्टर आदि) नहीं, उच्चारण के स्तर पर भी। इसी तरह Z के सही लेखन व उच्चारण के लिए 'ज' पर नुक़्ता या बिंदु लगाकर 'ज़' बना लिया गया है। अंग्रेज़ी की तरह ही उर्दू-फ़ारसी की उन ध्वनियों के लिए भी जो हिंदी में नहीं हैं ऐसा ही किया गया है। हिंदी की ध्वनियों क, ख, ग, ज, फ में नुक़्ते लगाकर क़, ख़, ग़, ज़, फ़ बना लिया गया है जो उर्दू के अनुकूल हैं। उर्दू में प्रयुक्त अरबी-फ़ारसी लिपि में ज़ाल, ज़े, ज़्वाद व ज़ोए चार ऐसे वर्ण व ध्वनियाँ हैं जो 'ज़' से मिलती-जुलती हैं और बिल्कुल अलग व विशिष्ट हैं लेकिन हिंदी में इन पाँचों के लिए एक ही 'ज़' प्रयुक्त किया जा रहा है। इसी तरह उर्दू में 'स' के लिए दो वर्ण सीन व स्वाद हैं और दो ही ध्वनियाँ हैं लेकिन हिंदी में एक वर्ण से ही काम चला लिया जाता है। किसी भी भाषा में दूसरी भाषाओं की हर ध्वनि के लिए नया चिह्न बनाना संभव भी नहीं अत: कई बार विदेशी शब्दों का अपनी भाषा की प्रकृति के अनुसार सरलीकरण करके समस्या का हल निकाल लिया जाता है जैसे अंग्रेज़ी के 'हॉस्पीटल' का हिंदी में 'अस्पताल' बन गया है। हिंदी में यह बड़ी विशेषता है जिसके कारण उसे किसी बाहरी लिपि को अपनाने की ज़रूरत ही नहीं।

कई लोग इस बात पर विशेष रूप से बल देते हैं कि संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि कंप्यूटर पर काम करने के लिए अन्य भाषाओं के मुक़ाबले में अधिक सरल व सक्षम है। इस तथ्य का कोई प्रमाण नहीं, मात्र कोरी भावुकता है। कंप्यूटर में आप जो डालेंगे, वही पाएँगे। आप कंप्यूटर में जिस भाषा में व जिन अक्षरों या फ़ॉण्ट में प्रोग्राम डालेंगे उसी में काम कर सकते हैं इसमें संदेह नहीं। कोई भाषा कितने लोगों द्वारा बोली जाती है अथवा उसका साहित्य कितना समृद्ध है इससे कंप्यूटर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कंप्यूटर पर इस बात का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि भाषा विशेष के लिखने और बोलने में कितनी विभिन्नता या अंतर है। भाषा जिसकी कोई भी लिपि है उसे सरलतापूर्वक कंप्यूटर के लिए प्रोग्राम व इस्तेमाल किया जा सकता है। हिंदी या देवनागरी ही विशिष्ट रूप से कोई कंप्यूटर फ्रेंडली भाषा अथवा लिपि नहीं है।

वैसे तो कई लोग हिंदी या संस्कृत ठीक प्रकार से जानते भी नहीं लेकिन हिंदी व संस्कृत के समर्थन में हमारे राजनेताओं के चुनावी जुमलों की तरह ऐसे-ऐसे जुमले बोल जाते हैं जिनको गले से उतारना मुश्किल ही नहीं असंभव भी होता है। प्राय: हम शेखी बघारते हुए दावा करते हैं कि संसार की तमाम भाषाएँ संस्कृत से ही विकसित हुई हैं या दुनिया की सभी लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही निकली हैं या हमारी दुनिया का समस्त ज्ञान हमारे वैदिक साहित्य में उपलब्ध है। इस संबंध में देश के प्रबुद्ध चिंतक व जाने-माने वैज्ञानिक प्रो. यशपाल के विचार अत्यंत प्रासंगिक हैं। प्रो. यशपाल का कहना है कि संस्कृत हमारे देश की प्राचीन भाषा है अत: इसे सीखने में कोई बुराई नहीं है मगर ऐसा हरगिज़ नहीं है कि आप संस्कृत नहीं पढ़ेंगे तो ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकेंगे और यह कहना भी आंशिक रूप से ही सत्य है कि वेदों में ही सारे संसार का ज्ञान उपलब्ध है।

हम हिंदी जाननेवाले सभी लोग देवनागरी लिपि अच्छी तरह

से जानते हैं। देवनागरी लिपि में और भी कई प्रमुख भाषाएँ लिखी जाती हैं जैसे संस्कृत, मराठी, नेपाली, डोगरी, मैथिली व बोडो आदि। इसके अतिरिक्त सिंधी जैसी भाषाएँ लिखने के लिए भी देवनागरी लिपि का इस्तेमाल किया जा रहा है लेकिन देवनागरी लिपि जानने के बावजूद हम उपरोक्त सभी भाषाएँ नहीं जानते। संस्कृत, जो हिंदी की जननी है उसे भी नहीं जानते। लिपि जानने मात्र से न तो कोई भाषा आती है और न दूसरी किसी लिपि से किसी समृद्ध भाषा का विकास ही संभव है। हाँ कई बार ऐसा ज़रूर होता है कि हमें कोई लिपि न आने के बावजूद कोई भाषा आती है। हमारे यहाँ ऐसी भाषा है—उर्दू।

उर्दू वास्तव में हिंदी की ही एक शैली है जो अरबी-फ़ारसी लिपि में लिखी जाती है और जिसमें अरबी, फ़ारसी व तुर्की के शब्द हिंदी के मुक़ाबले ज़्यादा हैं। आज उर्दू का अधिकांश नया व पुराना साहित्य हिंदी अथवा देवनागरी में उपलब्ध है, विशेष रूप से काव्य लेकिन वह अनुवाद नहीं लिप्यंतरण है। कुछ लोगों का विचार है कि उर्दू भाषा को बचाने के लिए देवनागरी लिपि को अपना लेना चाहिए। मेरा मानना है कि उर्दू के लिए जिस दिन देवनागरी लिपि अपना ली जाएगी न केवल उर्दू का विकास रुक जाएगा अपितु वह हिंदी हो जाएगी। किसी भाषा को बेमौत मारना कहाँ की समझदारी है ? उर्दू और हिंदी का व्याकरण अथवा वाक्य रचना समान है सिर्फ़ कुछ शब्दों का अंतर है। जो महत्वपूर्ण अंतर है वह लिपि का ही है। वैसे भी उर्दू की लिपि अत्यंत कलात्मक है और इसे एक कला के रूप में अलग से भी सिखाया जाता है। उर्दू लिपि का समाप्त होना एक कला की समाप्ति होगी इसमें संदेह नहीं।

''उर्दू ज़बान अरबी-फ़ारसी रस्मुलख़त में तहरीर की जाती है'' इसका हिंदी अनुवाद होगा ''उर्दू भाषा अरबी-फ़ारसी लिपि में लिखी जाती है।'' यहाँ 'ज़बान' को भाषा, 'रस्मुलख़त' को लिपि व 'तहरीर' करने को लिखना लिखा गया है लेकिन वाक्य विन्यास में कोई फ़र्क नहीं है। पहले कर्ता फिर कर्म और अंत में क्रिया। क्रिया रूप हिंदी में लिंग व वचन के अनुसार ही बदलते हैं। सामान्य बोलचाल की भाषा में तो शब्दों का अंतर भी नहीं है। ''मैं जा रहा हूँ'' का उर्दू अनुवाद भी ''मैं जा रहा हूँ'' ही होगा। केवल लिपि बदल जाएगी लेकिन इसके बावजूद उर्दू भाषा की लिपि को बदलना किसी भी तरह मुनासिब नहीं। उर्दू भाषा में जो विशिष्टता है वह विशिष्ट शब्दों व लिपि दोनों के कारण है। यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है और वह यह है कि सब हिंदीवाले उर्दू जानते हैं और उर्दूवाले हिंदी जानते हैं। यदि वे मात्र एक-दूसरे की लिपियाँ भी सीख लें तो एक और नई भाषा पक्के तौर पर सहज ही उनके खाते में जुड़ जाएगी।

यही स्थिति दिल्ली व आसपास के क्षेत्रों में पंजाबी भाषा की भी है। बहुत सारे लोग पंजाबी भाषा बोलते हैं लेकिन पंजाबी लिखना-पढ़ना नहीं जानते क्योंकि उन्हें गुरुमुखी लिपि नहीं आती। यदि पंजाबी बोलनेवाले जो पंजाबी लिखना-पढ़ना नहीं जानते गुरुमुखी लिपि भी सीख लें तो उर्दू व हिंदीवालों की तरह ही एक और नई भाषा पक्के तौर पर सहज ही उनके खाते में भी जुड़ जाए। उनमें पंजाबी भाषा के प्रति ज़्यादा सम्मान व स्वयं में पंजाबी भाषा के प्रति विश्वास बढ़ जाए। उसका व्यवहार बढ़ जाए। वैसे भी उर्दू व पंजाबी हिंदी के बाद दोनों दिल्ली की दूसरी राजभाषाएँ हैं। स्पष्ट है कि हिंदी जैसी सक्षम भाषा के लिए ही नहीं अन्य भारतीय भाषाओं के लिए भी रोमन की बैसाखी की कोई ज़रूरत नहीं है। हमें चाहिए कि हिंदी ही नहीं वरन जितनी भी भाषाएँ जानते हैं उन सब की लिपियाँ भी जानें व व्यवहार में लाएँ। किसी भाषा को सीखना वर्षों का काम है जबकि लिपि को सीखना कुछ घंटों का।

❑

दिल्ली, भारत
srgupta54@yahoo.co.in

41 क्या रोमन लिपि अपनाने से ही हिंदी बचेगी?

• डॉ. परमानंद पांचाल

हाल ही में दिल्ली के एक हिंदी दैनिक में प्रकाशित चेतन भगत का लेख 'रोमन लिपि अपनाओ हिंदी बचाओ' पढ़कर आश्चर्य हुआ। जहाँ एक ओर सभी लोग नागरी लिपि की वैज्ञानिकता और उसकी श्रेष्ठता की दुहाई दे रहे हैं और इसे कंप्यूटर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त लिपि मान रहे हैं, वहीं कुछ लोग इसे छोड़कर रोमन जैसी अवैज्ञानिक लिपि अपनाने की सलाह दे रहे हैं। उनके विचार से यदि हिंदी ने रोमन लिपि नहीं अपनाई तो वह मर जाएगी। शायद भगत जी यह भूल जाते हैं कि हिंदी का अस्तित्व लगभग एक हज़ार वर्ष से है। उसने अनेक उतार-चढ़ाव देखे, किंतु उसका अस्तित्व शेष रहा। अब से करीब 700 वर्ष पहले अमीर खुसरो (1265-1325) अपनी मसनवी 'नूर-सिपहर' में कहते हैं, हिंदवी ''बूद अस्त दर अय्यामे कुहन'' अर्थात हिंदवी (हिंदी) प्राचीन काल से ही चली आ रही है। अनेक घात-प्रतिघात के बावजूद हिंदी जीवित रही क्योंकि वह जनभाषा है, उसे कोई मार नहीं सकता। इस देश में कई सौ वर्षों तक फ़ारसी राज भाषा रही फिर भी हिंदी अपनी लिपि के साथ जीवित रही। सभी जानते हैं कि मुगल काल में हर पढ़ा-लिखा व्यक्ति फ़ारसी जानता था जिसकी साक्षी यह कहावत है—'हाथ कंगन को आरसी क्या, पढ़े लिखे को फ़ारसी क्या?'

नागरी लिपि परिषद नई दिल्ली के महामंत्री तथा 'नागरी संगम' पत्रिका के प्रधान संपादक हैं। डॉ. पांचाल दक्खिनी हिंदी साहित्य के ख्याति प्राप्त विद्वान, भाषाविद, समीक्षक एवं लेखक हैं। अब तक हिंदी में इनके 20 ग्रंथ और प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में लगभग 400 लेख प्रकाशित हैं।

प्रमुख प्रकाशित पुस्तकें : हिंदी के मुस्लिम साहित्यकार, दक्खिनी हिंदी : विकास और इतिहास, कोहिनूर (निबंध संग्रह), दक्खिनी हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली, विदेशी यात्रियों की नज़र में भारत, भारत के सुंदर द्वीप (पुरस्कृत), कथा दशक, हिंदी भाषा : राजभाषा और लिपि, भारत की महान विभूति 'अमीर खुसरो', सोहनलाल द्विवेदी तथा दक्खिनी हिंदी काव्य संचयन। इनके अतिरिक्त अनेक उर्दू पुस्तकों का हिंदी अनुवाद।

पुरस्कार एवं सम्मान : भारत सरकार द्वारा राहुल सांकृत्यायन पर्यटन पुरस्कार, दिल्ली हिंदी अकादमी साहित्य पुरस्कार, जैनेंद्र कुमार सम्मान, हिंदी रत्न सम्मान, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा 'विद्यावाचस्पति' की मानद उपाधि आदि।

संप्रति : अमीर खुसरो अकादमी तथा मातृ भाषा विकास परिषद के अध्यक्ष और नागरी लिपि परिषद के महासचिव हैं।

कालांतर में उस फ़ारसी का क्या हुआ। वह तो नहीं रही। हिंदी फिर भी रही। हिंदी तो जनभाषा है। वह मरे भी तो कैसे? अंग्रेज़ी काल में अंग्रेज़ी राज भाषा रही किंतु वह हिंदी का स्थान नहीं ले सकी और हिंदी आज भी जीवित है। हिंदी परिवर्तनशील है। इतिहास के हर मोड़ पर हिंदी के जीवित रहने और लोकप्रिय बने रहने का कारण इसका लचीलापन तथा उसकी वैज्ञानिक और ध्वन्यात्मक लिपि देवनागरी ही है जिसे नकारने का दम भरनेवाले भूल जाते हैं कि देवनागरी लिपि विश्व की सर्वश्रेष्ठ और वैज्ञानिक लिपि है जिसकी प्रशंसा आधुनिक काल के अनेक पश्चिमी विद्वानों ने भी की है। स्वर विज्ञान (फ़ोनोग्राफी) के अनुसंधानकर्ता आइज़ेक पिटमैन का कहना है कि ''संसार में यदि कोई पूर्ण अक्षर हैं तो देवनागरी के हैं।'' प्रो. मोनियर विलियम्स ने कहा था ''देवनागरी अक्षरों से बढ़कर पूर्ण और उत्तम अक्षर दूसरे नहीं हैं।'' जॉन क्राइस्ट तो यहाँ तक कहते हैं कि ''मानव मस्तिष्क से निकली हुई नागरी की वर्णमाला ही पूर्ण है।'' रोमन लिपि के सबसे बड़े समर्थक सर विलियम जॉन्स को भी कहना पड़ा था कि ''हमारी भाषा अंग्रेज़ी की वर्णमाला तथा वर्तनी अवैज्ञानिक तथा किसी रूप में हास्यास्पद भी है।''

जार्ज बनार्ड शॉ जैसे अंग्रेज़ी के विद्वान रोमन लिपि से खिन्न थे। डॉ. आर्थर

मैक्डॉनल ने अपनी लिपि रोमन को हास्यास्पद बताते हुए लिखा था, ''हम यूरोपियन लोग इस वैज्ञानिक युग में 2500 वर्ष बाद भी उस वर्णमाला को गले से लगाए हुए हैं जिसे ग्रीकों ने पुराने सैमेटिक लोगों से अपनाया था जो हमारी भाषाओं के समस्त ध्वनि समुच्चय का प्रकाशन करने में असमर्थ है तथा तीन हज़ार साल पुराने अवैज्ञानिक स्वर-व्यंजन मिश्रण का बोझ अब भी पीठ पर लादे हुए हैं।''

सर्वश्री एफ. एस. ग्राउसु, व्यूलर हार्नलें, हुक्स मैक्डॉनल थामस, जॉन शोर तथा आइजेक टेलर जैसे विद्वानों ने भी जी खोलकर नागरी लिपि की प्रशंसा की है। सभी जानते हैं कि रोमन में उच्चारण की दृष्टि से एकरूपता का होना कठिन है। स्वयं अंग्रेज़ी और फ्रेंच भाषाएँ इसका जीवंत उदाहरण हैं। रोमन के कारण अंग्रेज़ी शब्दों के उच्चारण में सर्वत्र अराजकता है। स्वयं अंग्रेज़ी-भाषी लोग भी रोमन लिपि के कारण शब्दों का उच्चारण भिन्न-भिन्न रूप से करते हैं। इसी कारण विभिन्न क्षेत्रों और देशों में एक ही शब्द का उच्चारण भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाता है। बोलने से लिखने तक कहीं कोई समानता नहीं है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 में देवनागरी लिपि को भारत की राजभाषा हिंदी की आधिकारिक लिपि स्वीकार किया गया है। देवनागरी मात्र हिंदी की ही लिपि नहीं है संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल संस्कृत, मराठी, डोगरी, बोडो, नेपाली, मैथिली आदि भाषाओं की आधिकारिक लिपि भी है। संथाली, कोंकणी तथा सिंधी के अतिरिक्त अपभ्रंश और प्राकृत भी नागरी में ही लिखी जाती हैं। भारत के संविधान निर्माता इतने नासमझ नहीं थे कि वे बिना सोचे-समझे नागरी लिपि को राज भाषा हिंदी की अधिकृत लिपि स्वीकार करते।

पिछले दिनों टाइम्स ऑव इंडिया में एक समाचार प्रकाशित हुआ था कि ब्रिटिश लाइब्रेरी का रिसर्च इंस्टीट्यूशन लोगों से कुछ अंग्रेज़ी शब्दों के सही उच्चारण आमंत्रित कर रहा है क्योंकि भिन्न-भिन्न लोग एक ही शब्द का उच्चारण भिन्न-भिन्न प्रकार से कर रहे हैं जैसे टमाटर के लिए Tomato और कुछ लोग Tomatao कहते हैं। इसी प्रकार मैरिज़ को marriage के वजन से बोला जाए या mitage के वजन पर। eat का भूतकाल ate हो या att होगा। इस प्रकार रोमन के कारण एक अराजकता है। ये उदाहरण मैंने इसलिए दिए हैं कि हिंदी के लिए जिस रोमन लिपि की सिफ़ारिश विद्वान लेखक ने की है उसकी हकीकत स्वयं रोमन के प्रयोक्ताओं के मुंह से ही सुन ली जाए।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 में देवनागरी लिपि को भारत की राजभाषा हिंदी की आधिकारिक लिपि स्वीकार किया गया है। देवनागरी मात्र हिंदी की ही लिपि नहीं है संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल संस्कृत, मराठी, डोगरी, बोडो, नेपाली, मैथिली आदि भाषाओं की आधिकारिक लिपि भी है। संथाली, कोंकणी तथा सिंधी के अतिरिक्त अपभ्रंश और प्राकृत भी नागरी में ही लिखी जाती हैं। भारत के संविधान निर्माता इतने नासमझ नहीं थे कि वे बिना सोचे-समझे नागरी लिपि को राज भाषा हिंदी की अधिकृत लिपि स्वीकार करते। पर्याप्त विचार-मंथन के बाद ही नागरी को अपनाने का निर्णय लिया गया था। यह देश का दुर्भाग्य ही माना जाएगा कि उनके उत्तराधिकारी देश के कर्णधारों ने उसे सच्चे मन से कार्यान्वित करने में विशेष रुचि नहीं दिखाई और शिक्षा पद्धति में तदानुसार परिवर्तन नहीं किया गया। समय-समय पर गठित शिक्षा आयोग कहते रहे कि शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाओं को बनाया जाए और बच्चे की प्राथमिक शिक्षा उसकी मातृ भाषा में ही दी जाए किंतु गुलामी की मानसिकता में पले और दीक्षित हुए सरकारी तंत्र के नौकरशाहों ने अपनी ढुलमुल कार्यप्रणाली के तहत इसे लागू ही नहीं होने दिया। स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े देशभक्त लोग धीरे-धीरे विदा होते गए और वह भावना भी मंद पड़ती गई जो राष्ट्र की एकता के लिए राष्ट्र भाषा हिंदी और भारतीय भाषाओं को समीप लानेवाली लिपि, देवनागरी को आवश्यक मानते थे। कहना न होगा कि बाद की पीढ़ी के नेता स्वार्थवश क्षेत्रीय राजनीति और संकीर्ण मानसिकता के शिकार होते गए। फलत: एकता के स्थान पर अलगाव के स्वर सुनाई देने लगे और राष्ट्रीय मुद्दे हाशिए पर चले गए। समाज में अपना वर्चस्व बनाए रखने की मानसिकता ने ब्रिटिश राज की दोहरी

शिक्षा प्रणाली को ही जारी रखा। अंग्रेज़ी माध्यम के प्राइवेट स्कूलों की बाढ़ सी आ गई। शिक्षा एक उद्योग में तब्दील हो गई। अंग्रेज़ी माध्यम के निजी स्कूलों में अपने बच्चों को पढ़ाना सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक बन गया। फलत: अंग्रेज़ी और रोमन लिपि ही सर्वत्र छाती चली गई।

श्री सेम पित्रोदा की अध्यक्षता में गठित 'ज्ञान आयोग' की सिफ़ारिश ने तो रही-सही कमी को और पूरा कर दिया। अंग्रेज़ी को पहली कक्षा से अनिवार्य रूप से पढ़ाए जाने की सिफ़ारिश ने बच्चों को मातृ भाषा से बिल्कुल विमुख ही कर दिया। वे पहली और नर्सरी कक्षा से ही अंग्रेज़ी और रोमन लिपि सीखकर हिंदी और देवनागरी जैसी श्रेष्ठ वैज्ञानिक लिपि से दूर होने लगे। यही कारण है कि रोमन लिपि के अभ्यस्त छात्रों को नागरी लिपि पराई लगने लगी और रोमन सुविधाजनक। परिणामत: एस.एम.एस. पर उलटी-सीधी हिंदी रोमन लिपि में लिखी जाने लगी क्योंकि उन्हें नागरी का अभ्यास ही नहीं रह गया था। इसके लिए नागरी लिपि की कमज़ोरी नहीं हमारी शिक्षा नीति उत्तरदायी है। सबसे बड़ी बात यह है कि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पहली कक्षा से ही शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी को बनाया जा रहा है जो सर्वथा अनुचित और अस्वाभाविक है। अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा के हम विरोधी नहीं हम शिक्षा माध्यम के रूप में किसी विदेशी भाषा के प्रयोग को उचित नहीं मानते। गांधी जी तो अंग्रेज़ी माध्यम के बिल्कुल विरुद्ध थे। जो भाषा शिक्षा का माध्यम नहीं होती वह एक बोली कविता, कहानी आदि की भाषा के रूप में ही सीमित रह जाती है। ज्ञान-विज्ञान, प्रौद्योगिकी राजनय और व्यापार की भाषा नहीं बन पाती। अंग्रेज़ी माध्यम के कारण ही रोमन लिपि का प्रचलन बढ़ा है। इसे रोमन लिपि की श्रेष्ठता नहीं कहा जा सकता। क्या इसलिए हिंदी को भी रोमन लिपि अपना लेनी चाहिए? यह स्थिति नागरी लिपि में नहीं है। यहाँ उच्चारण की स्थिति निर्धारित और सुनिश्चित है। इसमें जैसा बोलोगे वैसा लिखोगे और जैसा लिखोगे वैसा पढ़ोगे। देवनागरी हिंदी के लिए एक वरदान है।

सभी जानते हैं कि उर्दू ने फ़ारसी लिपि को अपनाया है किंतु ज़मीनी हकीकत यह है कि आज का उर्दू साहित्य नागरी में ही सर्वाधिक लोकप्रिय हो रहा है। फ़ारसी या रोमन में नहीं। पूर्वोत्तर भारत के अरुणाचल प्रदेश, मेघालय और नागालैंड जैसे राज्यों की बोलियों की कोई लिपि नहीं हैं। वे अपनी बोलियों को जीवित रखने के लिए नागरी लिपि ही अपना रहें हैं क्योंकि इस लिपि में ही उनका स्वाभाविक उच्चारण सुरक्षित रह सकता है, रोमन में नहीं।

विश्व के विद्वान अब यह मानने लगे हैं कि अपने ध्वन्यात्मक और वैज्ञानिक गुणों के आधार पर नागरी लिपि विश्व लिपि बनने की क्षमता रखती है। लिप्यन्तरण और प्रतिलेखन की दृष्टि से भी यह सबसे उपयुक्त लिपि है, रोमन और फ़ारसी आदि नहीं। कहने को रोमन लिपि में 26 अक्षर हैं किंतु उनके 'कैपिटल और स्मॉल' अक्षर दो प्रकार होने से 26 गुना अर्थात 104 प्रकार के अक्षर सीखने होते हैं। क्या यह कम पेचीदा काम है?

विश्व के विद्वान अब यह मानने लगे हैं कि अपने ध्वन्यात्मक और वैज्ञानिक गुणों के आधार पर नागरी लिपि विश्व लिपि बनने की क्षमता रखती है। लिप्यन्तरण और प्रतिलेखन की दृष्टि से भी यह सबसे उपयुक्त लिपि है, रोमन और फ़ारसी आदि नहीं। कहने को रोमन लिपि में 26 अक्षर हैं किंतु उनके 'कैपिटल और स्मॉल' अक्षर दो प्रकार होने से 26 गुना अर्थात 104 प्रकार के अक्षर सीखने होते हैं। क्या यह कम पेचीदा काम है?

सभी जानते हैं कि आज विश्व में हिंदी का प्रचलन बढ़ रहा है और इसे विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा मानी जाती है। यह भी एक तथ्य है कि विश्व में हिंदी जहाँ गई अपने साथ अपनी लिपि देवनागरी भी लेती गई। देखा जाए तो देवनागरी लिपि भारत की एक पहचान भी है। क्या हम अपनी इस पहचान को मिटा दें?

सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि क्या रोमन में हिंदी की ध्वनियों को सुरक्षित रखा जा सकता है? क्या हिंदी के शब्दों का रोमन लिपि में सही उच्चारण भी हो सकता है? यदि नहीं तो फिर ऐसी लिपि को

ओढ़ने से क्या लाभ है ? डॉ. सुनीति कुमार चाटुर्ज्या जैसे विद्वानों ने भी ऐसा सुझाव एक बार दिया अवश्य था किंतु वह किसी के भी गले नहीं उतरा। नागरी लिपि में एक ध्वनि के लिए एक ही लिपि चिह्न है, इसमें जैसा लिखा जाता है वैसा ही पढ़ा जाता है। यह विशेषता रोमन और फ़ारसी आदि लिपियों में हरगिज़ नहीं है। नागरी एक विकासशील लिपि है। आवश्यकतानुसार इसमें नए लिपि चिह्न भी शामिल होते रहे हैं। इसकी वर्णमाला बड़ी वैज्ञानिक है। इसमें ह्रस्व और दीर्घ मात्राओं का भेद सुस्पष्ट है। रोमन में लिखे शब्द 'Kamal' को आप ही पढ़कर बताइए क्या कहेंगे ? 'कमल', 'कामल', 'कामाल' या 'कमाल'। रोमन की वकालत करनेवाले अंग्रेज़ी लेखक चेतन भगत के नाम 'Chetan' का उच्चारण 'चेतन' हो या 'केतन' इसका निर्णय भी आसान नहीं होगा क्योंकि 'Ch' का उच्चारण 'च' ही नहीं 'क' भी होता है।

जहाँ तक विज्ञापन का प्रश्न है अब विज्ञापन की भाषा धीरे-धीरे हिंदी बन रही है। उसमें अंग्रेज़ी के शब्दों का बाहुल्य अवश्य बढ़ा है किंतु वह नागरी में ही। अंग्रेज़ी शब्द को स्वीकार करता है जैसे 'यह दिल माँगे मोर' यहाँ 'मोर' नागरी में ही लिखा जाता है, रोमन में नहीं। अंग्रेज़ी माध्यम के पढ़े-लिखे कुछ लोगों के कारण हिंदी की लिपि को नहीं बदली जा सकती। हिंदी के समाचार पत्र अंग्रेज़ी की अपेक्षा कई गुणा अधिक है। उनकी पाठक संख्या भी अंग्रेज़ी से बहुत ज़्यादा है।

आज यूरोप और अमेरिका आदि देशों में कंप्यूटर सॉफ़्टवेयर के विकास में जो शोधकार्य हो रहा है उसने भी नागरी लिपि की वैज्ञानिकता के प्रति विशेषज्ञों का ध्यान आकृष्ट किया है। स्वयं भारत में भी आज सूचना प्रौद्योगिकी के लिए प्रयुक्त होनेवाले लगभग हर कंप्यूटर, टैब, मोबाइल सहित हर इलैक्ट्रॉनिक डिवाइस में देवनागरी का प्रयोग संभव है। यूनिकोड ने देवनागरी को दुनिया के हर कोने में उपयोगी बना दिया है।

इस सारे विवाद के पीछे असली कारण यह है कि विदेशी कंपनियों का बढ़ता बाज़ार अपने स्वार्थ और माल की बिक्री के कारण हिंदी के बाज़ार पर नियंत्रण पाना चाहते हैं। वे करोड़ों लोगों की भाषा हिंदी को तो बदल नहीं सकते, उसकी लिपि को बदलने के लिए अपना प्रभाव मीडिया के माध्यम से अवश्य डालना चाहते हैं। यहाँ रोमन लिपि का वातावरण बनाना चाहते हैं। हिंदी में अंग्रेज़ी के शब्दों की अनावश्यक भरमार से हिंदी का स्वरूप बदलने के प्रयास हो रहे हैं। इस बहाने यह प्रभाव बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है कि इन्हें रोमन में लिखना सरल होगा। इसलिए हिंदी को रोमन अपना लेनी चाहिए। प्रश्न यह उठता है कि यदि हिंदी को रोमन में लिखा जाए तो क्या वह हिंदी रह जाएगी ? वह तो 'हिंग्लिश' जैसी एक नई भाषा बन जाएगी। इतिहास साक्षी है कि जब हिंदी (हिन्दवी) को फ़ारसी लिपि में लिखा जाने लगा तो वह 'उर्दू' बन गई। अब आप ही बताइए कि क्या हिंदी को अपनी श्रेष्ठ लिपि छोड़कर रोमन जैसी अपूर्ण लिपि अपना लेनी चाहिए ?

दिल्ली, भारत
pnpanchal30@gmail.com

42 रोमन बनाम देवनागरी लिपि

(चेतन भगत का विचार और हिंदी जगत की प्रतिक्रियाएँ)

14 जनवरी, 2015 को नवभारत टाइम्स में प्रकाशित विचार — श्री चेतन भगत

'हिंदी का महत्व बनाम अंग्रेज़ी' हमारे समाज की एक स्थायी बहस है। बड़े पैमाने पर देखें तो इसका विस्तार 'कोई भी देसी भाषा बनाम अंग्रेज़ी' की बहस तक किया जा सकता है, साथ में यह पुछल्ला भी जोड़ा जा सकता है कि किस तरह अंग्रेज़ी स्थानीय भाषाओं को खत्म करती जा रही है। यह राजनीतिक रूप से संवेदनशील मसला है। हर सरकार खुद को अन्य किसी भी सरकार से ज़्यादा हिंदी हितैषी साबित करने पर आमादा है। इसी का नतीजा है कि बीच-बीच में आपको हिंदी उन्नयन अभियानों के दर्शन होते रहते हैं। इसके तहत सरकारी दफ़्तर अनिवार्य रूप से अपने सारे सर्कुलर हिंदी में जारी करते हैं और ज़्यादातर सरकारी स्कूल हिंदी मीडियम में ही डटे रहते हैं।

इस बीच अंग्रेज़ी बिना किसी उन्नयन अभियान के ही अभूतपूर्व गति से आगे बढ़ती जा रही है। वजह यह कि अंग्रेज़ी लोगों को बेहतर करियर की उम्मीद बंधाती है। इससे समाज में उनका रुतबा बढ़ता है। सूचना और मनोरंजन की एक बिल्कुल नई दुनिया उनके सामने खुल जाती है और टेक्नोलॉजी तक पहुँच भी बढ़ती है। हकीकत यही है कि अंग्रेज़ी की सामान्य जानकारी के बिना आप आज एक मोबाइल फ़ोन या बेसिक मेसेजिंग ऐप्स का भी इस्तेमाल नहीं कर सकते।

हिंदी प्रेमियों का दुख

बहुत से हिंदी प्रेमी और शुद्धतावादी आज के नए समाज से दुखी हैं जहाँ युवा अपनी मातृभाषा को दरकिनार कर जल्द से जल्द अंग्रेज़ी की दुनिया में जाने को आतुर हैं लेकिन हिंदी थोपने की जितनी कोशिश वे करते हैं, युवा उससे कहीं ज़्यादा विरोध करते हैं। ऐसे में एक हिंदी-प्रेमी (इसमें मैं भी शामिल हूँ) क्या करे और बाकी तमाम लोग ऐसा क्या करें कि हिंदी एक बोझ या बाध्यता न लगे? इसका समाधान यह है कि रोमन हिंदी अपनाई जाए। रोमन हिंदी हिंगलिश नहीं है। यह देवनागरी की बजाय ऐंग्लो-सैक्सन लिपि में लिखी हुई हिंदी भाषा है। उदाहरण के लिए 'आप कैसे हैं' को इस तरह लिखा जाए: 'aap kaise hain?'

ऐसा करना ज़रूरी क्यों है? ऐंग्लो सैक्सन लिपि व्यापक प्रचलन में है। यह कंप्यूटर के कीबोर्ड और मोबाइल की टच स्क्रीन में इस्तेमाल की जाती है। यह काफ़ी लोकप्रिय है, खासकर युवाओं में। आज करोड़ों भारतीय व्हाट्सऐप का प्रयोग करते हैं जहाँ तकरीबन सारी बातचीत हिंदी में होती है लेकिन इसकी लिपि रोमन हुआ करती है। जी हाँ, देवनागरी लिपि डाउनलोड करने की सुविधा भी है पर शायद ही कोई उसे प्रयोग में लाता हो। कई देवनागरी कीबोर्ड फ़ोन में लिप्यांतरण करते हैं यानी आप पहले रोमन में हिंदी टाइप करते हैं, फिर एक सॉफ़्टवेयर उसका हिंदी टेक्स्ट तैयार करता है। ज़ाहिर है, यूज़र मूल रूप से रोमन हिंदी का ही इस्तेमाल कर रहा है।

रोमन हिंदी बॉलिवुड के पोस्टरों और विज्ञापनों में पहले ही प्रचलित हो चुकी है। ज़्यादातर हिंदी फ़िल्मों के स्क्रीनप्ले रोमन हिंदी में लिखे जा रहे हैं। किसी भी बड़े शहर में घूमने निकलिए, यह मुमकिन नहीं कि रोमन लिपि में लिखे हिंदी कैप्शनोंवाली होर्डिंग्स न दिखें मगर हिंदी के विद्वान, परंपरावादी और इसे बचाने की मुहिम में लगे लोग या तो इन बातों से अनजान हैं या बिल्कुल उदासीन। वे हिंदी भाषा और उसकी लिपि में कोई अंतर नहीं समझते। लोग आज भी हिंदी से प्यार करते हैं। बस आज की टेक्नोलॉजी आधारित ज़िंदगी में उस लिपि को शामिल करना उनके लिए मुश्किल हो गया है।

रोमन लिपि को अपनाकर हम हिंदी को बचा सकते हैं। देश की एकता के लिहाज़ से भी यह बड़ा कदम होगा क्योंकि इससे हिंदी और अंग्रेज़ी बोलनेवाले एक-दूसरे के करीब आएँगे। तय है कि हिंदी के शुद्धतावादी यह सुझाव पसंद नहीं करेंगे। वे हिंदी को बिल्कुल उसी रूप में बनाए रखना चाहते हैं जैसी कि यह थी। मगर वे भूल जाते हैं कि भाषा वक्त के साथ विकसित होती है और आज वैश्वीकरण के दौर में अगर हिंदी एक ग्लोबल स्क्रिप्ट अपनाती है तो यह उसके लिए कई तरह से फ़ायदेमंद होगा। इससे दुनिया भर

में बहुत सारे लोग हिंदी सीखने को प्रोत्साहित होंगे। कई उर्दू शायर अपनी रचनाएँ पारंपरिक उर्दू के बजाय देवनागरी में प्रकाशित कराते रहे हैं। ऐसा वे बड़े स्तर पर अपनी पहुँच बनाने के लिए किया करते हैं लेकिन यह बीते वक्त की बात हो चुकी है। आज के समय की मांग यह है कि हिंदी को एक नए रूप में अपडेट किया जाए। इसकी शुरुआत हम सरकारी सूचनाओं और सार्वजनिक संकेतों को रोमन हिंदी में लाकर कर सकते हैं ताकि लोगों में इसकी प्रतिक्रिया देखी जा सके।

किनारे पड़ने का खतरा

संभावना यह भी है कि रोमन हिंदी प्रिंट मीडिया और किताबों के लिए एक नया उद्योग ही खड़ा कर दे। लाखों लोग इसका इस्तेमाल पहले से करते आ रहे हैं लेकिन अब तक किसी ने इसकी नई संभावनाओं के बारे में सोचा नहीं था। वैश्विक स्तर पर स्वीकार्य लिपि हिंदी भाषा के लिए भी उम्दा साबित होगी। ऐसा न हुआ तो हिंदी के लिए, अंग्रेज़ी के हमले के चलते किनारे पड़ जाने का खतरा बना हुआ है। दरअसल, एक भाषा को हमें शुद्धता के नज़रिए से नहीं देखना चाहिए। उसे समय के साथ चलना और विकसित होना होगा। waqt ke saath badalna zaroori hai मतलब आप समझ ही गए होंगे।

साभार : नवभारत टाइम्स

चेतन भगत के विचार पर हिंदी जगत की प्रतिक्रियाएँ

रोमन अपनाओ, हिंदी बचाओ 14 जनवरी, 2015 को नवभारत टाइम्स में प्रकाशित लेखक चेतन भगत के विचार पर हिंदी प्रेमियों का मत सुधी पाठकों के साथ साझा किया जा रहा है:

सुधा अरोड़ा – सुप्रसिद्ध लेखिका

मेरा मानना है कि चेतन भगत का कहना इतना मायने नहीं रखता कि उसपर बात की जाए। वैसे हममें से कोई भी यह नहीं कहेगा कि देवनागरी लिपि को भी होम कर दिया जाए। भाषा को अख़बारों ने मनमाने तरीके से आहत कर ही दिया है।

लिपि नहीं होगी तो भाषा आखिर कितने दिन ज़िंदा रहेगी? नई पीढ़ी की दिलचस्पी वैसे भी कम हो गई है। इसके लिए स्कूल ज़िम्मेदार हैं जो हिंदी पढ़ाने की शुरुआत दूसरी कक्षा से करते हैं। पूरे विश्व में अंग्रेज़ी को इतनी प्राथमिकता नहीं दी जाती जितनी भारत में दी गई है।

आज वैश्विक स्तर पर यह सिद्ध हो चुका है कि हिंदी भाषा अपनी लिपि और ध्वन्यात्मकता (उच्चारण) के लिहाज़ से सबसे शुद्ध और विज्ञान-सम्मत भाषा है। हमारे यहाँ एक अक्षर से एक ही ध्वनि निकलती है और एक बिंदु (अनुस्वार) का भी अपना महत्व है। दूसरी भाषाओं में यह वैज्ञानिकता नहीं पाई जाती। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ग्राह्य भाषा अंग्रेज़ी को ही देखें वहाँ एक ही ध्वनि के लिए कितनी तरह के अक्षर उपयोग में लाए जाते हैं जैसे 'ई' की ध्वनि के लिए 'ee' (see) 'i' (sin) 'ea' (tea) 'ey' (key) 'eo' (people) इतने अक्षर हैं कि एक बच्चे के लिए उन्हें याद रखना मुश्किल है, इसी तरह 'क' के उच्चारण के लिए तो कभी c (cat) तो कभी k (king)। ch का उच्चारण किसी शब्द में 'क' होता है तो किसी में 'च'। ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं। आश्चर्य की बात है कि ऐसी अनियमित और अव्यवस्थित, मुश्किल अंग्रेज़ी हमारे बच्चे चार साल की उम्र में सीख जाते हैं बल्कि अब तो विदेशों में भी हिंदुस्तानी बच्चों ने स्पेलिंग्स में विश्व स्तर पर रिकॉर्ड कायम किए हैं जबकि इंग्लैंड में स्कूली शिक्षिकाएँ भी अंग्रेज़ी की सही स्पेलिंग्स लिख नहीं पातीं।

हमारे यही अंग्रेज़ी भाषा के धुरंधर बच्चे कॉलेज में पहुँचकर भी हिंदी में मात्राओं और हिज्जों की ग़लतियाँ करते हैं और उन्हें सही हिंदी नहीं आती जबकि हिंदी सीखना दूसरी अन्य भाषाओं के मुकाबले कहीं ज़्यादा आसान है। इसमें दोष किसका है? क्या इन कारणों की पड़ताल नहीं की जानी चाहिए? (देवनागरी लिपि की ध्वन्यात्मक वैज्ञानिकता देखने के बाद अब नए मॉन्टेसरी स्कूलों में

बच्चों को ए बी सी डी ई एफ जी एच की जगह अ ब क द ए फ ग ह पढ़ाया जाता है।) भारत में अपनी भाषा की दुर्दशा के लिए सबसे पहले तो हमारा भाषाई दृष्टिकोण ज़िम्मेदार है जिसके तहत हमने अंग्रेज़ी को एक संभ्रांत वर्ग की भाषा बना रखा है। हम अंग्रेज़ी के प्रति दुर्भावना न रखें पर अपनी राष्ट्र भाषा को उसका उचित सम्मान तो दें जिसकी वह हकदार है।

स्वरांगी साने – युवा लेखिका

यदि रोमन में ही लिखना है तो सीधे अंग्रेज़ी में ही लिखें किसने रोका है? किसी भाषा की आत्मा उसकी लिपि होती है, लिपि को नष्ट करना भाषा को नष्ट करना है, मेरा रोमन में हिंदी लिखने के प्रति कड़ा विरोध है।

अलकनंदा साने – वरिष्ठ लेखिका

मैं चेतन भगत से बिल्कुल भी सहमत नहीं हूँ। देवनागरी एक वैज्ञानिक लिपि है और हमारी हिंदी की (इसमें मराठी को भी रखा जा सकता है) विशेषता है कि हम जैसा बोलते हैं वैसा ही लिखते हैं। इससे भाषा का इस्तेमाल आसान हो जाता है। हिंदी को रोमन में लिखने से शुद्धता और भावाभिव्यक्ति में खलल पैदा हो सकता है। रोमन में यदि 'मान' लिखना हो या 'माँ' दोनों की वर्तनी एक ही होती है—maan, इस तरह के दूसरे उदाहरण भी मिल जाएँगे। ऐसे में हमारी भाषा को किस तरह बचाकर रखा जा सकता है?

हमारी भाषा हिंदी को रोमन में लिखने के पीछे उनका एक तर्क यह भी है कि नए उपकरणों से जो हिंदी लिखी जाती है वह Transliteration है जबकि यह पूर्ण सत्य नहीं है। कंप्यूटर पर अलग-अलग हिंदी फ़ॉण्ट उपलब्ध हैं। ज़्यादातर अख़बारों ने अपने फ़ॉण्ट विकसित कर लिए हैं, वहीं मोबाइल और टैब पर हिंदी के न सिर्फ़ 52 अक्षर बल्कि हर अक्षर की पूरी बाराखड़ी उपलब्ध है। चेतन भगत को यह जानकारी नहीं होगी, यह तो संभव नहीं है लेकिन अपने कथ्य के समर्थन में और युवा पीढ़ी को खुश करने के लिए अधूरी जानकारी देकर जन सामान्य को बर्गलाने का घोर निंदनीय कृत्य उन्होंने किया है। चेतन भगत के इस आलेख का पुरजोर विरोध किया जाना चाहिए।

सुनील मिश्र – फ़िल्म समीक्षक

मुझे बिल्कुल भी नहीं लगता कि हिंदी को अब रोमन में लिखना आरंभ कर देना चाहिए। चेतन भगत आज के समय में रचनात्मकता का एक ऐसा उत्पाद बन गए हैं जिन्हें अपनी सीमाओं में ही यह आभास अतिरेकपरक लग रहा है कि वे शाब्दिक स्पर्श से सम्मोहन का सोना बना रहे हैं। ऐसा है नहीं। यह कुछ समय के आभासित हैं, छोटे-छोटे भ्रम हैं, समय के साथ दूर होते चले जाएँगे। चेतन भगत एक धारणा हो सकता है, उनकी अपनी कामना भी हो, विचार के माध्यम से पाठक तक भेज रहे हैं। दरअसल हमारे यहाँ तवज्जो करना ही बात के पक्ष में एक तरह से खड़ा हो जाना होता है क्योंकि अचानक सुर्खियाँ और चर्चाएँ शुरू होती हैं। बहुतेरे मसलों में हम प्राय: उपेक्षा की नीति अपनाते हैं और महत्व न देने का निर्णय लेते हैं। ऐसी बातें, ऐसी चीज़ें क्षणिक उत्तेजना के बाद आप ही मूर्छित और मृत हो जाती हैं। हमारे पास दरअसल बहुत स्वतंत्रता है, हमारे पास अपना एक वैचारिक लोकतंत्र है, वह हमारी बड़ी शक्ति है। चेतन गुणी या ज्ञानी नहीं हैं, वे एक विचार दे रहे हैं, वे प्रस्तावक भी नहीं हो सकते। दरअसल हमें ऐसी बातों के मूल में छिपे भाषा के साथ होनेवाले गहरे छल का आभास बराबर होना चाहिए। सचेत रहेंगे तो फ़िक्र भी करेंगे, बेफ़िक्र हो जाएँगे तो ज़रूर आगे सुप्त और निरीह अवस्था को प्राप्त करेंगे।

डॉ. किसलय पंचोली – कथाकार

लेखक चेतन भगत अच्छा लिख रहे हैं। उनकी हिंदी पाठक वर्ग में अच्छी पैठ है लेकिन उन्हें यह याद रखना चाहिए कि इस पहचान में देवनागरी लिपि का महती योगदान है। ऐसे में उनकी यह बिन मांगी/प्रायोजित सलाह कि 'हिंदी भाषा को देवनागरी लिपि के स्थान पर रोमन लिपि में लिखा जाए तो बेहतर' मानने लायक नहीं है। ऐसी कोई आसमानी मजबूरी नहीं आन पड़ी है। धीरे-धीरे ही सही, हिंदी अपनी मुकम्मल जगह दुनिया के परिदृश्य में भी बनाती

जा रही है। अलबत्ता होना तो यह चाहिए कि हिंदी के लिए तकनीकी दृष्टि से और क्या बेहतर किया जा सकता है, इस पर विचार और काम हो। किसी भी भाषा से उसकी लिपि छीन लेना उसे और पंगु बनाने जैसा है। वैसे ही हिंदी, अंग्रेज़ी शब्दों की ज़रूरत से ज़्यादा आमद से त्रस्त है। इस पर रोमन लिपि का उपयोग तात्कालिक रूप से एक नज़र में तुरंत प्रभाव पैदा करनेवाला भले नज़र आए, दूरगामी रूप से हिंदी भाषा के लिए आत्मघाती ही सिद्ध होगा।

प्रकाश हिंदुस्तानी – वरिष्ठ पत्रकार

देवनागरी लिपि में न केवल संस्कृत और हिंदी लिखी जाती है बल्कि मराठी और नेपाली को भी देवनागरी लिपि में लिखा जाता है।

देवनागरी की वैज्ञानिक प्रणाली के कारण उसकी लोकप्रियता उर्दू और कोंकणी में भी है और उर्दू व कोंकणी की अनेक किताबें और अख़बार भी देवनागरी लिपि में छप रहे हैं।

इसके अलावा अनेकानेक बोलियों ने भी देवनागरी को अपनाया है। कश्मीरी, मैथिली, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी, मारवाड़ी, मेवाड़ी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, निमाड़ी जैसी बोलियाँ देवनागरी की करीबी हैं और वे इसी लिपि को अपना चुकी हैं। इसलिए देवनागरी का कोई विकल्प हो ही नहीं सकता।

बालेंदु दाधीच – वरिष्ठ पत्रकार व तकनीक विशेषज्ञ

चेतन भगत जैसे लेखक जब इस धारा से जुड़ते हैं तो चुनौती गंभीर हो जाती है। कहाँ तो हम सब कहते हैं कि देवनागरी एकमात्र लिपि है जो विश्व की किसी भी भाषा को अंकित करने में सक्षम है और कहाँ स्वनामधन्य, स्वयंसिद्ध, सर्वज्ञाता महानुभावों को अपनी समस्त सीमाओं और त्रुटियों के बावजूद रोमन लिपि में मोक्ष दिखाई देता है। अपने अख़बार कई बार गैर-ज़िम्मेदाराना रुख अपनाते हैं जब वे ऐसे मुद्दों पर एकपक्षीय राय को छापते हैं और दूसरे पक्ष को अपनी राय प्रकट करने के लिए आमंत्रित नहीं करते। बड़ा अफ़सोस यह है कि ये हिंदी के अख़बार हैं।

मुझे एक दुख इस बात का भी है कि प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने सत्ता सँभालने के बाद शुरुआती दिनों में हिंदी के प्रति जो अपनत्व का भाव दिखाया था और अपनी बात को हिंदी में प्रखरता से कहकर व्यापक स्तर पर संदेश भेजा था (जिसका प्रभाव चेतन भगत, स्वामीनाथन एस अंकलेसरिया अय्यर, जुग सुरैया, शोभा डे जैसे लोगों पर पड़ता) वह अब धीरे-धीरे क्षीण हो रहा है। शुरुआती धमाके के बाद स्वयं मोदी जी भी अनेक मौकों पर अंग्रेज़ी में बोलने का मोह नहीं छोड़ पा रहे। आखिर क्यों?

'बड़े शौक से सुन रहा था ज़माना
तुम्हीं सो गए दास्तां कहते कहते!'

बड़ी उम्मीद थी कि इस सरकार के दौर में हिंदी उपेक्षा के दौर से बाहर आ जाएगी। तीन महीने पहले की अपेक्षा आज यह उम्मीद कमज़ोर पड़ी है। खैर, मैंने विषय को मोड़ दे दिया, क्षमा करें। बहरहाल, चेतन भगत को इस बौद्धिक जुगाली का जवाब दिया जाना चाहिए। वैसे आदरणीय असगर वजाहत जी ने भी यह मुद्दा उठाया था लेकिन शायद अब वे भी मानते हैं कि हिंदी के लिए देवनागरी ही स्वाभाविक लिपि है।

मुझे एक दुख और है कि इस तरह के मुद्दे उठाए जाने पर भी हिंदी विमर्श में विशेष हलचल नहीं होती। आखिर क्यों? कितना अच्छा होता कि यह हिंदी के हक में आवाज़ उठाने का प्रबल मंच बन जाता।

दिलीप मंडल – इंडिया टुडे के पूर्व मैनेजिंग एडिटर

चेतन भगत इस नतीजे पर शायद इसलिए पहुँचे हैं क्योंकि देवनागरी में छपी उनकी किताबों का वॉल्यूम उनकी इंग्लिश किताबों की तुलना में कम है। वैसे, मैं यह बात संबंधित आंकड़ों के बग़ैर, किताबों के बाज़ार से संबंधित अपने अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ।

लेकिन चेतन भगत यह भूल रहे हैं कि देवनागरी की दुनिया किताबों से परे भी है। हिंदी की किताबों का कम बिकना कई कारणों से है और देवनागरी स्क्रिप्ट को ही इसके लिए ज़िम्मेदार ठहराना समस्या का सरलीकरण है। न्यूज़पेपर के मामले में भाषा

का गणित पूरी तरह उलट जाता है और वही देवनागरी, न्यूज़पेपर मार्केट में सर्कुलेशन की रानी बनी नज़र आती है। विज्ञापनों की दुनिया का भी सच यही है। भारत जैसे उभरते बाज़ार में जहाँ करोड़ों लोगों का साक्षर होना अभी बाकी है वहाँ मुझे नहीं लगता कि देवनागरी पर फ़िलहाल कोई संकट आनेवाला है। कई करोड़ लोग देवनागरी में ही साक्षर होनेवाले हैं।

माइक्रोसॉफ़्ट से लेकर गूगल और फेसबुक से लेकर कई सोशल साइट्स और एप्स हिंदी और देवनागरी के साथ जीना सीख रहे हैं। मुझे नहीं मालूम कि चेतन भगत किस दुनिया में रहते हैं।

देवेंद्र सिंह सिसोदिया – व्यंग्यकार

मैं उनकी बात से असहमत हूँ। यह उनकी अंग्रेज़ी मानसिकता का परिचायक है। भगत को यह नहीं भूलना चाहिए कि उन्हें पहचान हिंदी भाषियों ने ही दी है। देवनागरी लिपि को नष्ट कर रोमन लिपि थोपने की एक साजिश है। पता नहीं ये हिंदी अख़बार ऐसी मानसिकतावाले लेखकों को इतनी तरज़ीह क्यों देते हैं?

सारंग उपाध्याय – युवा लेखक

हिंदी को रोमन में लिखे जाने का नया प्रयोग बाकायदा साज़िश की तरह फेंका जा रहा है। ताकत बाज़ार की है, वह ड्राइविंग सीट पर है। यह भाषाई लड़ाई है इसमें अंग्रेज़ी पिछड़ती जा रही है और पूरे देश में मुनाफ़ा समेट रही हिंदी को उसे पछाड़ना है।

चेतन भगत साहब अब आपको कौन नहीं समझता? आई.आई.टी., आई.आई.एम. सर पूरा समाज ही अलग है, नहीं होता तो आप हिंदी में एक उपन्यास चिपका देते। यह समाज हिंदी चार दिन में एक बार बोलता भी हो तो पढ़ेगा अंग्रेज़ी में ही। इसलिए आपने यह सवाल उठा दिया। जानता हूँ आप सफल होंगे, क्योंकि हम सवाल उठा रहे हैं। आपका प्रयोग 5 सालों के अंदर सफल होगा सर। आपको बधाइयाँ। बॉलिवुड स्क्रिप्ट राइटर ऐसे ही लिख रहे हैं और आलिया भट्ट ऐसे ही पढ़ रही है। उफ़! किंग खान से लेकर दीपिका दीदी भी। क्या कर सकते हैं? बड़ी कंपनियों के बड़े ब्रैंड एम्बैसेडर हैं।

लब्बो लुआब यह है जनाब कि रोमन में लिखेंगे तो आसानी होगी उस तबके के लिए जो हिंदी नहीं जानता, बोलता है और जो बोलता है, वह अंग्रेज़ी के शब्दों में लिखना चाहता है, उसे देवनागरी में दिक्कत होती है।

क्षमा शर्मा – साहित्यकार

एक ओर चेतन भगत हिंदी अख़बारों में छपने के लिए लालायित रहते हैं, दूसरी ओर वे देवनागरी के स्थान पर रोमन अपनाने की सलाह देते हैं। वे खुद क्यों नहीं देवनागरी को अपना लेते? वे अंग्रेज़ी आलेखों को हिंदी में अनुवाद करके हिंदी अख़बारों में छपवाते हैं। दरअसल हिंदी को हिंदीवाले ही ज़्यादा मार रहे हैं। जब हिंदी के सेमिनार होते हैं तो सवाल उठाए जाते हैं कि अन्य भाषाओं को इसमें स्थान दिया जाना चाहिए और दिया भी जाता है लेकिन अन्य भाषाओं के कार्यक्रमों में हिंदी को कतई स्थान नहीं दिया जाता।

चेन्नई से पॉडिचेरी के दौरान मैंने जो भी बोर्ड देखे वे तमिल और अंग्रेज़ी में तो थे लेकिन वहाँ हिंदी कहीं नहीं दिखाई दे रही थी। यह दुखद है। आज जिस भाषा को 55 करोड़ लोग बोलते हैं, साथ दुनिया की बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ हिंदी में बाज़ार ढूँढ रही हैं, आज दुनिया हिंदी पढ़ना चाहती है, ऐसे में चेतन भगत द्वारा रोमन अपनाने की बात कहना बिल्कुल भी उचित नहीं है।

आमतौर पर हिंदी की कमज़ोरियों की बात की जाती है लेकिन कमियाँ किस भाषा में नहीं हैं? कुछ कमज़ोरियों का यह मतलब तो नहीं कि हम पूरी भाषा या लिपि को ही नकार दें। महाश्वेता देवी ने भी कहा था कि वे हिंदी की कृतज्ञ हैं क्योंकि उन्हें हिंदी से ही ज़्यादा लोकप्रियता मिली थी। हेमा मालिनी, रेखा जैसी दक्षिण की अभिनेत्रियों को भी हिंदी फ़िल्मों में आने के बाद ही देशव्यापी पहचान मिली थी।

प्रियदर्शन – टी.वी. पत्रकार और लेखक

चेतन भगत दरअसल भाषा को सिर्फ़ बाज़ार की चीज़ की तरह देखते हैं और हिंदीभाषियों को उपभोक्ता की तरह। अगर उन्हें यह समझ होती कि भाषा सिर्फ़ इस्तेमाल की वस्तु नहीं होती, उसका स्मृति से, परंपरा से वास्ता होता है, वह अनुभव और कल्पना की भी भाषा होती है तो ऐसे सुझाव नहीं देते। क्या चेतन भगत देवनागरी में अपने अंग्रेज़ी उपन्यास लिख सकते हैं? अगर नहीं तो वे देवनागरी में लिखनेवालों को रोमन में लिखने की सलाह क्यों दे रहे हैं? अंग्रेज़ी का दबदबा इसलिए नहीं है कि वह रोमन में लिखी जाती है बल्कि इसलिए है कि वह इस देश में हुकूमत की भाषा है। इसलिए उसमें रोज़गार है और शान है और इसीलिए लोगों में अंग्रेज़ी सीखने या बोलने की ललक है लेकिन वह एक संस्कृतिविहीन और स्मृतिविहीन भारत बना रही है जिसके स्टार लेखक चेतन भगत जैसे सतही उपन्यासकार ही हो सकते हैं।

ज्योति जैन – कवयित्री

मेरा मानना है कि हिंदी को देवनागरी में ही लिखना चाहिए। चेतन भगत का कहना है कि हिंदी को बचाने के लिए रोमन हिंदी का प्रयोग हो तो कोई हर्ज़ नहीं लेकिन मुझे लगता है यदि हम चाहें और कोशिश करें तो देवनागरी टाइप करना/लिखना सीख सकते हैं।

लेकिन विडंबना यह है कि हमें अपनी संस्कृति, अपनी परंपराएँ और अब अपनी भाषा से भी विमुख करने का षड्यंत्र रचा जा रहा है। इतनी समृद्ध भाषा को कठिन कहकर उसे हाशिए पर डालने का षड्यंत्र।

इसी के चलते मेरे कॉलेज के विद्यार्थी हिंदी बारहखड़ी का 'क' 'ख' तक नहीं जानते। आज टेक्नोलॉजी इतनी उन्नत हो गई है कि देवनागरी को आराम से लिखा जा सकता है, बशर्ते आपकी नीयत हो।

तेजेंद्र शर्मा – वरिष्ठ कथाकार

हम सब जानते हैं कि अगले पाँच सौ साल में रोमन लिपि कभी भी हिंदी भाषा की आधिकारिक लिपि नहीं बन सकती। चेतन भगत एक लेखक है और वह भी अंग्रेज़ी भाषा का लेखक है। उसके मन में एक बात उठी है तो आज के हालात को देखकर उठी है। वह देखता है कि भारत के महानगरों में और विदेश में बसे भारतवंशियों के बच्चे हिंदी बोल तो लेते हैं, मगर लिखना या पढ़ना उनसे छूटता जा रहा है। उसने अपने दिल को टटोला तो उसे रोमन लिपि एक विकल्प सुझाई दिया। इसमें न तो कोई साज़िश है और न ही कोई हत्या का प्रयास।

आप स्वयं और आपके बच्चे और आपके आसपास के युवा एक लंबे अर्से से कम से कम 15 वर्षों से अपने मोबाइल और लैपटॉप पर केवल रोमन लिपि में हिंदी लिख रहे हैं। जब कंप्यूटर में हिंदी फ़ॉण्ट की अराजकता फैली हुई थी तो हम सब को रोमन लिपि ही एक विकल्प के रूप में दिखाई दे रही थी और हम सबने उसे स्वीकार भी कर लिया था। बोलचाल की हिंदी जैसे साहित्यिक हिंदी से अलग है, ठीक वैसे ही हमारी युवा पीढ़ी के मन में हिंदी को एक बोली के रूप में बचाए रखने के लिए यदि इस विकल्प के बारे में सोचा जाए तो क्या हर्ज है। अभी बात केवल सोचने तक सीमित है।

वरना आप सब और हम सब प्रण लें कि आज के बाद कभी भी अपने एस.एम.एस. आदि रोमन लिपि में नहीं भेजेंगे।

जनक पलटा – समाज सेविका

किसी भाषा का अस्तित्व बनाए रखने के लिए उसकी लिपि का इस्तेमाल उस भाषा और व्याकरण के अनुसार उचित होना चाहिए परंतु अगर किसी को उस भाषा को लिखना नहीं आता और अगर कोई व्यक्ति रोमन लिपि में उस भाषा को आसानी से लिख पाता है तो इसे अपराध की तरह से नहीं देखा जाना चाहिए।

यूँ किसी लिपि को खत्म कर देने के पक्ष में मैं भी नहीं हूँ पर प्रयोग के स्तर पर अगर कोई रोमन में ही सहज महसूस करे तो हर्ज़ ही क्या है?

❑

साभार : वेबदुनिया

2015 में हिंदी जगत की चयनित खबरें

43 'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2015 की चयनित खबरें

विश्व हिंदी सचिवालय के त्रैमासिक सूचना पत्र 'विश्व हिंदी समाचार' में वर्ष 2015 में प्रकाशित विशेष सूचनाओं की झलक विश्व हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत की जा रही है।

'विश्व हिंदी समाचार', अंकः 29, मार्च, 2015

विश्व हिंदी सचिवालय मुख्यालय निर्माण का आधिकारिक शुभारंभ

12 मार्च, 2015 को भारत गणराज्य के प्रधान मंत्री, महामहिम श्री नरेंद्र मोदी तथा मॉरीशस गणराज्य के प्रधान मंत्री, माननीय सर अनिरुद्ध जगन्नाथ, जी.सी.एस.के., के.सी.एम.जी., क्यू.सी. के कर कमलों द्वारा विश्व हिंदी सचिवालय मुख्यालय निर्माण का आधिकारिक शुभारंभ, फ़ेनिक्स, मॉरीशस में सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। समारोह का आयोजन मॉरीशस सरकार द्वारा किया गया था। इस अवसर पर शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन व मॉरीशस के अन्य अनेक माननीय मंत्रीगण तथा सभी मंत्रालयों के स्थायी सचिव व अधिकारीगण, मॉरीशस के हिंदी विद्वान, साहित्यकार, लेखक, शैक्षणिक, प्रचारक, प्राध्यापक व छात्र तथा हिंदी प्रेमियों ने समारोह की शोभा बढ़ाई। महामहिम मोदी जी के साथ आए हुए प्रतिनिधि मंडल में भारतीय पक्ष की ओर से भारतीय उच्चायुक्त व उच्चायोग के अधिकारीगण, भारत सरकार के मंत्रालयों के अधिकारीगण व पत्रकार भी समारोह में उपस्थित रहे। इस अवसर पर भारत गणराज्य के प्रधान मंत्री तथा मॉरीशस गणराज्य के प्रधान मंत्री का वक्तव्य विश्व हिंदी सचिवालय तथा मॉरीशस की जनता के लिए अत्यंत प्रभावशाली व प्रेरणादायक रहा। कार्यक्रम के आरंभ में ही विश्व हिंदी सचिवालय के कार्यवाहक महासचिव श्री गंगाधरसिंह सुखलाल ने सचिवालय के 7 वर्षों के कार्यकाल व उपलब्धियों का ब्यौरा दिया, साथ ही सचिवालय के कार्यों, गतिविधियों व उपलब्धियों पर सुंदर वीडियो प्रस्तुति हुई। महामहिम श्री नरेंद्र मोदी तथा सर अनिरुद्ध जगन्नाथ ने स्मारक पट्ट का अनावरण करते हुए विश्व हिंदी सचिवालय के मुख्यालय निर्माण का आधिकारिक शुभारंभ किया। इस अवसर पर महात्मा गांधी संस्थान तथा इंदिरा गांधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र के कलाकारों द्वारा महाकवि जयशंकर प्रसाद की 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' व प्रसिद्ध मॉरीशसीय कवि श्री सोमदत्त बखोरी की 'मॉरीशस की सृष्टि' कविता पर आधारित एक संगीत व नृत्य प्रस्तुति भी हुई।

विश्व हिंदी दिवस 2015 : विश्व हिंदी सचिवालय मॉरीशस

10 जनवरी, 2015 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग के तत्वावधान में फ़ेनिक्स स्थित इंदिरा गांधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में विश्व हिंदी दिवस समारोह का भव्य आयोजन किया। समारोह के मुख्य अतिथि, मॉरीशस गणराज्य के भूतपूर्व राष्ट्रपति, महामहिम श्री राजकेश्वर प्रयाग, जी.सी.एस.के, जी.ओ.एस.के. रहे। सचिवालय ने इस वर्ष विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर मॉरीशस के हिंदी समुदाय के समक्ष मास्को विश्वविद्यालय, रूस से आई हिंदी विद्वान, एसोसिएट प्रोफ़ेसर ल्युदमिला ख़ख़लोवा को प्रस्तुत किया जिन्होंने रूस में हिंदी पर वक्तव्य दिया। महामहिम श्री अनूप कुमार मुद्गल, भारतीय उच्चायुक्त ने इस अवसर पर भारत गणराज्य के प्रधान मंत्री, महामहिम श्री नरेंद्र मोदी का संदेश पढ़कर सुनाया। विश्व हिंदी दिवस, 2015 के उपलक्ष्य में सचिवालय द्वारा वर्ष 2014 में आयोजित 'अंतरराष्ट्रीय हिंदी लघु-कथा प्रतियोगिता' के परिणामों की घोषणा भी की गई। समारोह में मॉरीशस के पाँच विजेताओं को पुरस्कार राशि तथा प्रमाण पत्र भेंट किया गया। इस वर्ष सचिवालय ने अपने वार्षिक प्रकाशन 'विश्व हिंदी पत्रिका' के छठे अंक (मुद्रित व वेब प्रारूप) का लोकार्पण किया।

विश्व हिंदी दिवस : विश्व भर में

पिछले वर्षों के समान, इस वर्ष भी हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा उसके महत्व को रेखांकित करने हेतु भारत एवं विश्व के अनेक देशों में विश्व हिंदी दिवस का भव्य आयोजन किया गया। भारत के अतिरिक्त जर्मनी, दारुस्सलाम, क़तर, गयाना, जापान, लंदन, बेलारूस,

रूस, स्पेन, फ़िजी, टोरंटो, श्री लंका, नेपाल इत्यादि देशों में विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में कवि गोष्ठियों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों व प्रतियोगिताओं आदि के रूप में हिंदी का महोत्सव मनाया गया।

विश्व हिंदी सचिवालय का 7वाँ आधिकारिक कार्यारंभ दिवस

सचिवालय द्वारा 11 फ़रवरी, 2008 को आधिकारिक रूप से कार्य आरंभ किए जाने के सात वर्ष पूरे होने के अवसर पर 11 फ़रवरी, 2015 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा एवं मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग के तत्वावधान में अपना आधिकारिक कार्यारंभ दिवस समारोह मनाया।

समारोह का आयोजन मोका, मॉरीशस स्थित महात्मा गांधी संस्थान के सुब्रमण्यम भारती सभागार में सफलतापूर्वक संपन्न हुआ जिसके मुख्य अतिथि के रूप में मॉरीशस के कला व संस्कृति मंत्री, माननीय श्री सांताराम बाबू उपस्थित रहे। प्रत्येक आधिकारिक कार्यारंभ दिवस के समान इस वर्ष भी सचिवालय ने भारत के एक प्रसिद्ध हिंदी सृजनधर्मी को समारोह के अतिथि वक्ता के रूप में एक वक्तव्य के लिए आमंत्रित किया था। इस वर्ष सचिवालय को भारत की प्रसिद्ध भारतीय लेखिका, स्तंभकार, पटकथाकार, अनुवादक, नाटककार, चित्रकार, समाजसेवी व महिला लेखन की मूर्धन्य हस्ताक्षर श्रीमती चित्रा मुद्गल का स्वागत करने का अवसर प्राप्त हुआ। श्रीमती मुद्गल ने समकालीन हिंदी साहित्य और स्त्री विमर्श पर अपना बीज वक्तव्य प्रस्तुत किया तथा महिला लेखन, स्त्री विमर्श व सृजनात्मकता पर कार्य सत्रों का संचालन भी किया। इस अवसर पर महात्मा गांधी संस्थान के सृजनात्मक लेखन व प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'वसंत' का भानुमती नागदान व पूजानंद नेमा विशेषांक का लोकार्पण भी किया गया।

डॉ. अशोक चक्रधर व श्री बालेंदु शर्मा दाधीच सम्मानित

27 दिसंबर, 2014 को राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में व्यंग्य कविताओं के लिए प्रसिद्ध कवि डॉ. अशोक चक्रधर व हिंदी समाचार पोर्टल प्रभासाक्षी.कॉम के संपादक और तकनीक विशेषज्ञ श्री बालेंदु शर्मा दाधीच को 'डॉ. शंकर दयाल सिंह जनभाषा सम्मान' से सम्मानित किया गया। यह सम्मान भारत के सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन राज्य मंत्री माननीय जनरल डॉ. विजय कुमार सिंह के हाथों तथा पूर्व केंद्रीय मंत्री व राज्यसभा सदस्य श्री सत्यनारायण जटिया की उपस्थिति में दिया गया।

'विश्व हिंदी समाचार', अंकः 30, जून, 2015

अमेरिका में अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन

3-5 अप्रैल, 2015 को न्यू जर्सी के रटगर्स विश्वविद्यालय में द्वितीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस शुभ अवसर पर अमेरिका, कनाडा, भारत और अन्य देशों के कई विद्वान उपस्थित थे। यह सम्मेलन विश्व में हिंदी के पठन-पाठन का सिलसिला तीव्र गति से आगे बढ़ाने और प्रवासी समुदाय के सामाजिक-सांस्कृतिक-आर्थिक जीवन में हिंदी का उपयोग बढ़ाने में प्रयत्नशील रहा। सम्मेलन के दौरान सभी प्रतिभागियों ने तकनीकी, वैज्ञानिक और उच्च शिक्षा में हिंदी का प्रयोग और चुनौतियों पर गहन चर्चा के अतिरिक्त उद्योग, व्यवसाय-वाणिज्य उद्यमियों को भारतीय संस्कृति से परिचित कराने के उद्देश्य से त्वरित पाठ्यक्रम की रचना जैसे मुद्दों पर भी विचार-विमर्श किया। सम्मेलन का लक्ष्य प्रवासी समाज की नई पीढ़ी के लिए सामयिक शिक्षा सामग्री का भंडार तैयार करना था। इस अवसर पर सभी को संबोधित करते हुए श्री अशोक ओझा ने कहा कि इसकी संरचना अपने आप में एक अभिनव प्रयोग है जिसमें शिक्षाविद और प्राध्यापकों के अतिरिक्त सरकारी तंत्र, व्यापार-वाणिज्य आदि क्षेत्रों में कार्यरत लोग एक साथ एकत्र होकर इक्कीसवीं सदी और उसके आगे भी हिंदी को विश्व की समृद्ध भाषा के रूप में स्थापित करने के लिए कार्य कर सकते हैं। 'विश्व में हिंदी का बढ़ता दायरा संभावनाएँ और चुनौतियाँ' नाम से आयोजित कार्यक्रम में निजी सरकारी स्तर पर हिंदी भाषा और साहित्य की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए सामूहिक प्रयास करने की ज़रूरत को भी रेखांकित किया गया।

कथाकार श्रीमती चित्रा मुद्गल को 'निराला स्मृति सम्मान'

इस वर्ष निराला साहित्य संस्थान, इलाहाबाद द्वारा दिया जानेवाला निराला स्मृति सम्मान प्रख्यात कथाकार श्रीमती चित्रा मुद्गल को इलाहाबाद में निराला जी के जन्मदिवस के अवसर पर प्रदान किया

गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि कलाकार दूधनाथ सिंह ने कहा कि चित्रा मुद्गल जी का जीवन प्रगाढ़ दुख और दुश्वार संघर्ष से निरंतर जूझने की संगीतमयी कथा है। उन्होंने निराला की एक कविता के माध्यम से चित्रा जी के जीवन को चित्रित करते हुए उन्हें दुख की धूसर संध्या को हमेशा नए विचारों से गौरवान्वित करनेवाली लेखिका बताया। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए सम्मान के निर्णायक मंडल के अध्यक्ष प्रो. राजेंद्र कुमार ने कहा कि निराला के 'कुल्ली भाट' की तरह चित्रा जी के लेखन में चरित से अधिक जीवन है। कार्यक्रम का संचालन सूर्य नारायण ने तथा धन्यवाद ज्ञापन संस्थान के महासचिव और निराला जी के पौत्र डॉ. अमरेश त्रिपाठी ने किया।

देश के हिंदी शिक्षकों को आई.सी.टी. के नवीनतम संसाधनों के प्रयोग से अवगत कराने के वृहद् अभियान के तहत सचिवालय द्वारा 4 वर्ष पूर्व आरंभ हिंदी आई.सी.टी. संगोष्ठी-कार्यशालाओं की कड़ी में यह चौथा संस्करण महात्मा गांधी संस्थान एवं प्राइवेट सेकंडरी स्कूल ऑथोरिटी के सौजन्य से आयोजित हुआ जिसमें 100 से अधिक शिक्षकों को यूनिकोड, हिंदी टंकन, इंस्क्रिप्ट, ऑडेसिटी सॉफ़्टवेयर के प्रयोग आदि का प्रशिक्षण दिया गया।

जर्मनी में संस्कृत अध्ययन की माँग बढ़ी : 14 विश्वविद्यालयों में शिक्षण जारी

जर्मनी के विश्वविद्यालयों में संस्कृत अध्ययन के इच्छुक छात्रों की माँग लगातार बढ़ रही है और इसको देखते हुए हैडलबर्ग विश्वविद्यालय के दक्षिण-पूर्वी एशिया केंद्र को स्विट्ज़रलैंड, इटली और यहाँ तक कि भारत में भी स्पोकन संस्कृत की कक्षाएँ प्रारंभ करनी पड़ी हैं। विश्वविद्यालय में भारत विद्या केंद्र के अध्यक्ष प्रो. अक्सैल मिकाएल्स के शब्दों में जब 15 वर्ष पूर्व यह पाठ्यक्रम आरंभ किया गया था तो उम्मीद थी कि इसे साल-दो-साल में बंद करना पड़ेगा, उलटे आज शिक्षकों की संख्या बढ़ानी पड़ी और कार्यक्रम को अन्य यूरोपीय देशों तक लेकर जाना पड़ा। हैडलबर्ग में एक महीने तक चलनेवाली बोलचाल की संस्कृत की कक्षाओं के लिए दुनिया भर से आवेदन आते हैं और अभी तक 34 देशों से 254 छात्रों ने इसमें भाग लिया है। जर्मनी के विश्वविद्यालय संस्कृत अध्ययन के लिए प्रसिद्ध हैं तथा विश्व के लगभग सभी बड़े अध्ययन केंद्रों में भी जर्मनी के संस्कृत विद्वान कार्यरत हैं। प्रो. मिकाएल्स के अनुसार इस बात का एक तुलनात्मक प्रमाण यह है कि यू.के. के चार बड़े विश्वविद्यालयों में संस्कृत शिक्षण होता है जबकि जर्मनी में यह संख्या 14 है।

ऑक्सफ़ोर्ड शब्दकोश में शामिल हुए हिंदी के शब्द

हिंदी भाषा के कुछ ऐसे शब्दों को जो 1845 से अंग्रेज़ी भाषा में प्रयोग किए जा रहे हैं, उन्हें अब प्रसिद्ध ऑक्सफ़ोर्ड शब्दकोश में शामिल कर लिया गया है। इन शब्दों का प्रयोग अंग्रेज़ी भाषा में लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके कारण इन्हें शब्दकोश में शामिल करने का फ़ैसला लिया गया। ऑक्सफ़ोर्ड शब्दकोश की सलाहकार संपादक डॉक्टर डानिका सालजर का कहना है कि ''भाषा को लेकर बड़े स्तर पर किए गए शोध के बाद पता लगा कि हिंदी के इन शब्दों का अंग्रेज़ी में खूब प्रयोग किया जाता है व इसका अपना ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और भाषाई महत्व है।''

'विश्व हिंदी समाचार', अंकः 31, सितंबर, 2015

मॉरीशस में हिंदी शिक्षण तथा सूचना-संचार प्रौद्योगिकी संगोष्ठी-कार्यशाला

27-29 जुलाई, 2015 को शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग, मॉरीशस के तत्वावधान में विश्व हिंदी सचिवालय ने देश की गैर-सरकारी माध्यमिक पाठशालाओं के हिंदी शिक्षकों के लिए हिंदी शिक्षण तथा सूचना-संचार प्रौद्योगिकी संगोष्ठी-कार्यशाला का आयोजन किया। देश के हिंदी शिक्षकों को आई.सी.टी. के नवीनतम संसाधनों के प्रयोग से अवगत कराने के वृहद् अभियान के तहत सचिवालय द्वारा 4 वर्ष पूर्व आरंभ हिंदी आई.सी.टी. संगोष्ठी-कार्यशालाओं की कड़ी में यह चौथा संस्करण महात्मा गांधी संस्थान एवं प्राइवेट सेकंडरी स्कूल ऑथोरिटी के सौजन्य से आयोजित हुआ

जिसमें 100 से अधिक शिक्षकों को यूनिकोड, हिंदी टंकण, इंस्क्रिप्ट, ऑडेसिटी सॉफ्टवेयर के प्रयोग आदि का प्रशिक्षण दिया गया। संगोष्ठी-कार्यशाला का संचालन मुख्य रूप से भारतीय तकनीकविद व आई.सी.टी. विशेषज्ञ श्री बालेंदु शर्मा दाधीच, विश्व हिंदी सचिवालय के कार्यवाहक महासचिव श्री सुखलाल तथा महात्मा गांधी संस्थान के विशेषज्ञों द्वारा किया गया।

हिंदी दिवस, 2015

14 सितंबर, 1949 को भारतीय संविधान सभा द्वारा हिंदी को भारत की राज भाषा बनाने के निर्णय के महत्व को प्रतिपादित करने के उद्देश्य से राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा के अनुरोध पर सन् 1953 से संपूर्ण भारत में यह तिथि हिंदी-दिवस के रूप में मनाई जाती रही है। हिंदी के क्षेत्र के वैश्विक विस्तार के साथ कई वर्षों से विश्व के अनेक देशों में हिंदी प्रेमियों द्वारा यह दिवस अत्यंत निष्ठा के साथ मनाया जाता रहा है। 2015 में भारत के साथ-साथ अनेक देशों में विश्व हिंदी सम्मेलन के महाकुंभ के साथ ही हिंदी दिवस अत्यंत सम्मानपूर्वक मनाया गया। मास्को, श्री लंका, जेद्दाह, शिकागो, जर्मनी, चीन, जमैका, फ्रांस, ऑस्ट्रेलिया, ब्रैम्पटन, कनाडा, जोहान्सबर्ग, गोटैंग, दक्षिण अफ्रीका, इज़राइल आदि अन्य देशों में हिंदी दिवस भव्य रूप से मनाया गया।

श्री नरेंद्र मोदी ने किया उज़्बेक-हिंदी शब्दकोश का लोकार्पण

7 जुलाई, 2015 को भारत के प्रधान मंत्री महामहिम नरेंद्र मोदी की उज़्बेकिस्तान यात्रा के दौरान उनके हाथों प्रथम उज़्बेक-हिंदी शब्दकोश का लोकार्पण हुआ। इस अवसर पर उज़्बेकिस्तान के माननीय प्रधान मंत्री तथा इंडोलॉजिस्ट श्री राख़मातोव भी उपस्थित थे। यात्रा के दौरान महामहिम मोदी जी ने हिंदी भाषा के महत्व पर बल देते हुए देश की आर्थिक प्रगति में इस भाषा की आवश्यकता को उभारा। उनका मानना है कि जिन देशों की आर्थिक स्थिति मज़बूत है उनको अपने देश के नागरिकों को अपनी भाषा सीखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए तथा भाषा की जड़ों को और विकसित करने में सहायता करनी चाहिए। प्रधान मंत्री मोदी जी ने शिक्षा की आवश्यकता पर भी बात की। उन्होंने कहा कि व्यक्तित्व के विकास के लिए भाषा की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता। उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। भाषा ही एक अजनबी देश में दो अनजान लोगों के बीच संप्रेषण स्थापित करती है।

❑